ॐ

श्रीस्वामिचरणदासजीकृत-

# भक्तिसागरादि

( १७ ग्रन्थ. )

जिनमें

व्रजचरित्र. अमरलोक. अष्टांगयोग, षट्कर्म. हठयोग. ज्ञानस्वरोदय, भक्तिपदार्थ. ब्रह्म-ज्ञान. शब्दवर्णन, भक्तिवर्णन आदि उपदेशिक विषय रोचक पद्योंमें वर्णित हैं.

खेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष-"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस

बम्बई.

संवत् १९८९. शके १८५४.

मुद्रक और प्रकाशक-
खेमराज श्रीकृष्णदास,
मालिक-"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस, बम्बई.

# प्रस्तावना ।



भगवानने संसारी जीवोंके उद्धार हेतु अपनी पूर्ण कृपासे कितने ही नररत्न निर्माण किये हैं, उन्हीं रत्नोंमें जगत्प्रसिद्ध शुकदेवजी महाराज हुए जिनके शिष्य चरणदासजीने अपने गुरुजीसे प्रश्नोत्तरसें लोकोपकारार्थ यह ग्रंथसंग्रह निर्माण किया है. बहुत समयसे हमारे चित्तमें इन ग्रंथोंके प्रचार करनेका मनोरथ था, परन्तु कोई शुद्ध प्रति न मिलनेसे नहीं छाप सके. एक समय परमहंस चरणदासजी, पण्डित रामशरणदासजी महाराज कनखल ( हरद्वार ) धर्मशालाके महंत हमारे बम्बई कार्यालयमें पधारे और उनसे इस विषयमें वार्तालाप हुआ, उन्होंने हमारे मनोरथकी प्रशंसा कर अपने मित्र मुन्शी शिवदयालजी वकील अदालत जयपुरसे एक प्राचीन ग्रंथ मँगाकर दिया जिससे शुद्ध कर यह ग्रंथ प्रकाशित किया गया है. हम अपने मनोरथसिद्धिकर्ता उक्त दोनों महाशयोंको हृदयसे धन्यवाद देते हुए यह ग्रन्थ प्रकाशित करते हैं और सर्वाधिकार सुरक्षित रक्खा है।

खेमराज श्रीकृष्णदास.

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम प्रेस-बम्बई.

# सूचना-वचनिका ।



प्रगट हो कि, यह ग्रंथ " भक्तिसागर " जगत् उजागर श्रीयुत वेदव्यासनंदन जगवंदन श्रीपरमहंसावतंस शुकमुनि महाराजके परमप्रिय शिष्य श्रीस्वामिचरणदासजीका रचित ज्ञान वैराग्यका भंडार प्रेमा पराभक्तिका सार भजनभावनाका आगार संत महंत भक्तजनोंका जीवनाधार मुमुक्षुपुरुषोंके हृदयमें धारण करनेका मुक्तिस्वरूपी अमूल्य मोतियोंका हार है. जो महानुभाव भक्तिभावसहित भक्तिसागर ग्रंथके प्रेमपूर्वक पठन श्रवण मनन निदिध्यासन अनुभव सहित इसमें गोता लगावेंगे वे निर्गुण गूढतत्त्व तथा चतुर्वर्गरूपी अलौकिक रत्न प्राप्त कर जीवन्मुक्तिका प्रत्यक्ष फल पावेंगे ॥

इति सूचना-वचनिका समाप्त ।



# अथ ग्रंथपाठविधि प्रारंभ ।

चौ०—संत सुनो विनती चितलाई । कहूं जोर कर शीश नवाई ॥
ग्रंथ पाठकी विधि समझाऊं । जैसेकी जैसी पुनि गाऊं ॥
शुचि पवित्र अरु हो निश्चिंत । स्थिर चितकरि बैठ एकंत ॥
ग्रंथराज चौंकी पधरावे । चंदन पुष्प सप्रीति चढावे ॥
श्रीगुरुचरणदास उर ध्यावे । चरणवंदना कर बलिजावे ॥
प्रथम माहात्म्यग्रंथ पढि लीजे। पीछे पाठ ग्रंथको कीजे ॥
सहज सहज मधुरे स्वर बाँचे । भावभक्तिके रँगसें राचे ॥
मन एकाग्र कर अर्थ विचारे । पढे सुनावे हियमें धारे ॥
ग्रंथ पढे पीछे सुन भाई । आरति पद गावे हुलसाई ॥
नित्य पाठकर हरि गुरु सेवे । विना पाठ अनजल नहिं लेवे॥
प्राण समान ग्रंथको राखे । इष्ट ज्ञान सुख अस्तुति भाखे॥
करे ग्रंथकी सेवा पूजा । ग्रंथसमान और नहिं दूजा ॥
गुरु सुखियनकी संपति येही । ग्रंथ न तजे प्राण तजे देही ॥
यथावकाश पाठ नित कीजे । अनध्याय नहिं होने दीजे ॥
नेम सहित नित पढे सुनावे । चारों मुक्ति अष्ट सिद्धि पावे॥
या विधि जो रहनी बनि आवे । पूरा संत महंत कहावे ॥
करनी करे युग गुण गावे । निश्चय परमधाम पद पावे ॥
गुरु बलदेव दास समझायो । सरस माधुरी सोई गायो ॥

इति श्रीयुत स्वामी बलदेवदासजीके चरणसेवक पंडित
शिवदयाल वकील अदालत मंत्री श्रीरामसभाराजधानी
सवाई जयपूर रचित भक्तिसागरग्रंथकी
ग्रंथपाठविधि संपूर्ण ।

॥ श्रीनिकुञ्जविहारिणे नमः ॥

# स्वामि श्रीचरणदासजीका जीवनचरित्र ।

प्रकट हो कि, श्रीयुत स्वामी चरणदासजी महाराजका सुयश तो जगतमें भलीभांति विख्यातही है परंतु यहां वर्णन करनेकी आवश्यकता समझकर संक्षपरीतिसेही लिखा जाता है. वह इस रीतिसे है कि, श्रीमान् चरणदासजी संवत् १७६० विक्रममें मवात देश प्रांत अलवरराजधानीके निकट डहरा ग्राममें भृगुवंश अर्थात् च्यवनकुलमें श्रीमती कुंजामाताके गर्भसे उत्पन्न हुए, श्रीमान्के कुलकी आठवीं पीढीमें पूर्वजन्म परमधर्मी परमभक्त शोभनदासजी हुए हैं, जब उनकी प्रेमभक्ति पूर्णताको पहुँच गई तो उनको श्रीवृंदावनयुगलविहारीलाल महाराजने प्रत्यक्ष दर्शन देकर वर मांगनेकी आज्ञा दी तब शोभनदासजीने भी यही वर मांगा कि, मेरे कुलमें सदैव आपकी भक्ति बनी रहे इससे बढकर और कोई पदार्थ मांगनेके लायक नहीं है. तब युगल सरकारने तथास्तु कहकर आज्ञा की कि, तुम्हारे पश्चात् आठवीं पीढीमें हमारा अंशावतार संतरूप प्रकट होकर जगत्के अनंत जीवोंका उद्धार करेगा. इसी अभिप्रायसे श्रीमान् चरणदासजी भगवत्के वही अंशावतार हुए हैं; श्रीमान्के पिता श्रीमुरलीधरदासजी बाल्यावस्थासे ही भगवद्भक्तिमें लवलीन रहते थे। जैसे जलमें कमल उत्पन्न होकर जलसे जुदा रहता है उसी प्रकार मुरलीधरजीने जगद्व्यवहारोंको स्पर्श नहीं किया और चमत्कार यह कि, सदेह वैकुंठगामी हुए. श्री चरणदासजी महाराजको पांच वर्षकी अवस्थामें डहरेग्राम नदीके निकट श्रीवेदव्यास नंदन जगवंदन श्री शुकदेवमुनिराजने दर्शन दिया पश्चात् १९ वर्षकी अवस्थामें श्रीगंगातट स्थान शुकताळ जहांपर राजा परीक्षितको श्रीमद्भागवत कथा सुनाकर श्रीशुकदेवजी महाराजने कृतार्थ किया था. वहांपर दूसरी बार श्रीचरणदासजीको दर्शन

दिये और विधिवत दीक्षा देकर चरणदासजीको अपना शिष्य कर भक्तियोग, ज्ञान, वैराग्यादिसे पूर्ण कर तारन तरन बनाया. इसके पश्चात श्रीचरणदासजीने इंद्रप्रस्थ अर्थात दिल्लीस्थानमें विराजमान होकर अष्टांगयोग शाधनकर १४ वर्षकी समाधि लगाकर अष्टसिद्धि पानकर त्रिकालज्ञ तारनतरन महात्मा कहलाये । तदनन्तर दिल्लीसे चलकर श्रीयुगलविहारीजीके दर्शनाभिलाषी श्रीवृंदावनधाम सेवा-कुंजमें पहुँचकर श्रीयुगलविहारीजीके सह समाज सखी सूमसहित दर्शन पाया । श्रीकृष्णचंद आनंदकंद परमात्माने श्रीचरणदासजीको अपना अनन्य निष्काम प्रेमी भक्त समझकर वात्सल्यतापूर्वक निज हृदयसे लगाया और रासविलासका आनंद दिखलाकर प्रेमभक्तिका प्रचार कर जीवोंका उद्धार करनेकी आज्ञा देकर अंतर्द्धान हुए । तिस पीछे श्रीचरणदासजीसे श्रीयुगलविहारीजीका वियोग न सहागया और विरहवियोगकी दशामें वंसीवटके नीचे मूर्च्छित होगये, उसी समय श्रीशुकदेवजी तीसरी वेर वहीं प्रकट होकर दर्शन देकर समाधान कर वंशीवट नीचे श्रीचरणदासजीके मस्तकपर निजहस्तकमल धर श्रीवृंदावनयुगल विहारीजीका प्रगट दर्शन कराकर विरहाग्निको शीतल कर इंद्रप्रस्थ जाकर जीवोंके उद्धार निमित्त भक्ति उपदेश करनेकी आज्ञा देकर अंतर्धान हुए । पश्चात श्रीचरणदासजी दिल्ली आये. परमशोभायमान श्रीजीका मंदिर सिद्धनकर विराजमान हुए और हरिगुरु आज्ञानुसार नवधाभक्ति द्वारा लक्षावधि जीवोंको भगवतके सन्मुख कर भगवानके दर्शनका साक्षात कराया, श्रीचरणदासजीके सहस्रों संत, विरक्त, नेमी, प्रेमी, ज्ञानी, ध्यानी, सिद्ध समाधी हुए और भारतवर्षके उत्तमोत्तम तीर्थों तथा सप्तपुरी चारों धामोंमें जाकर विराजमान हुए और भगवद्भक्तिका विस्तार किया; श्रीमानके संत चरणदासी वैष्णव कहलाए। इनकी शुकसंप्रदाय जगतमें विख्यात हुई और उस समय दिल्लीमें

मुहम्मदशाह बादशाह थे वे भी श्रीमहाराजके परम प्रभाव और अनेकानेक ईश्वरीय चमत्कार देखकर श्रीमहाराजमें भक्तिवश होकर नित्य दर्शन व सतसंगकी अभिलाषासे श्रीमान्‌के पास आने लगे । यहां तक कि सहस्रों ग्राम श्रीमहाराज शिष्योंके नाम भगवत् संतसेवानिमित्त भेंट किये, वे अवतक चले आते हैं और उन ग्रामोंके सहस्रों फरमानशाही अवतक मंदिरमें मौजूद हैं, मुहम्मदशाह बादशाहके अहदमें एकसमय ईरानसे चढकर दिल्लीपर नादिरशाह और उसके आगमनका वृत्तांत छै महीने पहिले लिखकर श्रीमान्‌ने मुहम्मदशाहको दे दिया, उस लेखके अनुसारही नादिरशाहने बर्ताव किया । इस वृत्तांतको नादिरशाहने मुहम्मदशाहके मुखसे सुनकर श्रीमान्‌का दर्शन कर और चमत्कार पाकर इनको वलीअल्लाह और मकबूलपाकर पिरमुरशद माना और श्रीमान्‌के उपदेशसे आपने अपनी तमोगुणी वृत्ति व आसुरीबुद्धिका परित्याग कर ईरानको चलागया । श्रीमान्‌ने अस्सी वर्षतक भूतलपर विराजकर भगवद्भक्ति प्रेम और परोपकारमें कालक्षेप किया, अंतमें भगवद् आज्ञानुसार स्वेच्छासे दिल्लीमें योगाभ्याससे संवत १८३९ विक्रममें दशवें द्वारको वेधन कर पांचभौतिक शरीरको त्याग परमधामको पधारे । इन स्वामीजीकी सहस्रों वाणी इस "श्रीगुरु भक्ति प्रकाश" ग्रंथमें विस्तारपूर्वक वर्णित हैं । उसके अवलोकनसे श्रीमान् स्वामीचरणदासजी महाराजका पूर्व प्रभाव मालूम हो सकता है ॥ शुभम् ॥

इति ।



# श्रीमहाराज स्वामी चरणदासजीकी वाणीका माहात्म्य ।

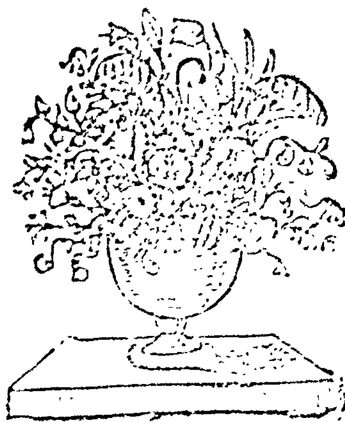
श्रीमान् मोहनदासकृत ।

दोहा—नमो नमो शुकदेव मुनि, नमो स्वामिचरणदास ।
प्रगट श्रीमहाराज है, करन भक्ति परकाश ॥ १ ॥
परम सनातन आपनो, धर्म भागवत जाहि ।
आचारज वपु धरि वहुरि,प्रकटायो ले ताहि ॥ २ ॥
कलियुगसें सतयुग कियो,लियो संत अवतार ।
निस्तारयो सब जगतको, प्रेमभक्ति विस्तार ॥ ३ ॥
तानो सुयश वितान निज,शुकसंप्रदा चलाय ।
वाणी विमल वनाय जग,सोवत दियो जगाय ॥ ४ ॥
जा जाके श्रवणन परी, सो सो भये निहाल ।
वाणी श्रीमहाराजकी, जीतन जग यमकाल ॥ ५ ॥
अष्टादश षट चार नौ, चौदह सबको मूल ।
वाणी श्रीमहाराजकी, हरन भर्म भय सूल ॥ ६ ॥
भारत गीता भागवत, रामायण इतिहास ।
वाणी श्रीमहाराजकी,सब मिल करत प्रकाश ॥ ७ ॥
संस्कृत भाषा है जितक, शास्त्र रु वेद पुराण ।
वाणी श्रीमहाराजकी, सबको लिये प्रमाण ॥ ८ ॥
जहँलग युक्ति रु मुक्ति लग,अनुभव उक्ति अपार ।
वाणी श्रीमहाराजकी, सबहीके अनुहार ॥ ९ ॥
परा बुद्धि व्यापक सकल,परम सनातन सत्व ।
वाणी श्रीमहाराजकी, सब तत्त्वनको तत्त्व ॥ १० ॥

विरलो जनजानत कोऊ,जाको विमल विचार ।
वाणी श्रीमहाराजकी, सब सारनको सार ॥ ११ ॥
अगम अर्थको सुगमकर,ज्योंकी त्यों दरशाय ।
वाणी श्रीमहाराजकी, सबको दे समझाय ॥ १२ ॥
ज्ञानयोग वैरागनिधि, प्रेमभक्ति रसरूप ।
वाणी श्रीमहाराजकी, अद्भुत अधिक अनूप ॥ १४ ॥
निर्गुण सगुण सर्वमय: सर्वोपरि पहिचान ।
वाणी श्रीमहाराजकी,सकल सुखनकी खान ॥ १२ ॥
सबहीके मन भावती, सबहीको जु सुहात ।
वाणी श्रीमहाराजकी, ज्यों बालकको मात ॥ १५ ॥
सबही मत मारग मिली, सबहीके अनुरूप ।
वाणी श्रीमहाराजकी, काढन, भवतम कूप ॥ १६ ॥
कोऊ प्रतिवादक नहीं, सबही प्रशंसत: जाह ।
वाणी श्रीमहाराजकी, सबको करत निवाह ॥१७ ॥
वाणी श्रीमहाराजकी, श्रीमहाराजही जान ।
शब्दब्रह्म परब्रह्ममय, दुविधा दुर्मत भान ॥ १८ ॥
कहँलौ मैं महिमा कहौं, मोपै कही न जात ।
महिमासिंधु अगाध गति,मम मति सीप न मात॥१९॥
वाणी श्रीमहाराजकी, श्रीमहाराज स्वरूप ।
दीपहि दीप जगाय ज्यों, लेत सुकर निजरूप ॥ २०॥
मूरखको पंडित करन, पंडितको साक्षात ।
वाणी श्रीमहाराजकी, दशों दिशा विख्यात ॥ २१॥
कोउ पढो सीखो गुणो,सुगम सबहिको सोय ।
वाणी श्रीमहाराजकी, हुई न कोई होय ॥ २२ ॥

वाणी श्रीमहाराजकी, ज्यों पारसका पर्स ।
लोह कंचन करत ज्यों, त्यों जानो हिय सर्स ॥२३॥
वाणी श्रीमहाराजकी, भृंगीकी ज्यों जान ।
कीट सरिस तनु लेत कर, अपनेही जु समान॥ २४॥
वाणी श्रीमहाराजकी, मलयाचल सम भाय ।
निकट शरन जन तरु सवन, चंदन लेत बनाय ॥ २५ ॥
मनमोहन शिवदासि गुरु, महिमा कहा अपार ।
ग्रंथ भक्तिसागर सरस, जीवन प्राण अधार ॥ २६॥

इति श्रीदिल्लीनिवासी अमरलोकवासी श्रीशिवदासजीके शिष्य मनमोहनदासजी चरणदासीय वैष्णवकृत श्रीयुत स्वामि चरणदासजीकी वाणी माहात्म्य संपूर्ण । शुभम् ॥



# श्रीस्वामिचरणदासजीकृतग्रंथसंग्रहकी अनुक्रमणिका।

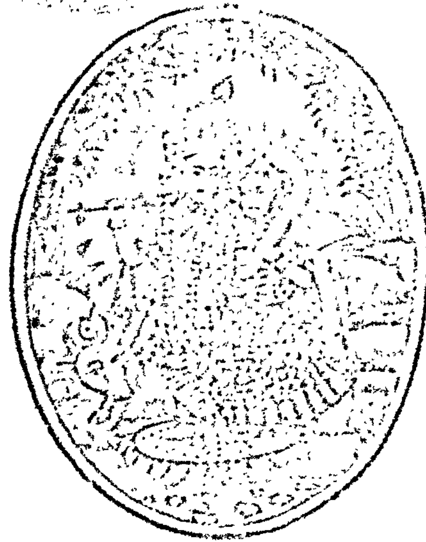


# अनुक्रमणिका ।



इति अनुक्रमणिका समाप्त ।

श्रीव्रजविहारिणे नमः ।



अथ श्रीस्वामिचरणदासजीकृत ग्रंथसंग्रह ।

# व्रजचरित्रवर्णन ।



दोहा–दीनानाथ अनाथकी, विनती यह सुनि लेहु ।
मम हिरदयमें आयके, व्रज गाथा कहि देहु ॥ १ ॥
चारि वेद तुमकूं रटैं, शिव शारदा गणेश ।
और न शीश नवायहूं, श्रीकृष्ण करो उपदेश ॥ २ ॥
कै गुरु कै गोविन्दको, भक्ती कै हरिदास ।
सबहुँनको एकै गिनौं, जैसे पुहुप रु वास ॥ ३ ॥
नारदमुनि अरु व्यासजू, कृपा करिय सुदयाल ।
अक्षर भूलों जो कहीं, कहो मोहिं ततकाल ॥ ४ ॥
श्रीशुकदेव दयाल गुरु, मम मस्तकपर ईश ।
व्रजचरित्र मैं कहत हौं, तुमहिं नवाये शीश ॥ ५ ॥
सब साधुन परणाम करि, कर जोरौं शिर नाय ।
चरणदास विनती करै, वाणी देहु बनाय ॥ ६ ॥

सदा शिव ब्रजमें रहै, करि गोपीको रूप ।
मूरति तौ परगट भई, आप रहत हैं गूप ॥ ७ ॥
वंशीवट ढिग रहत हैं, करत रहत हैं ध्यान ।
वकता वेद पुराणके, परम पुरातम ज्ञान ॥ ८ ॥
ब्रह्मादिक कलपत रहैं, वृन्दावनके हेत ।
सुधि आये ब्रजभूमिकी, विसरि जाय सब चेत ॥ ९ ॥

अब ब्रजकी गति गाय सुनाऊं।बुद्धि शुद्धि हरिभक्ति जु पाऊं॥
चिन्ता मेटन भूमि बखानी ।रणजित मित जहँ दुर्ग विनानी॥
कमलापतिको चक्र सुदर्शन । चरणदास ताको करै वन्दन॥
मथुरा मण्डल तापर रहै। व्यासदेव मुनि ऐसे कहै ॥
बाराह संहितामें जो गायो । सो मैं भाषा बीच बनायो ॥
गोवर्द्धन महिमा अतिभारी । चरणदास ताके बलिहारी ॥
जाकी महिमा सबने गाई । जहां कृष्ण नित गऊ चराई॥
खरक बनाय धेनु जहँ राखी । अजहूँ चिह्न देत हैं साखी ॥

दोहा—गोवर्द्धन विनती करूं, मो विनती सुनिलेहु ।
जगतफांससों काढिकरि, भक्तिदान मोहिं देहु॥ १० ॥

हाटकरूप अडोल खरारी ।जाकी शरण रही ब्रज सारी ॥
ता दिन इन्द्र सकोप पठायो ।सकल मेघझुकि ब्रजपर आयो॥
करपल्लव पर गिरि हरि धारो । तबहीं शरण रहो ब्रज सारो॥
दिव्य दृष्टि बिन दृष्टि न आवै । कञ्चनरूप पुराण बतावै ॥
मथुरामण्डलमें गिरि सोई । मथुरामण्डल अब सुनि लोई॥
चौरासी कोशी परमाना । मथुरामण्डल व्यास बखाना ॥
हरिके चरण सदा जो परसै । कृष्णरूपमें निशिदिन सरसै॥
सखासंग लिये नितहरिडोलैं । सखियनके सँग करत कलोलैं॥

दोहा—सदा कृष्ण व्रजमें रहें, मोहिं मिलत है नाहिं ।
लहर मेहर कबहूँ करें, आनि गहें मो बाहिं ॥ ११ ॥

जामें बारह वन बड भागी । बारह उपवन हैं अनुरागी ॥
जिनमाहीं हरि वेणु बजावें । मधुर मधुर बाँके सुर गावें ॥
चौथे पदको है वन स्वामी । सब जीवनको अन्तरयामी ॥
भक्तन हेतु रहें व्रजमाहीं । गुप्त रहें वृंदावन ठाहीं ॥
फिरत रहें सबही वन सुन्दर । अन्तर बनो रासको मन्दर ॥
जगत दृष्टि सों रहें अलोपा । मिलिहैं ताहि ध्यान जिनरोपा॥
मथुरा मण्डल परगट नाहीं । परगट है सो मथुरा नाहीं ॥
मथुरामण्डल यही कहावे । दिव्य दृष्टि विन दृष्टि न आवै॥

दोहा—वन उपवन अब कहत हौं, मथुरामण्डल माहिं ।
विना भक्ति व्रजनाथकी, कबहूँ दीखत नाहिं ॥१२॥

उपवन कदम सुगवन दूजा । नंदी सुर रु नंदवन सूजा ॥
मंगल आनँद वन वहि गायो । जहाँ महरजा गाँव बसायो ॥
वन सकत सो सब जग जाने । बरसानो सब कोउ पहिचाने॥
भोजन थाली वही कहायो । जहां वैठि ओदन हरि खायो॥
वन सुगन्ध अब सोइ कहावे । वन अखण्ड पुस्तक दरशावे ॥
खेलन वन द्रुम खेलत रहें । मोहन वन केती वन कहें ॥
दधि ग्राम वन वही कहायो । लूटिलूटिजहँ दधि हरि खायो॥
वत्सहरण वन वही कहायो । ब्रह्मा माया देखि भुलायो ॥

दोहा—ग्वाल वाल ब्रह्मा हरे, राखे कहूँ दुराय ।
जानि बूझि टारो दियो, लीन्हें और बनाय॥१३॥

जब ब्रह्मा समुझो करि ज्ञाना । कर्ता कृष्ण सत्य करि जाना॥
फिरि चेतन है शीश नवायो । आदिपुरुष पुरुपोत्तम पायो॥
द्वादश उपवन गाय सुनाये । मथुरामण्डल मध्य बताये ॥

द्वादश वनकी गतिसुनिलीजै । जिन माहीं हरिध्यानकरीजै ॥
भद्रा वन अति महा सुहायो । श्रीवन लालनके मन भायो ॥
भांडिर वनकी महिमा गाऊँ । भिन्नभिन्न कहितोहिसमझाऊं॥
लोहवन महिमाकहियतभारी । महावन सुन्दरता अति धारी॥
तालखन वहि दृष्टि निहारो । धेनुक दानव जहँ हरिमारो ॥

दोहा-दानव धेनुक अति बली, भाव भक्ति हरि हेत ।
मुक्तिकाज सेवन कियो, तालखनको खेत ॥ १४ ॥

खिदरवन जानत सव कोई । फूल माल जहँ लालन पोई॥
वहुला वन वन दुरमन छायो । कुमुदवन तोहिकहिसमुझायो॥
कामावन लालन सुखदाई । मधुवन लालन भूमि सुहाई ॥
वृन्दावनकी शोभा भारी । रासरच्यो जहँ श्रीवनवारी ॥
वन उपवन शोभागति ईशा । शिव ब्रह्मादिक नायो शीशा॥
इन्द्र वरुण कुवेर विज्ञानी । इनहू गति मति ब्रजकी जानी॥
वलि रावण जहँ सेवा लाई । ऊंची नवनिधि उनहू पाई ॥
सप्तऋपिनमिलि सेवन कीन्हो । ऊंचो आसन ध्रुवको दीन्हो ॥

दोहा-वहुतक सुर नर तरि गये, तप करि ब्रजके बीच ।
जाति पांतिको को गिनै, ऊंचा नीचा नीच ॥१५॥
वृन्दावन सवसों वडो, जैसे दूधमें घीव ।
सव धर्मन हरिभक्ति ज्यों,यथा पिण्डमें जीव॥१६॥
सव तीरथ जगमें वडे, जिनहूंमें हैं ईश ।
उन सेवन फल कामना, इहि सेवन जगदीश॥१७॥
वीसकोशके फेरमें, वृन्दावनको जान ।
कुंजगली अति सोहनी, द्रुमवेली पहिंचान ॥१८॥

१ नारद वसिष्ठ रु भृगुमुनि, अंगिरा कश्यप जान । विश्वामित्र रु पुलस्त्यजी, ऋषि हैं सत प्रमान ॥

कंचनकी जहँ भूमि है, धरै सतोगुण भेख ।
चरणदास व्रलिवलि गयो,दिव्य दृष्टि करि देख॥१९॥
फूल जु फूले ऋतु विना,नाना छवि बहुरंग ।
अलि मलकत गुञ्जत फिरैं,भँवरी सुत लिय संग॥२०॥
ऋतु वसन्त जहँ नित रहत,विहरत नंदकिशोर ।
कुहकत कोयल मगन ह्वै, बोलत दादुर मोर ॥२१॥
तिहि विच वृन्दावनमहा,निज वृन्दावन जान ।
तिरकोणी वर्णन कियो, योजन है परमान ॥ २२ ॥

जाकी महिमा सबहुन गाई । रास करै जहँ कुँवर कन्हाई ॥
यमुना जहँ परिकरमा दीन्हीं । गुप्त पियाकी लीला चीन्हीं ॥
गोपसुता जहँ नित उठि न्हाई । वर पूरण पायो कुँवर कन्हाई॥
श्यामरङ्ग निर्मल जल गहरी । वृन्दावनके ढिगढिग लहरी ॥
आशा मंशा करि कोइ न्हावै। सहस सुरसरीको फल पावै॥
दिव्य वृन्दावनदिव्य कालिन्द्री। देखै सो जीतै मन इन्द्री॥
निकट किनार द्रुमनकी छाहीं। आय परी यमुना जलमाहीं॥

दोहा–भक्ति विना पावै नहीं, वृन्दावनकी संध ।
विन पाये निन्दा करै, भोंदू मूरख अंध ॥ २३ ॥

झिलमिल सुवकी उठत तरंगा। बोलत दादुर अरु सुरभृंगा ॥
कालीदह महिमा सुन भ्राता । सहस गंगके फलकी दाता ॥
विहारघाट वसिभजन करीजै । जेहि सेवन यम ज्वाब न दीजै
वंशीवट वसि हठ इमिकीजै । तजै देह जब दर्शन लीजै ॥
अब सुन वृन्दावनकी बतियाँ । शीतल करी हमारी छतियाँ ॥
वनवन कुञ्जलता छवि छाई । झुकि टहनी धरणी पर आई॥
करत मंद समीर पयाना । वसत सुगन्ध सबै अस्थाना ॥
बरसत अमृत फुही सुहाई । निकसत कोमल गोभ सुहाई ॥

दोहा-वृन्दावनमें रहत हैं, ज्ञानी गुणी अतीत ।
वृन्दावनको ना मिलैं, कोउ लहत जगजीत ॥ २४ ॥
नित वसन्त जहँ सुगन्ध सुरारी। चलत मन्द जहँ पवन सुखारी॥
पुष्प विकसि रहे रङ्ग विरङ्गा। लेत वास गुञ्जत सुरभङ्गा ॥
बोलत भँवर महाध्वनि गाजें। मानो अनहदकी गति साजैं॥
गुगुनू दमकि चमकि चकरावें। समय जानि करि हर्ष बढावें॥
नाचत मोर करत चतुराई। पंख पसारि मुदित मगनाई ॥
कोइक उचक बोल निज बोलैं। के इक कुंजन ऊपर डोलैं ॥
युगल नाम लै कीर पुकारैं। वारवार वन ओर निहारैं ॥
वृन्दावन चारों युग माहीं। गुप्त रहैं शुकदेव बताहीं ॥
दोहा-वृन्दावनकी भावगति, कापे वरणी जाय ।
जैसी जाकी दृष्टि है, तैसोही दरशाय ॥ २५ ॥
जैसे हरि मथुरा गये, सबन विलोक्यो आय ।
काल कंसकी दृष्टिसे, साधुन प्रभू लखाय ॥ २६ ॥
मथुरासें योधा बडे, जिन्हैं मल्ल दरशाय ।
नारिन दरशैं कामसम, प्रीति रीति अधिकाय ॥२७॥
वृन्दावन सोइ देखिहै, जिन देख्यो हरि रूप ।
दुर्लभ देवनको भयो, महानृपसों नृप ॥ २८ ॥
वृन्दावन सेवन करै, अमरलोकको जाय ।
इन्द्री जीति हरि भजे, प्रेम प्रीतिके भाय ॥ २९ ॥
रसिक केलि वृन्दावन माहीं। अमरलोककी भाँति कराहीं॥
अमरलोक तिहु लोकसों न्यारो। मथुरामण्डल अंश विचारो ॥
अमरलोक विच है निज धामा। जासु अंश वृन्दावन नामा ॥
पुरुषोत्तम निज धामाँ माईं। कारण प्रेम रहै ब्रज आईं ॥

---

१ गुप्त. २ मोक्षधान.

पुरुषोत्तम प्रभु लीला धारी । वृन्दावनमें सदा विहारी ॥
निज धामाकी कहियतशोभा । वृन्दावनमें रहे अलोभा ॥
दिव्यदृष्टि विन दृष्टि न आवें । सकल पुराण वेद यों गावें ॥
गोल चौंतरो निज वृन्दावन । तापर वारौं अपनो तन मन ॥
रह्यो चौंतरो छिपि वहि ठाहीं । जैसे अग्नि काठके माहीं ॥
तापर चौंसठि खम्भा सोहें । कोटि कामको निज मन मोहें ॥
तापर रंगमहल अधिकाई । कुन्दन रूप स्वरूप सुहाई ॥
रंग महल अरु खम्भन माईं । पन्नालाल वेलिकी नाईं ॥
पन्ना नग लागे जहँ मोती । झलकें जगमग जगमग ज्योती ॥
रंग महल यों छिप्यो गुसाईं । जैसे लाली मेहँदी माईं ॥
नित विहार जहँ करें विहारी । कृष्णकुँवर अरु राधाप्यारी ॥
गौररूप वृषभान दुलारी । श्यामरूप हैं कृष्ण मुरारी ॥
नीलांवर ओढे सँग राधा । दिव्य अभूपण रूप अगाधा ॥
भूपण अँग सँग लाजत ऐसे । चन्द निकट लघु तारे जैसे ॥
पीत वसन पहिरे नँदलाला । मोर मुकुट माथे गलमाला ॥
जरद वादलेको अँग नीमा । वन्धी गलजिंदे सुख सीमा ॥
मोतियनकी माला गल सोहै । नाक वुलाक अधरपर जोहै ॥
श्याम भुवंगम जुलफैं प्यारी । बांकी भौंह कुटिल अनियारी ॥
मकराकृत कुण्डल श्रवननसें । युगल दामिनी मानहुँ घनसें ॥
ललचौंहे अरु नैन ढरारे । रसके माते अरु कजरारे ॥
मोती नासाके विच लटकै । वोलत वोल होंठ पर मटकै ॥
मुरली मुख ताको रस पीवै । चाहनवारो देखत जीवै ॥
गले धुकधुकी सुन्दर झमकै । तामधि कौस्तुभमणि अधि चमकै ॥
अधिक सुघर पहिरे हिय चौकी । वनमाला कहियत नौनिधिकी ॥
गोल भुजनपर वाजू सोहै । पहुँची कडा कनक करि गोहै ॥

पहुँची ढिग पहिरे जहँ गीरी । रतनचौक छवि लगी जँजीरी ॥
रतनचौक है पीठ हथेली । लगी जँजीर मुदरियन भेली ॥
सोहैं छाप छला अरु मुँदरी । नुहसत पहिरे सुन्दर अँगुरी ॥
इकिस चित्त चरणनमें धारे । झुनुक झुनुक पैंजनि झनकारे ॥
मन्द मन्द विहँसत मुसकाई । रणजित मित छवि कहीन जाई ॥
नितकिशोरअरुनित्तकिशोरी । द्वादश बरप अवस्था भोरी ॥
राधे भूपण छवि कह गाऊं । नाम लेत मनमें शरमाऊं ॥
हूँ में दास नाम रणजीती[1] । भक्तिदान मोहिं दीजै रीती ॥
बहुत सखी जिनके निजसंगा । रासकेलि खेलैं बहुरंगा ॥
वनके चौंसठि खम्भे माहीं । होत अखण्ड रास वहि ठाहीं ॥
झुनुकझुनुक सखियनपगबाजें । घुंघुरू अधिक महाध्वनि गाजें ॥
दिवि भूपण पहिरे पिय प्यारी । शशिवदनी तिरगुणते न्यारी ॥
नवल किशोरी गोरी सारी । सुघर सयानी चातुर नारी ॥
दिव्य वस्त्र अरु मधुर शरीरा । अधिक रूप छवि गहर गँभीरा ॥
कजरारी कच लटकै वेनी । अँजन नैन सैन पिय देनी ॥
चूडामणि गहनो अति नीको । शीशफूल अरु वेनी टीको ॥
नथ बुलाक अरु वन्दी झलकैं । घूँघरवारी लटकैं अलकैं ॥
मुखऊपर अलकैं छवि ऐसी । चन्द चढी द्वै नागिन जैसी ॥
करणफूल सँग झुमके मलकैं । सब सखियनके भूपण झलकैं ॥
चम्पाकली नौलडी माला । चन्दनहार सु पहिरे बाला ॥
कंठुला जैसे गले जनेऊ । अरु हिय चौकी महा अभेऊ ॥
फूलमाल सखियां सब पहिरे । गुंजनकी माला हिय लहिरे ॥
बाहनमें बाजूबंद बांधे । वंकबला बाहन पर साधे ॥
सदा सुहागिनि पहिरे चूरी । सुभग पछेली बँगली रूरी ॥

---

१ चरणदासजीका प्रथमका नाम यही था.

कँगनी अरु पहिरे जहँ गीरी । रतन चौक आरसी धीरी ॥
छाप छला अरु पहरे गूठी । नुहसत पहिरे अजब अनूठी॥
पांवनसें पगनेवर बाजें । नखशिखलौं आभूपण साजें॥
झुनुक झुनुक नाचें अरु गावैं । ठुमुक ठुमुक निरतैं अरु धावैं॥
कबहूँ थेइ थेइ थइ थइ करैं । कबहूँ कर ऊपर कर धरैं ॥
कबहूँ चिनन चिनन अंग मोरैं । भाव बताय तान बहु तोरैं ॥
कबहूँ कर उठाय गति चालैं । सांगोपांग बतावत हालैं ॥
है अनुराग राग बहु गावैं । घुंघुरूकी गति अधिक बजावैं॥
कोई नाचे कोई गावै । कोई मृदंग कोइ ताल बजावै॥
बैन सरू काहू कर राजें । कोउ तंबूरा नारी साजें ॥
उपँग लिये कर कोउ सहेली ।अमृत कुण्डली कोउ अलबेली॥
कोइ बीन कोइ लिय मुहचङ्ग । मगन रूप सबही निजसङ्ग॥

दोहा—कहा बुद्धि कह कहि सकूं, रासकेलि को साज ।
बाजे हैं बहु भांतिके, वर्णत आवै लाज ॥ २० ॥
कबहूँ करसों कर मिला, नृत्यत श्रीगोपाल ।
कबहूँ बैठे सांवरो, नृत्यत सुन्दर बाल ॥ २१ ॥

कबहूँ हँसकारि निकट बुलावैं । कबहूँ फूलमाल पहिरावैं ॥
कबहूँ मन्द मन्द मुसकावैं । बैन सैन दै नृत्य बतावैं ॥
वृन्दावनमें ऐसी लीला । चरणदासको जहां वसीला ॥
जो कोइ इनको ध्यान लगावै । अमरलोक निश्चय करि पावै॥
सिमिटो मन कबहूँ नहिं फूटै ।सोवत जागत ध्यान न छूटै ॥
जो कोइ इनको ध्यानन करिहै ।भरमि भरमि चौरासी परिहै॥
सुर नर मुनि सबही मिलध्यावैं ।शिव ब्रह्मादिक अन्त न पावैं॥
वेद बिना यह भेद न पावै ।आपु भरमि अरु जग भरमावै॥

---

१ पूर्व रीतिसे.

वेद पुराण संहिता गावैं । चारों युग हरिभक्ति बतावैं ॥

दोहा-इत उत भटको जग फिरै, कीन्हों नाहिं विचार ।
सत्य पुरुष जानो नहीं, कैसे उतरै पार ॥ २२ ॥

द्वापर बीतो कलियुग आयो । राजाको शुकदेव सुनायो ॥
कलियुगकी दुर्बुद्धि बताऊँ । सुनहु परीक्षित कहि समुझाऊँ॥
ओछी बुद्धि मनुष्यकी होगी ।सकल विकल अरु मनके रोगी॥
सूक्षम ज्ञान महाअभिमानी । नहीं मानि हैं वेद पुरानी ॥
परमेश्वरकी निन्दा करिहैं । जती मसानी चितमें धरिहैं ॥
खेतरपाल भूमिया मानै । कृत्रिमको कर्ता करि जानै ॥
परमेश्वरकी बात न भावै । ऐसा उत्तर तुरत बतावै ॥
कहि हैं राम कहां है भाई । हमहूको तुम देहु दिखाई ॥

दोहा-चहूँ ओर हरिको विभव, सात दीप नौ खण्ड ।
चरणदास सुनु आंधरे, रच्यो किन ब्रह्मण्ड॥२३॥
भक्ति विना दीखै नहीं, इन नयनन हरिरूप ।
साधुनको परगट भयो,बिना भक्ति हरि गूप॥२४॥

साधु सन्तकी निन्दा करिहैं । भजन करै तासे बहु अरिहैं ॥
करि अभिमान आपमें जरिहैं । गुरुको कहो नेक नहिं करिहैं॥
पंथ खडे करिहैं छत्तीसा । भरम पूजि तजिहैं हरि ईसा ॥
दम्भ झूठकी सेवा करिहैं । झूठे पंथनमें जा लरिहैं ॥
गऊ ब्राह्मण शिथल होई । बाप पूतमें परिहै दोई ॥
विद्यादान कपट व्यवहारा । राजा दुष्ट दुखित संसारा ॥
वेद पढे करिहैं अभिमाना । हम पंडित अरु सब अज्ञाना॥
पढे पुराण भेद नहिं जानैं । साधुनसों झगड बहु ठानैं ॥
पंथ पुजाय हरिहिं बिसरावैं । झूठे बात विवाद बढावैं ॥
व्यभिचारिणी होइहैंबहु नारी । बोले झूठ बहुत परकारी ॥

शुकदेव कहैं राजासों वैना । सो अब देखे अपने नैना ॥
राजा डाँटि बाँधि करि लूटे । पूजै भूत रामसों छूटै ॥
गौ विष्टा सो खाती जानी । पंडित देखे बहु अभिमानी ॥
दम्भ कपट बहु पूजा दौरी । कलुवा जाहर पूजें बौरी ॥
पण्डित वेद पढे विसरावैं । स्याने भोयेको शिर नावैं ॥
हरिके साधुनको विसरावैं । तज राम औरनको ध्यावैं ॥
हरिकी भक्ति सदा चलि आई । वेद पुराणनमें जो गाई ॥
उनको समझि भये जो ज्ञानी । नाभा जिनकी भक्ति वखानी ॥
जिनकी महिमा सब जग जानी । सब जानत हैं चतुरा ज्ञानी ॥
पीपा सदना सैना नाई । धना जाट अरु मीराबाई ॥
नामदेव रैदास चमारा । तुलसी माधो सीर विचारा ॥
कूबा कुम्हरा फत्तू सक्का । सऊ समरन रंका वंका ॥
करमैती अरु करमा बाई । दास कबीरा वाणी गाई ॥
जैदेवा अरु नरसी महता । दास मलूक कडासें रहता ॥
अनन्तानन्द कील अरु जंगी । देव मुरारि निपट सरवंगी ॥
नरहरि लालदास हरिवंशा । रंगनाथ बनवारी हंसा ॥
नानक सूरदास अरु साधू । सनक सनन्दन कहिये आदू ॥
ध्रुव प्रह्लाद विभीषण शवरी । हनूमान शंकर औ गवरी ॥
वाल्मीकि अम्बरीश सुदामा । मोरध्वज राजा संग्रामा ॥
बहुतक भक्त और जो भये । नाम न जानूं जात न कहे ॥
कई कोटि वैष्णव हैं बांके । सबही गये मुक्तिके नाके ॥
चरणदास हरिभक्ति विचारी । सुमिरि सुमिरि पहुँचो नरनारी ॥

दोहा—लिखि पढि समझि विचार करि, सदा करौ हरि ध्यान ।
कृष्ण भक्ति दृढ करि गहो, मिटै सकल अज्ञान ॥ २८ ॥

कवित्त सांगीत ।

मुकुट जटित शिर अधिक विराजत, गहे वँसुरिया अधरन धरनम् ।
शंख चक्र गदा पद्म विराजत, कोटि मदनकी छबि बरनम् ॥
गिरिवर नख धरि असुरन मारे, सन्तनके दुखको हरनम् ॥
जन चरणदास चरणनको चेरो, सदा रहै गिरिधर शरनम् ॥
कुमकुम विन्दी दीपित भालं, उदधि जात द्युतिता हरनम् ॥
मकराकृत कुण्डल अतिराजत, झुमक दामिनी छबि धरनम् ॥
कटि किंकिणि पैंजनि पग वाजत, मुक्तमाल सुरसरि बरनम् ॥
जन चरणदास चरणनको चेरो, सदा रहै गिरिधर शरनम् ॥
सुन्दर बाल लाल सँग लीन्हे, रास करत मन अति मगनम् ॥
घुमरि घुमरि धुकि धुकि कर निर्त्तत, खुटरखुटर नाटक बरनम् ॥
मधुर मधुर ध्वनि वज्जत गज्जत, झनक झनक झनका झरनम् ॥
जन चरणदास चरणनको चेरो, सदा रहै गिरिधर शरनम् ॥
रास रचावैं सब सचुपावैं, सांवरे वदन छबि वर्णनम् ॥
धुधक धुधक धूधूकरि नृत्यत, तक्कत तक्कत ताधिन धिननम् ॥
झुनुक झुनुक नूपुर झुनकारत, झनकझनक झनझन झननम् ॥
जन चरणदास चरणनको चेरो, सदा रहै गिरिधर शरनम् ॥

क०—नन्दके कुमार हौं तो कहौं वारवार मोहिं,
लीजिये उबारि ओट आपनीमें कीजिये ।
काम अरु क्रोध काटि डारो यमबेडा प्रभु,
माँगौं एकनाम मोहिं भक्तिदान दीजिये ॥
औरकी छुटाओ आश सन्तनको दीजै साथ,
वृन्दावन वास मोहिं फेरिहू पतीजिये ।
कहै चर्णदास मेरी होय नाहिं हास श्याम,
कहूँ मैं पुकारी मेरी श्रौन सुनि लीजिये ॥ १ ॥

वाही हाथ कुच गहि पूतनाके प्राण सोखे ।
पाय ऊंचो पद निज धामको सिधारी है ॥
वाही हाथ श्रीधरको मुख माडो दहीसेती ॥
छातीपर पाँव दै मरोरि जीभ डारी है ॥
वाही हाथ कूवरीके कूबरको सीधो कियो ।
वाही हाथ मत्तगज खेंचि मूढ मारी है ॥
वाही हाथ बाँह चर्णदास कहै आय गहो ।
जाही हाथ यमुनामें नाथ्यो नाग कारी है ॥ २ ॥

इति श्रीस्वामिचरणदासजीकृत व्रजचरित्र सम्पूर्ण ।



वैकुंठविहारिणे नमः ।



# अथ अमरलोकअखण्डधामवर्णन ।

दोहा—करूँ प्रणाम श्रीशुकदेवको, सो हैं गुरू दयाल ।
काम क्रोध मद लोभसे, काढ़ें मेरे साल ॥ १ ॥
वाणी विमल प्रकाश दी,बुद्धि निमल की तात ।
सोहिं मूरख अज्ञानको, नहिं आवत है बात॥ २ ॥
अमरलोक वर्णन करों, वेही करैं सहाय ।
दृष्टि हिये मम खोलिकर, सबही देहु दिखाय॥ ३ ॥
भेद लियो गुरुदेवसों, अद्भुत रचों सुग्रन्थ ।
साखी वेदपुराणमें, जानी सुनिये सन्थ ॥ ४ ॥

भेद अगोचर कोइ न जाने । गुरु दिखावै तो पहिचानै ॥
पता कहैं कछु वेद पुराना । ज्योंका त्यों उनहून बखाना॥
कछु कछुमत सारगहू भाखें । फिरि भूलें समुझैं नहिं साखें॥
हरिकी कृपा प्रगट मैं गाया । किया उजागर खोलि सुनाया॥

दोहा—महा कठिन दुर्लभ हुतो, अमरलोकको भेद ।
ताको मैं बीजक कियो, भाख्यो भेद अभेद ॥५॥
निराकार तो ब्रह्म है,माया है आकार ।
दोनों पदवीको लिये, ऐसा पुरुष निहार ॥ ६ ॥

माया जीव दोऊते न्यारा । सो निज कहिये पीव हमारा ॥
क्षर अक्षर निरअक्षर तीनो । गीतापढि सुनि इनको चीनो॥

गीता अक्षर जीव बतावै । क्षर माया सोइ दृष्टि दिखावै ॥
निरअक्षर है पुरुष अपारा । ज्ञानी पण्डित लेहुँ विचारा ॥
जीवातम परमातम दोऊ । परमातम जानत है कोऊ ॥
आतमचीन्हिपरमातमचीन्हों । गीतामध्य कृष्ण कहि दीन्हों ॥
माया उपजै विनशै अतिही । चेतन ब्रह्म अमर है नितही ॥
पारब्रह्म पुरुषोत्तम जानो । चरणदासके सो मन मानो ॥

दोहा–अमरलोक बिच पुरुष है, ब्रह्म जु सबके माहिं ।
माया दरशत है सबै, ब्रह्म दिखत है नाहिं ॥ ७ ॥

अब सुन अमरलोककी बानी । त्रैगुण रहित परम सुखदानी ॥
तेज पुंजके ऊपर राजै । अहं विराट सो बाहर गाजै ॥
ताको ज्योति कहत नरलोई । तेजपुंज कहियत है सोई ॥
सूरज मण्डल ताहि बतावै । योगी योग युक्तिसों पावै ॥
सूरज मण्डल जैहै चीरा । वा लोकै कोइ पैहै बीरा ॥
कोटि भानुको सो उजियारो । तेज पुंजको रूप विचारो ॥
तीनि लोकसों बाहर होई । सात भवनसों बाहर सोई ॥
ताके ऊपर अविचल लोका । पाप पुण्य दुखसुख नहिं शोका ॥
काल नजाल अवधिनहिं होई । रंजितदास जहँ सुरति समोई ॥
सदा अगोचर गुप्तसों गुप्ता । जहां विराजत है भगवंता ॥
अमरलोक निज लोक कहावै । चौथा पद निर्वान बतावै ॥
अगमपुरी वेगमपुर ठाऊं । कहा बुद्धि जो सब गति गाऊं ॥
कछु इक वरणि बताऊं वाको । ब्रह्मासुत सतयुगमें भाषो ॥
पुष्पद्वीप है श्वेत अकारा । सब ब्रह्मण्डनसों है न्यारा ॥
जो कोइ जाय बहुरि नहिं आवै । आवागमन सकल बिसरावै ॥
जो कोइ गयो बहुरि नहिं आयो । देही दिव्यरूप अति पायो ॥
सोलह वरष उमिरि नित रहै । अजर अमर नित आनँद लहै ॥

वृद्ध बाल होय न तरुणा । षोडश भानु रूप जहँ धरणा ॥
तत्त्वस्वरूपी काया पावै । भवसागरमें बहुरि न आवै ॥
पांचतत्त्व बिन है थिर थावो । ना वह बन्यो न कृत्य बनायो ॥
ओर छोर कछु दीखत नाहीं । कबसों है औ कबसों नाहीं ॥
है अडोल मर्याद न ताकी । बे परमान वेद यों भाषी ॥
वेद पुराण पार नहिं पावै । कछू कछू धरि ध्यान बतावै ॥
अनन्त भानुको सो उजियारो । पिण्ड ब्रह्मण्ड दोउते न्यारो ॥
लोकमध्य अविचल निजधामा । श्वेत स्वरूप अगम पुर नामा ॥
अगमपुरी निरधाग मूँची । हंस लहैं जिनकी मति ऊंची ॥
बेहद लोक बन्यो अतिभारी । असंख्य भानकीसी उजियारी ॥

दोहा–हद कहूं तो है नहीं, बेहद कहूं तो नाहिं ।
ध्यान स्वरूपी कहत हो, बैन सैनके माहिं ॥ ८ ॥

अति उज्ज्वल रवि दृष्टि न ठहरे । मणि हीरा लागे जहँ गहिरे ॥
कई रङ्गके हीरा भाखे । कलश कँगूरा अस्थिर राखे ॥
ता भीतर द्रुम बहुत अशोका । अछयवृक्ष फल लगे निरोका ॥
कल्पवृक्ष बहुरङ्ग बिरङ्गा । फल अरु पात फूल इकसङ्गा ॥
कोमलदल शोभा अति भारी । अजरपुरुष दरशन अधिकारी ॥
चेतनरूप गहर अति छाहीं । साधु रहत तिनकी परछाहीं ॥
षोडश भानु सम देह स्वरूपा । हरिरस मदमांत निधिरूपा ॥
उन वृक्षनके निच निच मंदर । अनगिन महल महामठ सुंदर ॥
महल महलपर ध्वजा पताका । पुरुषोत्तम पुरुष नामलिखिराखा ॥
ध्वजा पताका लहरत ऐसे । सिमिटि बीजुरी बहुतक जैसे ॥
रतन जटित तिनकी अँगनाई । बैठत उठत चलत हरषाई ॥
काम क्रोध नहिं लोभ अधीरा । निर्मल दशा शील गुण धीरा ॥
जहां न आलस नींद जँभाई । भूख प्यास मिलता नहिं भाई ॥

मल पसीना आँसू नाईं । दिव्य देह धारि रहे गुसाईं ॥
एकै रूप एकै गति पाई । एक वरण एकै सबदाई ॥
संशय शोक रोग नहिं देहै । मगनरूप मन आनँद लहै ॥
षोडशवर्ष अवस्था जितही । गुण पौरुष हरिजनकेअतिही॥
दिविभूषण दिविवस्तर अङ्गा । श्यामगात सुन्दरछवि अङ्गा ॥
जुलफ लटकि रहीं कजरारी । कुण्डलछविसोहतअधिकारी॥
नासा मोती सुवक सुढारा ।सुन्दरतिलकलगतअतिप्यारा॥
दीरघ दृष्टि कछुक अरुणाई । माथे मुकुट जटित ललिताई॥
घरवर दिव्य आसन सिंहासन । और महासुख हैं हरिदासन ॥

दोहा–भय मेटन औ तम हरण, तुमहिं नवाऊं सीस ।
चरणदास चरणन परो, भक्ति करो बकसीस ॥ ९ ॥
गुरु शुकदेव कृपा करि, दीन्हो भेद लखाय ।
साधुनके पग पूजते, सकल व्याधि मिटिजाय ॥१०॥
आस पास हरिजन रहैं, मध्य ईश दरबार ।
रसिक केलि बहु कुञ्ज हैं, ललितद्वार हैं चार ॥११॥
राजमहल जनपति रहैं, कापै वरण्यो जाय ।
गिनत शारदा छविअधिक, गौरीसुतथकिजाय ॥१२॥

अनंत भानुको सो उजियारो । वा मण्डलको रूप विचारो ॥
समतुल और कासु को लाऊं । वैन सैन दै ताहि बताऊं ॥
चन्दन सूर वहि ठौर न चीन्हों । हित दृष्टान्तको पटतरदीन्हों ॥
आदि अनादि पुरातम रामा । जैसे आदिपुरुष घनश्यामा ॥
श्वेतहि रूप स्वरूप सुगन्धा । सहजमहकजहँ उठत सुगन्धा॥
चार द्वार बहु बाजन बाजै । अनहद शब्द महाध्वनिगाजै॥
दिव्यरूप जो लगे किवाँरा । तिनके आगे बाग सुढारा ॥
हरो बाग अद्भुत है भाई । दूजे द्वार महा अरुनाई ॥

तीजे द्वार बाग पियराई । चौथे ऊदो है थिरथाई ॥
उन बागनके आसा पासा । बहुत भवन जहँ साधुनिवासा ॥
मेडी मण्डप बहुत सुढारी । श्वेत वरण सुन्दर अधिकारी ॥
साधु सन्त जहँ हरिजन पूरे । दास भाव भावना शूरे ॥
षोडश भानुकि सुन्दरताई । जगत जीति पहुँचे जो जाई ॥
सखा भाव पहुँचत वहि ठाई । सखीभाव भीतरको जाई ॥
धरे स्वरूप अनूपम भारी । सदासुहागिनिहरिप्रियप्यारी ॥
परम पुरुष पुरुषोत्तम पावैं । निकट रहे नितकेलि बढावैं ॥
चारों श्रुति जहां कर जोरैं । भाव बताय तान बहु तोरैं ॥
दरशन कारणकी सुखदाई । धरे स्वरूप रहें हरपाई ॥
रतन जडित जहँ भूमि सुहाई । कोटिभानुछवि रहत लजाई ॥
एकसमय नित ऋतुछवि पावत । शीतउष्णपावस नहिं आवत ॥
ऋतु वसन्त पीरी छवि सोहै । वनवन कुंजलता मन मोहै ॥
निज वृन्दावन है वहि ठाहीं । सदा वसो मेरे मनमाहीं ॥
दिव्य फूल फूले बहुरंगा । विन ऋतु फूले रंग विरंगा ॥
सकल सखी विचरत हरिसंगा । गोरी सखी श्याम हरि अंगा ॥

दोहा-पुष्प जु फूले नित रहें, मौरें ना कुम्हिलायँ ।
कई वरण कइ रंगसों, अति सुगन्ध हरपायँ ॥ १३ ॥

उन पुष्पनको नाम न जानों । कहा नाम लै तिनहिं वखानों ॥
बहुत वृक्ष कुंजन वनछाहीं । फल अरु फूल लगे उनमाहीं ॥
काहू द्रुमन फल नहिं फूला । पुष्प रूप ह्वै आपहि भूला ॥
कोउ लाल रूप ह्वै छायो । कोउ श्वेत रूप मन भायो ॥
रंग रंगके वृक्ष वखाने । सो पुरुषोत्तमके मनमाने ॥
वनके माहिं बहुत जहँ क्यारी । पुष्प रंग छवि न्यारी न्यारी ॥
कई भांतिकी वास तरंगा । मनन रूप बोलत स्वरभंगा ॥

वन बिच श्वेतरूप छवि नाना । गोल चौंतरो रूप निशाना ॥
इक रस चेतन परम सडोला । कोटिभानुछविअमर अडोला॥
जहँ परिक्रमा सखी सहेली । बारह भानु रूप अलबेली ॥
दिव्य दमक जहँ हीरा लागे । सात रंगके झिलमिल तागे ॥
जर्दा लाल श्वेत अरु पीरा । हरित श्याम लहरी अतिधीरा॥
तापर चौंसठ खम्भा दमकैं । मानो कोटिभानु छवि झमकैं॥
खम्भन लगे लाल अरु मुक्ता । पन्ना लगे वेलिकी युक्ता ॥
मूँगा लाल पिरोजा भारी । ध्यान धरो ताको नर नारी ॥
इक सबलगे बखानों ऐसे । जैसी युक्ति लगे हैं तैसे ॥
जड़ लालनकी विद्रुम डारी । पन्ना पात वृक्ष गति धारी ॥
चुन्नी पँचरँग फूल सुहाये । फल मुक्ताहल झलक झुकाये ॥
और बनी बहु चित्तरकारी । वेलि वङ्क बूटा अधिकारी ॥
हीरा मोती चेतन होई । जानै साधू बिरला कोई ॥

दोहा—ताकी छवि अति ललित है, शोभा सरस सुजान ।
लगो चँदोवा दिव्य अति, चेतन करो बखान ॥१४॥

लगे चँदोवा झालरि मोती । मानो उडुगण झिलमिल ज्योती
झालर बनी चँदोवा केरी । दिव्य दृष्टि करि साधुन हेरी ॥
तापर रंगमहलकी शोभा । चेतन आनँद सुखकी गोभा ॥
अस्थिर इकरस भीत सुढारी । बने झरोखा अद्भुत बारी ॥
अजब कँगूरा सुबक सुढारे । चौंसठ कलश लगें अतिप्यारे॥
रतन जटितकी खिड़की सोहैं । तिनके आगे दिनकर को हैं ॥
भीत झरोखा कलशन माहीं । नग पन्ना लागे सब ठाहीं ॥
दोहा—मणि हीरा माणिक लगे, रंगमहलके माहिं ।
बिन पहुँचे निजधामके, क्योंहू दीखत नाहिं॥१५॥
आस पास बहु कुंज हैं, बीच लालको धाम ।

चरणदासको दीजिये, सखियनमें विश्राम ॥१६॥
जैसे चौंसठ खम्भ हैं, तैसे करों वखान ।
छत्र सिंहासन वर्णहूं,अरु सखियनकी आन॥१७॥

तीस खम्भमें खम्भा वीस । तामें चौदह अम्भा ईस ॥
परम बिछौना है थिरथाये । मानों सूरज लक्ष विछाये ॥
तापर सिंहासन बड़भागी । श्वेतरूप चेतन अनुरागी ॥
सिंहासन पर कछू विछायो । शोभा ताकी कहत लजायो॥
धरे गेंद वा तकिया नीके । छत्तर सोहैं ऊपर पीके ॥
पियकी शोभा कहाँ वखानूं । आदि अन्त ताको नहिं जानूं॥
अजरपुरुष पुरुषोत्तम स्वामी । सब जीवनको अन्तरयामी ॥
पारब्रह्म अविचल अविनाशी । वायें अंग रूपकी राशी ॥
गोरी राधा कृष्ण श्यामघन । सिंहासनपर लसत मुदित मन॥
आसन जहाँ अखिल जगदीशा। मुकुट चन्द्रिका सोहत शीशा॥
मकराकृतकुण्डल छवि ऐसी । जगमें कहा वखानूं जैसी ॥
जुलफें श्याम भुवंगम कारी । कजरारी अरु घूँघरवारी ॥
सहज सुगन्ध रहैं महकाई । लांबी चिकनी अरु बलखाई॥
बांकी भौंहैं कुटिल अनियारी । तिरछी पलकें लागें प्यारी ॥
रसके माते घूम घुमारे । ललचौंहें दृग हैं कजरारे ॥
बांके दीरघ अरु ललचौं हैं । चितवत सखियनके मन मोहैं॥
सुवक वुलाक नाकमें सोहैं । ध्यान करत मेरो मन मोहैं ॥
बिज्जुलिसी मुसकानि पियाकी।मन खैंचनिअरुभालहियाकी ॥
वदन श्यामघन नैन निहारूँ । कोटि भानु छवि सुखपरवारूँ॥
दिव्यनिसो अँग मांहीं सोहैं । सूरज कोटिकला छवि सोहैं॥
कंठी कंठ धुकधुकी झमकें ।तामधिकौस्तुभमणि अतिदमकें॥
मोतियनकी माला वनमाला । हुलसें देखि धामकी वाला ॥

दिव्य बँधो गल जंग जड़ाऊँ । नौरतननके बाजू बाऊं ॥
पहुँची कड़ा कहा छवि गाऊं । समतुल ताकी कहा बनाऊं ॥
दिव्य जहांगीरी करमाहीं । ताकी सम कछु कलमें नाहीं ॥
रतन चौकमें लाल विराजैं । शोभा गावत मो मन लाजैं ॥
रतन चौक है पीठ हथेली । लगी जँजीर मँदरियन मेली ॥
चौका सुघर हियेपर राजैं । कटिकिंकिणि घुँघुरुध्वनि बाजै
युगल चरण पेंजनि झनकारे । दिव्य टोरे तिनमें ठनकारे ॥
कोटिचन्द्र दश नखपर वारू । तलुअन चिह्न इकीश निहारू ॥
बायें अंग राधिका प्यारी । कोटि चन्द्र छवि मुखपर वारी ॥
युगल सखी लै चवर डुरावें । हिरदय हरपि महा सुख पावें ॥
खंभ खंभ ढिग सखी सहेली । चौदह खड़ी ईश अलबेली ॥
और सखी बहुतक वहि ठाऊं । शोभा जिनकी कहत लजाऊं ॥
नित्य किशोरी गोरी सारी । पांच तत्त्व त्रैगुणते न्यारी ॥
दिव्य वस्त्र आभूषण नाना । अधिकरूप छवि बारह भाना ॥
कजरारी कच लटकें वेनी । मोतियन माँग भरी छवि पेनी ॥
चूडामणि गहनो अति नीको । शीशफूल अरु वेणी टीको ॥
करणफूल सँग बन्दी लागी । झुमके थिरकें महा सुभागी ॥
अंजन आँजे नैन ढगारे । तीखे अनियारे पिय प्यारे ॥
घुँघरवारी अलकें लटकें । वेसरनासा छवि लिये मटकें ॥
चम्पाकली नौलरी माला । चन्दन हार सु पहिरे बाला ॥
कँठुला कँसे गले जनेऊ । अरु हिय चौकी महा असेऊ ॥
सखी शिंगार हार सब साधे । बाजूबँद बाहन पर बाँधे ॥
सदा सुहागिनि पहिरे चूरी । सुबक पछेली बँगली रूरी ॥
कँगनी अरु पहिरे जहँगीरी । रतनचौक छवि लगी जँजीरी ॥
छाप छला अरु पहिरे मुँदरी । दुहुहाथ पहिरे सुन्दर अँगुरी ॥

पाँवनसें पग नूपुर बाजें । नख शिखलौं आभूषण साजैं ॥
और सखी बिखरी बन माहीं । सो काहू विधि गिनी न जाहीं ॥

दोहा–सुन्दर छवि पियरे वसन, झुण्ड सखिनको जान ॥
कोट पुञ्ज ऊदे वसन, सुघर सवारी आन ॥ १८ ॥
लाल वसन बहुतक सखी, श्वेत वसन बहु नार ।
नील वसन बहु भामिनी, सबको रूप अपार ॥ १९ ॥
हरे वसन नारी घनी, घनी गुलाबी वेष ।
बहुत झुण्ड कइ रंगसो, गाय सकैं नहिं शेष ॥ २० ॥

निजवन चौंसठ खंभ माहीं । होत अखण्ड रास वहिठाहीं ॥
झुण्ड सबै यों बनि बनि आवें । हुलसि हुलसि लालन ढिग धावैं ॥
रासकेलि खेलैं बहु रंगा । सदा विहार करैं पिय संगा ॥
कबहूँ घुमरि घुमरि घुमरावैं । नैन सैन दे भाव बतावैं ॥
कबहूँ थेइ थेइ थेइ थेइ करैं । कबहूँ अँगुली नासा धरैं ॥
कबहूँ कर उठाय गति चालें । सांगोपांग बतावत हालें ॥
कबहूँ ठुमक ठुमक पग धावैं । घुंघुरूकी गति अधिक बजावैं ॥
तो अनुराग रागनी गावैं । बाजे अद्भुत अधिक बजावैं ॥

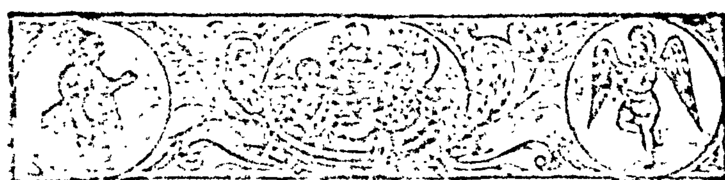
दोहा–कहाँ बुद्धि जो कहिसकूं, रासकेलि को साज ।
अद्भुत लीला ह्वै रही, वर्णत आवै लाज ॥ २१ ॥
अखण्ड धामलीला अमर, नित वृन्दावन रास ।
नित विहार जहँ होत है, चरणदासको वास ॥ २२ ॥
गौरीसुत नहिं गाय सके, नहीं शारदा वाम ।
चरणदास कहँ बुद्धि है, वरणि सके निजधाम ॥ २३ ॥
बड़ी दया मोपै करी, कृष्णकुँवर सुन लाल ।
बाणी आप बनायकै, कीन्हो मोहिं निहाल ॥ २४ ॥
मम हिरदयमें आयकै, तुमहीं कियो प्रकाश ।

जो कछु कहों सो तुम कहौ, मेरे मुखसों भास ॥२५॥
आदि पुरुषपरमातमा, तुमहिं नवाऊँ माथ ।
चरणन पास निवास दे, कीजे मोहिं सनाथ ॥ २६ ॥
तुम्हरी भक्ति न छाँडहूँ,तन मन शिरक्युँन जाव ।
तुम साहिब मैं दास हूँ, भलो बनो है दाँव ॥ २७ ॥
गुरु शुकदेव कृपा करी, मूरख भयो प्रवीन ।
मम मस्तक पर कर धरचो,जानि निपट आधीन॥२८॥
कोटि नासको फल लहै, तिरवेणी असनान ।
शोभा गावै लोककी, मूरख होय सुजान ॥२९॥
पढै सुनै जो प्रीतिसों, पावै भक्ति हुलास ।
नित उठिकर तू पाठ यह,चरणदास कहि भास॥३०॥
प्रेम बढै अघ सब हरै, कलह कल्पना जाय ।
पाठ करै या लोकको, ध्यान करत दरशाय ॥ ३१ ॥

इति श्रीअमरलोक अखण्डधामलीलावर्णन श्रीस्वामि-

चरणदासजीकृत सम्पूर्ण ।

श्रीशेषशायिने नमः ।



# अथ धर्मजहाज प्रारम्भः ।

## श्रीगुरुचेलासंवाद ।

शिष्य वचन ।

दोहा-ठाढो है कर जोरिकै, अरज करै चरणदास ।
एहो श्रीशुकदेव श्री, कछु पूछनकी आस ॥ १ ॥

गुरु वचन ।

पूछौ मनको खोल करि, मेटौं सब सन्देह ।
अरु तुम्हरे हिरदय विषै, सदा हमारो नेह ॥ २ ॥

शिष्य वचन ।

मैं तो चरणन दास हौं, तुमतौ परम दयाल ।
एकन पग पनहीं नहीं, एक चढैं सुखपाल ॥ ३ ॥
यही जु मोहिं बताइये, एक मुक्ति को जाहिं ।
एक नरकको जाय करि, मार यमोंकी खाहिं ॥४॥
एक दुखी इक अति सुखी, एक भूप इक रंक ।
एकनको विद्या बडी, एक पढैं नहिं अंक ॥ ५ ॥
एकनको मेवा मिलै, एकन चनेभी नाहिं ।
कारण कौन दिखाइये, करि चरणनकी छाहिं॥६॥
यही मोहिं समझाइये, मनका धोखा जाइ ।
है करि निस्सन्देह मैं, चरण रहौं लपटाइ ॥ ७ ॥

गुरु वचन ।

जिन जैसी करणी करी, तैसही फल पाय ।
भुगतत हैं वे जगतमें, ताको बदला आय ॥ ८ ॥

शिष्य वचन ।

तुम कही सो हृदय धरी, व्यास पुत्र शुकदेव ।
सुगति कुगति करणीनको,भिन्न भिन्न कहु भेव॥ ९ ॥

गुरु वचन ।

अब मैं वर्णन करत हौं,ऐ शिष्य धर्मजहाज ।
तामें बैठ विधि सहित, रहनी गहनी साज ॥ १० ॥
जो कोइ करणी ना करै, बहुत करै बकवाद ।
रीता जानों तासुको, छूटे ना जग व्याध ॥ ११ ॥
कथनी के पूजी नहीं, करणी है ततसार ।
तामें लाभहि लाभ है, बदला दे कर्तार ॥ १२ ॥
सुरति कीन्ही साधुकी, तन मन लागी आग ।
बिन करणी कैसे बुझे, हरिसों नाहीं लाग ॥ १३ ॥
कथनी कथि दंभी भये, करै दूरकी बात ।
अन्तरमें करणी नहीं, मनहीं माहिं लजात ॥ १४ ॥
दंभी उनको जानिये, जगमें सिद्ध दिखात ।
तन मन वचन न साधिया, तिहुँ विधि रोपी घात॥१५॥
तन मन साधै साधुसो,वचन साधि जो लेय ।
उज्ज्वल करणीके सहित,रामभक्ति चित देय॥ १६ ॥
तनसों करणीहि करै, मनसों निश्चय लाय ।
वचन सु ऐसा बोलिये, जो सबकोहि सुहाय ॥ १७॥
बिन करणी थोथी सब बातैं । जैसे बिन चंदाकी रातैं ॥
तातें समुझि करो तुम करणी । बिन बोये नहिं उपजे धरणी॥

जैसा बोवै तैसा लुनिये । जानत ज्ञानी पण्डित गुनिये ॥
कांकर नींव बुवै सोइ पावै । अरु मेवा बोवै सोइ खावै ॥
पिछली करणी अवके पावै । ताहीको नर करम बतावै ॥
होनहार अरु भाग वही है । परालब्ध सोइ बडो कही है ॥
खोटी करणीसे दुख भारी । होवै रंक पुरुष अरु नारी ॥
कहैं शुकदेव सांच यह जानो । चरणदास ले मनमें आनो ॥

दोहा–कोई कोढी कोई आंधरा, कोई रोगी निर्धन्न ।
अंगहीन मांगत फिरै, कोई भूखा बिन अन्न ॥ १८ ॥

विना बुद्धि कोइ बावरे, कोइ छोटे तन हान ।
कोइ कर्मोसे अति दुखी, जीवे ना सन्तान ॥ १९ ॥

कोइ जगत आधीन है, कोई विना प्रतीति ।
कोइ सब वस्तूहीन है, यह पापोंकी रीति ॥ २० ॥

जन्म मरण बहु भांतिके, नाना भवन निवास ।
करणीहीसे होत है, ऊंच नीच घर वास ॥ २१ ॥

पशु पक्षी अरु चर अचर, सोभी छूटे नाहिं ।
कर्मोंहीकी चालसों, भुगते जगके माहिं ॥ २२ ॥

भाँति भाँतिके कष्ट घनेही । पावत हैं वे कर्म सनेही ॥
इनहीं आँखिनसों तुम देखो । अपने मनमें करि करि लेखो ॥
तन छूटे नरकै जावै हैं । नाना विधिके त्रास सहै हैं ॥
नरकनकी गति परघट जानो । शास्त्रमाहिं सब कियो बखानो ॥
अरु इक नरक जगतके माहीं । कोतवाल हाकिमके ठाहीं ॥
खोटे कर्मनसूं ह्वा जावै । त्रास सहै बहुतै बिललावै ॥
शुभकर्म्मी जो निकसे आगे । उठि हाकिम चरणनसे लागे ॥
कह शुकदेव साँच है करणी । सुनु रणजीत करै सो भरणी ॥

दोहा—शुभकरणी पिछली करी, उज्ज्वल पाई देह ।
शोभा जिनकी भागकी, चरणदास सुनिलेह ॥ २३ ॥

तनसों सुखी और धनधारी । सुत नाती सुन्दर संसारी ॥
नाना विधिके भोग करत हैं । अरु बहुतनके दुःख हरत हैं ॥
ऊंचे महल महा सुखदाई । जहां विराजत हैं मनलाई ॥
तीनों ऋतुमें वे सुख पावें । बहुतक लोग टहलमें आवें ॥
पिछली करणी करम जु लाये । जैसे तैसेही सुख पाये ॥
काहू मिली तुरंग सवारी । काहु पालकी झालर डारी ॥
काहू गज पाय बहुतेरे । लाखों पुरुष रहत हैं चेरे ॥
श्रीशुकदेव कहें ये बैना । चरणदास लखु अपने नैना ॥

दोहा—लाखों पगसों लगि रहे, रखें जीवका आस ।
ईश्वर तिनके जेइ हैं, वे हैं चरणहिं दास ॥ २४ ॥

ऐसी ईश्वर पदवी पाई । पुण्य प्रताप कहा नहिं जाई ॥
सुनिके शुभ करमनको कीजो । खोटकर्म्म सबही तजि दीजो ॥
इनहीं आँखिनसों सब सूझे । बुद्धिमान प्रत्यक्ष जो बूझे ॥
कोई चढे जाहिं रथ माहीं । सूरजमुखी तासुकी छाहीं ॥
कोइ किरोडपति लाखनवारा । कोइ हजारनको व्यवहारा ॥
कोई थोडेमें सुख पावें । ह्वै कर सुखी बहुत हरषावें ॥
पिछली जैसी करी कमाई । तैसी तैसीही निधि पाई ॥
शुकदेव कहि यों आलस हरियो । चरणदास शुभकरणी करियो ॥

दोहा—देव दानव अरु अप्सरा, मानुष यक्ष गण प्रेत ।
कर्मोंहीसे होत है, पाप पुण्यका हेत ॥ २५ ॥

नाहीं तो हरि है क्रिया नाहीं । एक दृष्टि सब ऊपर छाहीं ॥
जो जैसी करणी करि लेवै । हरि तैसाही बदला देवै ॥
अपना किया आपही पावै । पचालब्धि वह नाम कहावै ॥

घटै बढै वह नेकु न क्योंही। पावै वही जु करणी ज्योंही॥
नारी पुरुष मिलिकरिव्यवहारा। करणीसों उपजै संसारा॥
वाहै बोवै खेत किसाना। भांति भांतिके उपजें दाना॥
बाग लगावै सींचै माली। जब फल लागें डाली डाली॥
पक्षी अरु मानुष सुख पावैं। चरणदास शुकदेव सुनावैं॥

दोहा—माली करणी जो तजै, सींचै ना षटमास।
जब वह बाग उदास हो, दिनदिन वाको नास॥२६॥
दया धर्म पुण्य दानही, बड करणी है सांच॥
तीनलोक चौदह भुवन, माहिं न आवै आंच॥२७॥

तीरथ वरत कछू जो कीजे। अरु काहूको दान जु दीजे॥
याको भी फल नीको पावैं। चरणदास शुकदेव दिखावैं॥
शुभकरणी करि भक्ति उपावैं। तातें हरिके निकट रहावैं॥
करणी योग महा बलदाई। ईश्वर है पावै मुक्ताई॥
चार मुक्ति करणीसों पावै। मन करणीसो ज्ञान जगावै॥

दोहा—उज्ज्वल कर्म सदा किये, अरपे हित भगवान।
लहे मुक्ति सालोकयही, जन्म मरणकरि हान॥२८॥
सेवा करि भगवानकी, निकट विराजे जाय।
सामीप मुक्ति पाई तिन्ह, इन्द्रहुसे अधिकाय॥२९॥
ध्यान किया श्रीकृष्णका, भय जु वाके रूप।
तिन सारूप मुक्तिलही, तनधरि अधिक अनूप॥३०॥
पांचों मुद्रा योगबल, दशवें काढे प्रान।
मिला ज्योतिसेंज्योतिही, यह सायुज्य पिछान॥३१॥
सबही करणी है बडी, भक्ति सबन शिरमौर।
बाँह पकरि हरिहेत करी, राखै आपनी ठौर॥३२॥
अजामीलसेभी अधिक, जो कोउ पापी होय।

नाम जपै हिय शुद्धसों, पातक जावें खोय ॥ २३ ॥
महिमा गुरुके ध्यानकी, को करिसके बखान ।
मेरे मन निश्चय यही, जाय मिले भगवान ॥ २४ ॥
करणीसों सत्ती भवै, करणीसों दातार ।
करणीसों शूरा भवै, जावै स्वर्ग मँझार ॥ २५ ॥
भांति २ के सुख जहाँ, भोगै भोग अपार ।
धर्म पन्थ कोई चलै, शूद्रहि के नर नार ॥ २६ ॥
चारि समय नितनेम करि, सदा रहै निष्पाप ।
गिना जाय हरिजन विषे, होय नहीं जन ताप ॥२७॥
जिन जैसी करणी करी, सो निष्फल नहिं जाय ।
जाका बदला होगया, शुकदेवा कहे गाय ॥ २८ ॥
ब्राह्मण करणी ब्राह्मण होई । क्षत्री कर्मसों क्षत्री सोई ॥
वैश्य कर्म्मसों वैश्य कहावै । शूद्र कर्मसों शूद्र दर्सावै ॥
नहीं तो सबकी देह बराबर । पांचतत्त्व त्रैगुणसों कर कर ॥
कान आंख मुख नासा एकी । शीश हाथ पग काया देखी ॥
एक वाट ह्वै सबही आवै । एकहि भांति सबै बनि धावै ॥
दोहा—जाति वर्ण अरु आश्रम, करणीसों दर्शाय ।
चरणदास निश्चय करो, मूरख विरले पाय ॥ २९ ॥
धोबी छीपी आदि दे, ये छत्तीसों पौन ।
करणीके सब नाम हैं, जैसी करै सो जौन ॥ ३० ॥
कर्म्माँहीसे जग यह भासै । कर्म्माँहीसे फिर ह्वै नासै ॥
उत्पति परलय कर्म्म करावै । होनिहु कर्म्म ब्रह्म ह्वै जावै ॥
परलय समय कर्म जिय साथा । बुरे भले जो लागे गाथा ॥
संगहि जाय रहै मायामें । माया जाय लगत चरननमें ॥
वासा करि हरि चरनन माहीं । होय लीन वह मिटै जु नाहीं ॥

पूजी कर्म्म जो माया पासा । फिर उतपतिकी वाको आसा ॥
परलय काल बदी तै जबही । उतपति करै जगतकूं तबही ॥
चरणदास तुम ऐसे जानो । कहै शुकदेव साँच करि मानो ॥

दोहा--छः द्रव्य प्रलयमें रहे. इनका नाश न होय ।
सो मैं वर्णन करतहौं, बुद्धि आंखनसों जोय ॥ ४१ ॥

काल आकाश जीव अरु माया । पाप पुण्य प्रत्यक्ष बताया ॥
फिर उतपति इनहीसों होई । जानै पण्डित बिरला कोई ॥
काल न एको करे पुराना । प्रलय होय सो निश्चय जाना ॥
फिर परलयको लागा रहै । करै समाप्त आपना गहै ॥
उतपति समय और नहिं होई । परलय हुये जो उतपति सोई ॥
कर्म धरे रहैं ज्योंके त्योंहीं । उलटे पलटे नाहीं क्योंहीं ॥
जैसे के तैसे तन धारे । कर्म लगे रहैं उनके लारे ॥
कह शुकदेव कर्म्मगति भारी । चरणदास कोइ छुटै खिलारी ॥

शिष्य वचन ।

दोहा—चरणदास यों कहत है, सुनो गुरू शुकदेव ।
ज्यों करि हो निःकर्मही, ताको कहिये भेव ॥ ४२ ॥

गुरु वचन ।

कहै शुकदेव संदेह मिटाऊँ । ज्योंकी त्यों पूरी समुझाऊँ ॥
खोटी करणी नरकहि जावै । पाप क्षीण मृतलोकहि आवै ॥
भले कर्म्म जा स्वर्ग मँझारा । पुण्य क्षीण मृतलोकहि डारा ॥
ऐसे लोक लोक फिरि आवै । कर्म न छूटै दुख सुख पावै ॥
जैसे कर्म छुटै सो कहूँ । तो पै दया करतही रहूँ ॥
खोटे कर्म्म सो सकल निवारै । शुभ करणी को नीके धारै ॥
जाके फलको मन नहिं लावै । है निष्कर्म्म परमपद पावै ॥
फल त्यागै सोइ चरणनदासा । चरण कमलकी राखै आसा ॥

दोहा—सो पावै निर्वान पद, आवागमन मिटाय ।
जन्म मरण होवै नहीं, फिरि फिरि काल न खाय ॥ ४३ ॥

शिष्य वचन ।

जो जो कहि गुरुदेवजी, मुझ परी प्रत्यक्ष ।
चरणदास को दीजिये, साधु होनका लक्ष ॥ ४४ ॥

गुरु वचन ।

वही साधुआ जानिये, निर वारै सब कर्म ।
तन मन वचन साधे रहै, पालै अपना धर्म ॥ ४५ ॥
पहिले साधै वचनको, दूजे साधै देह ।
तीजे मनको साधिये, गुरुसों राखै नेह ॥ ४६ ॥
तिनहींके उपदेशको, राखै अपनो चित्त ।
ताको मनन सदा करै, भूलै ना नित वृत्त ॥ ४७ ॥

शिष्य वचन ।

जो जो कही सो जानिया, एहो श्रीशुकदेव ।
साधन तन मन वचनको, सबही कहिये भेव ॥ ४८ ॥

गुरु वचन ।

शिष्य सो तोसों कहत हौं, नीके सुन दे कान ।
ज्योंज्यों कर्म वचै दशौ, ताकी कर पहिचान ॥ ४९ ॥

वचनके चार दोष ।

प्रथम वचनके चार सुनाऊं । तेरे चितमें नीके लाऊं ॥
एक यही जो झूंठ न बोलै । साँच कहै तब हिरदय तोलै ॥
झूंठ कहनको पातक भारी । जो जप करै सु देह उजारी ॥
झूंठका जप लागत नाहीं । सिद्ध होय नहिंनिष्फल जाहीं ॥
अरु झूंठकी नहिं परतीत । झूंठकी खोटी सब रीत ॥

दूजे निन्दा नाहीं करिये । परके औगुण चित्त न धरिये ॥
निन्दाका भारी है पाप । यासों भी निष्फल है जाप ॥
तीजे कडुआ बचन न भाखै । सब जीवनसों हितही राखै ॥
खोटा बचन महा दुखदाई । जो साध सो अति बलदाई ॥
खोटा वचन तपस्या खोवै । नरक माहिं लैजाय समोवै ॥
मीठे वचन बोलि सुख दीजै । उनके मनका शोक हरीजै ॥
कह शुकदेवा चौथा सुनिये । चरणदास लै मनमें गुनिये ॥

दोहा–चौथे मौन गहे रहै, लक्षण अधिक अमोल ।
कम लगै जग बातसों, हरि चरचामें खोल ॥ ९० ॥

शरीरके तीन दोष ।

तनसों तीनि कर्म्म जो लागे । सो मैं कहूं तुम्हारे आगे ॥
चोरी जारी अरु हिंसा है । इन पापनसों भारी भय है ॥
कर्म छुटै जाकी विधि गाऊं । भिन्न भिन्न तोको समझाऊं ॥
तनसों चोरी कबहुँ न कीजै । काहूकी नहिं वस्तु हरीजै ॥
चोरी त्यागै सो सतवादी । तापर रीझै राम अनादी ॥
जारीके कर्म ऐसे मानौ । परतिरियाको माता जानौ ॥
तीजी हिंसा त्यागहि कीजै । दया राखि जीवन सुख दीजै ॥
दया बराबर तप नहिं कोई । आतम पूजा तासों होई ॥
कर्म छुटनका भारी गैला । ज्यों साबुन उजला पट मैला ॥
शुकदेवा कहै तनके कहे । तीनि करम अब मनके रहे ॥

मनके तीन दोष ।

दोहा–कहौं जु मनके तीनि अब, झीनी जिनकी बात ।
गुरु दिखाय सोइ दीखई, अरु विधि नाहिं दिखात ॥ ९१ ॥
खोटी चितवन बैरही, अरु तीजा अभिमान ।
इनसों कर्म लगै घने, मेटै सन्त सुजान ॥ ९२ ॥

खोटी चितवनि खोलि दिखाऊँ । जासों कहिये सो समझाऊँ ॥
कबहूँ चितवै पर नारीको । कबहूँ चितवै फुलवारीको ॥
मनहीं मनमें भोगे भोगा । हाथ न आवै उपजै शोगा ॥
कबहूं चितवै वाको मारों । कबहूं चितवै फांसी डारों ॥
कबहूं चितवै द्रव्य चुराऊं । वाको धन अपने घर लाऊं ॥
कबहूं चितवै ठगई करों । माल बिराना छलकरि हरों ॥
भांति भांति चितवनि उपजावे । बुरे मनोरथ कर्म लगावे ॥
तातें याका करे उपाऊ । होय जो साधू कर्म छुटाऊ ॥
जो चितवै तो हरि गुरु चरणा । ब्रह्मविचार सदाही करना ॥
खोटी चितवनि चितवै नाहीं । सदा रहै थिरताके माहीं ॥
कहि शुकदेव सो हिरदै रहै । इत उतको चित नाहीं बहै ॥

दोहा—दूजा कर्म जु बैर है, महा पापकी पोट ।
सदा हिया जलता रहै, करै खोटही खोट ॥ ९२ ॥

बैर भावमें औगुण भारी । तन छूटे जा नरक मँझारी ॥
बैरी याद रहै मन माहीं । हरिसों हेत लगन दे नाहीं ॥
तातें बैर भाव नहिं कीजे । याको कर्म्म लगन नहिं दीजे ॥
अरु तीजा जानो अभिमाना । गुरू कृपासों ताको जाना ॥
हूं हूं हूं हूं करता रहै । नीची होय तो अन्तर दहै ॥
कबहूं फूले मनके माहीं । मो समान कोउ ऊँचा नाहीं ॥
मैंही यों कर यों कर करिया । मो बिनुकारज कछू न सरिया ॥
अपनेको चतुरा बहु जानै । और सबनको मूरख मानै ॥
अभिमानी ऐसा मन लावे । हरिके गुण किरिया बिसरावे ॥
गर्व भरा खोटी वृति धारे । अपने मनसे कबहुँ न हारे ॥
शुकदेव कहै यहि पापी जानो । नरक जायगा निश्चय आनो ॥
रणजित सुनु अभिमान न कीजै । कर्म बचाय परम सुख लीजै ॥

दोहा-कृत्य धनी वेमुख भवै, गुरुसों विद्या पाय ।
उनको जान तनकही, आपनको अधिकाय ॥ ५४ ॥

कृतघ्नीका दृष्टान्त ।

जैसे इक दृष्टान्त सुनाऊँ । कथा पुरानी कहि समुझाऊँ ॥
महापुरुष इक स्वामी पूरा । ज्ञान ध्यानमें था भरपूरा ॥
लक्षण सभी हुते वा माहीं । आठपहर हरिहीकी चाहीं ॥
उनको शिष्य आन इक भयो । वहि उपदेश जु नीको दयो ॥
करिके प्यार निकट जो राखा । प्रीतिकरी अरु सब कुछ भाखा ॥
फिरि रामतकी आज्ञा लीन्हीं । उनहूं करि किरपा तव दीन्हीं ॥
पहुँचा एक नगर अस्थाना । ह्वांके मनुपन सिध वड जाना ॥
ठहराया अरु पूजा कीन्हीं । वहुत नरननें कण्ठी लीन्हीं ॥
वहुतक प्राणी आवें जावें । सन्ध्या भोर शीश वहु नावें ॥
महिमा देखि फूलि मनमाहीं । कहाकि हमसम गुरुभी नाहीं ॥

दोहा-गद्दी पर बैठा रहै, तकिया वडा लगाय ।
बहुत रहे आज्ञा विषे, शिरपर चँवर ढुराय ॥ ५५ ॥

गुरु परताप नहीं वह जानै । अपनीही बुधि वड़ी जु ठानै ॥
मूरख आगे क्यों नहीं भया । दीन होय करि द्वारे गया ॥
थोड़ेहीसे वहु इतराना । गुरुकी कृपा प्यार ना जाना ॥
वार वार शोच मन सोई । हमरो गुरु क्या ऐसो होई ॥
उनको तो नर कोइ कोइ जानै । हमको सिगरो देश वखानै ॥
दिन दिन वढ़ता दीखे आगे । मेरे भाग वड़ेही जागे ॥
मेरे मनमें ऐसी आवै । इनका शिष्य अव कौन कहावै ॥
वहीं अचानक गुरु ह्वां आया । वैठेही शिर शिष्य नवाया ॥

दोहा-जैसे आते वैष्णवहि, करता वह दण्डौत ।
ऐसेही गुरुसे किया, आदर किया न वौत ॥ ५६ ॥

देखि गुरु मन ईर्षा ठानी । वाको जाना बहु अभिमानी ॥
गुरुने कहि करि बहु धिरकारा। कहा कि तू अभिमानी भारा ॥
नाकि बुद्धि तेरी गइ खोई । वसी मत्सरता घटमें सोई ॥
मेरा सब उपदेश बिसारा । जग मोहनका मनमें धारा ॥
दश चौदनको शिष्यकरि भूला। गद्दी उपर बैठ बहु फूला ॥
शिष्यने कहा और क्या कीया। वही किया आज्ञा तुम दीया॥
तुमनेही सतसंग बताई । कीजो दीजो जित मन लाई॥
शिष्य सखा करि संगत बढाई । मेरी तुम्हरी भई बडाई ॥
देखि ईर्षा तुमको आई । हमरी देखी बहु अधिकाई ॥
फिर हँसि गुरु कहि तू अज्ञानी । मैं कहि संगति तैं नहिं जानी॥
मैं कहि भक्तनका सँग कीजो । सत पुरुषनके चरण गहीजो ॥
दिन दिन ज्ञान होय सरसाई । हरि गुरुसों ह्वै प्रीति सवाई ॥
तेरी तो गति और गई । महा अविद्यासें मति ठई ॥

दोहा—इतना मूँदे ज्ञानके, छाय रहा अज्ञान ।
राग कटाक्ष नहीं किया, भई बुद्धिकी हान ॥ ८७ ॥
कहा बात पूजी कहा, इतनेमें गयो भूलि ।
गति ओछी यह थोथरा, तापर पैठा फूलि ॥ ८८ ॥
लिङ्ग प्रात विभवसें, देह विसर्जन होय ।
तब भी जो गुरुको तजै, जाय नरकको सोय ॥ ८९ ॥
कछू तपस्या ना करी, नहीं किया कछु योग ।
मानो लगी समाधिही, ले बैठा तू भोग ॥ ९० ॥
रजगुणतमगुण लेलिया, तजा सतोगुण अङ्ग ।
करि गुरुको यह पीठही, करि विषयिनको सङ्ग ॥ ९१ ॥
अधिकारको छोडि कै, करि दुस्मकी हाट ।
गुरुमुखको तजि दिया, लई नरककी बाट ॥ ९२ ॥

इन बातनसों क्या सरै, बहुत भया विख्यात ।
तुमसे अधिकी मूढ नर, जगके बने दिखात ॥ ६३ ॥
हुकम बडा माया बडी, नामी बडे जु भूप ।
नर नारी बहु टहलसें, सुन्दर अधिक अनूप ॥ ६४ ॥
सन्तनकी गति और है, हरि गुरुसों सनमुक्ख ।
मुक्ति होय छूटैं सबैं, जन्ममरणके दुक्ख ॥ ६५ ॥
जगत बडाईमें फँसे, परी अविद्या छाहिं ।
नरक कुगति यमदण्डही, फिर चौरासीमाहिं ॥ ६६ ॥

हरि औ गुरुको शिरपर धरिये । सत पुरुषनकी संगति करिये ॥
रहिये साधुनके सँग माहीं । ध्यान भजन जहँ छूटै नाहीं ॥
ह्वै परिपक्क जहां मन रहो । गुरु मत दया दीनता गहो ॥
सहज सहज उपदेश लगाओ । भूलेको हर बाट बनावो ॥
तारन तरन बहुत जन भये । क्षमा दीनता धारे गये ॥
पै इनको अभिमान न आया । नेक न पडी अविद्या छाया ॥
आपा मेटी गुरुही राखा । जब बोले तब गुरुही भाखा ॥
तू अभिमानी जन्म गँवाया । पाप बोझ शिर बना उठाया ॥

दोहा—वोही नभकी ओरसों, वाणी भई जु आय ।
कियो गुरुसों मान तैं, चौरासी को जाय ॥ ६७ ॥
ह्वांसे गुरु रमते भये, शिष्यहि दै फटकार ।
कहा कि तेरे तन विषे, दूजो वडो विकार ॥ ६८ ॥
ता पाछे कछु दिननमें, देही भयो विकार ।
निकट आवौं ताकुके, ढांके सब नर नार ॥ ६९ ॥
कष्ट भयो अर्द्धंगको, रहो न काहू योग ।
आठ पहर वाको भयो, निश शोनही शोग ॥ ७० ॥
तन तजिकै नरकै गयो, फिर चौरासी माहिं ।

जो गुरुसों अभिमान करै, ताकी गति हो नाहिं ॥७१॥
कहै गुरू शुकदेवजी, चरणदास परवीन ।
मनसों तजि अभिमानको, गुरुसों रहिये दीन ॥७२॥
मान न काहूसों करै, सबहीसों आधीन ।
सुमिरत हरिकी भक्तिमें, जगत काजसों हीन ॥७३ ॥

अगमचेती दृष्टान्त ।

दश कर्म्मों को जानिये, महा पापकी खानि ।
तनमन वचन सँभारिये,यही जु अधिकि सयानि॥७४॥
कहूँ एक दृष्टान्तहो, सो परमारथ भेश ।
सुनि समुझे हिरदै धरै, तो लागे उपदेश ॥ ७५ ॥
नगर एक है अतिसुभग, बसैं लोग सुख सान ।
नर नारी सुन्दर सबै, अरु धनवन्ते जान ॥ ७६ ॥
नया करैं जहँ भूपही, बरष दिनाके माहिं ।
संवत बीते ताहुको, फिर वै राखैं नाहिं ॥ ७७ ॥

पकड़ डार दें नदी पारा । जहां भयानक अधिक उजारा॥
पशू आदि ताको भखि जावें । स्वपनासा देखैं बिनशावें ॥
नया भूप करि आज्ञा माने । ताको अपना ईश्वर जाने ॥
रहैं हुकुम माहीं कर जोरैं । वाको वचन न कबहूँ मोरैं ॥
छत्तरधारी वाहीं डारैं । जो मैं आगे कही उजारैं ॥
कई सैकड़ों ऐसे भये । चेते नाहीं निष्फल गये ॥
राजा नया और इक किया । सो वह समझ चेता हिया ॥
मनही मनमें करै विचारै । बहुत भूप जङ्गलमें डारै ॥
दोहा—बरस दिना जब बीति है, हमहूँको देहैं डारि ।
सरितानिके पारही, अधिकी जहां उजारि ॥ ७८ ॥

याके कछू उपाय विचारौं । तासेती यह जन्म न हारौं ॥
एक दिना इन यही विचारा । देखन गयो नदीके पारा ॥
जहां भूप जा जा करि मरते । तिनके हाड वहांही गिरते ॥
खडा जु होय देखि मन आई । नीकी ठौर बनाऊँ ह्यांई ॥
दृष्टि उठाय ऊँचि जो कीन्ही । कामदारको आज्ञा दीन्ही ॥
वन काटो आज्ञा दइ एता । फिरवा पांचकोशमें जेता ॥
सुन्दरसा इक कोट बनाओ । तामें सुन्दर बाग रचाओ ॥
करौ हवेली ताके माहीं । जैसी भूपनहूँके नाहीं ॥
गिलम बिछौने परदे लावो । अरु तय्यारी सबै करावो ॥
होयचुके जब मोहिं सुनावो । बहुत इनाम अधिक तुम पावो ॥

दोहा–वैसाही बनने लगो । जैसी आज्ञा दीन ।
बनते बनते बन चुकी, सुन्दर अधिक नवीन ॥ ७९ ॥

फिरि राजाको आनि सुनाया । राजा सुनि बहुतै सुख पाया ॥
अच्छी चीज वहां पहुँचाई । ह्यां जो रही न सुरति लगाई ॥
कहा कि एक दिना ह्वां जाना । क्षणक्षणहोय अविधिकीहाना ॥
पांचक गांव कोटके साथा । किये दियेलिखि अपनेहाथा ॥
अपना एक हितू मन भाई । भरी कचहरी लिया बुलाई ॥
करि इनाम ताको वह दिया । वाका देखा साचा हिया ॥
और कही जो राजा होवै । वाहि तलाक याहि जो कोवै ॥
वोही आठ महीने बीते । करणी करि भय मनके चीते ॥

दोहा–ह्वै निश्चिंत आनँद भय, चिन्ता भय नहिं कोय ।
अपना कारज करि चुके, ह्यां ह्वां एकहि होय ॥ ८० ॥

सुखहीमें वह वर्ष बिताया । अवधिबीतिफिरिवहदिनआया ॥
सब उमराव जुधरि कर आये । नया भूप करनेको लाये ॥
वाहि सिंहासनसों दियो डारी । कहा कि तुम्हरी बीती बारी ॥

ऐसे कहिकर गहि ले चाले । पार नदीके जंगल वाले ॥
शुभकरणीको करि यह राजा । अपने महलन जाय विराजा ॥
इतमें भी उन सुख बहुभारी । ना कोइ वैरी ना जंजारी ॥
अपनी करणीसे सुख पावे । रहो अशोक न चिन्ता आवे ॥
कहि शुकदेव चरणनों दासा । शुभ करणी करि पाया वासा ॥

दोहा—ऐसे मानुष देहको, जानहु नगर समान ।
राजा यामें जीव है, शुभ करणी परमान ॥ ८१ ॥

नाहि तो चौरासी जङ्गल है । भांति भांतिका जितही भय है ॥
पशु पशूको जित भखि जावे । नित भयमानि नहीं सुख पावे ॥
बहु दुख पावे खोटी करनी । जैसी करनी तैसी भरनी ॥
शुभ करणीको जो नर धावे । बहुतभाँति सुख सुरपुर जावे ॥

दोहा—भूप उसारि अपनी किया, अपना पूरण काम ।
ऐसेही शुभ कर्म सों, तुमहू पावो धाम ॥ ८२ ॥

दूसरी कथा ।

अरु इक कथा कहों अतिनीकी । जा सुनि जाय अविद्या जीकी ॥
इक राजा था बहु परवीना । सो वह पुत्र विना था दीना ॥
एक समय यहि रोग जो आया । पुत्र विना बहुते कलपाया ॥
कौन काज अब ह्यांको करि है । जो मेरी देही यह सरि है ॥
रामत करत सिद्ध इक आया । राजाने सब ताहि सुनाया ॥
सिद्धकहि बालक गोद बलावो । बेटाकरि तिहिं राज बिठावो ॥
राजा कहि जौं ध्यान लगावो । राजा भागसें ताहि बतावो ॥
फिर उन कही कुखोलि दिखाऊं । साहुकारको पुत्र बनाऊं ॥
वाका भाग्य लिखी यह राजा । ताको सुतकरि कीजे काजा ॥
फिरि उन वाको गोदहु लीन्हा । तांको राज काज सब दीन्हा ॥

कोइक दिनमें उन तन त्यागा । पुत्र राज्य करने तब लागा ॥
राज्य पितासों नीका कीन्हा । प्रजा आदिको सबसुख दीन्हा॥

दोहा–राज करत वर्ष भई,सुख ले अरु सुख दीन ।
वाके नग्गरके विषय, द्रव्य विना नहिं हीन ॥ ८३ ॥

एक दिना ऐसे भयो काजा । सोवत चौंकि उठा वह राजा॥
भोर भये सब फौज बुलाई । हरिकी आज्ञा सो समुझाई ॥
कहा जहांतक परजा मेरी । ताको लूटो जाय सबेरी ॥
आज्ञा लै सब फौज पधारी । परजा लूटी नीके सारी ॥
दूजे फिर कहि ह्वां तुम जावो । जिनकूं लूटा भवन जलावो ॥
घर परजाके सभी जलाये । नीच ऊंचने बहु दुख पाये ॥
तीजे वचन भूप यों भाखो । कहा फौजसों खोज न राखो॥
वडों वडों पर शस्तर मेलो । लडके बाले कोल्हू पेलो ॥
यह सुनि सकल प्रजा विरआई । राजापास पुकार सुनाई ॥
बहुतक राजा भये अनूठा । अपनी प्रजा कोइ नहिं लूटा॥

दोहा–पहिले सबको सुख दिया, अब ये तुम दुखदाय ।
कारण यह कहि दीजिये,सबहीको समुझाय॥ ८४ ॥
यह कहि साहूकारने, जो था याका बाप ।
कुयश चला संसारमें, बहुत लगाये पाप ॥ ८५ ॥
साहुकार पण्डित बने, और वडेही लोग ।
कोल्हूकी सुनि कतलकी, बहुतक माना शोग ॥८६॥
आये हैं फरयाद को, सुने बिगडते काज ।
सकल प्रजाको मारके,किसका करिहौ राज ॥ ८७ ॥
सकल प्रजा तुव शरण है,बकसि देउ महराज ।
अपनी अपनी भूमिमें, फेरि बसैं सब साज ॥ ८८ ॥

राजा कही सो मैं नहि जानूं । अपने मुखसे कहा बखानूं ॥
कहा पुरुष सो इक तुम आनो । जिनका कहा सांच तुम मानो ॥
यह सुनि ज्वान नवाबहि बारे। आकरि बैठे सबन मझारे ॥
सो इक नर बहुते इतबारी । जिनकी साखि हुती बहु भारी ॥
तिनको लै राजाके पासा । खडे किये सब चरणन दासा ॥
राजा उठि उनहींके मांही । मिलि बैठो पुनि वाही ठाहीं ॥
राजा कही जु हरिकी ओरें । ध्यान लगायो मनको मोरें ॥
घडी चारि जब ध्यान लगाया ।नभसे शब्द यही जो आया ॥

दोहा–ढील भूप तैं क्यों करी, इनको कीजे जेल ।
बडे कतलही कीजिये, छोटे कोल्हू पेल ॥ ८९ ॥

तीनहि बार लगाया ध्यानी । बारम्बार यही भइ बानी ॥
भूप कही क्या दोष हमारा ।कोपित भयो जो सिरजनहारा ॥
अब तुम परजासों कहि देवो । कतल पेलना कोल्हू लेवो ॥
आये नर कहि सबमें खोली । सुनि परजा ऐसे उठि बोली ॥
आपसमें सब कहने लागे । हम हैं मूरख बडे अभागे ॥
हम शुभकर्म कबहुँ नहीं कीन्हें।तिथि परबहि कहु दान न दीन्हें॥
कथा कीरतनमें नहि गये । कुटुंब जालमें पागे रहे ॥
हरिकी भक्ति नहीं चित लाई । ताते अब होती मुकताई ॥

दोहा–हरिही को बिसराइया, पूत महलके काज ।
नाम रहेगा जगतमें, सोभी रहा न आज ॥ ९० ॥

चले नरकको निश्चय जैहैं । मार यमोंकी तीक्षण खैहें ॥
कांपत है सब देह हमारी । आपसमें भाषे नर नारी ॥
ऐसे ही सब रो रो बोलें । व्याकुल भये धरणिमें डोलें ॥
एक ठावँ है मता उपाया । सो राजाको जाय सुनाया ॥
कर जोरे मुख तृण गहिलीन्हे ।नखशिखतनमन दीनहु कीन्हें॥

इक षटमास जु हमें बचाओ। अपने हरिको अरज सुनाओ॥
जामें जप तप धर्म बढावें। बोलैं सांच झूठ बिसरावैं॥
चोरी जारी हिंसा त्यागै। राति दिना हरिही सो लागै॥
दोहा–नितप्रति उठि शुभकर्म करि, लहै धाममें वास।
काम क्रोध बिसराय करि, होय चरणही दास॥९१॥
अब तुम हमें वेगि बकसाओ। मास षट्की छूट दिलाओ॥
हम रय्यत हैं सभी तुम्हारी। एक बार करो अरज हमारी॥
और कही तुम्हें बोझ हमारा। राजा सुनि उनओर निहारा॥
कही कि मैं अब कैसे कहूं। आठ पहर डरताही रहूं॥
अरज करत कांपै तन सारा। तेजवंत है वह दरबारा॥
पै तुम देखि दया उपजाई। मेरे भी मन ऐसी आई॥
बैठि अकेला ध्यान धरूंही। तुम्हरे कारण अरज करूंही॥
दिन यों बीता निशि जब आई। भूप ध्यान करि अरज सुनाई॥
दोहा–अरज करी उन दीन ह्वै, बार बार यह भाखि।
या परजाको मास षट, क्षमा दृष्टि करिराखि॥९२॥
जो जो इनके मनविषै, सो सो करैं उपाय।
छठ मासके ऊपरें, एक घोस नहिं जाय॥९३॥
देखि भूपकी दीनता, पिछले दीन दयाल।
नभसे वाणी यह भई, वही समय ततकाल॥९४॥
यह परजा तुव कारणे, बकसी है षट मास।
ऊपर जा दिन एक जब, कीजो इनका नास॥९५॥
आज्ञा भई भूपकी जबहीं। सोयो पलँग निडर ह्वै तबहीं॥
भोर भये बाहरको आया। सकल प्रजाको निकट बुलाया॥
कहा कि षटही मास बचाया। अपने मनका करिल्यो भाया॥
यह सुनि परजा सब हरषाई। अपने अपने घरको आई॥

कहुँ सिरकी कहुँ छप्पर डारा। पक्का मंदिर नाहिं विचारा॥
चोरी जारी सबै बिसारी। टाले भये सभी व्योहारी॥
अरु साधुनकीसी वृति धारी। बालक युवा और सब नारी॥
रहे नहीं ये खोटे मनके। भये तपस्वीसे सब जनके॥
दोहा–गाडा हुआ जो द्रव्य था, करी न ताकी आंट।
राखि लिया पटमासको, अरु सबदीन्या बांट॥ ९६॥
जिनके था धन तिनअन्न कीन्हा॥जिनपै ना था तिनका दीन्हा॥
आपसमें कहे धन कहकारि हैं। छठे महीना पाछे मरि हैं॥
यही समुझि उपजा वैरागा। सबही इन्द्रिनका रस त्यागा॥
फीके लगे भोग सब जगके। सहज छूटि गये काम जो अघके॥
सबकी दशा एक जो भई। मौत जानि करि चिन्ता ठई॥
दिन दिन दुर्बल होते जावें। हरिहीका जप ध्यान लगावें॥
एक एक दिन लागै प्यारा। भजन करें जगि न्यारा न्यारा॥
जिद अरु वाद न कोऊ ठानें। इक इक घरी अमोलक जानें॥
कहें कि खोवें तो कित पावें। कथा कीर्तनसों चित लावें॥
कथा कीरतन जिततित होई। साधु समागम ह्वैगये सोई॥
घर घर शुभ कर्मन व्योहारा। धर्म पकडि अघरस सब डारा॥
ज्यों ज्यों दिवसअवधिके आवें। घने घने शुभ कर्म कमावें॥
दोहा–जाको होवे मौत भय, जगसें लगे न चित्त।
झुके रामकी ओरही, बहुत लगावे हित्त॥ ९७॥
उन मनुषनकी यह गति भई। जगकी चाल डारि सब दई॥
लाड चाव त्योहार न कोई। ब्याह सगाई पुन्न न होई॥
काम क्रोध नहिं उपजे मोहा। लोभ माननहिं प्रीति न द्रोहा॥
ऐसे रहि शुभ कर्म जु करें। सदा मौतसे डरते रहें॥
सहजसहज फिरिवह दिनआया। डरे नहीं शुभ कर्मकमाया॥

आपससें कहें हमको क्या है । यमकी मार नरकभय नाहै ॥
राजा जान्यो वह दिन आया । अपना सेवक तुरत पठाया ॥
कही कि फौज सबै बनि आवें । कतल करन परजाको धावैं ॥
फौज सजिकरि ठाढी भई । आज्ञा ओर दृष्टि जो दई ॥
राजाके मन ऐसे आई । उन सब पुरुषन लेहुँ बुलाई॥
सांचे सबहीके इतबारी । फेरि बुलावो अबकी बारी ॥
यही शोचि फिरि शीशउठाया । आज्ञाकारी निकट बुलाया ॥

दोहा--कामदारसों यों कही, वे सो पुरुष बुलाय ।
जिनमें मिलि बैठा प्रथम,हरिसों ध्यान लगाय ॥ ९८॥

फिरि उनहींको लियो बुलाई । मिलि बैठा सबका सुखदाई ॥
कहीकी सबमिलिसुरति उठावो।राम ओरको ध्यान लगावो ॥
आज्ञा हो सोई तुम मानों । मेरा दोष कछू मत जानों ॥
मोको आज्ञा होय सो करिहौं । अपने हिये नेक नहिं धरिहौं॥
राजा कहि फिर ध्यान लगाया। ऐसा शब्द गगनसों आया ॥
राजासें अब बकसि दिया है । सकलप्रजाकी शुद्ध हिया है॥
जिन कर्मोंसे कोप भया था । तिनके कारण खड्ग लियाथा॥
सब प्रजा सो बातैं डारी । करिसुकर्म हरिभक्ति सँभारी॥

दोहा–तातें आज्ञा यों दई, रचौ कुटुँब घर बार ।
शुभ कर्म्मनको कीजिये, खोटे कर्म्म निवार ॥ ९९ ॥

राजा कही खोलि दृग दीजै । आज्ञा भई सोइ अब कीजै ॥
खोलि आख कर जोरे भाखे । बकसे गये तुम्हारे राखे ॥
जो तुम कहो सोइ अब करैं । वचन तुम्हारे हिरदय धरैं ॥
राजा कही यही तुम कीजो । रामनामको संगी लीजो ॥
गुरुका ध्यान धरो मनमाहीं ।विपति जासु सो आवत नाहीं॥
अपनी त्रिया त्रियाके जानो । परतिरियाको माता मानो ॥

परधनको पाहन सम देखो । शुभकर्मनको करो विशेखो ॥
बोलो सांच झूठकूं नाखो । निंदा हिंसा नेक न राखो ॥
हो रहियो सबके सुखदाई । कडुवा वचन न बोलो काही॥
जो व्योहार करो तो सांचा ।लोक परलोक न आवे आंचा॥

दोहा—कहैं श्रीशुकदेवजी, तुनो चरणही दास ।
राजा उपदेश दे, खोई सबकी त्रास ॥ १०० ॥

फिरि वे पुरुष विदा है आये । हरि राजाके वचन सुनाये ॥
जिन चालनसों बकसे सारे । सो रखियो तुम हिये मझारे॥
उज्ज्वल कर्म भूल मति जैयो । हरिकी भक्ति माहँही रहियो॥
सुनिकरि आपसमें फैलाई । एक एकने सुनी सुनाई ॥
सबने मानी निश्चय कीन्ही ।प्रकटसुअपनीआंखिनचीन्ही॥
हाथ कँगनको दर्पण केहा । जैसी करणी भुगते जेहा ॥
खुशी भये लागे व्यवहारा । रामभक्तिका लिये समारा ॥
कहि शुकदेव चरणही दासा । सबै प्रजा रहे उमँग हुलासा॥
दोहा—शुकदेव कहैं चरनदास सुनि, मैं उपदेशू तोहिं ।
जो पहिले हरिको भजे,पाछे दुःख न होहिं॥१०१॥

## दृष्टांत तीसरा ।

( इन्द्रनाम ब्राह्मणके दश पुत्रोंकी कथा । )

कथा कहौं इक और पुरानी । करणी करे सुसमुझे प्रानी ॥
इन्द्रनाम एक ब्राह्मण हुता ।जाके दश सुत अरु इक सुता॥
सुता ब्याहि दइ वरकी हुई । जाके पीछे माता मुई ॥
पिता मुवा दश पुत्र रहे थे । आपसमें सब बैठि कहे थे॥
ऐसी कछू जु करणी कीजे । जगमें ऊँची पदवी लीजे ॥
इसने कही हूजिये भूपा । सुन्दर देही धरो अनूपा ॥

तेज मुलकमें होवे भारी। हुकम जु मानै नर अरु नारी॥
और एक ऐसे उठि बोला। सावधान है अंतर खोला॥

दोहा–राजाही का हुकम तो, थोरेहीमें होय।
ऐसी करनी कीजिये, भूपचक्कवे होय॥ १०२॥
एक द्वीप नौखण्डमें, जाको पूरा राज।
एक और उठि बोलिया, यह भी ओछा साज॥१०३॥
चक्रवर्त्तिसे इन्द्र बड, देवनहूंको भूप।
उमर वडी आनँद वडे, दुखकी लगे न धूप॥१०४॥

करणी करत इन्द्रही लोगा। होकर राजा कीजै भोगा॥
जहाँ अप्सरा नृत्य करत हैं। सुन्दर अधिकी रूप धरत हैं॥
और वडा भाई यों भाखा। सुरपतिहूको नाहीं राखा॥
ब्रह्मा की पदवी ब्रह्माकीसी। और न दीखै काहू हीसी॥
जाके एक दिवसही मांही। इन्द्र चतुर्दश है है जाही॥
सब ब्रह्माण्ड आसरे वाके। विनशि जाय मिटि जावैं ताके॥
तीनिलोकका पिता वही है। वेद पुराणन माहँ कही है॥
करणी करिकरि ब्रह्मा हूजे। ऐसी पदवी क्यों नहिं लीजै॥

दोहा–सगरे यों उठि बोलिया, सत्यसत्य यह बात।
ऐसाही अब कीजिये, ठहराई सब भ्रात॥ १०५॥

दशहू करन तपस्या लागे। पारब्रह्मकी औरी पागे॥
अधिक तपस्या कीन्ही भारी। सास सूखिगा दीखैं नारी॥
हाड त्वचा चिपटी रहगई। लोहू धातु कछू ना ठई॥
सबही चित्रहिसे रहगये। कष्ट तपस्या ऐसे सये॥
फूल पात जलहू नहिं लीन्हा। ऐसा तप दशहूने कीन्हा॥
तन त्यागे दूजेही जन्मा। दशहू भ्रात हुये जो ब्रह्मा॥

जिनके दश ब्रह्माण्ड बने हैं । एक एक तिनमाहिं ठने हैं ॥
करणी कबहुँ न निष्फल जावे । जो मन धारैं सोई पावे ॥

दोहा–करणीसों भये इन्द्रहू, करणी ब्रह्मा होय ।
करणीसों ईश्वर भये, शुकदेवा कहे सोय ॥ १०६ ॥
दस हजार के वीसही, वर्ष तपस्या कीन्ह ।
हरि जाको बदलो दियो, माँगो सो वर दीन्ह॥१०७॥
चारों युगके माहिं जो, करणी ही परधान ।
गुरु शुकदेवा कहत हैं, चरणदास उर आन ॥१०८॥
उज्ज्वल कर्मनके किये, दिन२उज्ज्वल होय ।
मनमें उपजे भक्तिही, प्रेम पदारथ सोय ॥॥१०९॥

चरणदास तुम :करणी कीजो । याहीसे मन नीके दीजो ॥
ऐसा जन्मा बहुरि नहिं पैहो । बीति जाय पुनिबहुपछितैहो॥
मनुष्य देह या दुर्लभ जानो । वाको पा शुभ करणी ठानो॥
या देहीसे करी कमाई । जाय स्वर्गमें नौनिधि पाई ॥
भक्ति करी देहीके माहीं । जा वैकुण्ठ सु आये नाहीं ॥
या देहीसे ज्ञान भया है । जीव ब्रह्म जो होय गया है॥
मूरख करणीको नहिं जानै । कथनीकथि २ बहुत बखानै॥
थोथी कथनी काम न आवे । थोथा फटके उडि २ जावे ॥
दोहा–कथनीहीके बीचमें । लीजो तत्व विचार ।
सार सार गहि लीजियो:दीजो डारि असार॥११०॥

थोथी कथनी वही सु जानो । बिन करनी जो करै बखानो॥
लोग भलोक न शोभा पावे ।बकिबकि बकि खाली रहजावे॥
कथनी के शूरा बहु जाने । करणीमें कायर अरुयाने ॥
शूरा वही जो करणी करै ।दया धर्म्म ले सन्मुख अरै ॥

पाँव धरे सो नाहिं उठावै । करणी करता चला जु जावै॥
फिरै जबहिं फल लैकर आवै । सो वह शूरा मल्ल कहावै ॥
कायर बीचहिंसों फिरि आवै । सो वह करनीको बिसरावै ॥
अपना खोट न जानै भोंदू । वह तो कथनीहीका गोंदू ॥

दोहा-ऐसे जगमें बहुत हैं, वैसे जगमें नाहिं ।
कोई कोइ हि देखिये,सतगुरुके मधि माहिं ॥१११॥

होनहारको बहुत बतावै । पै ताको कछु मर्म न पावै ॥
कहैं कि होनी होय सु होई । ताको मेटि सकै नहिं कोई ॥
याको समझ उपाय न करिया । श्रद्धा तजि कायर है परिया॥
समझि निखट्टू गेहि भये हैं । वेष धारि विन करणी रहे हैं॥
जानत नाहिं जु पिछली करणी । अब के भई जु होनी भरणी ॥
परालब्ध अरु भाग्य कहावै । पिछिले कर्म्मनसे उपजावै ॥
अबके करै सु आगे पावै । कछू २ फल अभी दिखावै ॥
कै काहू गाली दै देखो । कै काहूको मारि बिशेखो ॥
कै काहूको भोज खवावो । कै काहूको शीश नवावो ॥
कै कोइ चोरी जूआ खेलौ । कै काहूको गुस्सह झेलौ ॥
दोनोंका फल आगे आवै । चरणदास शुकदेव बतावै ॥
प्रगट देखिये यही तमाशा । नीच ऊंच करणी परकाशा॥

दोहा-कोटि यही उपदेश है,यही जु सगरी बात ।
करणी ही बलवन्त है, यौं शुकदेव दिखात॥११२॥
मनकी करणी ज्ञान है,परमातम लखि लेय ।
ब्रह्म रूप ह्वै जाय जब, छूटै सबही भेय ॥११३॥
भवसागरमें भय घने, ताको लगै न आंच ।
झूठेको भय बहुत है,भय नहिं व्यापै सांच॥११४॥

करणीहीसों पाइये, पारब्रह्मका खोज ।
सतगुरुपै चलि जाइये, मेटैं सबही सोज ॥ ११५ ॥
इच्छा ब्रह्म करी सो करणी । ईश्वररूप धरा ले धरणी ॥
महत्तत्त्व करि अहँकार जु कीये । तीन रूप उनको करि दीये ॥
राजस तामस सात्त्विक जानों । यही त्रैगुण मनसे आनो ॥
राजससों जगको उपजावे । सात्त्विकसों पाले सिरजावे ॥
तामससों विनशावे तोडे । वहुत सृष्टि नहिं भूपर जोडे ॥
जोडे तो वह कहां समावे । धरतीका परमाण कहावे ॥
योजन पचास कोड बताई । वेद पुराणन माँहि जो गाई ॥
धरती करणीहीसों ठाढी । कछुवा शेष भये जो आढी ॥
करणीहीसों घन बरसावे । बादल मिलती पवन चलावे ॥
दोहा–करणी सों कर्तारही, धरा ब्रह्मका नावँ ।
माया भी तो उन करी, खेली बहुविधि दावँ ॥११६॥
कोई निराकार बतलावे । कोई निर्गुण कहि समुझावे ॥
कोइ कहै दोनोंसे न्यारा । है जु अकर्ता अखल अपारा ॥
कहै कि माया कियो पसारा । जेता दीखे यह संसारा ॥
तो कब माया कितसों आई । अन्त यही हरिने उपजाई ॥
वही सृष्टिका कारण काजा । वाने जगत प्यार करि साजा ॥
देह देहसें वह दरशावे । चातुर हो चतुराई पावे ॥
जैसे बरतन गढे कुम्हारा । सबमें दीखे सिरजनहारा ॥
चित्र मध्य चित्रामी सूझे । सुरति लगाय लगाय उरझे ॥
जबही बनी बनाई नीके । कहि शुकदेव जु अपने जीके ॥
दोहा–विना किये कछु होय ना, आपहि लेहु विचार ।
करणी देखी दूरलौं, शोचा बारम्बार ॥ ११७ ॥

---

१ रजोगुण ब्रह्मा । २ तमोगुण शिव । ३ सतोगुण विष्णु । ४ सिरजनहार ।

चरणदास तोसों कहौं, उठि उद्यमको लाग ।
आलस सकल गवांयकै,विषयनमें मति पाग ॥११८॥

कारज लोक प्रलोकके, विन करणी हो नाहिं ।
करणीहीसों होत हैं, करणी सबके माहिं ॥११९॥

खोटे कर्म्मनसों दुखी, या दुनियाके बीच ।
करणीहीसों होत हैं, नर ऊँचा अरु नीच ॥१२०॥

संगति मिलि करने लगै, ऊँच नीचे कर्म्म ।
बुधि मैली जो होत है, खोवे अपना धर्म्म ॥१२१॥

सतसंगतिसे धर्म्म है, कुत्सित सँगसों जाय ।
शुकदेव कहैं चरणदास सुन,दोनों दिये दिखाय॥१२२॥

धर्म गया जब सत गया, भ्रष्ट भई अति बुद्धि ।
तबहीं पाप रु पुण्यकी, कछू रही ना शुद्धि ॥१२३॥

पाप पुण्यही सत्य है, ठहरि रह्या ब्रह्मण्ड ।
इन दोनोंके मिटतही, होय खण्डही खण्ड ॥१२४॥

पाप पुण्य व्यवहार है, ताहि देखु प्रत्यक्ष ।
जाही सेती प्रेत यम, देवत गण अरु यक्ष ॥१२५॥

चौरासी अरु मनुष सब, चन्द सूर लौं जान ।
पाप पुण्यके फेरमें, सबही पड़े पिछान ॥१२६॥

पाप किये नरकै पडैं, पावैं दुःख अपार ।
पुण्य किये सुख बहुत है, देखो दृष्टि उघार ॥१२७॥

विरलै जनको होत है, पाप पुण्यकी सूझ ।
सोइ छूटै जग जालसों, बहुतैं रहे अरूझ ॥१२८॥

लाख बातकी बात है, कोटि बातकी जान ।
पाप पुण्यसों जानिये, लाभ होय कै हान ॥१२९॥

करणी बिन थोथा रहै, कछू न पावै भेव।
विमल ज्ञान कहुँ होय ना, कहैं जु यों शुकदेव॥१२०॥

होनी कहैं जु भर्मी सारे। करणी करते दृष्टि निहारे॥
बिन करणी व्यवहार न चाले। नहीं तौ बैठ रहु जा ठाले॥
कृत्य करै सो भी यह करणी। बनियाँहाट पंडिया बरणी॥
करणीहीसों खावे पीवे। योग करै बहुत दिन जीवे॥
मनसा जे सबही परकाशै। करणी बिन झूठी सब आशा॥
करणीहीसों निधि ह्वै आवै। अष्टसिद्धि करणीसों पावै॥
जीवनमुक्ती करणी हेती। सुनिले सकल शास्त्रसों तेती॥
गुरुसों निश्चय यह जु कीनी। रणजीता मैं तुमको दीनी॥

दोहा—यह तौ धर्म जहाज है, मैं तोहिं दई निहार।
भवसागरसें डारियो, चढै सो उतरै पार॥१२१॥
बादबान पुनि खेइयो, दीजो ताहि चलाय।
पानी पाप निकासियो, नेकहु ना भरि जाय॥१२२॥
चढि उतरै जो पारही, पावै सुखका धाम।
आनँदही आनँद रहै, करै तहाँ विश्राम॥१२३॥

शिष्यवचन।

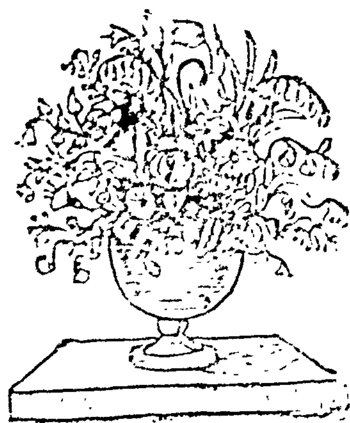
दोहा—धनि धनि श्रीशुकदेव हो, वचन तुम्हारे धन्य।
सब संदेह मिटाय करि, निश्चय कीन्हो मन्य॥१२४॥

व्यासपुत्र तुम मम गुरुदेवा। करूँ मानसी तुम्हरी सेवा॥
मनमें तुम्हरी पूजा साजूँ। तुमसों पूछि करौं सब काजू॥
मैं ध्यान शिताबी आवे। जो थे सो सन्देह मिटावे॥
मैं तो ध्यान करतही रहूं। तुम्हरी मूरति हिरदय गहूं॥

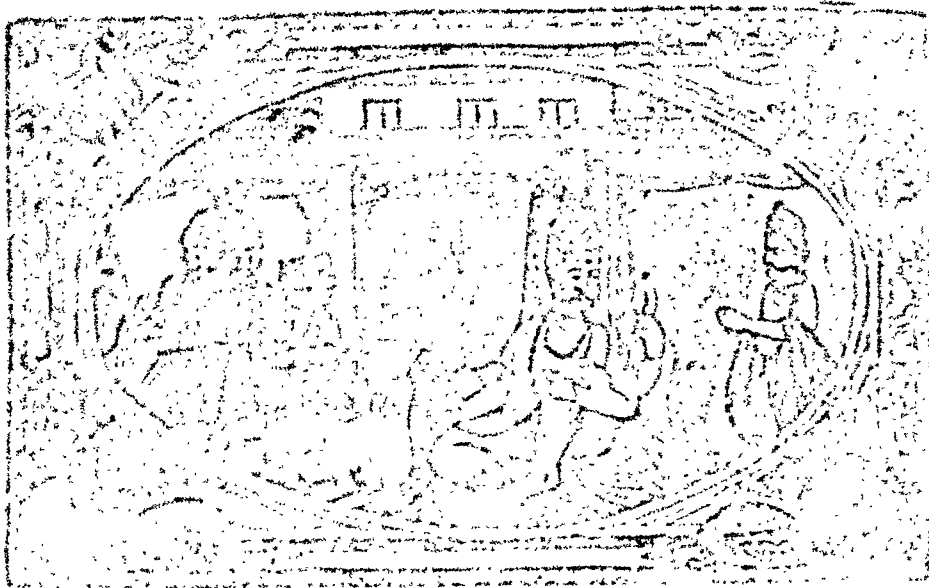
१ [illegible]

मेरे जीवन प्राण अधारा । मैं नहिं रहौं चरणसे न्यारा ॥
तुम्हरे चरणका दास कहाऊँ । वारवार तुमपै वलिजाऊं ॥
तुमहींको ईश्वर करि मानूं । पारब्रह्म तुमहींको जानूं ॥
और न कोई दूजी आसा । सो हिरदयमें राखौ वासा ॥
दोहा--अपने चरणहिं दासको, सब विधि पिया अघाय ॥
अस्तुति करूँ तौ क्या करूँ, मो पै कही न जाय ॥

इति श्रीस्वामिचरणदासजीकृत गुरुचेलेका
संवाद धर्मजहाज सम्पूर्ण ।



श्रीशंकराय नमः।



# अथ श्रीअष्टांगयोगप्रारम्भः।

## गुरु शिष्य संवाद।

शिष्यवचन।

दोहा—व्यासपुत्र धन धन तुम्ही, धन धन यह अस्थान।
मम आशा पूरी करी, धन धन वह भगवान॥ १॥
तुम दर्शन दुर्लभ महा, भये जु मोको आज।
चरण लगो आपा कियो, भये जु पूरण काज॥२॥
चरणदास अपनो कियो, चरणन लियो लगाय।
शिर कर धरि सब कुछ दियो,भक्ति दई समुझाय॥३॥
बालपने दरशन दिये, तबहीं सब कछु दीन।
बीज जु बोया भक्तिका, अब भयो वृक्ष नवीन॥४॥
दिन दिन बढ़ता जायगा, तुम किरपाके नीर।
जब लग माली ना मिला,तब लग हुता अधीर॥५॥

अरु समुझाये योगही, वहु भाँती वहु अंग ।
ऊरधरेता ही कही, जीतन विंद अनंग ॥६॥
अरु आसन सिखलाइया, तिनकी सारी विद्धि ।
तुम्हरी कृपासों होहिंगे, सबही साधन सिद्धि ॥७॥
इक अभिलाषा और है, कहि न सकूं सकुचाय ।
हिये उठै सुख आयकरि, फिरि उलटीही जाय ॥८॥

गुरु वचन ।

दोहा–सतगुरुसे नहिं सकुचिये, एहो चरणनदास ।
जो अभिलाषा मन विषे, खोलि कहो अब तास॥९॥

शिष्य वचन ।

सतगुरु तुम आज्ञा दई, कहूं आपनी बात ।
अष्टांगयोग[1] बुझाइये, जाते हियो सेरात ॥ १० ॥
मोहिं योग बतलाइये, जो है वह अष्टांग ।
रहनी गहनी विधिसहित, जाके आठों अंग ॥ ११॥
मत मारग देखे घने, ह्यां सियरे भये ग्यान ।
जो कुछ चाहो तुम करो, मैं हौं निपट अयान॥१२॥

गुरु वचन ।

अष्टांगयोग समुझाइहैं, भिन्न भिन्न सब अंग ।
पहिले संयम सीखिये, जाते होय न भंग ॥ १३ ॥

शिष्य वचन ।

संयम काको कहत हैं, कहौ गुरु शुकदेव ।
सो सबही समुझाइये, ताको पाऊँ सेव ॥ १४ ॥

---

१ यम, नियम, आसन, प्रणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा, समाधि ये अष्टांगयोग कहलाते हैं ।

## गुरु वचन ।

### योगियोंके अवश्यमेव वर्णन ।

पहिले सूक्षम भोजन खावे । क्षुधा मिटै नहिं आलस आवे ॥
थोडासा जल पीवन लीजे । सूक्षम बोले वाद न कीजे ॥
बहुत नींदभर सोवे नाहीं । दूजा पुरुष न राखे पाहीं ॥
खट्टा चरपर खार न खावे । वीरज क्षीण होन नहिं पावे ॥
करे न काहू वैरी मिता । जगवस्तुनकी न राखे चिंता ॥
निश्चल ह्वै मनको ठहरावे । इन्द्रिनके रस सब बिसरावे ॥
घिया तेल नहिं देह छुवावे । अष्ट सुगंध अंग नहिं लावे ॥
मनुषनकी राखे नहिं आसा । गुरुका रहे चरणही दासा ॥

दोहा--काम क्रोध मद लोभ अरु, राखै ना अभिमान ।
रहै दीनताई लिये, लगै न माया बान ॥ १८ ॥

छल नहिं करै न छलमें आवे । दम्भ झूँठके निकट न जावे ॥
टोना यंत्र भूत नहिं धावे । झूँठ जानिके सब बिसरावे ॥
धातु रसायन मन नहिं लीजे । झूँठ जानि याहू तजि दीजे ॥
स्वांग तमाशे बाग न जैये । आसन ऊपर बैठा रहिये ॥
दृढ ह्वै लगै युक्तिके माहीं । ताते विघ्न होय कछु नाहीं ॥
छूटा रहै जगत लोगनसों । न्यारो रहै सबी भोगनसों ॥
इन्द्र आदि लौं सुख संसारी । नेक न चाहै चित्त मझारी ॥
निमिष रहै हियमाहिं समावै । ऐसे योग संध सिधि पावै ॥

दोहा—ऋद्धि सिद्धि अरु कामना, तिनकी रखै न आस ॥
मान बडाई चपलता, त्यागै चरणहि दास ॥ १९ ॥

गहि संतोष क्षमा हिय धारै । संयम करिकरि रोग निवारै ॥
अहंकारको छोटा करिये । कुटिल मनोरथ मननहिं धरिये ॥

बसिये जितहि देश सुस्थाना । निर उपाधि धरती अस्थाना ॥
भली भूमि लखि गुफा बनावै । नीची ऊंची रहन न पावै ॥
जमीं बराबर चौरस होई । होय लदाव कि मथरी सोई ॥
सांकर द्वार कपाट लगावै । कहूं छिद्र रहने नहिं पावै ॥
तामहँ बैठि योग तप कीजै । दूजो पुरुष न भीतर लीजै ॥
कहि शुकदेव चरणही दासा । जगसों रहिये सदा उदासा ॥

दोहा-यह सब निश्चयही करै, योग युक्तिके आदि ।
पहिले ऐसा होय करि, पीछे साधन सादि ॥ १७ ॥

योगके आठ अंग ।

आठ अंग कहुं योगके, सुनो चरणहीदास ।
मेरे वचननके विषे, चित दै करो निवास ॥ १८ ॥

यमके अंग प्रथम सुनि लीजै । दूजे नियम कहूं चित दीजै ॥
तीजे आसन हित करि साधौ । प्राणायाम चौथ आराधौ ॥
प्रत्याहार पांचवा जानौ । छठो धारणाको पहिंचानौ ॥
सतवें ध्यान मिटै सब बाधा । कहूं आठवाँ अंग समाधा ॥

शिष्य वचन ।

धन्य धन्य तुम श्रीगुरुदेवा । मेरे प्राणनाथ शुकदेवा ॥
व्यासपुत्र तुम दीनदयाला । मम अनाथको कियो निहाला ॥
आठ अंग मोहिं दियो सुनाई । अब कहो भिन्न भिन्न समझाई ॥
एक एकको जुदा बखानो । जासो जाय दास पर जानो ॥

गुरु वचन ।

दोहा-एक एकका कहत हौं, जुदा जुदा विस्तार ।
श्रवणन सुनौ विचारिकै, लै लै हियमें धार ॥ १९ ॥

## अथ यमअंग वर्णन ।

### अहिंसा १.

प्रथम कहौं यमके दश अंगा । समझे योग न होवे भंगा ॥
प्रथम अहिंसाही सुन लीजे । मनकरि काहू दोष न कीजे ॥
कडुवा वचन कठोर न कहिये । जीवघात तनसों नहिं दहिये ॥
तन मन वचन न कर्म लगावे । यही अहिंसा धर्म कहावे ॥

### सत्य २.

दूजे सत्य सत्यही बोले । हिरदे तोलि वचन मुख खोले ॥

### अस्तेय ३.

तीजे अस्तेय त्याग सुनीजे । तन मनसों कछु नाहिं हरीजे ॥
तन चोरीके लक्षण नाखे । मनकी चोरीको नहिं राखे ॥

### ब्रह्मचर्य ४.

चौथा ब्रह्मचर्य बतलाऊं । भिन्न भिन्न करि ताहि सुनाऊं ॥

### अष्ट प्रकारका मैथुन ।

दोहा--ब्रह्मचर्य यासों कहें, सुनहु चरणही दास ।
आठ अंग सो नारिको, नेक न राखे आस ॥ २० ॥

यती होय दृढ कांछ गहीजे । वीर्य क्षीण नहिं होने दीजे ॥
मैथुन कहूं अष्ट परकारा । ब्रह्मचर्य रहे इनसे न्यारा ॥
सुमिरण तिरियाका नहिं करिये । श्रवणन सुरतिरूप नहिं धरिये ॥
रस शृङ्गार पढे नहिं गावे । नारिनसों नहिं हँसे हँसावे ॥
दृष्टि न देखे विष नहिं दौरे । सुख दुख मन होजा औरे ॥
बात इकन्त करे नहिं कबहीं । मिलन उपाय जु त्यागे सबहीं ॥
अथवा स्पर्श निकट ना जावे । काम जीति योगी सुख पावे ॥

---

१ श्रवण स्मरण कीर्तन, निरखन बात इकन्त । इच्छाकृत स्पर्शन रमण, आदि अष्ट कहंत ॥ १ ॥

अष्ट प्रकारके मैथुन जानौ । इन तजि ब्रह्मचर्य पहिंचानौ॥
कहैं शुकदेव चरणहीदासा । ब्रह्म सत्य मैं करै निवासा ॥

क्षमा ५.

दोहा–पँचवीं सुखदाई क्षमा, जलन बुझावै सोय ।
जो दुख आवै घटविषे, पातक डारै खोय ॥ २१ ॥

कोइ दुष्ट कछू कहिजावो । गाली देकर कोइ खिझावो ॥
कै कोइ शिरपर कूडा डारो । कै कोइ दुख देवो अरु मारो॥
वाकी कछू न मनमें लावै । उलटा उनको शीश नवावै ॥
ऐसी क्षमता हियमें लावौ । बोलौ शीतल अग्नि बुझावो ॥

धीरज ६.

छठा अंग धीरजका जानौ । धीरजही हिरदयमें आनौ ॥
सोचकुचि धीरजसों कीजे । सब कारज धीरजसों लीजे ॥
धीरजसों बैठे अरु डोलै । धीरज राखि समुझिकर बोलै॥
आनि परे दुख ना अकुलावै । धीरजसों दृढता गहि लावै ॥

दोहा–धीरज रहा तो सब रहा, काहूसे न डराय ।
सिंह प्रेत अरु कालका, धीरजसों डर जाय ॥२२ ॥

दया ७.

दया सातवीं अब सुनि लीजे । सब जीवनकी रक्षा कीजे ॥
लख चौरासीका सुखदाई । सबके हितकी कहै बनाई ॥
रहिये तन मन वचन दयाला । सबहीसों निर्वैर कृपाला ॥

आर्जव ८.

अठवें कहूं आरजव खोलै ।कोमल हृदयसों कोमल बोलै॥
सबको कोमल दृष्टि निहारै । कोमलता तन मनमें धारै ॥
कोमल धरती बीज बनावै । बढ बेगि फूलै फल लावै ॥
ऐसे कोमल हिया बनावै । योग सिद्धिकरि पद पहुँचावै॥
यही आरजव लक्षण जानो ।शुकदेव कहै रणजित पहिंचानो॥

मिताहार ९.

दोहा–मिताहार जो नवम है, समझ लेहु मनमाहिं ।
सतगुन भोजन खाइये, ऐसा वैसा नाहिं ॥ २३ ॥
खावे अन्न विचारिके, खोटा खरा सँभार ।
तैसा ही मन होत है, जैसा करै अहार ॥ २४ ॥
सूक्षम चिकना हल्का खावे । चौथा भाग छोडिकरि पावे ॥
वानप्रस्थ के हो संन्यास । भोजन सोलह ग्रास गिरास॥
अरु गृहस्थ बत्तीस गिरासा । आवे नींद न बहुत न श्वासा॥
ब्रह्मचारी भोजन करे इतना । पठन माहँ वीरज रहे जितना॥

शौच १०.

दशवां शौच पवित्तर रहिये । कर दातौन हमेश नहइये ॥
जो शरीरसे होवे रोगा । रहे न तन जल छूवन योगा॥
तो तन माटीसे शुचि कीजे ।अब अतरकी शुचि सुन लीजे॥
राग द्वेष हिरदयसों टारे । मनसा खोट करम निवारे ॥
दोहा–दश प्रकारका कहा यह,पहिल योगकी नींव ।
नेम कहूं अब दूसरा, सो है साधन सींव ॥ २५ ॥

अथ नियम अङ्गवर्णन ।

इन्द्रिय वश १.

दूजा अङ्ग नियमका गाऊं । भिन्न भिन्न सब अङ्ग सुनाऊं॥
पहला तप इन्द्री वशकीजे । इनके स्वाद सभी तजि दीजे॥
खाते पीते सोवत जागत । योगी इन्द्रिनकूं वश राखत ॥
तनकूं वश कर मनकूं मारे । ऐसी विधि तपका अँग धारे॥

संतोष २.

दूजा अंग कहूं संतोषा । हानी भय नहिं माने शोका ॥
लाभ भये नाहीं हरषावे । ऐसी समुझ हियेसे लावे ॥
पराब्ध तन होय सो होई । संकल्प विकल्प रखे न कोई ॥

आस्तिकता ३.

दोहा-तीजा आस्तिक अंग है, जाका सुनो विचार।
समझ सम्झ मनमें धरो, ताको गहो सँचार॥२६॥

शास्त्रन सुनि परतीति जो कीजै। सत्तब्रह्म निश्चय करि लीजै॥
बुधि निश्चय आतमके माहीं। जगत सांच करि मानै नाहीं॥

दान ४.

चौथा दान अङ्ग विधि होई। पात्र कुपात्र विचारै सोई॥
एक दान उपदेश जु दीजै। भवसागरसों पार करीजै॥
दूजा दान अन्न अरु पानी। दीजै कीजै बहु सनमानी॥
और पराये दुख की बूझै। सुखदानी परमारथ सूझै॥

ईश्वराराधन ५.

पंचम ईश्वर पूजा करिये। तन मन बुद्धि जहां लै धरिये॥
है निष्काम तजै सब आसा। सेवा करै होय निज दासा॥

दोहा-पाती फूल जु भावसों, सह सुगंध करि धूप।
शुकदेव कहैं यों कीजिये, पूजा अधिक अनूप॥२७॥

श्रवण ६.

छठे सिद्धांत श्रवण सुनि बानी। करि विचार गहिये मनमानी॥
सार असार विचार जो कीजै। पानीको तजि पयको पीजै॥
अरु सतगुरुसों निश्चय करिये। परखि सँभारि हृदयमें धारिये॥
करणी करै तिन्हों सो मिलना। वचन अयोगीके नहिं सुनना॥

लज्जा ७.

सतवां वही जु कहिये लाजा। सो वह सकल सँवारै काजा॥
साध गुरूसे लाज करीजै। तन मन डोलन नाहीं दीजै॥
करम विपर्यय सब परिहरिये। हिय आँखिनमें लज्जा भरिये॥
शुकदेव कहै सुनु चरणहिदासा। लज्जा भवन माहिं करिवासा॥

दोहा—कुटुँब मित्र जग लोगहीं, सबसूं कीजे लाज ।
बडी लाज हरिसूं करो, नीके सुधरे काज ॥ २८ ॥

दृढता ८.

अष्टमहू मति दृढ जो कहिये । सो विशेष साधनकूं चहिये ॥
शुभ करमनकी इच्छा करनी । हो न सके तोभी हिय धरनी ॥
बहके ना काहू बहकाये । कैसेहू नहिं हले हलाये ॥
जग सुख देखि न मनमें आने । स्वर्ग आदिसुख तुच्छहि जाने ॥
कोइ अस्तुति आदर करि सेवे । कोइ कुभाव करि गाली देवे ॥
दोनोंमें निश्चय रहै जोई । शुकदेव कहै दृढ मति है सोई ॥

जाप ९.

नवम जाप करे गहि मौना । मन जिह्वासूं कीजे जौना ॥

दोहा—हरि गुरुकी अस्तुति पढै, सोभी कहिये जाप ।
शुकदेव कहै रणजीत सुनु, त्रैविधि नाशै ताप ॥ २९ ॥
दशवें समझा होमही, कीजे दोय प्रकार ।
अँगन माहिं साकल्यकूं, वेद कहैं क्यों डार ॥ ३० ॥
दूजे पावक ज्ञानकी, तामें इन्द्री होम ।
वाकूं परगट भूमि है, याकूं हिरदा भौम ॥ ३१ ॥

यमका अंग सभी कहदीना । नेम कहा सोभी तुम चीन्हा ॥
निरे योगहीके मत जानो । सबके कारजको पहिचानो ॥
आपे योग पहल ये चहिये । शुभकरमनके मारग गहिये ॥
जो ये होय तो होवे योगा । नाहीं बने जगतके भोगा ॥
जिज्ञासीकूं पहल सुनीजे । पाछे भेद योग को दीजे ॥
यम अरु नियम दोउ बतलाये । अच्छी नीकी भाँति सुनाये ॥
अब तीजे आसन समझाऊं । जुदे जुदे करि सबै सुनाऊं ॥
योग पहिल आसनही साधे । आसन बिना योग नरबाधे ॥

अथ आसनवर्णन ।

दोहा-चरणदास निश्चय करो, विन आसन नहिं योग ।
जो आसन दृढ होय तो, योग सधै भजि रोग ॥३२॥

लख चौरासी आसन जानो । योगिनकी बैठक पहिचानो ॥
तिनमें चौरासी चुन लीन्हें । दुरलभ भेद सुगम सो कीन्हें॥
तिनमें दोय अधिक परधाने । तिनकूं सब योगेश्वर जाने ॥
सो तुमकूं पहिले बतलाय । जिनकूं साधो गे चितलाय ॥
आसन सिद्ध पदम कहलावैं । इनकूं करि निश्चल ठहरावै ॥
अरु आसन सब रोग भजावैं । ये दो आसन योग सधावैं ॥
इनकूं साधै जो जन कोई । ध्यान समाधि लगावै सोई ॥
चरणदास शुकदेव कहैं यों । आसन दोनों वरणौं हैं ज्यों॥

अथ पद्मासनविधि ।

पहिले आसन पदम बताऊँ । ज्योंकी त्यों सूरति दिखलाऊँ॥
पहिले बावाँ पावँ उठावै । दहिने जंघा ऊपर लावै ॥
दहिना पाँव फेरि यों लाकै । बाँवी साथल ऊपर राखै ॥
बावाँ कर पीछेसों लावै । वाम अँगूठा गहि तन तावै॥
ऐसे हाथ दाहिना लावै । दहिन अँगूठा पकड दृढावै ॥
ग्रीवा लटक चिबुकही आवै । नासा आगे दीठि लगावै ॥
देवदृष्टि हो कौतुक दरशै । कहै शुकदेव अभै पद परशै॥

दोहा-कै हिरदे राखै चिबुक, कै सम राखै देह ॥
कै घुटनों दोउ हाथ रखि, कै अँगुठा गहिलेह ॥३३॥

अथ सिद्धासनविधि ।

दूजा आसन सिद्धजु कीजै । बावाँ पावँ गुदाढिग दीजै ॥
दाहिन पावँ लिंगपर आवै । दृष्टि सु भृकुटी पै ठहरावै ॥

अचरज जहाँ अधिक दरशावै । खुले कपाट मोक्ष गति पावै॥
आसन साधि व्याधि परिहरै । भूख नींद जोपै वश करै ॥

दोहा—एँडी बायें पांवकी, सीवन मध्ये राख ।
लिंग गुदाके मध्यमें, मूल बोलिये साख ॥ २४ ॥
संयमसूं इन्द्री गहे, राखै सरल शरीर ।
दृष्टि दृढा भृकुटी धरै, मिटैं जु दोनों पीर ॥ २५ ॥
दहिने लावै लिंगपर, भाग बराबर राखि ।
नारी नारी कीजिये, शुकदेवा कहे साखि ॥ २६ ॥

अथ प्राणायाम अंग वर्णन ।

दोहा—चौथे प्राणायामही, कहूँ सुनो चित लाय ।
जा बल जीते पवनकूं, चढे गगनकूँ धाय ॥ २७ ॥
षट चक्रकूं छेद करि, सुखमनहीकी राह ।
दल सहस्रके कमलमें, पहुँचै करै उछाह ॥ २८ ॥
हिरदेमें अस्थान है, प्राण वायुका जान ।
वाके रोके सब रुके, वायुनमें परधान ॥ २९ ॥
जैसे गंगा एकही, घाट घाटको नाँव ।
ऐसे प्राणहि वायुके, नावँ कहे बहु ठावँ ॥ ४० ॥
चौरासी अस्थान पर, चौरासीही वाय ।
तामें दश ये मुख्य हैं, वरणों सुनिये ताय ॥ ४१ ॥
प्राण अपान समानही, और व्यान उद्यान ।
नाम धनंजय देवदत्त, कूरम किरकल जान ॥ ४२ ॥
दश वायू जो एकही, तिनसे दीरघ होय ।
सो ये प्राण अपान हैं, तिन्हें पिछाने कोय ॥ ४३ ॥
अपान जाय प्राणै मिले, रहै प्राणके प्रान ।
शुकदेव कहि वर्णन करुं, अब इनके अस्थान ॥४४॥

प्राणवायु हिरदैके ठाहीं । बसै अपान गुदाके माहीं ॥
वायु समान नाभि अस्थाना । कंठ माहिं बाई उद्याना ॥
व्यान जु व्यापक है तन सारै । नाक वायुसों उठै डकारै ॥
पलक उघाडे कूरम बाई । देवदत्तसूं होय जँभाई ॥
किरकल वायु जु भूख लगावै । मुखै धनंजय देह फुलावै ॥
सबसें प्राण वायु मुख जानौ । सो हिरदैके मध्य पिछानौ ॥
हिरदाही देहीके माहीं । जो कुछ है सो ह्यांहीं ह्यांहीं ॥
योगेश्वर ह्यांई फल पावै । ह्यांसू अनहद नाद जगावै ॥

चक्रवर्णन ।

दोहा—अब चक्कर वर्णन करूं, पाछे प्राणायाम ।
वरणूं नारी सुषमना, सुधरैं सबही काम ॥ ४५ ॥
हैं वै सूरति कमलकी, छोटे और विशाल ।
मूलसूं लेकर शीशलों, एकहि जिनकी नाल ॥ ४६ ॥

कुं०—लालरंग पहिला कहूं, चक्रधार तिहिं नावँ ।
चारपँखरी तासुकी, हैं जु गुदाके ठावँ ॥
हैं जु गुदाके ठावँ, देह ताहीपर साजै ।
चारौं अक्षर तहां, देव गनेश विराजै ॥ १ ॥
पवन सुरत ह्यांलै धरै, खोलि कहै शुकदेव ।
दूजा लिंगस्थानही, जाको सुन अब भेव ॥
पीतवरण षट पँखरी, नाम जु स्वाधिष्ठान ।
षट अक्षर जापे दिये, ब्रह्मा दैवत जान ॥ २ ॥
ब्रह्मा दैवत जान, संग सावित्री दासा ।
इन्द्रसहित सब देव, तहां सबहीका वासा ॥
मणिपूरक चक्कर कहूं, तीजा नाभिस्थान ।
नीलवरण दश पँखरी, दश अक्षर परमान ॥ ३ ॥

दोहा-विष्णु जहांका देवता, महालच्छिमी संग ।
चरणदास अब कहतहूं, चौथेको परसंग ॥ ४६ ॥
अनहदचक्र हिरदय विषे, द्वादश दल अरु श्वेत ।
शिवशक्ती जहँ देवता, द्वादश अक्षर भेद ॥ ४७ ॥
पंचवां चक्कर कंठमें, विशुद्ध नाम जिहिकेर ।
षोडश दल जीव देवता, षोडश अक्षर हेर ॥ ४८ ॥
छठयां भौंहन बीचमें, आज्ञा चक्कर सोय ।
ज्योति देवता जानिये, दो दल अक्षर दोय ॥ ४९ ॥

शिष्यवचन ।

दोहा-कमलोंपर अक्षर कहे, समझ न आई मोहिं ।
कौन कौन अक्षर तहां, सतगुरु कहिये सोहिं ॥५०॥

गुरुवचन ।

पहिला कमल अधार सुनाऊं । व श ष स अक्षर वरण बताऊं ॥
दूजा कमल जु स्वाधिष्ठाना । ब भ म य र ल जु ताहि बखाना ॥
तृतिये मणिपूरक जो कहिये । ड ढ ण त थ ही लहिये ॥
द ध न प फ जो गाये । ये दश अक्षर वरण बताये ॥
चौथे चक्र अनाहद माहीं । द्वादश अक्षर वरण बताहीं ॥
क ख ग घ ङ जो जाना । च छ ज झ ञ ट ठ जु माना ॥
पंचवां षोडश विशुद्ध जो आछे । आदि अकार अकार जु पाछे ॥
छठा जो आज्ञा चक्कर मानो । हंस वरण दो अक्षर जानो ॥

दोहा-भवँर गुफामंडल अखँड, तिरवेणी जहँ न्हान ।
नित पर्वी जहँ होत है, करै पापकी हान ॥५१॥
उलट पवन जब षटनपर, ऊपर पहुँचै जाय ।
गुरु सूंस तहँ चरणदास जु.सुषमन सहज समाय ॥५२॥

कमल सहसदल सातवाँ,शशिन मध्यही वास।
तहां देवता संतगुरु, पूरी करै जु आस ॥ ५३॥
ह्यांतक सुषमनका सिरा, सो सातोंकी नाल।
हैं वे उलटे पट कमल, तलै अपान बयाल ॥५४॥
अपानवायुकूं साधि करि, ऊपर लावै मोड।
जव होवैं उलटे कमल,सुख अकाशकी ओड ॥५५ ॥
अपानवायु ज्यों ज्यों चढ़ै, चक्र चक्रके पास।
त्यों त्यों सीधे होयँ सब, पूर जान अभ्यास ॥५६॥
अपानवायु आवै जबै, चक्र अनाहद माहिं।
दश प्रकारके नादही, शनै शनै खुलि जाहिं ॥५७॥

पहिले नाद खुलै जो ऐसा। चिडी चीकला बोलै जैसा ॥
एकहि वार कहै यों चिन्ना। दूजीवार खुलै चिन चिन्ना ॥
क्षुद्रघंट ज्यों तीजी जानो। चौथी नाद शंख पहिंचानो ॥
पँचवीं नाद वीन ज्यों गाजे।छठवीं उपजे ताल ज्यों बाजै॥
सतवीं नाद मुरलिया ऐसी। अठवीं उठै पखावज जैसी ॥
नवें नफीरी नाद सुनावै। दशवें सींव गर्ज उपजावै ॥
नौ तजि दशवेंसूं हित लावें।अनहद सुनि अनहद होजावैं॥
होय जीवसों ब्रह्म अगाधा।जो कोइ सुनै सो अनहदनादा॥

दोहा-खुलै जो अनहद नाद ज्यों, सो साधन सुनि लेहु।
जासों पहुँचै सिद्धिको, या करणी चित देहु ॥५८॥
अधारचक्रसूं खैंचकरि, अपान वायु सजलेइ।
स्वाधिष्टानके पासही, तीन लपेटै देइ ॥ ५९ ॥

याकी विधि सब तोहिं बताऊं। जैसे है तैसे समझाऊं ॥
पहिले मूल द्वारको शोधै। बंध लगाय अपान निरोधै ॥
पहिले चक्रसें ठहरावै। खैंचि दूसरेके ढिग लावै ॥

ताके आगे पास फिरावे । दहिने नीनि लपट लगावे ॥
फिरि मणिपूरकमें पहुंचावे । फेरि अनाहदमें लैजावे ॥
अनहद खुले सुने सुख पावे । फिरि हां प्राण अपान मिलावे॥
हिरदय कंठ मध्य ठहरावे । संयमसों ताको परचावे ॥
बंध कुम्भको तहां लगावे । चरणदास शुकदेव बतावे ॥

अष्टपदी ।

पहिले अनहदनाद खुलै हिय ऊपरै।कंठसु नीचे रोकि ध्यान हांई धरै ॥ जहां अपरबल होय जु अनहद शब्दही।फिरि यों जानो जायकण्ठके मध्यही।तहां किये अभ्यास ध्यान तासंघना॥ होवें अधिकी नाद सुनें साधूजना॥केतकद्योसनसाहिं ब्रह्मरन्धर कोंजाय खुलै जहँ नाद सुरति दे ह्वां सुनें॥शनै शनै यों होय जान कोई साधही । हिरदयते अरु ब्रह्मलोकलों एक नादही ॥ मीठी और सबाद बहुतही पाइये । सतगुरुके परताप जहां मन लाइये ॥ ब्रह्मलोककी बात सुनै होवे जुह्वां । सबही सूझै वस्तु जो कछु होवे तहां ॥

दोहा—अनहदके सम और ना,फल वरणे नहिं जाहिं ।
पटतर कछू न दे सकूं, सब कछु है वा माहिं॥६०॥
पांच थके आनँद बढ़े, अरु मनुआ वश होय ।
शुकदेव कहि चरणदास सुनि,आप अपनपा खोय६१
नाडिनमें सुषुमन बड़ी, सो अनहदकी मात ।
कुम्भकमें केवल बड़ा, सो वाहीका तात ॥६२॥
मुद्रा यही जु खेचरी, वाकी बहिनी जान ।
अनहदसा बाजा नहीं,और न या सम ध्यान॥६३॥
सेवकमें स्वामी भवे, सुनै जु अनहद नाद ।
जीव ब्रह्म ह्वे जात है, पावे अपनी आद ॥६४॥

चरणदास अब कहत हूं, वही जु प्राणायाम ।
शुकदेव कहैं ताके किये, पावैं मन विश्राम ॥६५॥
बहत्तरहजार आठसौचौसठनारी।सबकी जड हैं नाभिमें झारी॥
तिनमहँ दश नाडी शिरमोरी । पँच बायें पँच दहनी ओरी ॥
जिनमें तीन अधिक परधाना । इडा पिंगला सुषुमन जाना ॥
उनमें सुषुम्ना अधिक अनूपा । सो वह कहिये अग्निस्वरूपा॥
दश नाडी अस्थान बताऊं । ठौर ठौर तेहि कहि समझाऊं॥

दोहा–नाडि शंखिनी गुदामें, किरकल लिंगस्थान ।
पूषा स्रवन दाहिने, जसनी बायें कान ॥ ६६ ॥
गंधारी दृग वामही, हस्थिनि दहिने नैन ।
नारि लंबका जीभमें, सब सवाद सुख दैन ॥६७॥
नासा दहिने अंग है, पिंगल सूरज बास ।
इडा सुबायें और है,जहँ ससिकर परकास ॥ ६८ ॥
दोऊके मधि सुषमना, अद्भुत वाको भेव ।
ब्रह्म नाडिहू कहत हैं,यों कह सो शुकदेव ॥ ६९ ॥
इडा ब्रह्म जमना जहां,सुषमन विष्णु निवास ।
और सरस्वति जानिये,येहो चरणहिं दास ॥ ७० ॥
शिव पिंगल गंगासहित,सो वह दहिने अंग ।
तिरबेणी याते भई, मिली जु तीनौं संग ॥ ७१ ॥
कबहुँ इडा सर जलत है,कबहूँ पिंगल माहिं ।
मध्य सुषुम्ना बहत है, गुरु बिन जानै नाहिं ॥ ७२ ॥
सो वह अग्निस्वरूप है, बडी योग सरदार ।
याहीते कारज सरै, ऐसी सुषुमन नार ॥ ७३ ॥

इनसों प्राणायाम करीजै । पूरक कुंभक रेचक हीजै ॥
इडा पिंगला आरम थाकै । उलटि सुषुम्ना चालन लागै॥

वायु खैंचन पूरक जानौं । ठहरावनको कुम्भक मानौं ॥
फिरि उतारै रेचक वोई । प्राणायाम कहावै सोई ॥
दोहा–इडा पवन पूरक करै, कुम्भक राखै रोक ।
रेचक पिंगलसों करै, मिटै पापके थोक ॥७४॥
पिंगल रोंके पवन न जावै । इडा ओर सो वायु चलावै ॥
कुम्भक करि हिय चिबुक लगावै । जितका तित मनको ठहरावै ॥
सोलह मात्रा पूरक लीजै । चौंसठि कुम्भकमें जप कीजै ॥
रेचक फिरि बत्तीस उतारै । धीरे धीरे ताहि निवारै ॥
पहिल पहिलही कीजे आधे । तीनि महीने ऐसे साधे ॥
यासे आगे फेरि बढावै । दोय आठ अरु चारि चढावै ॥
बढत बढत ऐसही बढै । योहीं चौंसठि ताहीं चढै ॥
इडा वायसों पूरक कीजै । पिंगलसों रेचक तजि दीजै ॥
फिरि पिंगलसों पूरक धारै । बहुरि इडाहीसों निरवारै ॥
ऐसे वारी वारी करिये । तीज प्राण वायु अघ हरिये ॥
होयसकै कुम्भक सरकावै । चौंसठिसें भी परे बढावै ॥

शिष्य वचन ।

दोहा–चरणदास कहै कर जोरिकै, सुनौ गुरू शुकदेव ।
कौन समै याको करै, राति दिना कहि देव ॥ ७५ ॥
मात्रा कासों कहत हैं, जो बतलायो जाप ।
केतो करै अहारही, जाको कहिये नाप ॥ ७६ ॥

गुरु वचन ।

दोहा–ॐबिन्दीके सहितही, ताहीं मात्रा जान ।
बीजमन्त्र तासों कहत, प्रणवकूँहु पहिचान ॥ ७७ ॥
कोमल भोजन कीजिये, आधी रखिये भूख ।
पवन बसै सुखसों जहां, तन नहिं आवै दूख ॥७८॥

साठि घरी दिनरातिकी, आठ तासुके याम ।
लीजै चौथा भागही, कीजै प्राणायाम ॥ ७९ ॥
चार भाग ताके करै, चार समैं ठहराय ।
चार चार घटिका करै, दृढव्रत चित्त लगाय ॥ ८० ॥

और दूसरी भाँति सुनीजै । होय न सकै तौ याको कीजै ॥
बारहलौं ॐपवन चढावै । कुम्भक माहिं बीस ठहरावै ॥
बारह पिंगल पवन उतारै । राति दिनामें चारहि बारै ॥
फेर बढावै कुम्भक दुगुनी । केते द्यौसनसें सिर तिगुनी ॥
फेर पिङ्गलसों पूरक लीजै । इडा वायु रेचकही कीजै ॥
बेरिया एक इडासों खैंच । पिंगला दूजी बार जु ऐंचे ॥
कबहूँ यासूँ कबहूँ वासू । रेचक करै सुपूरक जासू ॥
कुम्भक तिगुनी सो अधिकावै।होयसकै जितनी सरकावै ॥

दोहा-भाँति दूसरी और सुनु, साधन अधिक अनूप ।
गुरु बिन भेद न पाइये, महा गूपसूँ गूप ॥ ८१॥

अष्टपदी ।

प्राणवायुकी युक्ति कहौं जेहि बात है।द्वादश अंगुलनासिका आगे जातहै॥संयमहीसों सहज जु उलट घटाइये।शनैं शनैंहीं साध जु ताहि समाइये॥अपान वायुको खैंचि प्राणवर लाइये। फिरि बाहरसों रोंकि जु तिन्हें मिलाइये॥तीनि कर्मपूरकके कुम्भकके कहे।रेचकहीके कर्म दोय निश्चय भये॥दो रेचकके कर्मपूरककेतीनहीं।येसबही रहिजायँ होय जब छीनहीं॥पूरक रेचक छुटै केवल कुंभक यही।ठौर समैका बंधन राखै नाशही॥या किरियाको अन्तजानो तुम ह्वां तहीं॥प्राणवायुको रोंककायाके महीं ॥

दोहा-साठ हजार इकीस लख, सबके श्वास प्रमान ।
यह तो रोंके देहमें, जबलग एकहि प्रान ॥ ८२ ॥

याके हूये सौ दिना, साधन हुवै जु सिद्धि।
केवल कुम्भक जानिये, पूरी हुवै जु विद्धि॥ ८२॥

अष्टपदी।

इतनी होवै शक्ति रुकन जब श्वासकी। रहै नहीं परमाण जु गिनती मासकी॥ द्वादश कै सौ वरष सहस कै लाखही॥ चाहै जब-लग रखै सांच यह साखही॥ गुप्तमहा यह जान कठिन है साधना॥ कोटिनमें कोई एक करै आराधना॥ देखा देखी बहुत मनुष याकूं लगें॥ कोई चढै परमान घने मगमें थकैं॥ चरणदासयहसमुझि कहैं शुकदेवही। शनैश्शनैसों करै पाय या भेवही॥

दोहा—मूल बंध अरु खेचरी, मुद्राहीको जान।
दोनोंके साधे विना, अपान न होवै प्रान॥ ८४॥

खेचरि मुद्रा कहूं बखानै। जाको कोटिनमें कोइ जानै॥
सकल शिरोमणि योग मँझारी। ज्यों मन खोवै छत्तर धारी॥
शीश फूलज्यों गहनो माहीं। या विन ताडी लागै नाहीं॥
साधन कर कर जीभ वढावै। सो ब्रह्मरंधरताई लावै॥
दरे ताल वा ठौर कहावै। रसनासूं हां बंध लगावै॥
जासूँ पवन न सरकन पावै। श्रवण नैन जू वाट रुकावै॥
प्राणवायु बाहर नहिं आवै। मुख नासा होइ निकसिन जावै॥
शुकदेव कह चरणदास बताऊं। आगे मूलबंध समुझाऊं॥

दोहा—मूल बन्ध जानौ यही, एँडी गुदा लगाव।
थक दहनी वावीं कसी, सिद्धासन ठहराव॥ ८५॥

मूलवन्ध जा कारण दीजै। सो मैं कहूं सवै सुनि लीजै॥
आधार चक्रसूं पवन उठावै। स्वाधिष्ठानहिंके ढिग लावै॥
दहिनि ओरकूं ताहि फिरावै। ऐसे तीन लपट लगावै॥
सीधा हो ऊपरकूं धावै। मणिपूरक चक्रमें आवै॥

शनई शनई ताहि चढावै । चक्कर चक्करमें पहुँचावै ॥
भवचक्करके ऊपर ताईं । ब्रह्मरंध्रके लावै ठाईं ॥
ऐसे षट चक्करकूं सोधै । प्राणवायुको यों परमोधै ॥
अपान वायु सुन ह्यांतक आवै । प्राण वायु ह्वै सहज समावै ॥
शुकदेव कह सुन चरणहिदासा । सहज शून्यमें करै निवासा ॥

अथ अष्ट प्रकारके कुम्भकवर्णन ।

शिष्यवचन ।

दोहा–प्राणायाम कि विधि सबै, गुरु तुम दई सुनाय ।
सो लैकरि हिरदै धरी, ताहि न देउँ भुलाय ॥८६॥
चरणदासके शीश पर, तुमहीं गुरु शुकदेव ।
कुम्भक अष्ट प्रकारके, तिनको कहिये भेव ॥ ८७ ॥
लक्षण नाम स्वभाव गुण, जुदे जुदे समुझाय ।
चरणदासके मन विषे, सुनवेको अतिचाय ॥ ८८ ॥

गुरुवचन ।

दोहा–अब आठों कुम्भक कहूं, नाम भेद गुण रूप ।
शुकदेव कहैं परसिद्ध हैं, योगहि माहिं अनूप ॥ ८९ ॥
प्रथमें कुम्भकही कहूं, नाव जु सूरज भेद ।
दूजे उज्जाई सुनो, साधे छूटैं खेद ॥ ९० ॥
शीतकार अरु शीतली, पँचवीं भस्त्रिक जान ।
छठीं जु भ्रमरी नाम है, नीके समझि पिछान ॥ ९१ ॥
नाम मूरछा सातवीं, आठवीं केवल होय ।
रणजीता सबसे बडी, आयु बढावै सोय ॥ ९२ ॥

पवन पूर पूरकही कीजै । पाछे बन्ध जलन्धर दीजै ॥
कुंभक रेचकके मधि जानौ । ह्यांई बन्ध उड्यान पिछानौ ॥
पवन जोरहीसूं नहि लीजै । अधं ऊर्ध्व संकोच न कीजै ॥

मध्यम कीजे पश्चिम तानै। ब्रह्म नारिके माहिं समानै ॥
नाडी पवन खेंचिये ऐसे। भरिये सब संधान जु जैसे ॥
अपान वायुकूं ऊपर लावै। प्राण वायु नीचे लै जावै ॥
जोपै यह साधन बनि आवै। योगी बूढा होन न पावै ॥
तरुण अवस्था दीखै ऐसी। नितही रहै जानिये जैसी ॥

अथ सूर्यभेदन।

कुं०—कुम्भक सूरज भेदही, पहिले देहुँ सुनाय।
सुख आसनके कीजिये, अथवा वज्र लगाय ॥
अथवा वज्र लगाय, पूरक दहिने स्वर कीजै।
नख शिख सेती रोंकि, वायुकूं बन्ध करीजै ॥
बायें सेती रेचिये, हौरै हौरै जान।
कपाल सोधनी जानिये, चरणदास पहिचान ॥ ३ ॥

दोहा—वायु किरम पीडा हरै, कीजै वारंवार।
कुम्भक सूरज भेदनी, शुकदेव कह हिय धार॥ १२ ॥

अथ ऊजाई।

अब ऊजाई कुम्भक सुनिये। समझ सीख मनमाहीं गुनिये॥
दोउ सुर समकरि पवन चढावै। पेट कण्ठलौं ताहि भरावै ॥
ताको रोंके दृढ करि राखै। सहज इडासों रेचक नाखै ॥
ऐसे जो कोइ साधन करै। रोग सलेषमके सब हरै ॥
हिरदय कण्ठ माहिं जो होई। कफका रोग रहै नहिं कोई ॥
रोग जलन्धरहीका भागै। भजै वायु दुख पावक जागै ॥
बैठत चलत पवनको भरै। यही उजाई कुम्भक करै ॥
चरणदास शुकदेव बतावै। तीजी शीतकार समुझावै ॥

अथ शीतकार।

दोहा—ओठ जँभाई नासिका, लीजै खिंचै जु पौन।
ताहि कछू ठहरायके, छोडे मुखसों जौन ॥१४॥

धीरे धीरे रेचिये, सीसी शब्द उचार।
सुन्दर होवै तेजवत, अधिक रूपको धार ॥९५॥
भूख प्यास व्यापै नहीं, आलस नींद न होय।
तन चेतनही होत है, रहै उपाधि न कोय ॥९६॥
यहि विधि साधतही रहै, होय योगिनमें भूप।
शुकदेव कहे चरणदास सुनि,कुम्भक यही अनूप॥९७॥

अथ शीतल ।

कहूं शीतली कुम्भक आगे ।जो कोइ करै भाग तिहिं जागे॥
तालु मूल जिह्वा बलसती । प्राणवायु पीवै कर हेती ॥
कुंभक राखै सबतन माहीं । ढीला गात रमावै ह्वाहीं ॥
नासासेती रेचक कीजै ।एक मास सिधि हो सुख लीजै॥
पीवै पवन जीभको मोड । सहजै छोडै नासा ओड ॥
दोनों रंधरसे तजि दीजै । यों अभ्यास पूर करि लीजै॥
तापतिली गोला जु रहोई । वाके तनमें रहै न कोई ॥
देह पुरानी नूतन होय । तीनि वरष साधै जो कोय ॥
जैसे साँप कांचुली मोहिं । श्वेत वाल तजि काले होहिं॥
काहु भाँतिका दुख नहिं व्यापै। भूख प्यास पित भाजै आपै ॥

अथ भस्त्रिका ।

दोहा-अब कहुँ कुम्भक भस्त्रिका, पित कफ वायु नशायँ।
अगिनि बढै अभ्यासमों ,तीनि गाँठिखुलि जायँ॥९८॥

आसन पद्म सु या विधि करै । वामजंघ दहिनो पग धरै ॥
वाँवों पग दहनीपर लावै । जाँघनसों दोउ हाथ मिलावै॥
ग्रीवा पेट वरावर राखै । आगे सुनु शुकदेवा भाखै ॥
मुख मूँदै रेचक नासासूं । पूरक चपल करै श्वासासूं ॥
रेचक पूरक ऐसे कीजै । वारम्वार तजै अरु लीजै ॥

जैसे खाल लोहार जु भरै । रेचक पूरक आतुर करै ॥
करत करत जवहीं थकि जावै । नेक ठहरि दूजी विधि लावै ॥
फिरि पूरक सूरजसों करै । पवन उदरके माहीं भरै ॥
तर्जनि अँगुलीसों दृढ रोकै । नासा मध्य धारि करि जोखै ॥

दोहा—कुंभक पिछली भांति करि, रेच इडासों बाय ।
कफ पित वायु नशायके, लेवै अग्नि बढाय ॥९९॥
कुण्डलिनी देवै जगाय,यह कुम्भक सुखदाय ।
करजु हित व्रत धारिकै,चरणदास चित लाय ॥१००॥
कुण्डलिनी सरकायकै, वेधै तीनों गाँठ ।
ऐसी पँचवी भस्त्रिका, रहै न कोई आँठ ॥१०१॥

ब्रह्म नाडिकाके छिद्रमाहीं । रोंकि रही सुखदे रहि ह्वाहीं ॥
लाय लपेटै नाभी ठाहीं । दृढ ह्वै बैठी सरकै नाहीं ॥
सवा विलस्तकि जाकी देही । तामें अस्थित जीव सनेही ॥
शक्ति नागिनी यही जु कहिये । याका भेद गुरूसों लहिये ॥
महा अपरवल जागै नाहीं । ताते नर सब मरि मरि जाहीं ॥
कोइ इक योगी ताहि डुलावै । सुषमन वाट गगन लै जावै ॥
ब्रह्मरंध्रमें जाय समावै । लगै समाधि वहुत सुख पावै ॥
जो कछु होय सो कहा न जावै । चरणदास शुकदेव सुनावै ॥

दोहा—शिव शक्तीसें लाभ है, रहै न दूजो भाव ।
कुण्डलिनी परबोधका, जो कोइ करै उपाव ॥१०२॥

शिष्य वचन ।

दोहा—व्यासपुत्र शुकदेवजी, किरपा करी दयाल ।
चरणदास आधीनही, समझो भयो निहाल ॥१०३॥
एक वार फिरि खोलिकै,कुण्डलिनी समुझाव ।
याके सवही भेदको. सुनवेको अति चाव ॥१०४॥

गुरु वचन ।

दोहा-फिरभी तोसों कहत हौं, कुण्डलिनी विस्तार ।
ताके सगरे भेदही, सुनिकै हियमें धार ॥१०५॥
नाभिस्थान नागिन रहै,कुण्डल शशी अकार ।
प्राण पियारा वही है, आगे सुनो विचार ॥१०६॥
कुंभक कर्म्म कोई करै, देवै शक्ति जगाय ।
जैसे लागी लष्टिका, नागन शीश उठाय ॥१०७॥
सीख गुरूसों कुंभक साधै । नीकीविधि ताकी अवराधै ॥
पवन ठवन लग ताहि जगावै । तब ऊरधको शीश उठावै ॥
नाभि ठौर ताका है वासा । पद्मराग मणि ज्यों परकासा॥
आठ लपेटे वाई जानौ । ताते शक्ति कुंडली मानौ ॥
नाडी सहस लगी हैं वाको । ऐपर छुटी जानिये ताको ॥
जिनसें तीर नारि अधिकाई । इडा पिंगला सुपमन गाई ॥
तिनके माहिं शिरोमणि सुपमन।नालकमल जानत योगीजन ॥
जा पहुँची ब्रह्मरंधर ताहीं । ऊरध कमल सातवें माहीं ॥
आवन जानि पवनकी वाटा । सकत चढन ऊरधका घाटा ॥
कह शुकदेव चरणही दासा । आगे कहूं जु हो परकाशा ॥
दोहा-नागिन सूक्षम जानिये, बाल सहस्र वा भाग ।
शुकदेव कहैं आकारही, रक्त वरण ज्यों नाग॥१०८॥
कुंभक हो अत्यन्त जब, तब ऊरधको जाय ।
ब्रह्मरंध्रमें आय करि, घडी दोय ठहराय ॥१०९॥
इकंतका करि पानहा, पूरण हो अभ्यास ।
उड़ते देखै सिद्ध तब, वाके माहिं अकास ॥११०॥
पै देखत है नैन विनाहीं । चहै करै लीला उन माहीं ॥
खेचर मिलि खेचर ह्वै जावै । यहभी शक्ति उड़नकी पावै ॥

अधिकी ठहरे लगै समाधी । यह तो कहिय खेल अगाधी॥
शिव शक्ती जहँ मेला होई । होय लीन मन उनमन सोई ॥
योग युक्ति करि याको पावै । परासक्त अपने वश लावै ॥
चाहै अर्द्ध ठौर ले आवै । जव चाहै ऊरध लैजावै ॥
कबहूं हिरदयके मधि आनै । याहीको आपनपौ जानै ॥
इच्छा करै सिद्धिकी जैसी । होय प्राप्त सो वेगिहि तसी ॥
चहै अस्थूल सूक्ष्म तन धारूँ । वैसाही होय जाय सवारूं ॥
कहै शुकदेव सुन चरणहि दासै।जो कुंडलिनी हृदय प्रकासै ॥

दोहा–कुण्डलिनी परकाशही, भौंरा एक अनूप ।
सोउ प्रकाशत है तहाँ, सुवरणकासा रूप ॥ १११ ॥
हिरदयमें उजियारहो,होत चपल यहि भाँति ।
जैसे धूमर मेघमें, बिजलीही दमकाति ॥ ११२ ॥

शुकदेव कहै चरणदास बताऊँ । और अनूठी सिद्धि सुनाऊं ॥
चाहै पर देहीमें वरूं । अपनी कायाको परिहरूं ॥
रेचक प्राणायाम प्रतापै । कुण्डलिनी जो अपनी आपै॥
रेचक किये बाहरे आवै । परकायामें जाय समावै ॥
अस्थित होय जाय यों जानो। सदा विराजत ऐसे मानो ॥
ऐसे पहिली देह गिरावै । ज्यों मणिको डोरा तजि जावै॥
जब चाहै अपने घट माहीं । परासक्तही आवै ह्वाहीं ॥
काया पलट कहत हैं याको । कोइक योगी जानत ताको ॥

दोहा–चाहे तनको छोड करि, देह कलप धरि और ।
मन मानै जहँ गमन करि,फिरि आवै अपठौर॥११३॥

अथ भ्रामरीकुंभक ।

दोहा–छटी जु कुम्भक भ्रामरी, सुनिये चरणहिदास ।
शुकदेवा हौं कहतहूं, तामें करो बिलास ॥११४॥

जैसे भृंगी धुनि करै, यों उपजै हिय माहिं ।
दोनों स्वरसों कीजिये, परगट सुनिये नाहिं ॥११५॥
वलसेती पूरक करै, यही शब्द ले साथ ।
भृंगीकीसी धुनि सहत, रेचै मन्द सुहात ॥११६॥
या अभ्यासके कियेसे, चित चंचल रहै नाहिं ।
योगीश्वर लीला करै, चिदानन्दके माहिं ॥११७॥

अथ मूर्च्छा ।

सतवीं कुंभक मूरछा, पूरक ऐसे होय ।
खैंचत होवै सोरसा, मेघधार ज्यों होय ॥११८॥
बन्ध जलंधर दीजिये, सहज कण्ठ तल जान ।
रेचत वाई मूरछित, होय यही पहिचान ॥११९॥
सुखदाई सुखकी करन, कही जोइ शुकदेव ।
केवल कुंभक आठवीं, गुरुसों पावै भेव ॥१२०॥
पूरक रेचकही सहित, ये कुम्भक करि लेहि ।
केवल कुम्भक ना सधै, जबलग ह्यां चित देहि॥१२१॥
केवल कुम्भक आश धरि, येहू साधत लोग ।
बल पावै बस पवन हो, और भजैं तन रोग ॥१२२॥

अथ केवल कुम्भक ।

आयु बढावै सिद्धि दे, लागै और समाधि ।
केवल कुम्भकगुण भरी, बिन परमाण अगाधि॥१२३॥
केवल कुम्भक जब सधै, तब ये सब रहि जाहिं ।
जैसे सूरज उदयते, तारे सब लुकि जाहिं ॥१२४॥
केवल कुम्भक योगमें, ज्यों नगरीमें भूप ।
रेचक पूरकके बिना, जैसे बँधा जु कूप ॥१२५॥

दोहा—सो तुमसों पहिले कही, विधिगति सब समुझाय ।
सो तुम सुनि हिरदय धरी, देहो ना विसराय॥१२६॥
प्राणायाम बडा तप सोई । प्राणायामसों बल नहिं कोई॥
प्राणवायुको यह वश लावै । मनको निश्चल करि ठहरावै॥
आयुर्दाको यही बढावै । तनमें रोग रहन नहिं पावै ॥
पाप जलावै निर्मल करै । उपजै ज्ञान तिमिर सब हरै ॥
योग युक्तिकी जड यह जानो । याहि टेक गहि करना ठानो॥
अडिग आसनसों याको कीजै । नवों द्वार पट नीके दीजै ॥
पाँचों इन्द्रीके रस पेलौ । इडा पिंगला सुषमन खेलौ ॥
कह शुकदेव चरणहीं दासा । प्रत्याहार सुनु विषै निरासा॥

इति प्राणायामका अंग सम्पूर्ण।

---

## अथ पांचवाँ प्रत्याहार अंग वर्णन ।

दोहा—प्रत्याहार जो पांचवाँ, समझाऊं चरणदास ।
शुकदेव कहे कहु खोल करि, नीके समझो तास॥१२७॥
प्रत्याहार पांचवाँ कहिये । सो योगीको निश्चय चहिये ॥
विषय और इन्द्री जो जावै । अपने स्वादनको ललचावै ॥
तिनकी ओर न जाने देई । प्रत्याहार कहावे एई ॥
रोंकि रोंकि इन्द्रिनको लावै । ध्यान आतमा माहिं लगावै ॥
जैसे कछुआ अंग समेटै । रंक ज्यों शीतकालमें लेटै ॥
जैसे माता पूत खिलावै । बालक वस्तुनको ललचावै ॥
सरप आग अरु शस्तर कोई । कछू और दुखदाई होई ॥
तिनको बालक नाहीं जानै । पकडनको दौडे मन आनै ॥
दोहा—बालक जानत है नहीं, दुखदाई सब एह ।
जो पकडूंगा हाथसे, दुख पावैगी देह ॥ १२८॥

माता जानत है सबै, खोटी खरी विकार ।
राखै सुतको खैंचिकरि, वारम्वार निहार ॥ १२९ ॥
ऐसेही बुधि ज्ञानसों, पाँचौं इन्द्री रोग ।
विषय ओरसों फेरिये, लहै न अपना भोग ॥ १३० ॥
ज्यों ज्यों इनको भोग दे, परबल होती जाहिं ।
बिना भोग होनी नहीं, वह बल रहै जु नाहिं ॥ १३१ ॥
नैन जु भोगें रूपको, और गन्धको घ्राण ।
षटरस भोगै जीभही, शब्दहि भोगै कान ॥ १३२ ॥
स्पर्श भोग है त्वचाको, बाढै अधिक विकार ।
पांचौ इन्द्री जानि ले, इनका यही अहार ॥ १३३ ॥
इनसे मिलि मन बिगडे, होयगया कछु और ।
इन्द्री रोकै मन रुकै, रहै जु अपनी ठौर ॥ १३४ ॥
ज्यों ज्यों होवै प्राणवश, त्यों त्यों मन वश होय ।
ज्यों ज्यों इन्द्री थिर रहे, विषय जायँ सब खोय १३५ ॥
तातें प्राणायाम करि, प्राणायामहिं सार ।
पहिले प्राणायाम कर, पीछे प्रत्याहार ॥ १३६ ॥

इति प्रत्याहार अंग सम्पूर्ण ।

---

## अथ छठवाँ धारण अंग वर्णन ।

दोहा–तत्त्वनकी कहुँ धारणा, तिनसें करै प्रवेश ।
शनई शनई साधिकरि, पहुँचै निर्भय देश ॥ १३७ ॥
पहिले भूमि धारणा कीजै । ठौर काल जीसें चित दीजै ॥
पीतवरण चौकोर अकारो । विधि दैवत है तहाँ विचारो ॥
प्राण लीन करि पांच घडीहीं । चित अस्थिर होवेगा जबहीं ॥

यासों पृथिवीको वश करिये । यही धारणा जो नित धरिये॥
हिरदयसे ऊपर जल जानो । कण्ठतई ताको पहिंचानो ॥
चन्दफांक अरु श्वेत अकारो । हृषीकेश तहँ देव निहारो ॥
त्यां हूं पांच घरी अस्थापे । प्राणलीन करि चित दे आपै॥
व्यापै ना विप काहू विधिको।शुकदेवकहैंफलजलकेसिधिको॥

दोहा–कण्ठसे ऊपर तालुका, लो पावक अस्थान ।
लाल रंग तिरकोन है, रुद्र देवता मान ॥१३८॥
तहाँ लीन करि प्राणको, पाँच घडी परमान ।
भय व्यापै नहिं जालको, अग्नि धारणा जान॥१३९॥
जाके आगे वायु है, भ्रुकुटीलों मर्य्याद ।
मेघ वर्ण पट कोण है, ईश्वर दैवत साध ॥१४०॥
प्राण लीन जहँ कीजिये, पांच घडी रे तात ।
पै है खेचर सिद्धि ही, तत् पदही ह्वै जात ॥१४१॥
ब्रह्मरंध्र आकाश है, बडा जु तत्त्वन माहिं ।
श्याम वरण ब्रह्म देवता, योगी जहाँ सिराहिं॥१४२॥
प्राणलीन घटि पांच करि,पावै मुक्ति अनूप ।
व्योम तत्त्वकी धारणा, जहाँ छाहँ नहिं धूप॥१४३॥
पृथ्वी संग लकारही, जलके संग वकार ।
पावक संग रकार है, मारुत संग सकार ॥१४४॥
पंच तत्त्व आकाशही, सबके ऊपर जान ।
अक्षर जहाँ हकारही, शुकदेव करै बखान ॥१४५॥
पहिलि धारणा थंभनी, दूजी द्रावण होय ।
तीजी दहनी जानिये, चौथि भ्रामिनी सोय ॥१४६॥
पँचवीं नाम जु शोषिनी, इनको लेवो जान ।
शुकदेवा अब कहत हैं, आगे और विधान ॥१४७॥

प्रथम धारणा गुरुकी लीजै । अपना रूप उन्हींसा कीजै ॥
ऐसे ध्यान सभी सुधि पावै । जैसी धारै सो हो जावै ॥
वेगहि सब साधन सधि आवै । आलस कायरता भजि जावै ॥
लोक प्रलोक सभी सुख लेवै । जो गुरुको ऐसो व्रत सेवै ॥
दूजे परमातमकी धारण । मुक्तिदेन अरु बंध निवारण ॥
धारनसों चित घना लगावै । सिसिटि सभी ओरनसों आवै ॥
जो कछुहोय सो आगेहि आगे। टेक पकरि मारगमें लागे ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । सती शूरमा ज्यों मन लावै ॥

दोहा–प्राण वायुकी धारणा, परमेश्वर पहिचान ।
परमातम ह्वै जात है, जो पै रोपै प्रान ॥१४८॥
बारह मात्रासों चढै, ह्वां तक पहुँचे जाय ।
बारहवें अरु छानवे, कुंभकमें ठहराय ॥१४९॥
यही धारणा अंग है, शनै शनै कर ध्याव ।
याते दुगुनी ध्यानसें, प्राण वायु पहुँचाव ॥१५०॥
दूजा जानि समाधि लों, ध्यानहिं सेती एहु ।
पाँच हजार औ एकसौ, चौरासी गिन लेहु ॥१५१॥

इति धारणाका अंग सम्पूर्ण ।

## अथ सातवाँ अंगवर्णन ।

शिष्यवचन ।

दोहा--अंग धारणाको कहा, सो धारा चित माहिं ।
ध्यान अंग वर्णन करौ, मैं रहुँ चरणन छाहिं ॥१५२॥

गुरुवचन ।

दोहा--चरणदास अब ध्यान सुनु,कहूं तोहिं समुझाय ।
शुकदेव कहे सुनि सुनि समुझि,करौ तोहिं चितलाय १५३

ध्यान जु चारि प्रकारके, कहूँ जु इनकी रीत ।
पदस्थ पिंडरूपस्थ है, चौथा रूपातीत ॥१५४॥

अथ पदस्थ ध्यान ।

दोहा—हिय पदपंकज ध्यान करि, फिरि करि सारी देह ।
नखशिख लौं छवि निरखिकै, चरणनमें चित देह॥१५५॥
कै कुंभकहीं कीजिये, हुआ प्रणवका जाप ।
मन निश्चल हो सहजमें, भाजैं त्रैविधि ताप ॥१५६॥
पदस्थ ध्यान याको कहैं, करै सो जाने भेव ।
पिंडस्थ ध्यान वर्णन करैं, खोलि २ शुकदेव॥१५७॥

अथ पिंडस्थ ध्यान ।

दोहा—ब्रह्मण्ड सोई यह पिंड है,यामें करि कारि वास ।
कमलनके लखि देवता, लहै परापत तास ॥१५८॥
सोधे सगरे पिंडको, पटचक्रहुको ध्यान ।
शोधत शोधत आ चढै,भवँर गुफा अस्थान॥१५९॥
तिरवेणी संगम वहै, ज्योति जहां दरशाय ।
सात जन्म सुधि होय जब, ध्यान करै मनलाय॥१६०॥
आगे कमल हजार दल, सद्गुरु ध्यान प्रधान ।
अमृत सिन्धू बहिचलै, हंस करै जहँ न्हान ॥१६१॥
ऊपर तेजाहिं पुंज है, कोटि भानु परकाश ।
शून्य शिखर ता ऊपरै, योगी करै विलास ॥१६२॥

अथ रूपस्थ ध्यान ।

दोहा—रूपस्थ ध्यानको भेद सुनि,कीजै मन ठहराय ।
देखै त्रिकुटी मध्य है, निश्चल दृष्टि लगाय ॥१६३॥
ध्यान किये पहिले जहां,अगन फूल दृष्टाय ।
केते द्योसन माहिंहीं, दीप ज्योति प्रगटाय ॥१६४॥

शनै शनै आगे जहां, दीपमाल दरशाय ।
फिरि तारोंकी मालसी,दामिनि बहु दमकाय॥१६५॥
बहुत चन्द्र सूरज घने, देखे कोटि अनन्त ।
अणज्योंकारि सूभर भरे,ध्यानमाहिं दरशान्त॥१६६॥
झिलमिल २ तेजमय, भासै सब संसार ।
तन मन उपजै सुख घना,आनंद अधिक अपार॥१६७॥
जल अथाहमें डूबि ज्यों, देखे दृष्टि उघार ।
जो देखे तौ नीरही, दश दिशि अपरम्पार ॥१६८॥
यह तो ध्यान प्रत्यक्ष है, गुरू कृपासों होय ।
कह शुकदेव चर्णदासकर,तन मन आलस खोय १६९॥

अथ रूपातीत ध्यान ।

रूपातीत शून्य ध्यानहिं जानो । शून्यहिको परब्रह्म पिछानो ॥
त्रिकुटी परे शून्य अस्थान । सो वह कहिये पद निर्वान ॥
चिदानन्द ताका हिय आनो । वाहीमें मनहीको सानो ॥
आठ पहर जहँ चित्त लगावो । याके कीन्हेसों लय पावो ॥
ज्यों आकाशमें पक्षी धावै । धावत धावत दृष्टि न आवे ॥
बहुरि अचानक दीखै आई । वह ध्यानी ऐसा है जाई ॥
परमशून्यका अधिकी ध्याना । सब ध्याननमें है परधाना॥
सो योगी यह लहै ठिकाना ।सायुज्य मुक्ति होइजाय निदाना॥

दोहा--यासों लगै समाधिही, निद्रा कहिये योग ।
ध्याता होवै लीनही, रहै न त्रिकुटी सोग ॥ १७० ॥
सतवाँ कहा जु ध्यानहीं, अठवाँ कहूं समाधि ।
ज्ञान ध्यान जहँ वीसरै, तहां न विद्यावाद ॥ १७१॥

इति ध्यानांग सम्पूर्ण ।

# अथ आठवां समाधि अंग वर्णन ।



अष्टपदी ।

अठवीं कहूं समाधि लक्षण वर्णन करूं । तोकों सब समुझाय तेरी दुविधा हरूं ॥ सबहीं लगै समाधि योगी आनँद लहै । योग भया सिध जान क्रिया कोइ ना रहै॥मिलि ध्याता अरु ध्यान एक होवै जहां।दूजा रहै न भाव मुक्ति वर्तै जहां॥ निरउपाधि निर्खेद ऐसा वह देश है । करम भरम अरु धरम नहीं कोइ लेश है ॥ आपा रहै न कोय सकल आसा गरै । चिन्ताका दुख नाहिं वासाना सब जरै ॥ पंच विषय जहँ नाहिं नहीं गुण तीनहीं । होवै ब्रह्मस्वरूप जीवताक्षी नहीं ॥ जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति होवैही नहीं।चौथे पदको पाय होय जहँ लीनहीं ॥ ऐसे कहैं शुकदेव सुनो चरणदासही । यह निर्द्वंद समाधि करो तहँ वासही ॥

दोहा—जहां कछू गमि ना रहै, विद्या वेद न वाध ।
ऋधि सिधि मिटि आनंद लहै,ऐसी शून्य समाधि ॥१७२॥

अष्टपदी ।

तहां किये परवेश रहै न अकारही । रूप नाम गुण क्रिया नहीं साकारही ॥ पाप पुण्य सुख दुःख जहां नहिं पाइये । मतमारग कुल धर्म न देत दिखाइये ॥ भूख प्यास अरु उष्ण जहां नहिं शीत है । हर्ष शोक नहिं नेक वैर नहिं प्रीत है॥इन्द्री मन नहिं रहत गलित ह्वै जात है।सिध साधक गुरु शिष्य न भाव रहात है॥उडुगन चन्द न सूर न दिवस न रात है । त्वंपद ईश्वरब्रह्म न जान्यो जात है ॥ जैसे जलमें नीर क्षीरमें

क्षीर ही। असिपदमें यों जीव नीरमें नीर ही॥अहं मिटै मिटि-
जाय जु आपा थोकही । ना परमातम आतम बंध न मोक्षही॥
ऐसे कह शुकदेव यों होय समाधिमें । वैसाही ह्वै जाय सोई
था आदिमें ॥

दोहा-हुता अदि परमातमा, बिच उठि लगा विकार ।
मिलि समाधि निर्मल भवै, लहै रूप ततसार ॥१७३॥

अष्टपदी ।

जहँ आतम देव अभेव सेवक नहिं सेव है । स्वामी भी ह्वां
नाहिं पूजा नहिं देवहै॥नौधा नेम न प्रेम ज्ञान नहिं ध्यान है ।
जड चेतन कछु नाहिं सुरति नहिं ज्ञान है॥विधि निषेध नहिं भेद
अन्वय व्यतिरेक ना निश्चय अरु व्यवहार कछू तामें न ह्वां ॥
उत्तम मध्यम भाव न शुभ ना अशुभनहै । सिंह सर्प डर नाहिं
और शस्तरको न भै है ॥ पावक दग्ध न करै बहावै जल नहीं ।
ह्वां नहिं पहुँचै काल न ज्वाला है तहीं ॥ ऐसा भवन समाधि
भागि सों पाइये । तजिकै जक्त उपाधि तहां मठ छाइये॥यतन
करै लख माहिं और सब भेषही।कोटिनमें कोइ होय समाधी
एकही ॥ ह्वांतक पहुँचै जाय सोइ सिध साध है।कहै शुकदेव
पुकारि जु कठिन समाधि है ॥

दोहा-भक्ति योग अरु ज्ञानकी, त्रैविधि कहूं समाधि ।
गुरु मिलै तौ सुगम है, नाहीं कठिन अगाधि ॥१७४॥

अथ भक्तिसमाधि ।

दोहा-सब इंद्रिनको रोकिकै, करि हरि चरणन ध्यान ।
बुद्धि रहै सुरतिहु रहै, तौ समाधि मत मान ॥ १७५॥
ध्याता विसरै ध्यानमें, ध्यान होय लय ध्येह ।
बुद्धि लीन सुरती न रह,पद समाधि लखि लेह॥१७६॥

अथ योगसमाधि ।

दोहा—आसन प्राणायाम करि, पवन पंथ गहि लेहि ।
षट चक्रको छेद करि, ध्यान शून्य मन देहि ॥१७७॥
आपा विसरै ध्यानमें, रहे सुरति नहिं नाद ।
लीन होय किरिया रहित, लागै योग समाध ॥१७८॥

अथ ज्ञानसमाधि ।

दोहा—जब लग तत्त्व विचारि करि, कहैं एक अरु दोय ।
ब्रह्मव्रत बांधे रहै, ह्यांलग ध्यानहिं होय ॥ १७९ ॥
मैं तू यह वल भूलि करि, रहै जू सहज स्वभाय ।
आपा देखि उठाय करि, ज्ञान समाधि लगाय॥१८०॥
ज्ञान रहित ज्ञाता रहित, रहित ज्ञेय अरु जान ।
लगी कभी छुटै नहीं, यह समाधि विज्ञान ॥१८१॥
पूछे आठों अंग ते, योग पंथकी बात ।
शुकदेव कहै तामें चलौ, गुरूकृपा लै साथ ॥ १८२ ॥

इति अष्टांगयोग संपूर्ण ।



श्रीयोगिजनवल्लभाय नमः ।



# अथ षट्कर्महठयोगवर्णन ।



शिष्य वचन ।

दोहा—अष्टांग योग वर्णन कियो, सोको भइ पहिचान ।
छहौं कर्म हठयोगके, वरणौ कृपानिधान ॥ १ ॥

गुरु वचन ।

पहिले ये सब साधिये, काया होवै शुद्धि ।
रोग न लागै देहको, उज्ज्वल होवै बुद्धि ॥ २ ॥

अरु साधै षट्कर्म बताऊँ । तिनके तोकों नाम सुनाऊँ ॥
नेती धोती वसती करिये । कुंजर करम देह सब हरिये ॥
न्योली किये भजे तन बाधा । देखिदेखि जिन गुरुसों साधा ॥
त्राटक कर्म दृष्टि ठहरावै । पलक पलकसों लगन न पावै ॥

अथ नेतीकर्म ।

कुं–मिही जु सूत मँगायकें, मोटी, वाटै डोर ।
ऊपर मोम रसायकें, साधै उठि करि भोर ॥
साधै उठि करि भोर, डेढ बालिस्त कि कीजै ।
ताको सीधी करै, हाथ अपनेमें लीजै ॥
नासारंध्रसें मेल कर, खींचै अँगुली दोय ।
फेरि विलोकन कीजिये, नेती कहिये सोय ॥ १ ॥
दोहा–कान नाक अरु दांतको, रोग न व्यापै कोय ।
उज्ज्वल होवै नैनही, नित नेती करि सोय॥२॥

अथ धोतीकर्म ।

धोती कर्म यासों कहै, पट्टी सोलह हाथ ।
कोट अठारह ना भवें, करै जु नित परभात ॥ १ ॥
कुं–चौडी अंगुल चारिकी, मिहीवस्त्रकी होय ।
जलसें भेइ निचोय करि, निगल कंठसों सोय ॥
निगल कंठसों सोय, सिरा बाहर रहिजावै ।
फेरि निकासै ताहि, पित्त कफ दोऊ लावै ।
माया होवै शुद्धही भजै पित्त कफ रोग ।
शुक देव कहै धोती करम, साधैं योगी लोग ॥ २ ॥

अथ वस्तीकर्म ।

कुं–तीजे वस्ती कर्मही, कहौं सुनौ चितलाय ।
क्रिया करै गणेशही, कुंजी तहां लगाय ॥
कुंजी तहां लगाय, मूलको धोवन कीजै ।
पंसारन संकोच, सुरत दे यह करि लीजै ॥
नीर गुदासों खैंचिकरि, थांमै उदर मँझार ।
कछू डोल अरु बैठकर, फिरि दे ताहि उतार ॥ २ ॥

दोहा–यही जु वस्ती कर्म है, गुरु विन पावै नाहिं ।
लिंग गुदाके रोग जो, गर्मीके नशि जाहिं ॥ ५ ॥

अथ गजकर्म ।

दोहा–गजकर्म याहि जानिये, पिये पेट भरि नीर ।
फेरि युक्तिसों काढिये, रोग न होय शरीर ॥ ६ ॥

अथ न्योलीकर्म ।

न्योली पद्मासनसों करै । दोनों कर घुटनो पर धरै ॥
पेटरु पीठ बराबर होय । दहने-बाय नले बिलोय ॥
मल पेटसें रहन न पावै ।अपान वायु तासों वश आवै॥
तापतिली अरु गोला शूल । होन न पावै नेक न मूल ॥
जो गुरु करिके ताहि दिखावै । न्योलीकर्म सुगम करि पावै॥
और उदरके रोग कहावैं । सो भी वे रहने नहिं पावैं ॥

अथ त्राटककर्म ।

त्राटक कर्म टकटकी लागै ।पलक पलकसों मिलै न तागै॥
नैन उघारे ही नित रहै । होय दृष्टि थिर शुकदेव कहै॥
आँख उलटि त्रिकुटीसें आनो। यह भी त्राटककर्म्म पिछानो॥
जते ध्यान नैनके होई । चरणदास पूरण हो सोई ॥

दोहा–कपालभाँति अरु धौंकनी, वाघी शंख पशाल ।
चारि कर्म ये और हैं, इनहिं छहींके नाल॥७॥

इति त्राटककर्म ।

---

## अथ खेचरी मुद्रा ।

शिष्य वचन ।

दोहा–एकबार फिर भी कहौ, मुद्रा पांच दयाल ।
मोसे रंक अधीन पर, होकर बहुत कृपाल ॥ ८ ॥

गुरु वचन ।

अष्टपदी--आगे मुद्रा तोहिं कहीं समुझाइया । फिर भी कहूं अब खोलि सुनो चितलाइया ॥ पहिले मुद्रा खेचरीको साधन भनूं।जिसे आगे करी सर्वां ऋषि मुनि जनूं॥ताते जलके कुरले करि जु जगाइये । ता पाछे चौवस्तको चूरण लाइये ॥ जिह्वा हाथसें पकरि मर्दन छीलन करै।दोहन तानन करै बहुरि दशनन धरै ॥ फिरि करि चालन ताहि छेद नहिं कीजिये । तातु ज्यों कटिजाय यत्नसोइ लीजिये॥ब्रह्मरंध्रको धोयकै मैल निवारियें। बायें अँगूठे ऊपर कागको धारियें ॥ सहज सहज सरकायकै आगे लाइये । यह सब साधन कठिन गुरूसे पाइये ॥ दो अंगुलीकी कूंचीसूं करि मेलना । जिह्वा उलटी राख जु नितप्रति खेलना ॥ यह उपाय षट मास करैं तजि मानहो । रसना यों बँधिजाय चढै अस्थानही ॥

दोहा—चार काज यासूं सरैं, फलदायक बहुभाँति ।
योग माहिं बड भूप है, अधिकी जाकी कांति ॥ ९ ॥

अष्टपदी ।

एक जु प्राणायाम जीभसूं कीजिये। दूजे बन्ध उदान यहीसूं दीजिये ॥ तीज करि करि ध्यान निरखि जहँ ज्योतहो । चौथे अमृत पिवै खुलै तहँ सोतही॥खैंचै त्रिकुटी पाठ सहज अरु फेरियें द्रवै सुधा रसनीर जहां मन घेरियें॥अमृतहीके स्वादको कौन बखानई।जो कोइ अँचवै हंस सोई फुन जानई॥दिन दिन पलटै देह रक्त दूधा भवै।बीस वरस अरु चार माह ऐसा ह्वै॥इच्छाचारी होय वरस छत्तीसमें।सब लोकनमें जाय जु अपनी शक्तितें।

१ स्याह मिर्च, पीपल, सोंठ और मधु ।

दोहा--जेते विष व्यापै नहीं, रोग न दहै शरीर ।
जो कोइ पीवै युक्तिसूं, कामधेनुको क्षीर ॥ १० ॥
भूख प्यास अरु नींदके, रहे न तीनौ लेव ।
नाद बिन्द गुटका बँधै, कहै यही शुकदेव ॥ ११॥
तीन महीने चारका, बालक गोदी माय ।
ना वह पीवै नीरही, अन्न नहीं वह खाय ॥१२॥
वह तौ जीवै दूधसूं, वाकूं वही जु काम ।
लगो रहै माता कुचन, निसरै एक न याम ॥१३॥
अमृत पीवै योगिया, ऐसे चरणहिदास ।
पहरहु यह छाँडै नहीं, कामधेनुको पास ॥१४॥
ऐसे धारै तो बनै, सुधा रसीला संत ।
दिव्यकाय होजाय जब, धन कहै कमलाकंत॥१५॥
आठ पहर लागा रहै, पीवै कैकरि ध्यान ।
मैं कहा जैसाही बनै, परसै पद निरवान ॥१६॥
भेद गुरूसे ये लहै, और छिपावै वाहि ।
जो जो फल याके अधिक, होय परापति ताहि॥१७॥
योगेश्वर अरु देवता, मुनी ऋषीश्वर जान ।
रखवारे वाके घने, करन न देवैं ध्यान ॥१८॥
टेक गहै सो जा पियै, और करै ह्यां ध्यान ।
यती सती अरु गुरुमुखी, जाकी ऐसी आन ॥१९॥
वडी जु मुद्रा खेचरी, मुखमें याका वास ।
जो कहि मैं शुकदेवही, जान लेहु चरणदास॥२०॥

अथ भूचरीमुद्रा ।

दोहा-दूजी मुद्रा भूचरी, नासा जाको वास ।
प्राण अपान जुदी जुदी, एक करै चरणदास ॥ २१॥

जितकी तित रख प्राणको, वा घरलाय अपान ।
ताहि मिलावै युक्तिसू, करिकरि संयम ध्यान ॥ २२ ॥
जब वह जीतै पवनकूं, मन चंचल ठहराय ।
गगन चढनकी आश हो, कहै शुकदेव सुनाय॥ २३ ॥
गुदाद्वार बँध दीजिये, एँडी पांव लगाय ।
आसन सिद्ध जु कीजिये, मन पवना वशलाय॥२४ ॥
अपान वायु जब वश भवै, ऊरध खैंच चलाय ।
शनई शनई जा चढै, प्राणवायु ह्वै जाय ॥२५॥

अथ चाँचरीमुद्रा ।

दोहा–तीजी मुद्रा चाँचरी, जाको नैनन वास ।
नासा आगे दृष्टिकूं, राखै मन धर आस ॥ २६ ॥

अंगुल चार नासिका आगे ।चित अस्थिर करिदेखनलागे॥
खुले पांच तत करै जु कोई । मन अरु पवन जहां थिर होई॥
फिर ह्वांसूं नासा परि आवै । अचल टकटकी तहां लगावै॥
जहँ वहुतक अचरज दरशावैं । विभव स्वर्गके आगे आवैं ॥
जितसूं पलट तिरकुटी माहीं । ध्यान करै कहुँ अन्त न जाहीं॥
दीरव तारासा परकासै । उदय होय सूरज ज्यों भासै ॥
चित चेतन दोउ मेला करैं । लै उपजैं अरु दुविधा हरैं ॥
यही चाँचरी मुद्रा जानौ । चरणदास याकूं पहिचानौ ॥

अथ अगोचरीमुद्रा ।

कहूं अगोचरि चौथी मुद्रा । तामें सुख पावै योगींद्रा ॥
या मुद्राका शरवन वासा । शुकदेव कहैं सुन चरणहिदास॥
दोहा–ज्ञान सुरति दोउ एक ह्वै, पलट अगोचर जाय ।
शब्द अनाहदसें रतैं, मन इन्द्री थिर पाय ॥२७॥

अथ उन्मनीमुद्रा ।

दोहा-पँचवीं मुद्रा उनमनी, दशवें द्वारे वास ।
सिद्धसमाधि मिलै जहां, दग्ध होय सब आस॥२८॥
आनन्दही आनंद जहां, तहां न काल कलेश ।
तीनौं गुन नहिं पाइये, ह्यां नहिं मायालेश ॥ २९ ॥
जीवातम परमातमा, होय जाय वा ठौर ।
ध्याता ध्यानन ध्येय जहँ, तहँ न किरिया और॥३०॥

अथ बन्धवर्णन ।

महाबन्धसाधनाविधि ।

महाबन्ध तोहि पहल बताऊँ । पाछे मूलबन्ध समझाऊं ॥
बायां पांव सिवन गहि दीजे । मूल द्वार एँडी बँद दीजे ॥
दहिनी जंघ जंघपर लावै । गउमुख आसन नाम कहावै॥
राखै चिबुक हृदय पर लाय । पवनराह पूरबको जाय ॥
ध्यान त्रिकूटी संयम करै । प्राणवायु हिरदेमें धरै ॥
महाबन्ध ऐसे करि साधै । गुरु प्रताप यही आराधै ॥
विना पुरुष तिरियाको जानो । बन्ध विना मुद्रा पहिचानो ॥
निर्फल जाय पुरुष बिन नारी । महाबन्ध बिन मुद्राधारी ॥
माहिं कंठके ध्यान लगावै । सुरत निरत ह्वांई ठहरावै ॥

दोहा-महाबंध अस्थित करै, सो योगी ह्वै जाय ।
पवन पंथ मुद्रित करै, ध्यान कण्ठसें लाय ॥ ३१ ॥

शशि घरकूं सूरज घरलावै । रेचक पूरक पवन फिरावै ॥
महाबंधको करै अभ्यासा । अमृत अचवै बुझै पियासा ॥
जरा अमृत देही नहिं आवै । महाबंध तीनों गुन पावै ॥
जठर अग्नि परचै बहुभारी । निशिदिन माहिकरै अठवारी॥
पहर पहरमें पवन भरीजे । प्रथम अल्प अभ्यास करीजे॥

त्रिय सेवन तापन नहिं करै । काम अग्नि काया नहिं जरै॥

दोहा--ऐसी विधि साधै पवन, योग पंथ धरि पाय ।
पहर पीछला बनत जन, आयुरदा बढि जाय ॥२२॥

अथ मूलबंध ।

दोहा--मूलबंध अब कहतहूं, अपानवायु वश होय ।
ऊपरकूं खैंचन करै, मिलै प्राण में सोय ॥ २३॥
कमल कमल सीधि भवै, नाभि तले हो राह ।
आगे मारग सुगम हो, पहुँचै योगीनाह ॥ २४ ॥

मूलबंध गुण ऐसा होई । बायु अधोगति जाय न कोई॥
रेता ऊरध यासूं सधै । दिन दिन आयु सवाई बधै ॥
यासूँ कारज सब बनि आवै । रोग रक्तके सभी नशावै ॥
योगी पहिले या आराधै । अपान वायुकूं नीके साधै ॥
अब मैं मूलबंध बतलाऊं ।ज्योंका त्यों साधन दिखलाऊं॥
गुदा वास याका तुम जानौ । गुदा द्वार बंध न है ठानौ ॥
बायें पांवकि एँडी सेती । मूल द्वार रोकै करि हेती ॥
ऊरधहीकूं खैंचन कीजै । शुकदेव कहे नीके सुनलीजै ॥
अरु कबहूं मन ऐसी धरै । आसन पदम करनकूं करै ॥
कपडेकी इक गेंद बनावै । गुदा मध्य कसबंध लगावै ॥
योंभी वायु सधै वा भाँती । जोपै लगा रहै दिन राती ॥
पवन तत्त्वके ऊपर जावै । प्राण अपान सहज मिलजावै॥
नाद बिंदरल मिल जा दोई । एक बरस साधै जो कोई ॥
योग माहिं यह भी परधान । बूढी देह पलट हो ज्वान ॥
जठर अग्नि बाढै अधिकाय । जो चाहै तौ बहुतै खाय ॥
सुन चरणदास कहे शुकदेव । जो गुरु पूजा देवै भेव ॥

अथ जलंधरबंध ।

दोहा–मूलबंध तोसूं कहा, गुण कह सब समुझाय ।
बंध जलंधर कहतहूं, सुनहु श्रवण करि चाय ॥ ३५ ॥
तीजा बंध जलंधर जानो । कंठ वास ताका पहिचानो ॥
ग्रीवा लटक चिबुक हिय लावै । कंठ पवन रोकै परचावै ॥
हिरदै प्राण पूरकरि रहिये । बंध जलंधर यासूँ कहिये ॥
ऊरध पवन नीचेको जाय । अरध पवन ऊरधकूं लाय ॥
उदर मध्य लै ताहि बिलोय । ब्रह्मरंध्र जा पहुँचै सोय ॥
इह विधि ब्रह्मपंथकूं धावै । सहजै सहजै मध्य समावै ॥
जरा मरण जहँ भय नहिं व्यापै।लहे अमरपद होरह आपै ॥
चरणदास शुकदेव बतावैं । जो पै बंध उड्यान लगावै ॥

अथ उड्यानबंध ।

दोहा–बँध उड्यान आगे कहा, जिह्वा उलट लगाय ।
कान आँख मुख नाकके, स्वर सब बंध कराय॥३६॥
इह सुबंध महिमा अधिक, लागै बजर किवाँर ।
सात द्वारकी वाट हो, निकसै नाहिं बयार ॥ ३७ ॥
पांचों मुद्रा बंध सब, दिखलाया यह देश ।
शुकदेव कहै रणजीत सुन, और कहूं उपदेश ॥ ३८॥

अष्टपदी ।

चौरासीही जानि जु आसन योगके । सिद्धपदम तिनमाहिं बडेही थोकके ॥ बहु नारिनके माहिं जु नौ नारी मनी । तिनमें सुषमन जानबडी गुरुसूं सुनी॥तीन बंधकेमाहिं मूलकूं जानिये। मुद्राहीमें बडी जो खेचरि मानिये ॥ वायुनमें परधान प्राणकूं देखिये । सब कुंभकहूं माहिं केवल बड लेखिये॥ बानी चारौ मध्य पराही गाइये । चारअवस्थामाहिं तुरी बड पाइये ॥

परम शून्यको ध्यान परसुंहै परं । याकीसम कोई नाहिं ध्यान तिनको धरं॥अजपाकेही जाप बराबर और ना । शील क्षमासे मीत न कोई देहमां ॥ पूजन में वडि जान ज्ञु आतमकी करे । ज्ञान समान न दान सकल विपता हरे॥गुरुसा रक्षक और नहीं कोइ लोकमें। योगयुक्ति सा स्वाद नहीं कोइ भोगमें ॥ कहे गुरू शुकदेव सुनो रणजीतही।वडी जोगकी गांस खोल तुमकूं ज्ञुदी ॥

छन्द–अमरी करतें वजरी रोकें वजरी करतें वाई।रोकें छींक साधना करिकें नासा लेहु जँभाई ॥ जल संयमसूं नभकूं देखै संयम नादसुं ज्योती । संयम पवन होय थिर काया सो वश राखै मोती॥जिया विछावै मृत्यक ओढै बूढी होय न काया । संयम नींद विंद नहिं जावै यह शुकदेव बताया॥दहिने स्वरमें भोजन कीजे बायें स्वरमें पानी । दहिने स्वरमें अमरी रेचै देह न होय पुरानी ॥ दहिने स्वरमें जलसूं न्हावै बायें स्वरमें लंगी । शिव आसनसूं सोवन कीजै नारिन कीजै सङ्गी ॥ पावकसूं तापन नहिं कीजे जो तापै तो नैना । भोजन गरम न खट्टा खावै फटै झिरैं नहिं मैना ॥

दोहा–गरमीकेही रोगमें, चन्द चला रवि चन्द ।
शीत रोग सूरज चला, शशिपर राखै बन्द ॥ ३९ ॥
तीन रोजके पांच दिन, कै दिन राखै सात ।
रोग देखि जैसी करै, होय निरोगा गात ॥ ४० ॥
सूरज रात चलाइये, द्योस चलावै चन्द ।
पवन फिरै ऊपा वधै, श्वास चलै जो मन्द ॥ ४१ ॥
कान आँख अरु दांतके,सवही रोग भजाहिं ।
श्वास चाल नहिं श्वेत हों,करै ज्ञु नीकीदाहि ॥ ४२ ॥

रुई पुरानी बहुतही, दिनकूं दहिने राखि ।
बायें राखै रैनिकूं, खोली साधन भाखि ॥ ४३ ॥
शीतउष्ण व्यापै नहीं, विष नहिं व्यापक होय।
बीस बरस साधन किये, रहै विकार न कोय ॥ ४४ ॥
बासी ग्रास न खाइये, छूछम करै अहार ।
जल बहुतै पीवै नहीं, सपरस करैन नार ॥ ४५ ॥
तन मन साधै वचनहीं, पाप न लगने देह ।
शुकदेव कहैचरणदाससुनु, अधकीसाधनयेह ॥ ४६ ॥
सब जीवन सुख दीजिये, सबसों मीठा बोल ।
आतम पूजा कीजिये, पूजा यही अतोल ॥ ४७ ॥
दया पुष्प चन्दन नवन, धूप दीप दे मन्त्र ।
भाँति भाँति नैवेद्यसूं, करै देव परसन्न ॥ ४८ ॥
जो कोइ आवै राजसी, देहु बडाई ताहि ।
जाकूं देखो तामसी, करौ नम्रता वाहि ॥ ४९ ॥
जो कोइ होवै सात्त्वकी, मिलै ताहि तजि मान ।
गुढी खोल चरचा करो, लीजै ततमत छान ॥ ५० ॥
सबहीकूं परसन करै, आप रहै परसन्न ।
वास लहौ हरि ध्यानही, यों कहै सब धन धन्न ॥ ५१ ॥
राजस तामस सात्त्विकी, क्षेत्तर तीनहिं भांति ।
क्षेत्रक आतम देव है, सबकूं चहिये शांति ॥ ५२ ॥
सबमें देखै आपकूं, सबकूं अपने माहिं ।
पावै जीवनमुक्तिको, यामें संशय नाहिं ॥ ५३ ॥
सबमें देखै आतमा, आपनसें करि ध्यान ।
यही ज्ञान ब्रह्मज्ञान है, यही जु है विज्ञान ॥ ५४ ॥
अहंकार मिटि ब्रह्म हो, परमातम निरवाण ।

शुकदेवा यों कहतहूं, चरणदास हिय आन ॥ ५५ ॥
जो तैं पूंछा सो कहा, भेद कहा सब खोल ।
अरु तेरे हियमें कछू, सकुच खोल कर बोल ॥ ५६ ॥

शिष्यवचन ।

दोहा–अपना लखि किरपा करी, समझायो बहुभाँति ।
योग ओरतें गुरुजी, हियमें आई शांति ॥ ५७ ॥
तुम्हरी कह अस्तुति करूं, मोपै कही न जाय ।
इतनी शक्ति न जीवको, महिमा कहै बनाय ॥ ५८ ॥
किरपा करी अनाथ पर, तुम हो दीनानाथ ।
हाथ जोरि मांगौं यही, मम शिर तुम्हरा हाथ ॥ ५९ ॥
मोसे रंक गरीबकी, तुम गहि पकरी बाँह ।
भव बूडत राखा मुझे, चरणकमलकी छाँह ॥ ६० ॥
आपहि तुम किरपा करी, मैं कित लहता तोहिं ।
तुमको पाऊं ढूँढि करि, इतनी शक्ति न मोहिं ॥ ६१ ॥
व्यासपुत्र शुकदेव तुम, जक्त माहिं विख्यात ।
तुम दर्शन दुर्लभ महा, पुरुषनको न दिखात ॥ ६२ ॥
बडे भाग मेरे जगे, गुरुविलके परताप ।
किरपा श्रीगोपालकी, आय मिले तुम आप ॥ ६३ ॥
चरणदास अपनो कियो, दियो परम संतोष ।
बैठि कहूंगो ध्यानहीं, अब कुछ रह्यो न शोक ॥ ६४ ॥
चलत फिरत ह्यां आइया, तुम सरि न ह्यां माहिं ।
नैन प्राण तन मन सभी, देखत [illegible] ॥ ६५ ॥
चाह मिटी सब सुख भये, रह्या न [illegible] ।
चाहूं तौ चाहूं यही, तुम [illegible] ॥ ६६ ॥

गुरु वचन ।

दोहा–योग तपस्या कीजियो, सकल कामना त्याग ।
ताको फल मत चाहियो, तजौ दोष अरु राग ॥६७॥
अष्ट सिद्धि जो पैं मिलैं, नेक न कीजै नेह ।
धारि हिरदय परमातमा, त्यागे रहियो देह ॥६८॥
जेती जगकी वस्तु है, तामें चित्त न लाय ।
सावधान रहियो सदा, दियो तोहि समुझाय ॥६९॥
बार बार तोसें कहूँ, ह्याँ मत दीजो चित्त ।
सिद्ध स्वर्गफल कामना, तजि कीजो हरि मित्त ॥७०॥
जो कीजै हरि हेत ही, एही चरणहिदास ।
भक्तियोग अरु शुभ करम, नीकी ठौर निवास ॥७१॥

शिष्यवचन ।

दोहा–ऐसेही सब करूंगा, तुम चरणन परताप ।
अष्ट सिद्धि समझो चहों, वर्णन कीजै आप ॥ ७२ ॥
समझों तो त्यागूँ उन्हैं, करवायो पहिचान ।
कहा नाम लक्षण कहा, कौन रहै अस्थान ॥ ७३ ॥

गुरु वचन ।

दोहा--शुकदेव कह वर्णन करूं, अष्ट सिद्धिके नाउँ ।
लक्षण गुण सबही सहित, नीके तोहिं समुझाउँ ॥७४॥

अथ अष्टसिद्धिके नाम ।

प्रथमैं अणिमा सिद्धि कहावै । चाहै तौ छोटा ह्वै जावै ॥
अणु समान छिपि जावै सोई । ऐसी कला जु पावै कोई ॥
दूजी महिमा लक्षण एता । चाहै वडा होय वह जेता ॥
तीजी लघिमा वह कहवावै । पुष्प तुल्य हलका ह्वै जावै ॥
चौथी गरिमा कहूं विचारी । चाहै जितना होवै भारी ॥

पंचवीं प्रापत सिद्धि कहावे । जित चाहै तितही ह्वै आवे ॥
छठवीं पराकाम्य गुण धरै । शक्ति पाय चाहै सो करै ॥
सतवीं सिद्धि ईशिता रानी । सबको आज्ञा माहिं चलानी ॥

दोहा–वशीकरण सिधि आठवीं, कहै जु श्रीशुकदेव ।
चाहै जिसको वश करै, अपनाही करि लेव ॥७५॥
चरणदास सिद्धै कही, समझ लेहि मनमाहिं ।
जो हैं जन वै रामके, इनमें उरझें नाहिं ॥७६॥

योग किये आठों सिधि पावे । कै भोगै कै चित न लगावै ॥
योग किये मन जीता जावै । पलटै जीव ब्रह्मगति पावै ॥
योगेश्वर चाहै सो करै । भरी रितावै रीती भरै ॥
योगेश्वर ईश्वर ह्वै जाई । दिन दिन बाढै कला सवाई ॥
तजिये भोग योगही करिये । निरगुण परै ध्यानही धरिये ॥
चौथे पदमें करै निवासा । काहू विधिका रहै न श्वासा ॥
योग करै सोई परवीना । शुकदेव कहैं प्रकट कहि दीना ॥

दोहा–पोथी माहीं देखि करि, करे जु कोई योग ।
तन छीजै सिधि ना सधै, देही आवै रोग ॥७७॥
देखि देखि गुरुसों करै, लै आज्ञा रहु संग ।
सिद्धि होय साधन सधै, कछु न आवै भंग ॥७८॥
योग तपस्यामें वडा, पहुँचावै हरिपास ।
जन्म मरण विपता मिटै, रहै न कोई आस ॥७९॥

शिष्य वचन ।

दोहा–मैं समझी जानी सभी, सुझ भई हिय माहिं ।
किरपा करि जो जो कहा, ताको बिसरहु नाहिं ॥८०॥

व्यासदेव श्रीजनक जै,जै जै श्रीशुकदेव ।
जै जै यह शुकता रहैं, समुझायो करि हेव ॥८१॥
हिय हुलसो आनँद भयो, रोम रोम भयो चैन ।
भये पवित्तर कान ये, सुनि सुनि तुम्हरे बैन ॥८२॥

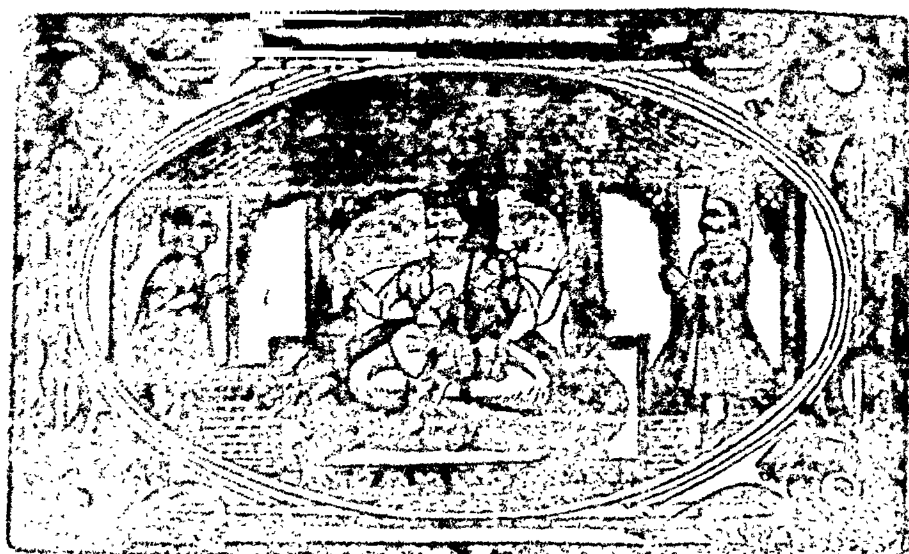
छप्पय ।

गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु, गुरु देवनके देवा ॥
सर्व सिद्धि फल देत गुरु, तुमहीं मुक्ति करेवा ॥
गुरु केवट तुम होय करि, करौ भवसागर पारी॥
जीव ब्रह्म करि देत हरो, तुम व्याधा सारी ॥
श्रीशुकदेव दयाल गुरु, चरणदासके शीशपर ॥
किरपा करि अपनो कियो, सबही विधिसों हाथ धर॥

इति श्रीस्वामिचरणदासजीकृत षट्कर्महठयोगवर्णन सम्पूर्ण ।



॥ कैलासविहारिणे नमः ॥



# अथ योगसन्देहसागरप्रारम्भः।

दोहा—अर्थ बतावो पण्डिता, ज्ञानी गुणी महन्त ।
जो तुम पूरे साधु हौ, भक्ता हरिके सन्त ॥ १ ॥
चरणदास पूछे अरथ, भेदी होय कहो ।
समझौ तौ चर्चा करो, नाहीं मौन गहो ॥ २ ॥

ब्रह्माण्डसों पिण्ड जानो । ठौर ठौर घटमें पहिचानो ॥
सात समुंदर घटमें कहां । कछुवा रहै बतावो जहां ॥
शेषनाग केहि ठौ[illegible] विराजै । रूप वराह कौन छवि छाजै ॥
कहा चार काय पैं [illegible] खान । चौरासी लख योनि बखान ॥
षट चक्रके [illegible] तुम जानो । नाम सहित सब भेद बखानो ॥
नाभि कुण्डल [illegible] परमान । कैसे जागै कहाँ बखान ॥
सहज सहज [illegible] कहाँ समावै । योगी होय सो भेद बतावैं ॥
चरणदास[illegible] शुकदेव । सो तौ जानै सबही भेव ॥

दोहा--कहाँ जु बासा पवनका, मन कौने अस्थान ।
कहाँ हियाकी आँखि है, कैसे करे पिछान ॥ ३ ॥

प्राण पुरुष अन्तर्गत कैसे । क्योंकरि भेद बतावो जैसे ॥
इडा पिंगला सुषुमन नारी । कैसे पलटैं बारा बारी ॥
आठ प्रकारके कुम्भक जानै । सो युक्ती मेरे मन मानै ॥
चार अवस्था[1] चार शरीरा[2] । वाणी[3] चारि नाम कह वीरा ॥
कै प्रकार अजपाका जाप । कै अंगुल श्वासाका नाप ॥
क्यों आवै अरु क्यों वह जाय । याका ज्ञानी करौ लखाय ॥
परा पश्यंती मध्यमा कहा । कहा वैखरी देहु बता ॥
रणजीताका गुरु शुकदेव । सो तौ जानै सबही भेव ॥

दोहा–पद तीनो कहुँ विष्णुके, स्वप्न जाग्रत भेद ।
बावन अक्षर देहमें, पुष्पद्वीप कह स्वेद ॥ ४ ॥

कहँ इकीस कायामें लोग । इन्द्रकरैं कहाँ नित्तहि भोग ॥
ब्रह्मादिक शिव कहाँ परकाशा । बारह सूर्य्यनका कित बाशा ॥
तारामण्डल कैसे दरशैं । त्रिकुटी संयम कैसे परशैं ॥
त्रैवेणी को कैसे पावै । रं रकार कहँ शब्द जगावै ॥
वरणों अक्षर आदि ओंकारा । तासे भयो सकल संसारा ॥
जाका कैसे कीजैं ध्याना । कौन दिशा अरुको अस्थाना ॥
चरणदासका गुरु शुकदेव । सो तौ जानै सबही भेव ॥

दोहा--निर्गम सुर्गम भेद कहु, श्वास उसाँस बताव ।
कायामें विष कहाँ है, बिन्दु कुण्ड दरसाव ॥ ५ ॥

जीव ब्रह्ममें केता बीच । कौन कौन कायामें नीच ॥

---

१ जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति, तुरीया । २ स्थूल सूक्ष्म, कारण । ३ परा, पश्यन्ती, मध्यमा, वैखरी, महाकारण ।

अमृतकुण्ड कौन अस्थान । बङ्कनालकी कहु पहिचान ॥
ब्रह्मरन्ध्रका भेद लखाव । कामधेनुका वरण बताव ॥
मानसरोवर ताल बताय । तामें हंसा कैसे न्हाय ॥
बिना सीप कहँ उपजै मोती । बिना दीव कहँ जगमग ज्योती ॥
बिन सूरज कहँ नितही धूप । भँवर गुफाका कैसा रूप ॥
शून्य शिखरका कीधर द्वारा । का खिरकी अरु कहा अकारा ॥
चरणदासका गुरु शुकदेव । सो तौ जानै सबही भेव ॥

दोहा—कहाँ दशौं दिगपाल हैं, कहँ इन्द्रिनके देव ।
आहार वास चेतत्त्वको, वरणि बतावो भेव ॥ ६ ॥

काशी अरु मथुरा है दोय । कहाँ देहमें कहिये सोय ॥
अरसठि तीरथ घटमें ज्योंकर । सबका गुरु पुष्कर है क्योंकर ॥
कहाँ बसै बाई उद्यान । कहाँ बन्ध लागै उद्यान ॥
कहँ कपाटका कुंजी ताला । द्वादश कला कौन मतवाला ॥
कण्ठ कूप उलटा है कौन । नेजू कहा बतावो जौन ॥
पनिहारी कहो कैसे भरै । घड़िया कहाँ कहाँ भरि धरै ॥
कै प्रकार अमृतका स्वाद । कौन ठौरसों अनहद नाद ॥
अग्र डोरि कैसें करि पावै । मकर तारका भेद बतावै ॥
चरणदासका गुरु शुकदेव । सो तो जानै सबही भेव ॥

दोहा—घण्ट तालका लम्बका, और अम्बका बोल ।
चारि वस्तु ये कौन हैं, इन्हें बताओ खोल ॥ ७ ॥

कौन कमलपर गुरू विराजै । कै प्रकार अनहद धुनि बाजै ॥
कै बानी है अनहद भूरा । जानैगा कोइ साधू पूरा ॥
तेजपुञ्ज कै योजन आगे । अमरलोक कवि सूजन लागे ॥
तीन शून्य कहँ चौथा शून्य । जितही भूले पढि अरु गून्य ॥
कै कहिये कायाके द्वारे । भिन्न भिन्न कहु मेरे प्यारे ॥

बहत्तर हजार आठसै चौंसठि नारी। इनको भेद बहुत है भारी॥
बहत्तरि कोठे कहाँ कहाँ। नाम बतावो जहाँ जहाँ॥
चरणदासका गुरु शुकदेव। सो तौ जानौ सबही भेव॥
दोहा–सात द्वीप नौ खण्डको, भिन्न भिन्न कहु भेद।
कायामें केहि ठौर है, कहा नाम किस हेत॥ ८॥
चौरासी बाईका नाँव। कहां कहां है कैसी दावँ॥
जलका कोठा कीधर होय। कहां अग्निका कहिये सोय॥
ब्रह्मज्वाल कहु कैसे जागै। किस आसनसे निद्रा भागै॥
किन आसनसे वीरज जीतै। दश मुद्रा कैसे फिर जीतै॥
नामरूप मुद्रौंका जान। तीन बंधका नाम बखान॥
चौरासी आसनका नाँव। और बताओ सनके पांव॥
स्वर्ग मृत्यु अरु कहाँ पताल। कहां सत्य अरु कहां तिताल॥
चरणदासका गुरु शुकदेव। सो तौ जानै सबही भेव॥
दोहा–कै प्रकारका योग है, कै प्रकारकी भक्ति।
पाँच भूमिका ज्ञानकी, सात कालकी शक्ति॥ ९॥
को नगरीका राज करै। को जीवै अरु कौन मरै॥
पेट बडा किसका है जान। पूजा बडी ताहि पहिचान॥
सबमें बडा कौन आहार। ताको सुरता लेहु निहार॥
ता बिन एक घडी नहिं रहै। भेदी होब सो भेदहिं कहै॥
सबसें बडी कहा जो पूजा। जाकी सम दीखै नहिं दूजा॥
कहा सो सबको लगम लगा। कौन पुरुष सो भगम भगा॥
कहा घटै सो घटइ घटैं। कहा बढै सो बढई बढैं॥
ताहि बतायो गुरु शुकदेव। सो तौ जानै सबही भेव॥
दोहा–क्षरके कहा जु अर्थ है, अक्षर देहु दिखाय।
निर अक्षरके रूपको, भिन्न भिन्न दरशाय॥ १०॥

ओंकारका अर्थ बताओ । महत्तत्त्वका रूप दिखावो ॥
मन चक्करका कैसा रंग । मन मनसा दोउ कैसे संग ॥
कौन घाट है लहौ समाध । कित जा देखै खेल अगाध ॥
चौंविस शून्य है जहां जहां । वज्जर ताला लागै कहां ॥
वज्रद्वार विन पावै कहां । विन पाये उरले घर रहां ॥
आठ महलका करौ बखान । कासों कहिये पद निर्वान ॥
जो तुम जानो ऊरधरेता । तौ तुम भेद कहौ अब केता ॥
दीय मुद्रा अरु मुद्रा राज । जासों सुधरैं काया काज ॥
काया महलके जो तुम भेदी । ठौर ठौर कहु कुमें जेती ॥
पांचतत्त्वकी इन्द्री दश । यही बतावो आवे वश ॥
चरणदासका गुरु शुकदेव । सो तौ जानै सबही भेव ॥

दोहा–चार भेद चौदह चोवारे, भेदी होय सो जान ।
चरणदास शुकदेवका बालक,सो यह भेद बखानै ११॥

छप्पय–चन्द कला कित छिप वढै जब किनसों आवे । वादर कितसों होय फट जब कहां समावै॥दीपलोय बुझ जाय जाय कित मोहिं बताओ । राति दिना कित जाय धुवाँ केहि ठौर लखावो॥चरणदास शुकदेवसों पूंछत हौं सिर नायके॥तन छूटै जी जाय कित आवत है किहि ठायँते ॥

क०–देखो है तमाशा देह समुझि विचारि लहु,सूर्ख नर होय जोया बातसें हँसैगो।चीतहिको मारि मृग नखशिख सूखगयो, बाघनीको मारिवो सिंहको ग्रसैगो॥बिल्लीको मारि चूहे भैसको नगारो दियो,दादुरहू पांच सर्प मारिके बसैगो॥कहै चरणदास ऐसे खेलसों लगाई आस,चिरियाके शीश टागे बाजको लसैगो॥

दोहा–पग लागूँ शुकदेवके, और वार ना जावँ ।
श्रुतभेद मोसों कह्यो, सबै नावँ अरु ठावँ ॥ १२ ॥
सो तुमसों पूछन करौं, हौं पुरुषनके दाय ।
या सागर संदेहको, दीजै अर्थ बताय ॥ १३ ॥

इति श्रीस्वामिचरणदासजीकृत योगसंदेहसागर सम्पूर्ण ।



# अथ ज्ञानस्वरोदयप्रारम्भः ।

दोहा–नमो नमो शुकदेवजी, करौं प्रणाम अनन्त ।
तुम प्रसाद स्वरभेदको, चरणदास वरणन्त ॥ १ ॥
पुरुषोत्तम परमातमा, पूरण विस्वा वीश ।
आदिपुरुष अविचल तुहीं, तोहिं नवाऊं शीश॥ २ ॥

कुं०–क्षर ॐ सो कहत हैं, अक्षर सोहं जान ।
निरअक्षर श्वासा रहत, ताहीको मन आन ॥
ताहीको मन आन, रात दिन सुरति लगावो ।
आपा आप विचारि, और ना शीश नवावो ।
चरणदास मथि कहत है,अगम निगमकी सीख॥
यही वचन ब्रह्मज्ञानका, मानो विस्वा वीस ॥
ॐ सो काया भई, सोहं सो मन होय ॥
निरअक्षर श्वासा भई, चरणदास भल जोय ॥
चरणदास भल जोय, खैंचि मनवां तहँ राखो ॥

क्षर अक्षर निरअक्षर, एकै दुविधा नाखो ॥
जब दरशै यक एकही,वेष यह सभी तिहारो॥
डार पात फल फूल, मूल सो सभी निहारो॥
श्वाससों सोहं भयो, सोहंसो ॐकार ॥
ॐ सों रंग भयो, साधो करो विचार ॥
साधो करो विचार, उलटि घर अपने आवो ॥
घट वट ब्रह्म अनूप,समिटि करि तहां समावो॥
चारि वेदका भेद है, गीताका है जीव ॥
चरणदास लखि आपयो, तो मैं तेरा पीव ॥

दोहा–सब योगनको योग है, सब ज्ञाननको ज्ञान ।
सर्व सिद्धिको सिद्धि है,तत्त्व स्वरनको ध्यान ॥ ३ ॥
ब्रह्मज्ञानको जाप है, अजपा सोहं साध ।
परमहंस कोइ जानि है, ताको मतो अगाध ॥ ४ ॥
भेद स्वरोदयसों लहै, समझै श्वास उसाँस ।
बुरी भली तामें लखै, पवन सुरति मन गाँस॥ ५ ॥
शुकदेव गुरु कृपा करि,दियो स्वरोदय ज्ञान ।
जबसों यह जानी परी, लाभ होय कै हान ॥ ६ ॥
इडा पिंगला सुषमना, नाडी तीन विचार ।
दहिने बायें स्वर चलै, लखै धारणा धार ॥ ७ ॥
पिंगल दहिने अंग है, इडा सो बायें होय ।
सुषमन इनके बीच है, जब स्वर चालें दोय ॥ ८ ॥
जब स्वर चालै पिंगला, तेहि मधि सूरज वास ।
इडा सो बायें अंग है, चन्द्र करत परकाश ॥ ९ ॥
उदय अस्त तिनकी लखै,निगम सुगम विद्धि ।
अरु पावै तत वरणको,जब वह होवै सिद्धि ॥ १०॥

शुकदेव कहि चरण दाससों, थिरचर स्वर पहिंचान।
थिर कारजको चन्द्रमा,चर कारजको भान ॥ ११ ॥
कृष्णपक्ष जबहीं लगै, जाय मिलत है भान।
शुक्लपक्ष है चन्द्रको, यह निश्चय करि जान ॥ १२ ॥
मंगल अरु इतवार दिन,और शनीचर लीन।
शुभकारजको मिलत हैं, सूरजके दिन तीन ॥ १३ ॥
सोमवार शुक्र भलो, दिन बृहस्पतिको देखि।
चंद्रयोगमें सुफल हैं, चरणदास बीशेखि ॥ १४ ॥
तिथि अरु वारविचारकरि,दहिनो बाओं अंग।
चरणदास स्वर जो मिलै,शुभ कारज परसंग॥ १५ ॥
कृष्णपक्षके आदिही, तीन तिथीतक भान।
फिरि चंदा फिरि भान है,फिरि चंदा फिरि भान॥ १६ ॥
शुक्लपक्षके आदिही, तीन तिथी लग चन्द।
फिरि सूफिरि चन्द है,फिरि सूरज फिरि चन्द ॥१७ ॥
सूरजकी तिथिमें चलै, जो सूरज परकाश।
सुख देहीको करत हैं, लाभालाभ हुलास ॥१८ ॥
शुक्लपक्ष चन्दा चलै परिवा लेहि निकार।
फल आनँद मंगल करै, देहीको सुखसार ॥ १९ ॥
शुक्लपक्ष तिथिमें चलै, जो परिवाको भान।
होय क्लेश पीडा कछू, कै दुख कै कछु हान ॥ २० ॥
शुक्लपक्ष तिथिमें चलै, जो परिवाको चन्द।
कलह करैं पीडा करैं, हानि ताप कै द्वन्द ॥ २१ ॥
ऊपर बायें सामने, स्वर बायेंके संग।
जो पूछै शशि योगमें, तौ नीको परसंग ॥ २२ ॥
नी॰ पीछे दाहिने, स्वर सूरजको राज।

जो कोइ पूंछै आयकरि, तौ समझौ शुभकाज ॥ २३ ॥
दहिनो स्वर जब चलत है, पूंछे बायें अंग ।
शुक्र पक्ष नहिं बार है, तो निर्फल परसंग ॥ २४ ॥
जो कोई पूंछै आयकरि, बैठि दाहिने ओर ।
चन्द चलैं सूरज नहीं, नहिं कारज विधिकोर ॥ २५ ॥
जो सूरजमें स्वर चलै, कहै दाहिने आय ।
लग्नवार अरु तिथि मिलै, कहु कारज होइ जाय॥२६॥
जो चन्दामें स्वर चलै, बायें पूंछै काज ।
तिथि अरु अक्षरवार मिलि, शुभकारजकोसाज॥ २७ ॥
सात पांच नव तीन गिन, पन्द्रह अरु पच्चीस ।
काज वचन अक्षर गिनै, भानु योगको ईश ॥२८ ॥
चार आठ द्वादश गिनै, चौदह सोलह सात ।
चन्दयोगके संग हैं, चरणदास रणजीत ॥ २९ ॥
कर्क मेष तुला मकर, चारों चरती राश ।
सूरजसों चारों मिलत, चरकारज परकाश ॥ ३० ॥
मीन मिथुन कन्या कही, चौथी अरु धन मीन ।
द्विस्वभावकी सुपसना, सुरली सुत रणजीत ॥ ३१ ॥
वृश्चिक हरि वृष कुम्भ पुनि, बायें स्वरके संग ।
चन्द योगको मिलत है, थिरकारज परसंग ॥ ३२ ॥
नित अपनो अस्थिर करै, नासा आगे नैन ।
श्वासा देखै दृष्टिसों, जब पावै स्वर चैन ॥ ३३ ॥
पांच घडी पांचौ चलैं, फिरि वा चारहि बार ।
पांच तत्त्व चालै मिलै, स्वरवित्त लेह निहार ॥ ३४ ॥
धरती अरु आकाश है, और तीसरी पौन ।
पानी पावक पाँचवों, करत श्वाससें गौन ॥ ३५ ॥

धरती तौ सोहीं चलै, अरु पीरो रँग देख ।
बारह अंगुल श्वासमें, सुरत निरतकर पेख ॥ ३६ ॥
ऊपरको पावक चलै, लाल वरण है भेष ।
चारि सु अंगुल श्वासमें, चरणदास औरेष ॥ ३७ ॥
नीचेको पानी चलै, श्वेत रंग है तासु ।
सोलह अंगुल श्वाससें, चरणदास कहै भासु ॥ ३८ ॥
हरो रंग है वायुको, तिरछी चालै सोय ।
आठसु अंगुल श्वाससें, रणजीत मीतकरि जोय ॥ ३९ ॥
स्वर दोनों पूरण चलैं, बाहर ना परकाश ।
श्याम रंग है तासुको, सोई तत्त्व अकाश ॥ ४० ॥
जल पृथ्वीके योगमें, जो कोइ पूछै बात ।
शशिपरमें जो स्वर चलै, कह कारज ह्वै जात ॥ ४१ ॥
पावक अरु आकाश पुनि, वायु कभी जो होय ।
जो कोई पूछै आयकरि, शुभकारज नहिं कोय ॥ ४२ ॥
जल पृथ्वी थिर काजको, चरकारजको नाहिं ।
अग्नि वायु चरकाजको, दहिने स्वरके माहिं ॥ ४३ ॥
रोगीको पूछै कोऊ, बैठि चन्दकी ओर ।
धरती वायें स्वर चलै, मरै नहीं विधि कोर ॥ ४४ ॥
रोगीको परसंग जो, वायें पूछै आन ।
चंद बंध सूरज चलै, जीवै ना वह जान ॥ ४५ ॥
बहते स्वरसों आयकरि, सुन्न ओर जो जाय ।
जो पूछै परसंग वह, रोगी ना ठहराय ॥ ४६ ॥
सुन्न औरसूं आयकर, पूँछै बहते श्वास ।
ये निश्चै कर जानियो, रोगीको नहिं नास ॥ ४७ ॥
शून्य ओरसों आयकै, पूँछै बहते पक्ष ।

जैते कारज जगतके, सुफल होयँ यों सच्च ॥ ४८ ॥
बहते स्वरसों आय करि,शून्य ओर जो जाय।
जो पूँछे परसंग वह, रोगी ना ठहराय ॥ ४९ ॥
बहते स्वरसे आयकरि, जो पूँछे सुन ओर।
जैते कारज जगतके, उलटे हो विधि कोर ॥ ५० ॥
कै बायें कै दाहिने, जो कोइ पूरण होय।
पूँछे पूरण ओरही, कारज पूरण सोय ॥ ५१ ॥
बरस एकको फल लहै, तत्तमत जानै सोय।
काल समौ सोई लखै,बुरो भलो जग होय ॥ ५२ ॥

संक्रायत पुनि मेष विचारै। तादिन लगै सु घडी निहारै॥
तबहीं स्वरमें करै विचारा। चलै कौन सो तत्त्व नियारा॥
जो बायें स्वर पिरथी होई। नीकी तत्त्व कहावै सोई॥
देश वृद्धि अरु समै बतावै। परजा सुखी मेह बरसावै॥
चारा बहुत ढोरको उपजै। नर देहीको अन बहु निपजै॥
जल चालै बायें स्वर माहीं। धरती फलै मेह बरसाहीं॥
आनँद मँगलसों जग रहै। आपतत्त्व चन्दामें बहै॥
जल धरती दोनों शुभ भाई। चरणदास शुकदेव बताई॥
तीन तत्त्वका कहौं विचारा। स्वरमें जाको भेद निहारा॥
लगै मेष संक्रायत जबहीं। लगती घडी विचारै तबहीं॥
अग्नि तत्त्व स्वरमें जब चालै। रोग दोपमें परजा हालै॥
काल पडै थोडा सा बरसै। देश भंग जो पावक दरसै॥
वायु तत्त्व चालै स्वर संगा। जग भयमान होय कछु दंगा॥
अर्धकाल थोडा सा बरसै। वायुतत्त्व जो स्वरमें दरसै॥
तत्त्व अकाश स्वर चालै होई। मेह न बरसै अन्न न होई॥

काल पडे तृण उपजे नाहीं । तत्त्व अकाश जो हो स्वरमाहीं ॥

दोहा-चैत महीना मध्यमें, जबहीं परिवा होय ।
शुक्लपक्ष तादिन लगै, प्रात श्वासमें जोय ॥ ५३ ॥
भोरहि परिवाको लखै, पृथ्वी होय सुथान ।
होय समौ परजा सुखी, राजा सुखी निदान ॥ ५४ ॥
नीर चलै जो चन्दमें, यही समैकी जीत ।
घन बरसै परजा सुखी, संवत् नीको मीत ॥ ५५ ॥
पृथ्वी पानी समौ जो, बहै चन्द अस्थान ।
दहिने स्वरमें जो बहै, समौ सुमध्यम जान ॥ ५६ ॥
भोरहि जो सुषमन चलै, राज होय उतपात ।
देखनवारो विनशि है, और काल पडिजात ॥ ५७ ॥
राज होय उत्पात पुनि, पडै काल विसवास ।
मेह नहीं परजा दुखी, जो हो तत्त्व अकास ॥ ५८ ॥
श्वासामें पावक चलै, परै काल जब जान ।
रोग होय परजा दुखी, घटै राजको मान ॥ ५९ ॥
भय कलेश हो देशमें, विग्रह फैलैं अत्त ।
परै काल परजा दुखी, चलै वायुको तत्त ॥ ६० ॥
संक्रायत अरु चैतको, दीन्हो भेद लखाय ।
जगतकाज अब कहत हूं, चन्द सूरको न्याय ॥ ६१ ॥

व्याह दान तीरथ जो करै । वस्तर भूषण घर पद धरै ॥
वायें स्वरमें ये सब कीजै । पोथी पुस्तक जो लिखि लीजै ॥
योगाभ्यास रु कीजै प्रीत । औषधि बाडी कीजै मीत ॥
दीक्षा मंतर बोवै नाज । चन्द्र योग थिर बैठे राज ॥
चन्द्र योगमें अस्थिर जानौ । थिरकारज सबही पहिचानौ ॥
करै हवेली छप्पर छावै । बाग बगीचा गुफा बनावै ॥

हाकिम जाय कोटमें वरै।चन्द्र योग आसन पग धरै ॥
चरणदास शुकदेव बतावै।चन्द्रयोग थिरकाज कहावै ॥

दोहा—बायें स्वरके काज ये, सो मैं दिये बताय ।
दहिने स्वरके कहत हौं, ज्ञान स्वरोदय गाय ॥ ६२ ॥

जो खांडो कर लीयो चाहै । जाकर वैरी ऊपर बाहै ॥
युद्ध वाद रण जीतै सोई । दहिने स्वरमें चालै जोई ॥
भोजन करै करै असनाना । मैथुन कर्म ध्यान परधाना ॥
बही लिखे कीजै व्योहारा । गज घोडा वाहन हथियारा॥
विद्या पढै नई जो साधै । मंतर सिद्ध ध्यान आराधै ॥
वैरी भवन गवन जो कीजै । अरु काहूको ऋण जो दीजै॥
ऋण काहूपैं जो तू मांगै । विष अरु भूत उतारन लागै॥
चरणदास शुकदेव विचारी । ये चर कर्म भानुकी नारी ॥

दोहा—चर कारजको भानु है, थिर कारजको चंद ।
सुषमन चलत न चालिये,तहां होय कुछ द्वंद॥ ६३ ॥
गावँ परगने खेत पुनि, ईधर ऊधर मीत ।
सुखमन चलत नचालिये,बरजत है रणजीत॥ ६४ ॥
क्षण बायें क्षण दाहिने,सोई सुषमन जानि ।
ढील लगै कै ना मिलै, कै कारजकी हानि ॥ ६५ ॥
होय क्लेश पीडा कछू, जो कोई कहिं जाय ।
सुषमन चलत न चालिये,दीन्हों तोहि बताय॥ ६६ ॥
योग करौ सुखमन चलै, कै आतमको ध्यान।
और काज कोई करै, तौ कुछ आवै हान ॥ ६७ ॥
पूरब उत्तर मत चलै, बायें स्वर परकाश ।
हानि होय बहुरै नहीं,आवनकी नहिं आश ॥ ६८ ॥
दहिने चलत न चालियें,दक्षिण पश्चिम जानि ।

जोर जाय बहुरै नहीं, तहाँ होय कछु हानि ॥ ६९ ॥
दहिने स्वरमें जाइये, पूरब उत्तर राज ।
सुख संपति आनँद करै, सभी होय सुखकाज ॥ ७० ॥
बायें स्वरमें जाइये, दक्षिण पश्चिमदेश ।
सुख आनँद मंगल करै, जो जावै परदेश ॥ ७१ ॥
दहिने सेती आयकरि, दहिने पूँछे धाय ।
जो दहिनो स्वर बंध है, कारज अफल बताय ॥ ७२ ॥
दहिने सेती आय करि, बाँये पूँछे कोय ।
जो बावों स्वर बंध है, सुफल काज नहिं होय ॥ ७३ ॥
जब स्वर भीतरको चलै, कारज पूँछै कोय ।
पैज बांधि वासों कहौ, मनसा पूरण होय ॥ ७४ ॥
जब स्वर बाहर को चलै, तब कोइ पूँछै तोर ।
वाको ऐसे भाषिये, विधि नहिं काज करोर ॥ ७५ ॥
बांई करवट सोइये, जल बायें स्वर पीव ।
दहिने स्वर भोजन करै, तो सुख पावै जीव ॥ ७६ ॥
बायें स्वर भोजन करै, दहिने पीवै नीर ।
दश दिन भूलो यों करै, आवै रोग शरीर ॥ ७७ ॥
दहिने स्वर झाडे फिरै, बायें लघुशंकाय ।
युक्ती ऐसी साधिये, दीन्हों भेद बताय ॥ ७८ ॥
चन्द चलावै द्योसको, रैनि चलावै सूर ।
नित साधन ऐसे करै, होय अमर भरपूर ॥ ७९ ॥
जितनोही बावों चलै, सोई दहिनो होय ।
दश श्वासा सुखमन चलै, ताहि विचारो लोय ॥ ८० ॥
आठ पहर दहिनो चलै, बदलै नहीं जु पौन ।
तीन बरस काया रहै, जीव करै फिरि गौन ॥ ८१ ॥

सोलह पहर चलै जभी, श्वास पिंगला माहिं ।
युगल वरस काया रहै, पीछे रहनो नाहिं ॥८२॥
तीन रात अरु तीन दिन, चलै दाहिनो श्वास ।
संवत भर काया रहै, पाछे होवै नास ॥८३॥
सोलह दिन निशिदिन चलै, श्वास भानुकी ओर ।
आयु जान इक मासकी, जीव जाय तन छोर ॥८४॥
नौ भृकुटी सप्त श्रवण, पांच तारका जान ।
तीन नासिका जिह्वा इके, काल भेद पहिचान ॥८५॥
भेद गुरुसों पाइये, गुरु विन लहै न ज्ञान ।
चरणदास यों कहत है, गुरुपर वारों प्रान ॥८६॥
एक मास जो रैनि दिन, भानु दाहिनो होय ।
चरणदास यों कहत है, नर जीवै दिन दोय ॥८७॥
नाडी जो सुषमन चलै, पांच घडी ठहराय ।
पांच घडी सुषमन वहै, तवहीं नर मरिजाय ॥८८॥
नहीं चन्द्र नहिं सूर है, नहीं सुषुम्ना वाल ।
मुखसेती श्वासा चलै, घडी चारमें काल ॥८९॥
चारि दिना के आठ दिन, वारह कै दिन वीश ।
ऐसे जो चंदा चलै, आयु जान वड ईश ॥९०॥
तीन रात अरु तीन दिन, चालै तत्त्व अकाश ।
एक वरस काया रहै, फेर काल विशवास॥९१॥
दिनको तो चन्दा चलै, चलै रातको सूर ।
यह निश्चय करि जानिये, प्राण गमन वहु दूर ॥९२॥
रात चलै स्वर चन्दमें, दिनको सूरज वाल ।
एक महीना यों चलै, छठे महीने काल ॥९३॥
जब साधू ऐसी लखै, छठे महीने काल ।

आगेही साधन करै, बैठि गुफा ततकाल ॥९४॥
ऊपर खैंचि अपानको, प्राण अपान मिलाय ।
उत्तम करै समाधिको, ताको काल न खाय ॥९५॥
पवन पियै ज्वाला पचै, नाभितले करि राह ।
मेरुदंडको फेरिकै, वसै अमरपुर जाह॥ ९६ ॥
जहाँ काल पहुँचै नहीं, यमकी होय न त्रास ।
नभमण्डलको जायकरि, करै उनमनी वास ॥ ९७ ॥
जहां काल नहिं ज्वाल है,छुटै सकल सन्ताप ।
होय उनमनी लीन मन, बिसरै आपा आप ॥ ९८ ॥
तीनों बन्ध लगायकै, पञ्चवायुको साध ।
सुषमन मारग ह्वै चले, देखै खेल अगाध ॥ ९९ ॥
शक्ति जाय शिवसे मिलै, जहां होय मन लीन ।
महा खेचरी जो लगै, जानै ज्ञान प्रवीन ॥१००॥
आसन पद्म लगाय करि, मूलबन्धको बाँधि ।
मेरुदण्ड सीधो करै, सुरति गगनको साधि ॥१०१॥
चन्द सूर दोउ सम करै, ठोढी हिये लगाय ।
षट चक्रको वेधिकरि, शून्य शिखरकी जाय॥१०२॥
इडा पिंगला साधिकरि, सुषमनमें करि वास ।
परम ज्योति झिलमिल तहां,पूजै मन विश्वास॥१०३॥
जिन साधन आगे करी, तासों सब कुछ होय ।
जब चाहै जबहीं तभी, काल बचावै सोय ॥१०४॥
तरुण अवस्था योग करि, बैठि रहै मन जीत ।
काल बचावै साध वह, अन्त समय रणजीत॥१०५॥
सदा आपमें लीन रहु, करिकै योगाभ्यास ।
आवत देखैं काल जब, नभमण्डल कर वास ॥१०६॥

शनैं शनैं सो साधिकारि, राखै प्राण चढाय ।
पूरो योगी जानिये, ताको काल न खाय ॥ १०७ ॥
पहिले साधन ना कियो, नभमण्डलको जान ।
आवत जानैं काल जब, कहा करैं अज्ञान॥१०८॥
योग ध्यान कीन्हों नहीं, ज्वान अवस्था मीत ।
आगम देखै कालको, कहा सकै वह जीत ॥१०९॥
काल जीत हरिसों मिलै,शून्य महल अस्थान ।
आगे जिन साधन करी, तरुन अवस्था जान ॥११०॥
काल अवधि वीतै तभी,जबै वीति सब जाय ।
योगी प्राण उतारिये, लेहि समाधि लगाय ॥१११॥
काल जीति जगमें रहै, मौत न व्यापै ताहि ।
दशों द्वारको फोरिकै, जब चाहै तब जाहि ॥११२॥
सूरजमण्डल चीरिकै, योगी त्यागै प्राण ।
सायुजमुक्ति सोई लहै, पावै पद निर्वाण ॥११३॥
कृष्णपक्षके मध्यमें, दक्षिण होय जु भान ।
योगी वपु नहिं छाँडिये, राज होय फिरि आन॥११४॥
राज पाय हरि भक्तिकर, पूरवली पहिचान ।
योग युक्ति पावै वहुरि, दूसर मुक्ति निदान ॥११५॥
उतरायण सूरज लखै, शुक्लपक्षके माहिं ।
योगी काया त्यागिये, यामें संशय नाहिं ॥११६॥
मुक्ति होय वहुरै नहीं, जीव खोज मिटिजाय ।
वुन्द समुन्दर मिलि रहै, दुतिया ना ठहराय ॥११७॥
दक्षिणायन सूरज रहै, रहै मास षट जानि ।
फिरि उतरायण जायकरि, रहै मासषट मानि॥११८॥
दोनों स्वरको शुद्ध करि, श्वासामें मन राखि ।

भेद स्वरोदय पायकरि, तव काहूसों भाखि ॥११९॥
जो रण ऊपर जाइये, दहिने स्वर परकाश ।
जीति होय हारै नाहीं, करै शत्रुको नाश ॥१२०॥
दुर्जनको स्वर दाहिनो, तेरो दहिनो होय ।
जो कोई पहिले चढै, खेत जीति है सोय ॥१२१॥
सुषमन चलत न चाहिये, युद्ध करनेको मीत ।
शीश कटावै कै फँसै, दुर्जन होवै जीत ॥१२२॥
जो वायें पृथ्वी चलै, चढि आवै कोइ भूप ।
आप वैठि दल पेलिये, वात कहत हौं गूप ॥१२३॥
जलपृथ्वी स्वरमें चलै, सुनै कान दै वीर ।
सुफल काज दोनों करैं, कै धरती कै नीर ॥१२४॥
पावक अरु आकाश तत,वायु तत्त्व जो होहिं ।
कछू काज नहिं कीजिये, इनमें वरजौं तोहिं ॥१२५॥
दहिनो स्वर जव चलत है,कहीं जाय जो कोय ।
तीन पाँव आगे धरै, सूरजको दिन होय ॥१२६॥
वायें स्वरमें जाइये, वायें पग धरि चार ।
वावों डग पहिले धरै, होय चन्द्रको वार ॥१२७॥
दहिने स्वरमें जाइये, दहिने डग धरि तीन ।
वायें स्वरमें चारि डग, वावों कर परवीन ॥१२८॥
गर्भवतीके गर्भको, जो कोइ पूंछै आय ।
वाल होय कै वालकी, जीवै कै मरिजाय ॥१२९॥
वाल परीक्षा होनकी, जो कोउ पूंछै तोहिं ।
वायें कहिये छोकरी, दहिने वेटा होहिं ॥१३०॥
दहिने स्वरके चलतही, जो वह पूछै आय ।
वाको वावों स्वर चलै, वालक हो मरिजाय ॥१३१॥

दहिने स्वरके चलतही, जो वह पूंछे वैन ।
वाहूको दहिना चले, लरिका हो सुख चैन ॥१२२॥
बायें स्वरके चलतही, आय कहै जो काय ।
वेटी ह्वै जीवै नहीं, वाको दहिनो होय ॥१२३॥
बायें स्वरके चलतही, जो वह पूंछै बात ।
वाहूको बावों चलै, पुत्रि होय कुशलात ॥१२४॥
तत्त्व आकाशके चलतही, कहै गर्भकी आय ।
होय नपुंसक हीजडा, कै सतवाँसो जाय ॥१२५॥
लेत परीक्षा गर्भकी, जो कोइ पूंछै आय ।
अग्नि होय जो ता समै, ओछाही गिरिजाय ॥१२६॥
क्षण बायें क्षण दाहिने, दो स्वर सुषमन होय।
पूछनवारेसों कहो, बालक उपजै दोय ॥१२७॥
वायु तत्त्वके चलतही, जो कोइ पूंछै आय ।
छाया हो बाढै नहीं, पेटै माहिं विलाय ॥१२८॥
जो कोइ पूंछै आयके, याको गर्भ कि नाहिं ।
दहिनो बावों स्वर लखै, साधि श्वासके माहिं ॥१२९॥
बन्ध ओर जो आयकरि, है पूंछै जो कोय ।
बन्ध ओर तौ गर्भ है, बहते स्वर नहिं होय ॥१४०॥
इडा पिंगला सुषमना, नाडी कहिये तीन ।
सूरज चन्द्र विचारिकै, रहै श्वास लवलीन ॥१४१॥
जसे कछुआ सिमिटि करि,आपी माहिं समाय ।
ऐसे ज्ञानी श्वासमें, रहै सुरति लवलाय ॥१४२॥
श्वास बाण वैकोडकी, आव जान नरलोय ।
बीत जाय श्वासा जबै, तबहीं मृत्यक होय ॥१४३॥
इकइस सहस छसै चलै,रात दिना जो श्वास ।
बीसा सौ जीवै बरप, होय अचनको नास ॥१४४॥

अकाल मृत्यु कोई मरै, होकरि भुगतै भूत ।
श्वास जहां बीतै सभी, जब आवै यमदूत ॥१४५॥
चारौं संयम साधिकरि, श्वासा युक्ति चलाय ।
अकाल मृत्यु आवै नहीं, जीवै पूरी आय ॥१४६॥
सूक्षम भोजन कीजिये, रहिये ना पडि सोय ।
जल थोरोसो पीजिये, बहुत बोल मत खोय॥१४७॥

कुण्डलिया ।

मोक्ष मुक्ति तुम चहत हो, तजौ कामना काम॥
मनकी इच्छा मेटकरि, भजो निरञ्जन नाम ॥
भजो निरञ्जन नाम,तत्त्वदेह अध्यास पिटावो॥
पञ्चनके तजि स्वाद, आपमें आप समावो ॥
जब छूटै झूठी देह, जैसेके तैसे रहिया ॥
चरणदास यहि मुक्ति,गुरुने हमसों कहिया ॥

दोहा–देह मरै तू है अमर, पारब्रह्म है सोय ।
अज्ञानी भटकत फिरै, लखै सो ज्ञानी होय ॥१४८॥
देह नहीं तू ब्रह्म है, अविनाशी निर्वान ।
नित न्यारो तू देहसों, देह कर्म सब जान ॥१४९॥
डोलन बोलन सो वनो, भक्षण करन अहार ।
दुख सुख मैथुन रोग सब, गरमी शीत निहार॥१५०॥
जाति वरण कुल देहकी, सूरति मूरति नाम ।
उपजै विनशै देहसों, पांच तत्त्वको नास ॥१५१॥
पावक पानी वायु है, धरती और अकास ।
पांच तत्त्वके कोटमें, आय कियो तैं वास ॥१५२॥
पांच पचीसौ देह सँग, गुण तीनों हैं साथ ।

घट उपाधि सो जानिये, करत रहैं उतपात ॥ १५३॥
जिह्वा इन्द्री नीरकी, नभकी इन्द्री कान।
नासा इन्द्री धरणिकी, करि विचार पहिचान ॥ १५४॥
त्वचा सुइन्द्री वायुकी, पावक इन्द्री नैन।
इनको साधै साधु जो, पद पावै सुख चैन ॥ १५५॥
निद्रा संगम आलसक, भूँख प्यास जो होय।
चरणदास पाँचो कही, अग्नि तत्त्वसों जोय ॥१५६॥
रक्त विन्दु कफ तीसरो, मेद मूत्रको जान।
चरणदास परकिरति ये, पानीसों पहिचान ॥ १५७॥
चाम हाड नाडी कहूं, रोम जान अरु मास।
पृथ्वीकी परकिरति ये, अन्त सबनको नास॥१५८॥
चल करना अरु धावना, उठना अरु संकोच।
देह बढे सो जानिये, वायु तत्त्व है शोच ॥ १५९॥
काम क्रोध मद लोभ मैं, तत आकाशको भाग।
नभकी पांचों जानिये, नित न्यारो जू जाग ॥१६०॥
पांच पचीसों एकही, इनके सकल स्वभाव।
निर्विकार तू ब्रह्म है, आप आपको पाव ॥१६१॥
निराकार निर्लिप्त तू, देही जान अकार।
आपनि देही मान मत, यही ज्ञान ततसार ॥१६२॥
शस्तर छेदिसकै नहीं, पावक सकै न जारि।
मरै मिटै सो तू नहीं, गुरुगम भेद निहारि ॥१६३॥
जलै कटै काया यही, बनै मिटै फिरि होय।
जीव विनाशी नित्य है, जानै विरला कोय ॥१६४॥
आँख नाक जिह्वा कहूं, त्वचा जान अरु कान।
पांचों इंद्री ज्ञान ये, जानै जान सुजान ॥१६५॥

गुदा लिंग मुख तीसरो,हाथ पाँव लखि लेह ।
पांचौं इन्द्री कर्म हैं, यह भी कहिये देह ॥१६६॥
पृथ्वी काल जे ठौर है,मुखै जानिये द्वार ।
पीली रंग पहिंचानिये, पीवन खान अहार ॥१६७॥
पित्तमें पावक रहै, नैन जानिये द्वार ।
लालरंग है अग्निको, मोह लोभ आहार ॥१६८॥
जलको बासा भाल है, लिंग जानिये द्वार ।
मैथुन कर्म अहार है, धौलो रंग निहार ॥१६९॥
पवन नाभिमें रहत है, नासा जानि दुआर ।
हरो रंग है वायुको, गंध सुगन्ध अहार ॥१७०॥
अकाश शीशम वास है,श्रवण दुआरो जान ।
शब्द कुशब्द अहार है,ताका श्याम पिछान ॥१७१॥
कारण सूक्षम लिंग है, अरु कहियत अस्थूल ।
शरीर तीनसों जानिये, मैं मेरी जड मूल ॥१७२॥
चित बुधि मन अहँकार जो,अन्तःकरण सुचार ।
ज्ञान अग्निसों जारिये,करि करि मीन विचार ॥१७३॥
शब्द स्पर्श रु गन्ध है, अरु कहियत रसरूप ।
देह कर्म्म तनमातरा, तू कहियत निहरूप ॥१७४॥
निराकार अद्वैत अचल, निरवासी तू जीव ।
निरालम्ब निर्वैरसो, अज अविनाशी सीव ॥१७५॥
बाएँ कोठा अग्निको, दहिने जल परकाश ।
मन हिरदय अस्थान है,पवन नाभिमें वास ॥१७६॥
मूल कमलदल चारको, लाल पँखुरी रंग ।
गौरीसुत वासो कियो, छस्यै जाप इकंग ॥१७७॥
षटदल कमल पियरे वरण, नाभी तल संभाल ।

षट्सहस्र जपि जाप ले, ब्रह्म सवित्री नाल ॥ १७८॥
दश पँखरी कमल है, नील वरण सो नाभ ।
विष्णू लक्ष्मीवास कियो, षट्सहस्र जपजाप ॥१७९ ॥
अनहद चक्र हृदय रहै,द्वादश दल अरु श्वेत ।
षट्सहस्र जपि जाप ले,शिव शक्ती तहँ हेत ॥ १८० ॥
षोडश दलको कमल है,कण्ठवास शशिरूप।
जाप सहस्र जहाँ जपै, भेद लहै अति गूप ॥ १८१ ॥
अग्निचक्र दो दल कमल,भृकुटी धाम अनूप।
जाप सहस्र जहाँ जपै, पावै ज्योति स्वरूप॥ १८२ ॥
दल हजारको कमलहै,नभ मण्डलमें वास ।
जाप सहस्र जहाँ जपै, तेजपुंज परकास ॥ १८३ ॥
योगयुक्ति करि खोजिले,सुरतनिरत करचीन ।
दश प्रकार अनहद बजे,होय जहाँ लवलीन ॥ १८४ ॥

कुण्डलिया ।

एक भँवर गुंजारसी, दूजे घुंघुरू होय ॥
तीजे शब्द जु शंखका, चौथे घण्टा सोय ॥
चौथे घण्टा सोय, पांचवें ताल जु बाजै ॥
छठे सुमुरली नाद, सातवें भेरि जु गाजै ॥
अठवें शब्द मृदंगका, नाद नफीरी नोय ॥
दशवें गरजनि सिंहसी,चरणदास सुनिलोय ॥
दोहा—दशप्रकार अनहद धुरैं,जित योगी होय लीन ।
इन्द्री थकि मनुआँ थकै,चरणदास कहि दीन॥ १८५ ॥
तीनचन्य नौ नाटिका, दश बाईको जान ।
प्राण अपान समान है,अरु कहियत उदान ॥ १८६ ॥
व्यानवायु अरु किरकिरा, कूरम बाई जान ।

नाग धनंजय देवदत, दशबाई रणजीत ॥ १८७ ॥
नवों द्वारको बन्द करि, उत्तम नाडी तीन ।
इडा पिंगला सुषमना, केलि करैं परबीन ॥ १८८ ॥
करते प्राणायामके ,तरि गये पतित अनेक ।
अनहद ध्वनिके बीचमें, देखै शब्द अलेख ॥ १८९ ॥
पूरक करि कुम्भक करै,रेचक पवन उतार ।
ऐसे प्राणायाम करि, सूक्ष्म करै अहार ॥ १९० ॥
धरती बन्ध लगायकै दशौ बन्धको रोक ।
मस्तक प्राण चढाय करि,करै अमरपुरभोग॥ १९१ ॥
पांचौं मुद्रा साधि करि, पावै घटको भेद ।
नाडी शक्ति चढाइये, षट चक्करको छेद ॥ १९२ ॥
योग युक्ति कै कीजिये, कै अजपाको ध्यान ।
आपा आप विचारिये, परम तत्त्वको ज्ञान ॥ १९३ ॥
शूद्र रु वैश्य शरीर है, ब्राह्मण औ रजपूत ।
बूढा बाला तू नहीं, चरणदास अवधूत ॥ १९४ ॥
काया माया जानिये, जीव ब्रह्म है मित्त ।
काया छूटि सूरत मिटै, तू परमातम नित्त ॥ १९५ ॥
पाप पुण्य आशा तजौ,तजौमान अरु थाप ।
काया मोह विकार तजि,जपै सुअजपाजाप ॥ १९६ ॥
आप भुलानो आपमें, बँधो आपही आप ।
जाको ढूंढत फिरत है,सो तू आपहि आप ॥ १९७ ॥
इच्छा दुई बिसारिकै, होय क्यों न निर्वास ।
तू तौ जीवन्मुक्त है, तजो मुक्तिकी आस ॥ १९८॥
पवन भई आकाशसों, अग्नि वायुसों होय ।
पावकसों पानी भयो, पानी धरती सोय ॥ १९९॥

धरती मींठ स्वाद है, खारी स्वाद सुनीर ।
अग्नि चरफरो स्वाद है, खट्टो स्वाद समीर ॥२००॥
खट्टा मीठा चरफरा, खारी पर मन होय ।
जवही तत्त्व विचारिये, पाँच तत्त्वमें कोय ॥२०१॥
स्वाद नाय अरु रंग है, और वताई चाल ।
पाँच तत्त्वकी परख यह, साधि पाव ततकाल ॥२०२॥
तिरकोनी पावक चलै, धरती तौ चौकोन ।
शून्य स्वभाव आकाशको, पानी लांवो गोल॥२०३॥
अग्नि तत्त्व गुण तामसी, कही रजोगुण वाय ।
पृथ्वी नीर सतोगुणी, नभ है अस्थिर भाय ॥२०४॥
नीर चलै जव श्वासमें, रण ऊपर चढि मीत ।
वैरीको शिर काट करि, घर आवै रणजीत ॥२०५॥
पृथ्वीके परकाशमें, युद्ध करै जो कोय ।
दोउ दल रहें वरावरी, हारि वायुमें होय ॥२०६॥
अग्नि तत्त्वके वहुतही, युद्ध करन मति जाव ।
हारि होय जीतै नहीं, अरु आवै तन घाव ॥२०७॥
तत्त्व आकशमें जो चलै, तो ह्वांई रहिजाय ।
रणमाहीं काया छुटै, घर नहिं देखै आय ॥२०८॥
जल पृथ्वीके योगमें, गर्भ रहै सो पूत ।
वायु तत्त्वमें छोकरी, औंवर सूतक सूत ॥२०९॥
पृथ्वी तत्त्वमें गर्भ जो, वालक होवै भूप ।
धनवन्ता सोइ जानिये, सुन्दर होय स्वरूप ॥२१०॥
अग्नि तत्त्व जव चलत है, कभी गर्भ रहिजाय ।
गर्भ गिरै माता दुखी, हो माता मरिजाय ॥२११॥

वायु तत्त्व स्वर दाहिने, करै पुरुष जब भोग ।
गर्भ रहै जो ता समै, देही आवै रोग ॥२१२॥
आसन संयम साधि करि,दृष्टि श्वासके माहिं।
तत्त्वभेद यों पाइये, बिन साधे कुछ नाहिं ॥२१३॥
आसन पद्म लगायकै, एक बरत नित साध ।
बैठे लेटे डोलते, श्वासाही आराध ॥२१४॥
नाभि नासिकामाहिं करि, सोहं सोहं जाप ।
सोई अजपा जाप है, छुटै पुण्य अरु पाप ॥२१५॥
भेद स्वरोदय बहुत है, सूक्षम कह्यो बनाय ।
ताको समझि विचारि ले,अपनो चित मन लाय२१६॥
धरणि टरे गिरिवर टरै, ध्रूव टरै सुन मीत ।
वचन स्वरोदय ना टरै, कहैं दास रणजीत ॥२१७॥
शुकदेव गुरुकी दयासों, साधु दयासों जान ।
चरणदास रणजीतने, कह्यो स्वरोदय ज्ञान ॥२१८॥

छप्पै ।

डहरेमें मेरो जनम नाम रणजीत बखानो ॥
मुरलीको सुत जान जात दूसरि पहिचानो ॥
बाल अवस्था माहिं बहुरि दिल्लीमें आयो ॥
रमत मिले शुकदेव नाम चरणदास धरायो ॥
योगयुक्ति हरिभक्ति करि ब्रह्मज्ञान दृढ करि गह्यो ॥
आतमतत्त्व विचारिकै अजपामें सनि मन रह्यो ॥

इति श्रीस्वामिचरणदासजीकृत ज्ञानस्वरोदय संपूर्ण ।

श्रीहंसाचनाराय नमः ।



# श्रीस्वामिचरणदासजीकृतपंचउपनिषद् ।

## अथ अथर्वणवेदीयहंसनादप्रारंभः ।

( उपनिषद्–भाषा. )

दोहा–वन्दन श्रीशुकदेवको, उनको हियमें लाय ।
छिप्यो भेद परगट कियो, परमारथके दाय ॥ १ ॥
सहंसकृत भाषा करी, ताको यह दृष्टान्त ।
खोलि खोलि सबही कही, समझे छूटै भ्रान्त ॥ २ ॥
ज्यों कूयेसों नीर ले, बाहर दियो भराय ।
बिना यतन कोई पियो, निरपायन्त अघाय ॥ ३ ॥
यों दीन्ही शुकदेवने, मैं जल काढनहार ।
प्यासा कोई न जाइयो, टेरों बारम्बार ॥ ४ ॥
ब्राह्मण क्षत्री वैश्य जो, अरु शूद्रहु जो होय ।
वह पीवेगा हेत करि, बहु प्यासा जो कोय ॥ ५ ॥
मुक्ति नीरकी प्यास जो, काहूकोही होय ।
और मनुष्य जग प्याससें, रहे जु मृतकहि होय ॥ ६ ॥

यह जग ऐसो जानिये, मृगतृष्णाको नीर ।
निकट जाय प्यासा कोई, कभी न भागै पीर ॥ ७ ॥
उनकी प्यास बुझै नहीं, होय नहीं हिय चैन ।
ज्ञान सुधा तजि जात है, धोखेको जल लैन ॥ ८ ॥
ज्ञान नीर तिरपत भये, निश्चय बैठे दास ।
संसारी प्यासे गये, पूरी भई न आस ॥ ९ ॥
सहंसकृत या कूपसम, भाषा नीर निकास ।
प्याऊं जिज्ञासुनको, तिनकी भगै पियास ॥ १० ॥

अष्टपदी ।

वेदहिकी उपनिषद् सु सें भाषा करी।जो कुछ था वहि माहिं सोई जसे धरी ॥ सुनि समझै मन माहिं और करनी करै । आवागमन मिट जाय नहीं देही धरै ॥जगकी बाधा छूटि मुक्ति पद पावई।जाग्रत पहुँचै ठौर स्वप्न बिसरावई ॥ सिर सभी भजि जाय उजारा होय है । सूझै आतमरूप द्वैतता खोय है॥ उपजै अति आनन्द द्वन्द्व दुख जाय है। तिरपति निर्मलज्ञान विज्ञान अघाय है॥जोपै करै विचार और गुरुसों लहै । वाकी गहनी गहै और रहनी रहै ॥ गुरु शुकदेव प्रताप सो चितते गाइया । चरणनदास होय सबन शिर नाइया ॥

दोहा–पूजे ऋषि मुनि देवता, पूजे इन्द्रहु भूप ।
पूजा सबही सृष्टिको, देखा हरिके रूप ॥ ११ ॥
सर्वत्रहि प्रभु देखि करि,सबको शीश नवाय ।
उपनिषदैं जो वेदकी, परगट कही बनाय ॥ १२ ॥

अष्टपदी ।

प्रथम प्रगट करि दई छिपेही भेदकी । हंसनाद अहिनाम अथर्वण वेदकी॥गौतम ऋषि करि चाव ऋषीश्वरपै गये । संत

सुजान जु नाम बहुत आदर किये॥गौतम अस्तुति करी बहुतही प्रीतिसों। फिरि पूछी यह बात जु लघुता रीतिसों ॥ परमेश्वर पहिचान मोहिं समुझाइये।मुक्त होनेके पन्थ सबै जु दिखाइये॥ ह्वैकर बहुत प्रसन्न ऋषीश्वर बोलिया । गौरी अरु महादेवकी चरचा खोलिया॥सबदेवनके देव सदाशिव हैं सही । उपनिषदें जो वेदकी गौरीसों कही ।सो मैं तुमसों कहौं प्रीतिके भावसों। तुमहूँ नीके सुनो अधिकही चावसों ॥ गुप्त महा यह भेद हियेमें राखिये । जो जड मूरख होय ताहु नहिं भाखिये ॥

दोहा—हरिभक्ता अरु गुरुमुखी, तप करनेकी आस ।
सत्संगी सांचा यती, ताहि देहु चरणदास ॥१३॥

अष्टपदी ।

अब मैं कहौं सँभाल सुरत ह्यां दीजिये । यह तौ अचरज कथा श्रवण सुनिलीजिये ॥ वही श्वास कहि हंस आय अरु जात है ॥ पूरा सतगुरु मिलै तौ भेद लखात है ॥ जो कोउ याको समझि करै अरु ध्यानहीं । ऋद्धि सिद्धि सुख होहिं जु उपजै ज्ञानहीं ॥ अन्त मुक्तिही होय अभै पदमें रहै। बहुरो जन्म न होय परम आनँद लहै॥ अब मैं बरणौं हंस और परमहंसही।जो समझै ह्वै मल जाय सब संशही॥हंस हंस जो मन्त्र अर्थ पहिचानिये।वह मैं हूं यों कहै निश्चय करि जानिये॥यह संसार सब माहिं सदासी भरि रह्यो।कोटिनमें कोइ जानि ध्यान सोई धरि रह्यो॥जैसे काठमें आगि तिलोंमें तेल है तैसे सब घटमाहिं हंसोका मेल है ॥

दोहा—दूध मध्य ज्यों घीव है, मेहँदी माहीं रंग ।
यतन बिना निकसै नहीं, चरणदास सो ढंग ॥ १४ ॥

जो जानै या भेदको, और करै परवेश ।
सो अविनाशी होत है, छूटै सकल कलेश ॥ १५ ॥

अष्टपदी ।

तन मथनेको यतन कहू अब जानिये। ज्यों निकसै ततसार विलावन ठानिये ॥पहिल चक्कर[1] जानि मूल द्वारे विषे । जित ही पाँवकी ऍंडी बन्ध दे रखे॥मूलचक्रसों खैंचि अपान चलाइये। दूजे चक्कर[2] पास जु आनि फिरावे ॥ दहिनी ओरसों तीनि लपेटे दीजिये ॥ तीजे चक्करमाहिं[3] गमन फिरि कीजिये॥चौथे चक्करमाहिं[4] पवन जो लाइये॥बहुरौ पँचवें चक्रमें[5] जुपहुँचाइये । छठवें चक्करमाहिं[6] जु ताहि चढाइये । सौ त्रिकुटीके मध्य तहां ठहराइये॥रोंके त्रिकुटी माहिं प्राणके वायुको।षट चक्करको छेदि चढै जब धायको॥अपान वायु चढि जाय वही अस्थान है । प्राणवायु ह्वै जाय साधुकोई जानहै॥रोंकै प्राणही वायु त्रिकुटी मध्यही।ओंकार करै ध्यान शीशमें मध्यही॥यहतौ ऊंचा ध्यान जु अधिक अनूपही । चरणहिं दासा होय जु ब्रह्मस्वरूपही ॥

दोहा—नाम ब्रह्मका है नहीं, है तो वह ओंकार ।
जानै आपनको वही, मैं हौं तत्त्व अपार ॥ १६ ॥

अष्टपदी ।

अनहद शब्द अपार दूरसों दूर है। चेतन निर्मल शुद्ध देह भरपूर है ॥ ताहि निरक्षर जान और निष्कर्म है । परमातम तेहि मानि वही परब्रह्म है ॥ हृदयकमलके माहिं ध्यान सोहं करै । वाही अजपा जान सुरति मन लै धरै ॥ बिन जपे

---

१ मूलाधारचक्र । २ स्वाधिष्ठान । ३ मणिपूरक । ४ अनाहत । ५ विशुद्ध । ६ सहस्रदल पद्म ।

जप होय सुषम्ना मातही । सहज इकीस अरु छसै जहां दिन रातही ॥ ताको कीजे ध्यान होत है ब्रह्मही । धारै तेज अपार जाहि सब संसही ॥ वा पटतर कोइ नाहिं जु योंही जानिये । चन्द सूर्य अरु सृष्टिके माहिं पिछानिये ॥ सो वह तेज अपार आपको मानिये । निश्चय अरु वहि साँच जु मनमें आनिये ॥ जबलग याही भेद जो जाना था नहीं । जीवातम अरु हंस हो रहा था तहीं ॥ जभी अगोचर भेद जु मनमाहीं लहा । परमातम परमहंसरूप निश्चय भया ॥

दोहा—जो जीवातम सो भया, परमातम अरु ब्रह्म ।
वाकी सरवरि को करै, पाई परै न गम्य ॥ १७ ॥
पहुँचे ना वा तेजको, कोटि कोटिही भान ।
चरणदास कोइ जानहीं, ताको निर्मल ज्ञान ॥ १८ ॥

अष्टपदी ।

परम ज्योतिको प्रापत सो नर होत है । जिन मन जीता होय कमाया गोत है ॥ जिन मन जीता नाहिं विषय आशा बहै ॥ हृदय कमलदल आठ लई फिरता रहै ॥ अष्ट पँखरी जान जु आठों अंगही । वही दिशा हैं आठ करै मनभंगही ॥ पँखरी पूरब दिशा जबै मन जात है । तब इच्छा हिय पुण्य करनकी आत है ॥ अग्नेय दिशा पँखरी जब जावै मना । ऊंघ नींद अरु आलस जित आवै घना ॥ दक्षिणहिं जु दिशा पँखरी परमन राजई । उपजै बहुत विरोध कठोरता साजई ॥ दिशा जु नैरुती पँखरी पै मन रंगही । पाप करनकी उपजै हिये तरंगही ॥ पश्चिम दिशा जु पँखरी पै मन आ रहै । होय सुखी परफुल्ल जु लीलाको चहै ॥

दोहा-वायव दिशा जु पँखरी,जब मन पहुँचै जाय ।
हलन चलन उपजै हिये, बैठ देहि उठाय ॥ १९ ॥

मनकी गति-( अष्टपँखुरी कमलपर )

अष्टपदी ॥ उत्तर दिशा जु पँखरी पै मन आवई।मैथुन करनकि चाह हिये उपजावई॥ईशान दिशा पँखरीपर मन आवै जभी । दान करनकी चाह अधिक उपजै तभी॥हृदयकमलके वीच जबै मन जा रहै । उपजै त्याग वैराग तजन जगको कहै॥ हृदयकमलको छेदि वाहर मन फिरतही । आंसे पांसे जानि होय जागरतही ॥ हृदयकमलके घेरके मध्यम जातही । जब आवत है स्वप्न जहां वहु भाँतिही ॥ ध्यान वरावर छेदि तहां मन जात है । होहिं सबै गुण लीन सुषुप्ती आत है ॥ हृदयकमलको छोडि होय मन न्यारही।तुरियामें मन जात जु तत्त्व अपारही ॥ यों जीवातम जान जु अनहद लीन हो । सो परमातम होय जीवता जाय खो ॥

दोहा-अजपाहीके जापके, सिद्धि भयो जब जान ।
पहुँचै या अस्थानही, रहै न दूजा ज्ञान ॥२० ॥
यह जो सब कुछ मैं कहो, हिरदै जाना जाय ।
ताहीको पहिचानिये, चरणदास चितलाय ॥ २१ ॥

दशप्रकार अनाहत शब्द ।

अष्टपदी ॥ कैसे अनहद उठै हिये अस्थानसों । यह जीवातम सुनै हृदय वल ध्यानसों ॥ दशप्रकारके नाद कहूं भिन भिन्नही । सो उपनिषदहि माहिं कहे सब चिह्नही ॥ पहली ऐसे होय चिडिया ज्यों चीकला । एकबार कहै चिह्न सुनै सोई सुचेतला ॥ ऐसेही दो वार जु दूजी जानिये। चिह्न चिह्नही होत ताहि पहिचानिये॥ क्षुद्रघंटिका तीसरि चौथी शंख ज्यों ।

पंचम पिंगी जान बजतहै बीन त्यों ॥ छठीं बजै ज्यों ताल सातवीं बाँसुरी । अठवें शब्द मृदङ्ग लगै मन बाँसुरी ॥ नवें नफीरी नाद जु दशवें सिद्धि है । बादरकीसी गरज दहु दंह दंह ॥ करतमें अभ्यास जु नादैं सब खुलैं ॥ जैसे बटाऊ चलत नगर नौ मग मिलैं ॥ दशवें पहुँचै जाय नवें बिसराइया । रहन किया वा देश जहां घर छाइया ॥ ऐसेही नौ छोड नाद दशवाँ गहै । बादलकीसी गर्ज जहां मन दे रहै ॥ वाको छोडै नाहिं सदा रहै लीनहीं । जु अनहदसार जानि परवीनहीं ॥ याको प्रापत कहूँ जो मनसें आनियो । गौरीसों शिव कह्यो साँच करि जानियो ॥

दोहा—चरणदासने अब कही, जुदी जुदी दश नाद ।
वही परापतको लहै, जो कोइ साधै साध ॥ २२॥

अनहदनादकी परीक्षा ।

अरिपदी ॥ पहिलि परीक्षा जान जु अनहद नादकी । सब रोमावलि उठै जु वाके गातकी ॥ अरु दूदी जब सुनै नाद चितलावई । सब तन अगन माहिं आलसक छावई ॥ तीजी अनहद नाद सुनै जितही जुटै । सब अङ्ग न हियमाहिं प्रेम पीडा उठै ॥ चौथि सुनै जब नाद परीक्षा पावई । तब शिर घूमन लगै अमल ज्यों खावई ॥ पँचवीं उठै जो नाद सुनै तासें पगै । वाके शीश सों जानि असी उतरन लगै ॥ छठी उठैं जब नाद सुरति वास धरै । कण्ठसों नीचे उतरि असी पीवन करै । सतवीं खुलै जो नाद बिना श्रवणन सुनै । अन्तर्य्यामी होय लखै सबके मनै ॥ दूर दूरके बचन सुनै कोई कहै । होय परकी दृष्टि छिप्यो कछु ना रहै ॥ अठवीं परीक्षा जानि परापत जो गनै । लखमाहीं सबठौर नाद अनहद सुनै । है सबकेही मांझ नैन समझै सुनै । यह समझै अरु सुनै तानि नीके गुनै ॥

दोहा-खुलै नवीं जब नादही, लक्षण यह पहिंचान ।
सूक्ष्म होय जित तित गमन, करै धरै जो ध्यान ॥२३॥
काहूकीही दृष्टिसों, चहै अगोचर होन ।
होयसकै दीखै नहीं, वह सब देखै जौन ॥ २४ ॥
जसे सुर सबको लखैं, उन्हैं न देखै कोय ।
रणजित कहै अस्थूल हो, चाहै सूक्षम होय ॥२५॥

अष्टपदी ॥ दशवीं खुलै जो नाद परे सोहंपरे । पारब्रह्म होइ जाय ध्यान ताको करे ॥ ध्यानीको मन लीन होय अनहद सुनै । आप अनाहद होय वासना सब भुनै ॥ पापपुण्य छुटि जाय दोऊ फल नार हैं । होय परम कल्याण जु त्रैगुण ना रहैं ॥ होवै बोध स्वरूप तेज ह्वै जात है । अटक रहै नहिं कोय सबै ठां समात है ॥ अज अविनाशी शुद्ध पवित्तर तत्तही । होवै आनँदरूप परम जो तत्रही ॥ निर्विकार निर्लेप और निर्वानहीं । आनँद सबको देत आपको जानहीं ॥ या ध्यानीको नाम जु ॐ कार है । सब नामनसे बडा किया जु विचार है ॥ याको ऐसे मान कि वह जो मैहीं हूँ । रूप नाम गुण जान कि यह सब वाहीमूं ॥

दोहा-करतै अनहद ध्यानही, ब्रह्मरूप ह्वै जाय ।
चरणदास यों कहत है, बाधा सब मिटिजाय ॥२६॥

इति अथर्वणवेदीयहंसनादोपनिषद्भाषा सम्पूर्ण ।

# अथ द्वितीयसर्वोपनिषद् प्रारम्भः ।

दोहा—दूसरि जो उपनिषद है, ताकी कहौं वनाय ।
सर्व नाम तिहि जानिये, ताहि देहुँ प्रकटाय॥२७॥

अष्टपदी ॥ परजापतिके शिष्य जो पूछी आयके । बन्ध मुक्तिका भेद देहु समुझायके॥काहि कहत है बन्ध मोक्ष कासों कहैं । विद्याऽविद्या भेद कहो कैसे लहैं ॥ जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति सोहि वतलाइये।अरु तुरियाको भेद सभी जु सुनाइये ॥कोठे पांचको भेद गुरू वर्णनकरो।जुदा जुदा समझाय तिमिर दुविधा हरो॥पहिलै अन्नसों भरा दुजो भरा है प्रानसों।तीजो मनसों भरा चौथे बुधि ज्ञानिसों॥पँचवाँ आनँद भरा सोहि कहि दीजिये। हौं तो चरणहिदास कृपा जो कीजिये॥आतमको जो कर्ता कैसे कै कहै । किन अनर्थमों जीव जु याही कोठ है॥अरु कहैं याको देहका जाननहार है । देहका साक्षी कहै सो कौन विचार है ॥

दोहा—ऐसो यह बन्धन बँधो, कहै तज्ञ निर्वन्ध ।
अन्तर्यामी क्यों कहैं, सोहि बतावो सन्ध ॥ २८ ॥
आतमकोही क्यों कहैं, जीव आतमा मान ।
माया यासों कहत हैं, दूरि करो अज्ञान ॥ २९ ॥

अष्टपदी ॥ परजापति सब सुनिकै यह उत्तर दिया । आतमकाही ज्ञान सभी परगट किया॥जीव आतमा देहकूं मानिके मैं कहौं।ताते परो अज्ञान सबै दुख सुख सहौं॥आपको लम्बा जान कि ठिगना जानई।कबहूं दुबला जान कि मोटा मानई ॥

---

१ पांचकोश । २ अन्नमयकोश । ३ प्राणमयकोश । ४ मनोमयकोश । ५ विज्ञानमयकोश । ६ आनन्दमयकोश ।

आपको जानै वृद्ध कि बालक तरुण है । जानत नारी पुरुष जु मानत वरण है॥देह संग ह्वै देह करै जु विहार है।आपनको गयो भूलि रहै न विचार है॥वाको वन्धन यही सुनो चितमें धरो । देहभाव छुटि जाय मुक्ति निश्चय करो॥जाही वस्तुसों उपजै तन अभिमान है । वही अविद्या जान वही अज्ञान है॥यही भरम उठिजाय जिरीजु विचारसों।वाही विद्या जानि वहीको ज्ञानहूं॥

दोहा—चौदह इन्द्री[1] देवता, मिलि जो कर व्योहार ।
चरणदास यों कहत है, जाग्रत यही निहार ॥ ३० ॥
जीव जु अन्तःकरणके, चारौ देवत संग ।
सूक्षम देही साथही, देखै स्वपना रंग ॥ ३१ ॥
चौदहही सब लीन है, जीव आतमा माहिं ।
यही सुखोपति जानिये, कछुभी सूझै नाहिं ॥ ३२ ॥

अष्टपदी ।

तीनै अवस्था[2] मिटैं मिटैऽहंकार है । तुरियाही रहिजाय जु तत्त्व अपार है॥परमातम जो पुरुष सदा निर्लेप है।केवल ज्ञान स्वरूप जु ब्रह्म अभेव है ॥

पंचकोषवर्णन ।

अब कोठोंकी बात कहूं चित दीजिये । जुदा जुदा विस्तार सबै सुनि लीजिये।पहला कोठा कहूं अन्नसेती भरो।छह कोठे तेहिमाहिं सोई श्रवणन धरो ॥ तीन पिताकी ओर सो लाया संगही । वीरजमींगी हाड सफेद जु रंगही॥अब माताके अंश तीनिही जानिये। लोह त्वचा अरु मांस अरुण पहिचानिये ॥

---

[1] पांच कर्मेन्द्री, पांच ज्ञानेन्द्री, चार अन्तःकरण यही चौदह इन्द्री और इनके देवता । [2] जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति ।

प्रानसे कोठा भरा दशो जहां वायु हैं। अगलेभी छः कहे जु रहे समाय हैं॥तीजा कोठा जानि धरो तहँ शुद्धिही । मन चित अरु अहंकार भरी जहँ बुद्धिही॥चौथा कोठा देख इन्द्रीका जानना। तासें भरो है ज्ञान सभीको पिछानना॥पँचवाँ कोठा जानि जो आनँदसों भरा । जैसे सगरो वृक्ष बीजमाहीं धरा ॥

दोहा—चारों कोठे जो कहे, अरु कारणको देखि ।
जहाँ सभी ये रहत हैं, वा ठौरीको पेखि ॥ ३३ ॥
वा ठौरीको जानिये, ज्यों तरुवरको बीज ।
डाल पात फल फूलही, रहे जु वाके बीज ॥ ३४ ॥
ऐसे वाको समझिकै, रहे जु आनँद आहिं ।
आनँदही आनँद भरा, पँचवें कोठे माहिं ॥ ३५ ॥

अष्टपदी ॥ आतम करता जानु जु जासे बुद्धि रहै। दुख सुख वाही माहिं सभी आशा धरै॥इच्छा पूरी भय होत मन मोदहै। जब पूरी नहिं होय धना दुख होतहै॥ सुख दुख दोनों होत जो पंचकके विषै। सोइ इन्द्री जान बिना इसके कसे॥स्रवसनसों सुनि शब्द बुरा भलको यही।और त्वचासों जान स्पर्श किहो यही॥आँखिनसों लखि होय जु रूप कुरूपसों ।अरु जिह्वासों होय जु षटरस स्वादसों॥नासासैति होय बुरी भलि गंध ले । इनसे उतपति होय जु दुख सुख मे असै॥आतमको जीवातम इस कारण कहै।सूक्षम अरु अस्थूल देह संगही रहैं ॥ बुरे भले जो करमनके फलसें बँधा । बीचहि लिया लगाय नहीं दुखसों फँधा ॥ज्यों कञ्चनके संग जु टाँका जानिये।धोले बल्तर साथ जु मेल पिछानिये ॥ सोधेसे है दूर शुद्ध है जात है । अपनेहिं अञ्जन आप जु श्वेत दिखात हैं ॥ जीवातम इहि भाँति फलन त्यागन करै । आतमही रहिजाय जीवता ना रहै ॥

खोटे कर्म जु त्यागि भले सहजे करै। तिनको फल जो होय नहीं आशा धरै ॥

दोहा-जीवन ब्रह्म यों होत है, रहै न कछू लगाव।
चरणदास यों कहत है, ऐसा किये उपाव ॥ ३६ ॥

अष्टपदी ॥ देहको जाननहारा ऐसे मानई। सूक्षम अरु अस्थूलको अपनी जानई ॥ कबहुँ कहै मम शीश आँख मुख हाथ है। कभी बतावै पांव कहै मेरा गात है ॥ मन बुधि चितऽहङ्कार समझ ये चार हैं। अरु पांचौ है वायु जु कोई निहार है ॥ प्राण अपान व्यान उदान समान हैं। सात्त्विक राजस तामस तीनों जानि हैं ॥ वैर प्रीति अरु तीसरि इनकी रूढ है। चौथ मनोरथ तीनिके सब मिलि झुण्ड है। भले बुरे जो कर्म और मन आनिये। सूक्ष्म शरीरको मूल ये सब पहिचानिये ॥ अरु यह सूक्ष्म शरीर आतमा साथ जो। ताते भासत सत्य सत्य है बात सो॥जब आतम पहिंचान हियेमें आवई। तब सूक्षमको साँच सबै उठि जावई ॥

दोहा-सूक्ष्म शरीर रु आतमा, भिन्न लखै नहिं कोय।
यही जु मनकी गाँठ है, खुले मुक्तिही होय ॥ ३७ ॥
ज्ञानी जाननहार ही, और तीसरी जान।
इन तीनोंको जो लखै, सो साक्षी परधान ॥ ३८ ॥
उपजै तीनों द्वैतसों, मिटै एकता होय।
उपजन मिटना तीनिका, जानै न्यारा सोय॥ ३९ ॥
अपनेही परकाशसें, आप रहा परकास।
सोई साक्षी जानिये, कहै चरणहीं दास ॥ ४० ॥
यद्यपि बन्धनसें बँधा, कहै जु निर्बंध दूर।
चींटी ब्रह्म आदिलौं, हिरदयमें भरपूर ॥ ४१ ॥

सबही हिरदयके मिटे, वही एक ठहराय ।
ना कुछ आया ना गया,ज्योंका त्यों रहिजाय ॥४२॥
बन्धनमें आवै सही, लीला करन दयाल ।
निरबँधका निरबंध रहे,अज अविनाशि अकाल॥४३॥
अंतर्यामी अरथ; सब घट रहो समाय ।
जैसे डोरेके विषे; भाँति भाँति मणिकाय ॥ ४४ ॥
सबकेही भीतर बसे, सबका जाननहार ।
वाहीते परगट भई, नाना वस्तु अपार ॥ ४५ ॥
बनेरूप किरिया बनी; बने नाम दृष्टान्त ।
सूझे ज्ञानप्रकाशसूं, जब गुरु मेटै भ्रान्त ॥ ४६ ॥
रूपनाम किरिया लगी,जबलग याके साथ ।
याहीते जी आतमा, कहलावै यह बात ॥ ४७ ॥
जैसे कञ्चन मृत्तिका, भांडे किये सँचार ।
नामरूप किरिया भई, देखो दृष्टि निहार ॥ ४८ ॥
नामरूप किरिया मिटे, रहै न कछू विचार ।
जो था सोई रह गया, परमातम ततसार ॥ ४९ ॥
आतम अरु जीवातमा, देह धरेसे दोय ।
ताते बढो उपाधही, मैं तू तू मैं होय ॥ ५० ॥
तत्त्वमसी जो यह कहा, ताको याही अर्थ ।
वह तूही है जान ले, परम तत्त्व है सत्य ॥ ५१ ॥

अष्टपदी ।

अरु वह ज्ञान स्वरूप अनन्द अनन्त हैं । उपजावन सब सृष्टिको जीवन कन्द है । वस्तुकाल अस्थान तीनों मिटि जात है । वह इकरस सतरूप ब्रह्म रहि जात है ॥ सबको जाननहार मिटे उपजे नहीं । तासूं कहें नहि ज्ञान अर्थ जानो तहीं ॥ और कहें जु अनन्तसो यासूं जानिये । नव मांहेसे

इक माटी जु पिछानिये ॥ कनकके बर्तन बहुत जु सोना एकिये । सब बसननके माहीं जु सूतहि देखिये ॥ ऐसेहि आदी रु अन्त ब्रह्म सब माहीं कहिये ॥ याहि अनन्त भेद कछू नाहिं है ॥ अरु जो आनँद कहै समुझ लीजौ वही । वाहीको अंश पिछान जु आनँदहो कही ॥ ऐसेही मोहिं समझायो गुरु शुकदेवने ॥ चरणहिं दासा होय लखो या भेवने ॥

ब्रह्मका स्वरूप ।

दोहा—चार पते ये ब्रह्मके, सत आनन्द अनन्त ।
चौथा ज्ञान स्वरूप है, कहैं वेद अरु सन्त ॥ ९२ ॥

अष्टपदी ।

सर्वस में सब ठौर जु इकरस नित्त है । तत्त्वमसीके अर्थ वही तू सत्य है ॥ जबसूं करिकै ज्ञान होय परब्रह्महीं । आपनहीकूं पाय जाय सब भर्महीं ॥ मैं तू वह उठिजाय दूसरी वासही । आपकूं व्यापक जान ज्यों शुद्ध अकाशही ॥ अरु जान निर्लेप सत्त अरु एकही । जब परमातम होय रूप नहीं रेखही ॥ माया याते कहैं भरम अरु अन्तहै । ज्ञान भये उठि जाय कछू न रहन्त है॥ज्यों रसरीको साँप भरमसूं मानिये । समझ लखा जब झूठी माया जानिये॥साँच सो लागै झूठ झूठ सच जान है । माया यही सुभाव भरम अज्ञान है ॥ रसरीकूं कहै सर्प जु अपने भरमसूं । ऐसेही जड कहत सनातन ब्रह्मकूं ॥

दोहा—झूठ जगत दीखत रहै, दीखै ना सतब्रह्म ।
यही जु माया जानिये, यही तिमिर यही भर्म॥९३॥
गुरु शुकदेव प्रतापसूं, कही चरणहीं दास ।
यह जु अथर्वण वेदकी, सर्व उपनिषद भास ॥ ९४ ॥

इति द्वितीयसर्वोपनिषत्सम्पूर्ण ।

# अथ तृतीयतत्त्वयोगोपनिषद्प्रारम्भः ।

अष्टपदी ।

तीजी अरु जो कहूं अथर्वण वेदकी । तत्त्वयोग जिहि नाम गुप्तही भेदकी ॥ अपने शिषकूं कहा जु परजापतिने । योग-सागरसें कहूं जु पावै तत्त्वने ॥ योगेश्वरकूं लाभ होय जाके किये । पढै पाप भजि जाय सुनै राखै हिये ॥ निश्चय होवे मुक्त यही तू जानिये । चौथे पद लहै वास सांच करि मानियो ॥ वडा योगीश्वर विष्णु अधिक तप ज्ञान है । जाकी माया गंध नहीं मान है । योगी करिके योग सुज्योति निहारही । दीपककीसी लोय लखै होय पारही ॥ सो वह विष्णु स्वरूप सबनके माहि है । घट घटमें भरपूर खाली कोई नाहिं है ॥ ऐसी ज्योतीकूं छोडि और मन लावई । वे नर मोढू जान जु कूर कहावई ॥

दोहा—दूध पिया जिन कुचनसूं, उनकूं मल सुख लेत ।
जन्म खोय खाली चलै, नारिनसूं करि हेत ॥ ९९ ॥

अष्टपदी ॥ जिस द्वारेसूं निकस जन्म जगमें लिया। तामही परवेश करन फिर मन किया ॥ वही नारिको रूप जु तासूं मा कही । लगे भार्य्या कहन जु अपने सँग लई॥ जाही पुरुष स्वरूपकूं कहते बापही॥ फिर लगे पुत्तर कहन वाहीकूं आपही॥ वही पुत्र जो जगनमें पिता कहावई । सोई पुत्तर भया वडो अति चावही॥ जैसे कूपका रहँट लौट रीते भरे । वस्तु एकही जान कभी ऊपर तले॥ याही भरम अज्ञानसूं आशाही दहै ॥ बहुलोकनके माहि सदा भरमत रहै॥ अब मैं कहूं उपाय जग-

तमें ज्यों छूटै । आवागमनका फंद सिताबही कटै ॥ जासूं भरमैं नाहिं रहै थिर होयकै ॥ पावै निज अस्थान विपति सब खोयकै ॥

## ओंकारवर्णन ।

दोहा—ओंकार वड नाम है, हिरदे ध्यान करै ।
शुकदेव कहै चरणदाससूँ, सबही व्याधि टरै ॥५६॥

अष्टपदी ॥ ओंकारके अक्षर कहिय तीन हैं । अकार उकार मकार जानै परवीन है । तीनों अक्षर माहँ तीनों है थोकहीं । पहले अक्षरमें जु रहै भूलोकहीं ॥ दूजे अक्षर बीच जानो आकाशही ॥ तीजे अक्षर माहि वैकुंठ निवासही ॥ तीन अक्षर माहिं जो तीनै वेद हैं ॥ ऋगयजुर्वेद रु साम तिहूं जो भेद है ॥ तीनों अक्षर माहिं तिहू जो देव है । ब्रह्मा विष्णु महेश तिहू जो अभेय है ॥ तीन प्रकार कि अग्नि तीन अक्षर महीं । एक अग्नि यह जान दिखै प्रत्यक्षहीं ॥ दूजी अग्नि प्रचंड सूर्यकी भासई ॥ तृतीय अग्नि सब माहिं जठर परकासई ॥ तीनों गुण तिनमाहिं समझ जानो यही । रजगुण सतगुण और तमोगुण है सही ॥

दोहा—यह अक्षर ओंकारके, जिनका चौथा भाग ।
अर्द्धमात्रा बोलिये, ऊपर बिन्दी लाग ॥ ५७ ॥

अष्टपदी ॥ जो कोइ याको जपै समझ अरु ध्याय है । ऊपर कही जो वस्तु सबनको पाय है ॥ अक्षर साढ तीन प्रणवके माहिं है । सब वस्तू वा माहिं बाह्य कछु नाहिं है ॥ ऐसे रहत वा माहिं पुहुपमें गंध ज्यों । जैसे तिलमें तेल दूधमें घीव त्यों ॥ जैसे पाहन माहिं जु कनक बताइये । ऐसेही ओंकारमें सबको

१ शीघ्रही ।

पाइये॥वाहीको किये ध्यान परमपदको लहै। वेद पुराणन माहिं साख योंही कहै॥

प्रणवका ध्यान ।

अब परणवका ध्यान जु देहु बतायके॥सबही याकी सुझ कहूँ समझायके ॥ हिरदयहीके पाहिं जु कमल पिछानिये । ऊपरको है नाल नीच मुख जानिये॥ वाहीक छिद्र बीचरहत मन भूप है । कहै चरणही दास जु अनूप है ॥

दोहा—अक्षरमें ओंकारके, पहिला है जु अकार ।
ताहि कहेसों होत है, हिरदा शुद्ध विचार ॥ ९८ ॥

अष्टपदी॥दूजा जपै उकार कमल विकसै कली। शनै शनै खुलि जाय बसै तामें अली ॥ तीजा जपै मकार प्रगट हो नादही। सुनि सुनि आनँद होइ जु परम अगाधही ॥ अर्द्ध मात्रा बिन्दु सदा फिर जानिये।हलन चलन कछु नाहिं यही पहचानिये॥ वासें मन ह्वै लीन ज्योति ह्वै जाति है। निर्मल अरु शुद्ध बिलोरकी भांति है॥ सूरजकीसी किरण महा उज्ज्वल वही । जोइ करै वह ध्यान पुरुष दावै सही ॥ सबमें ज्योति स्वरूप सकल भरपूर है। निकट निकटसों निकट दूरसों दूर है ॥ जो इसकाही ध्यान हृदय किया जाय ना । तौ करै मस्तक माहिं होय पारायना ॥ शीशमें जप सिद्ध होय रोके नौ द्वारही । निकसन देवै वायु न काहू द्वारही ॥

दोहा—दोय पगण्डी बाँधिये, नीचेके दो द्वार ।
दोउ अँगूठे हाथके, रोको श्रवन वार ॥ ९९ ॥

अष्टपदी ।

तर्जनि अँगुली दोउ दृगनपर दीजिये।मध्यमसे दोउ नाक छेद बंद कीजिये॥अनामिका दोउ हाथकि और कनिष्ठिका ।

होंठनको बंद करै जु नीके पुष्टका ॥ नाशाके दोउ छेद एकही जित भये । दोउ भौंहनके बीच चरणदासा कहै॥निश्चय ताहि बनारस देहको जानिये । वाहीकी तौ ओर दृष्टिको तानिये ॥ महाकुम्भक इहि नाम इसी विधि साधिये । ध्यान किये होय मुक्ति यही अवराधिये॥इन्द्रिनहूंके मारगको जो बंद करै वायु विना घट माहिं यथा दीपक बरै ॥ होय घना परकाश इसी जो देहमें । इसही ध्यान प्रताप मिलै जा गेहमें ॥ पाव चेतन शुद्धि किये इस योगही । कर्मनको है नाश मिट मन रोगही॥

दोहा-उपनिषद पूरी भई, नाम योगही तत्त्व ।
अंग अथर्वण वेदका, चरणदास कहि सत्त्व ॥ ६० ॥

इति अथर्वणवेदीय तृतीय तत्त्वयोगोपनिषत्सम्पूर्ण ।

## अथ चतुर्थयोगशिखोपनिषत्प्रारम्भः ।

दोहा-योगशिखा चौथी कहूं, तामें अद्भुत ध्यान ।
परजापति ऐसे कही, शिष्य सुनौ दै कान ॥ ६१ ॥

अष्टपदी ।

यामें अद्भुत राह वडेही ज्ञानकी । कांपन लागे देह कठिन सुनि ध्यानकी ॥ जब आवै मनमाहिं मोह तन ना रहै । पांचनहीकी आग नहीं हियमें दहै॥ताकी विधि मैं कहूं सभी सुनि लीजिये । बैठि इकांतहि ठौर जु आसन कीजिये॥आसन पद्म लगायके सुख आसन करौ । सीधो राखौ मेरे नैन नासा धरौ॥दोउ पांयनके साथ जु हाथ मिलाइये । सब स्वादनको रोकि जो मनको लाइये॥प्रणवहीका जाप जु मनमें राखिये।इस विन और उपाय सबनको नाखिये ॥ जाका ओं नाम ध्यान

ताको करै । आठ पहर संग्राम बिना खांडे लरै ॥ देह याही अस्थूल बडा घर जानिये।तामें दीरघ थंभ एक पहिचानिये ॥

दोहा—अरु यामें नौ द्वार हैं, छोटे थंभ हैं तीन ।
पांच देवता तेहि विषै, लहैं साध परवीन ॥६२॥
यह घर जो मैंने कहा, सोइ मनुषनकी देह ।
कहैं गुरू शुकदेवजी, चरणदास सुनि लेह ॥ ६३ ॥

अष्टपदी ।

एक बडा जो थंभ मेरकी डंड है। सोइ पीठका हाड जासु सब संड है ॥ अरु वाहीके बीच नाडि सुषमन भली । सब नाडिन शिरमौर योगी मानै रली ॥ नौ द्वारे अब कहूं तिन्हैं पहिचानिये । दो सरवन दो आँख भली विधि जानिये॥नासा छिद्र होय जु मुखका एक है । लिंग गुदा दो जान नवोंका लेख है ॥तीन जु छोटे थंभ तीन गुणही कहे । सतगुण तमगुण और रजोगुणहीं लहे ॥पांच देवता कहे सो पांचों प्रान हैं । प्राण अपान रु व्यान उदान समानहै॥ऐसे मंदिलमाहिंहृदयमें छेद है । तामें सूरजमण्डल अचरज भेद है ॥ ताकी बाहिही ज्योति किरण उजियार है।पूरा योगी होय सो ताहि निहार है॥

दोहा—ज्योतिमयी मंडल लखै, हृदयकमलमें होय ।
तामें दीखै और इक, दीपककीसी लोय ॥ ६४॥

अष्टपदी ।

दीपककीसी ज्योति सासु ऊपर चलै । रहै आपनी ठौर भाँति ऐसी हिलै॥ वाही ज्योतिको जानें ब्रह्म स्वरूपही।यही समझिके ध्यान करै जु अनूपही ॥ योगी करैं जो ध्यान यही हिय माहिहीं । अंतसमें तन छूटि उपरको जाहिहीं ॥ सूरजहूका मण्डल जाय बेधही।सुषमन मारग जाय शीशको

छंदहीं॥सायुज मुक्तिहींको जाय परापत यही । कोटिन माहिं लहै जु बिरला कोयही॥सब ज्योतिनकी ज्योति बडी जो ज्योति है॥ताको पाये होय एकही गोतहे ॥ आलससों दुर्भाग्य ध्यान करि ना सकै । तो दिनमें तिरकाल पाठ करने लगै ॥

दोहा–प्रातकाल अरु मध्यमें, संध्याहीकी बार ।
उपनिषदन तीनों समै, पढै विचार विचार ॥ ६५ ॥
करम कटै समही हटै, चौरासी कट जाय ।
देही पावै मनुषकी, पूरा गुरु मिलिजाय ॥ ६६ ॥
फिर पावे यह ध्यानहीं, पीछे कही जु खोल ।
जावे परमहिं धामकूं, छोडै सब झकझोल ॥ ६७ ॥
थोडासा यह ध्यानही, मैं समझायों तोहिं ।
परजापति शिष्यसों कहे,बडा जो निश्चयमोहिं॥ ६८ ॥
यह पदवी मोकूं मिली, इसी ध्यान परताप ।
जीवन्मुक्ताही रहूं, छूटे आप अरु थाप ॥ ६९ ॥
निश्चल हो या ध्यानकूं, करै जो कोई और ।
जगत छूटै आपा मिटै, पावै निर्भय ठौर ॥ ७० ॥
आनँदही आनँद जहाँ,अवधि न काल कलेश ।
चरणदास या ध्यानसों, पावै ऐसा देश ॥ ७१ ॥
बहुलोकनमें जन्म धरि,पाप मिटा नहिं मूर ।
चरणदास इस ध्यानसों, सबै होत है दूर ॥ ७२ ॥
दूर करन दुख जगतके, आन उपाय न होय ।
योगीकूं या ध्यानसम,और वस्तु नहिं कोय ॥ ७३ ॥
उपनिषद चौथी यही, भई समापति येहु ।
चरणदास कहैं पांचवीं,हित चित दै सुनि लेहु ॥७४ ॥

इति अथर्वणवेदीययोगशिखोपनिषत्सम्पूर्ण ।

अथ पंचमतेजविंशतोपनिषत्प्रारम्भः ।

—०—

दोहा—उपनिषदा जो पांचवीं, वेद अथर्वण माहिं
तेज विंद जिहि नाम है, समझ मुक्ति होजाहिं ॥७८॥

अष्टपदी ॥ तेज विन्दके अर्थ यहां हिय गूँथ है । वडे ध्यानके तेजहीकी यह बूँद है॥इसका है यह ध्यान जो सवसे ऊंच है । सवसूं पर निहरूप शुद्ध अरु सूच है ॥ हिरदयहीके मध्य और सूक्षम महा॥अरु केवल आनँद किन्हींज्ञानी लहा॥ अनंतशक्ति जिहि नाहिं निरा अस्थूल है। वहुत पिण्ड ब्रह्मांड सवनका मूल है ॥ वडा विना परमान गहा नहिं जात है । याकि तपस्या ध्यान कठिन जु दिखात है॥वाका देखन दुर्लभ सुलभ नहिं जानना । वहतो सिन्धु अथाह कछू परमान ना ॥ ज्ञानी पण्डित और सव बुधिवानहीं । पावें आदि न अन्त और मध्य ह्वां नहीं ॥ के यांचे ब्रह्मव्रत करे के ध्यानही । याहीके हो रूप पाव तव जानहीं ॥

दोहा—जीते पहिल अहारही, दूजे और करोध ।
वहु मनुपनका संग तजि, छाँडे प्रीति विरोध॥ ७९ ॥

अष्टपदी ॥ परवल इन्द्री जान सवनकूं वश करै।शीत उष्ण दुख सुख अस्तुति निन्दा हरै॥छोडही अहंकार वासन आसही। अपने कारण वस्तु रखै नहिं पासही ॥ पूरी राखै पेज धारणा धारिके। गुरु आज्ञा गुरुसेव करै जु विचारिकै॥सकल मनोरथ कामनाकूं करै क्षीणहीं । ऐसे जिज्ञासूकूं चाहिये द्वारे तीनहीं एक जो द्वारा त्याग दुजा जो छपावही । तीजा गुरुकी निश्चय ऐसा सुभावही ॥ इन द्वारोंसे राह जु आगकी खुलै ।

छुटै थकै वह नाहिं तुखालाही चलै ॥ जीवातम हो हंस कहावत यही । याके है अस्थान जो तीनोंही सही ॥ जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति परगट जानिये । तुरियाही जु अस्थान गुप्त पहिचानिये ॥ ४ ॥

दोहा–इन तीनोंसे वडा है, तुरियाकूं नित जान ।
चरणदास पोषण जगत, वाके ना अस्थान ॥ ७७ ॥

अष्टपदी

जैसे भूत अकाश यों व्यापक ह्वै रहो । सब इन्द्रिनके माहिं जो सूक्षम जो रहो ॥ वाकी सत्तासेती चेत नहीं रही । वही वडा पद जान विष्णुका है सही ॥ वाके नेत्र हैं तीन जो तीनो वेदही । अरु वाके गुण तीन जो किया निषेधही ॥ है सबका आधार त्रिलोकी धारई । आप रहै निरधार जो अप-रमपारई ॥ है निहरूप अडोल अखण्ड अगाधही । है तौ निस्संदेह पहुँचे न उपाधही ॥ करि न सकैं परवेश वरण गुण रूपही । अरु सब गुण वासाहिं जु अधिक अनूपही ॥ पावै केवल ज्ञान आपमें आपही । वावन अक्षर माहिं नाम नहिं थापही ॥ वह तौ निराआनन्द काहुसे है नहीं । कठिन परा-तम होय दुर्लभ देखै नहीं ॥

दोहा–वह उपजे विनशै नहीं, अज अविनाशी सोय ।
विन इच्छा थिरही रहै, चरणदास नित जोय ॥७८॥

अष्टपदी ।

वह सवही विराटपिण्ड अरु जीव है। नाना कौतुक होय अन्त वहि सीव है ॥ ज्ञानसे जुदा न जान निरा वह ज्ञान है । वही महा आकाश नहीं परमान है॥ सबमाहीं परवेश जो आतम सत्त है । आपमें पूरण आप परमही तत्त है। अज्ञानी जानै झूठ झूठ

पहुँचै नहीं । वह तौ सदा नित ज्ञान कभी विनशै नहीं ॥ वाकूं कहा नहिं जाय जाप जापक कभी॥ अह सारे हैं जाप उसी माहीं सभी ॥ और जपावा गया जाप जापक वही । सबकुछ उसकूं जान गुन परगट वही॥वह निर्गुण निर्लिप्त कोई गुण नाहिनै॥परेसूं परे ता परे जानिले वाहिनै ॥ वासूं पर नहिं और विचारा जाय ना । कहैं चरणही दास कछू वा माहिं ना ॥

दोहा—वाकू जाग्रत है नहीं, वाकू स्वप्न न कोय ।
सोवन स्वप्ना है नहीं, जाग्रत् कैसे होय ॥ ७९ ॥

अष्टपदी ।

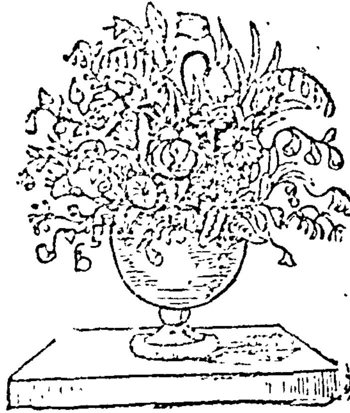
दुओंसे न्यारा जान जाग्रत् अरु स्वपनसूं । ऐसा कोई नाहिं न जानै सत्तहूं॥ सबका जानत मूल जु ज्ञानी लो यही । दीरघ अरु परकाशी जानै सबको यही ॥ जाकूं लोभ न होय अविद्या होय ना । मैं अभिमान कुकर्म वासना कोय ना॥गरमी जाडा भूख प्यास व्यापै नहीं॥पइये क्रोध न मोह नेक वामें कहीं॥ वाहि न इच्छा होय न पूरी चाहहीं ॥ कुल विद्या अभिमान न उनके माहिहीं॥मान नहीं अपमान न मनमें लावई॥सबसूं होय निवृत्त ब्रह्मकूं पावई ॥ तेज विन्द उपनिषद संपूरणही । भई गुरु शुकदेवके दास चरणदासा कही॥ताहि सुनै मनराखि विचारा-हो करै । निश्चय होवै मुक्त जगतमें ना परै ॥

दोहा—कही गुरु शुकदेवने, मेरी कछू न बुद्धि ।
पढो नहीं मूरख महा, मोकूं नेक न शुद्धि ॥ ८० ॥
मेरे हिरदयके विषै, भवन कियो गुरु आय ।
वेइ विराजत हैं सदा, मेरी देह दिखाय ॥ ८१ ॥
जबसूं गुरु किरपा करी, दर्शन दीन्हों मोय ।
रोम रोममें वे रमे, चरणदास नहिं कोय ॥ ८२ ॥

जाति वरण कुल मन गया, गया देह अभिमान।
अपने मुखसों क्या कहौं, जगही करै बखान ॥ ८३ ॥
रहे गुरू शुकदेवजी, मैं मैं गई नशाय।
मैं तैं तैं मैं वही है, नखशिख रहो समाय ॥ ८४ ॥

इति श्रीस्वामिचरणदासकृततेजबिंदोपनिषद्भाषा सम्पूर्ण।

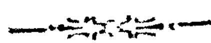
इति पंचोपनिषद्।



श्रीवैकुण्ठविहारिणे नमः ॥



# अथ भक्तिपदार्थप्रारम्भः ॥



गुरुमहिमा ।

दोहा–प्रणवों श्रीमुनि व्यासजी, मम हिरदयमें आय ।
भक्तिपदारथ कहत हूं, तुमहीं करो सहाय ॥ १ ॥
प्रेम पगावन ज्ञान ने, योग जितावन हार ।
चरणदासकी वीनती, सुनियो बारम्बार ॥ २ ॥
तुम दाता हम मांगता, श्रीशुकदेव दयाल ।
भक्ति दई व्याधा गई, मेटे जगजंजाल ॥ ३ ॥
किसी कामके थे नहीं, कोउ न कौडी देह ।
गुरु शुकदेव कृपा करी, भई अमोलक देह ॥ ४ ॥
को है कोइ न जानता, गिनतीमें नहिं नावँ ।
गुरु शुकदेव कृपा करी, पूजन लागे पावँ ॥ ५ ॥
सीधी पलक न देखते, छूटे नाहीं छाहिं ।
गुरु शुकदेव कृपा करी, चरणोदक ले जाहिं ॥ ६ ॥
दुखके पालक हुते, भक्ति बिना कंगाल ।
गुरु शुकदेव दया करी, हरिधन किये निहाल ॥ ७ ॥
जा धनकूं कर ना लगे, धारि सकै नहिं लूट ।
चोर चुराय सकै नहीं, गांठ गिरै नहिं छूट ॥ ८ ॥
बलिहारीगुरु आपने, तन मन सदकै जावँ ।

जीव ब्रह्म क्षणमें कियो, पाई भूली ठाँव ॥ ९ ॥
हरिसेवा सोलह बरस, गुरु सेवा पल चार ।
तौभी नहीं बराबरी, वेदन कियो विचार ॥ १० ॥

गुरुकी सेवा साधू जानै । गुरुसेवा कह मूढ पिछानै ॥
गुरु सेवा सबहुन पर भारी । समझ करो सोई नर नारी ॥
गुरुसेवासों विघन विनाशै । दुरमति भाजै पातक नाशै ॥
गुरु सेवा चौरासी छूटै । आवागमनका डोरा टूटै ॥
गुरु सेवा यमदण्ड न लागै । ममता मरै भक्तिमें जागै ॥
गुरु सेवासूं प्रेम प्रकाशै । उनमत होय मिटै जग आशै ॥
गुरु सेवा परमातम दरशै । त्रैगुण तजि चौथापन परशै ॥
श्रीशुकदेव बतायो भेवा । चरणदास कर गुरुकी सेवा ॥

दोहा–गुरु सेवा जानैं नहीं, पाँय न पूजै धाय ।
योग दान जपतप कियो, सभी अफल ह्वैजाय ॥ ११ ॥

योग दान जप तीरथ न्हाना । गुरु सेवा विन निष्फल जाना ॥
गुरु सेवा विन बहु पछितैहो । फिरि फिरि यमके द्वारे जैहो ॥
गुरु सेवा विन अति दुख पैहो । जगमें पशु दारिद्री ह्वैहो ॥
गुरु सेवा विन कौन उतारै । भवसागरसूं बाहर डारै ॥
गुरु सेवाविन जड कह करिहै । कागकी नाव बैठ करि तरिहै ॥
गुरु सेवा विन कछु नहिं सरिहै । महा अंधकूपन में परिहै ॥
गुरु सेवा विन घट अँधियारा । कैसे प्रगट ज्ञान उजियारा ॥
नरक निवारण गुरु शुकदेवा । चरणदास करि तिनकी सेवा ॥

दोहा–इन्द्रीजित निरवैरता, निरमोही निरद्वन्द्व ।
ऐसो गुरुकी शरणकूं, मिटै सकल दुखद्वन्द्व ॥ १२ ॥

राग द्वेष दोनोंसे न्यारे । ऐसे गुरू शिष्यकूं तारे ॥
आशा तृष्णा कुबुधि जलाई । तन मन वचन सबन सुखदाई ॥

निरालम्ब निरंरम उदासी । निर्विकार जानों निरवासी ॥
निर्मोहत निर्बन्ध निशंका । लाक्षधान निर्वाण अशंका ॥
सारग्रही और सरवंगी । संतोषी ज्ञानी सतसंगी ॥
अयाचीक व्रत निरअभिमानी। पक्ष रहित स्थिर शुध बानी ॥
निहतंत्र नाहीं परपंचा । निहकरम निरलिप्त जो संचा॥
शीतल तासु मति है देवा । चरणदास कियो सो गुरुदेवा ॥

दोहा—सतवादी अरु शीलवंत,सुहृदै अरु योगीश ।
निश्चल ध्यान समाधिमें, सो गुरु विस्वे वीश॥ १३ ॥
भरम निवारण भय हरण,दूर करन सन्देह ।
गुठिया खोलै ज्ञानकी, सो सद्गुरु करलेह ॥ १४ ॥
सद्गुरुके लक्षण कहे, ताकूं ले पहिचान ।
निरख परख कर दीजिये,तन मन धन अरु प्रान॥ १५॥
ऐसा सद्गुरु कीजिये, जीवत डारै मारि ।
जनम जनमकी बासना, ताकूं देवे जारि ॥ १६ ॥
सद्गुरुके ढिग जाइके, सन्मुख खावै चोट ।
चकमक लग पथरी झरै, सकल जरावै खोट ॥ १७ ॥
सद्गुरु मेरा सूरमा, करै शब्दकी चोट ।
मारै गोला प्रेमका, ढहै भरमका कोट ॥ १८ ॥
मुखसेती बोलन थका, सुनै न थका जु कान ।
पावनसूं थिरवा थका,सद्गुरु मारा बान ॥ १९ ॥
मैं मिरगा गुरु पारधी, शब्द लगायो बाण ।
चरणदास घायल गिरे, तनमन बींधे प्राण ॥ २० ॥
शब्दबाण मोहि मारिया,लगी कलेजे माहि ।
मार हँसे शुकदेवजी, वाकी छोडी नाहि ॥ २१ ॥
सद्गुरु शब्दी तेग है, लागत दो करत देहि ।

पीठि फेरि कायर भजै, शूरा सम्मुख लेहि ॥ २२ ॥
सद्गुरु शब्दी सेल है, सहै धमूका साध ।
कायर ऊपर जो चलै, तौ जावै बरबाद ॥ २३ ॥
सद्गुरु शब्दी तीर है, तनमन कीयो छेद ।
बेदरदी समुझै नहीं, विरही पावै भेद ॥ २४ ॥
सद्गुरु शब्दी लागिया, नावककासा तीर ।
कसकत है निकसत नहीं, होत प्रेमकी पीर ॥ २५ ॥
सद्गुरु शब्दी बाण है, अँग अँग डारै तोड ।
प्रेम खेत घायल गिरे, टाँका लगै न जोड ॥ २६ ॥
सद्गुरु शब्द सारिया, पूरा आया वार ।
प्रेमी जूझे खेतमें, लगा न राखा तार॥ २७ ॥
ऐसी मारी खैंचकर, लगी वार गइ पार ।
जिनका आपा ना रहा, भये रूप ततसार ॥ २८ ॥
सद्गुरु के मारे मुये, बहुरि न उपजै आय ।
चौरासी बन्धन छुटै, हरिपद पहुँचे जाय ॥ २९ ॥
सद्गुरुके वचनौं मुये, धन्य जिन्होंके भाग ।
त्रेगुणते ऊपर गये, जहां दोष नहिं राग ॥ ३० ॥
वचन लगा गुरुदेवका, छुटे राजके साज ।
हीरा मोती नारि सुत, गज घोडा अरु बाज ॥ ३१ ॥
वचन लगा गुरु ज्ञानका, रूखे लागे भोग ।
इन्द्रकि पदवी लौं उन्हें, चरणदास सब रोग ॥ ३२ ॥
सद्गुरु ढूँढा पाइये, नहीं सुहेला होय ।
शिष्य भी पूरा कोइ है, लानी माटी जोय ॥ ३३ ॥
जाति वरण कुल आश्रम, मान बडाई खोय ।
जब सद्गुरुके पग लगै, सांच शिष्य है सोय ॥ ३४ ॥

गुरुके आगे राखै माथा । कहै पाप दुख मेटो नाथा ॥
मैं आधीन तुम्हारो दासा । देहु आपने चरणन वासा ॥
यह तन मन लै भेंट चढायो । अपनी इच्छा कुछ न रहायो॥
जो चाहै सो तुमहीं करो । या भाँडमें जो कुछ भरो ॥
भावै धूप छाँहमें डारो । भावै बोरो भावै तारो ॥
गुण पौरुष कुछ बुधि नहिंमेरी। सबविधि शरणगही प्रभु तेरी॥
मैं चकई अरु तुम किय डोरा।मैंजो फिरूं सब तुम्हरे जोरा॥
मैं अब बैठा नाव तुम्हारी । आशानदीसुं करिये पारी ॥
भ्रमरजाल जगसूं मोहिं काढो । हाथ जोरि चरणदासा ठाढो॥

दोहा–गुरुके आगे जाय करि, ऐसे बोलै बोल ।
कछू कपट राखै नहीं, अर्ज करै मन खोल ॥ ३५ ॥
यह आपा तुमकूं दिया,जित चाहौ तित राख ।
चरणदास द्वारे परो, भावै झिडको लाख ॥ ३६ ॥

ऋद्धि सिद्धि फल कछू न चाऊं।जगतकामनाको नहिं लाऊं॥
और कामना मैं नहिं राखूं । रसना नाम तुम्हारो भाखूं ॥
राज भोगका मोहिं न सांसा । नहीं इन्द्र पदवी लौ आसा॥
चौरासीमें बहु दुख पायो । ताते शरण तिहारी आयो ॥
मुक्त होनकी मनमें आवे । आवागमनसों जीव डरावे ॥
रामभक्तिकी चाह हमारे । याते पकडे चरण तुम्हारे ॥
प्रेम प्रीतिमें हिरदा भीजे । यही दान दाता मोहिं दीजे ॥
अपना कीजे गहिये बाहीं । धरिये शिरपर हाथ गोसाईं ॥
चरणदासको लेहु उबारे । मैं अण्डा तुम सेवननारे ॥

दोहा–अंडा ज्यों आगे गिरै, जब गुरु लेवै सेइ ।
करै बराबर आपनी, शिष्यनिको निस्सन्देह ॥३७ ॥
अपना करि सेवन करै, तीनि भांति गुरुदेव ।

पंजा पक्षी कुंजवन, कछवा दृष्टि जु भेव ॥ ३८ ॥
जो वै बिछुरैं घडीभी, तो गंदा होय जाय ।
चरणदास यों कहत है, गुरुको राखु रिझाय ॥ ३९ ॥
पितुसों माता सौगुणा, सुतको राखै प्यार ।
मनसेती सेवन करै, तनसों डाट रु गार ॥ ४० ॥
जो देवैं दुरशीश भी, होहो लगै अशीश ।
सेवन करि समरथ कियो, उनपर वारौं शीश ॥ ४१ ॥
मातासों हरि सौगुना, जिनसे सौ गुरुदेव ।
प्यारे करैं औगुण हरैं, चरणदास शुकदेव ॥ ४२ ॥
काचे भांडेसों रहैं, ज्यों कुम्हारको नेह ।
भीतरसों रक्षा करै, बाहर चोटैं देह ॥ ४३ ॥
दृष्टि पडे गुरुदेवकी, देखत करैं निहाल ।
औरै गति पलटैं लवै, कागा होत मराल ॥ ४४ ॥
दया होय गुरुदेवकी, भजै मान अरु मैन ।
भोग वासना सब छुटैं, पावै अतिही चैन ॥ ४५ ॥
जब सद्गुरु किरपा करैं,खोलि दिखावै नैन ।
जग झूठा दीखन लगै, देह परेकी सैन ॥ ४६ ॥

अष्टपदी ।

गुरु विन और न जान मान मेरो कहो । चरणदास उपदेश विचारतही रहो ॥ वेदरूप गुरु होयके कथा सुनावई । पंडितको धरि रूप कि अरथ बतावई ॥ गुरु है शेप[१] महेश तोहिं चेतन करै । गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु होय खाली भरै॥ कल्प वृक्ष गुरुदेव मनोरथ सब सरै । कामधेनु गुरुदेव क्षुधा तृष्णा

---

१ शाप ।

हुवै॥गंगासम गुरु होय पाप सब धोवई॥शशधर सम गुरु होय तपन सब खोवई॥सूरजसम गुरु होय तिमिर सब ढेवई। पारब्रह्म गुरु होय मुक्तिपद देवई ॥गुरुहीको ध्यान नाम गुरुको जपों॥आपा दीजै भेंट पूजन गुरुही थपों॥समरथ श्री शुकदेव कहा महिमा करों । अस्तुति कही न जाय शीश चरणनधरों॥

दोहा—हरि रूठे कुछ डर नहीं, तूभी दे छिटकाय ।
गुरुको राखो शीशपर, सब विधि करैं सहाय॥ ४७ ॥

अष्टपदी ।

गुरुको तजि हरिसेव कभी नहिं कीजिये। वेमुखको नहिं ठौंर नरकमें दीजिये॥ गुरुनिंदक नहिं मुक्त गर्भ फिर आवई । चौंरासीलख भुक्ति महादुखपावई॥प्रथम करै गुरु देखि परखि चरणौं परे। उनकी धारन ध्यान टेक हरमें धरै ॥गुरुको रामहिं जान कृष्णसम जानियेगुरु नृसिंह अवतार जु वामन मानिये॥ गुरुको पूरण जान जु ईश्वर रूपही । सब कुछ गुरुको जान जु यह बात अनूपही ॥हरि गुरु एकहि जान यह निश्चय लाइये। दुविधाहीको बोझ जु वेग बगाइये ॥ धर्म पिता गुरु जान जु दृढता राखिये । लाज सकुचि करि कान ढीठता नाखिये॥मेरा यह उपदेश हियेमें धारियो।गुरु चरणन मन राखि सेव तन गारियो॥जो गुरु झिरकै लाख तौ मुख मोडियो । गुरुसों नेह लगाय सबनसों तोडियो।जो शिष्य सांचा होय तो आपा दीजियो।चरणदासकी सीख समझ कर लीजियो । मोको श्री शुकदेव यही समझाइयो। वेद पुराणनमाहिं जु योंही गाइयो॥

दोहा—गुरु अस्तुति कह कहि सके,चरणदास कह बुद्धि ।
भक्तोंकी अब कहत हौं, जो वे देवैं शुद्धि ॥ ४८ ॥

---

१ निगुरा ।

### भक्तमहिमा ।

भक्तनकी अस्तुति किये,तन मन हियो सिराय ।
कलिका मैल रहै नहीं,बुधि उज्ज्वल है जाय॥ ४९ ॥
साधुनकी सेवा करौ, चरणदास चित लाय ।
जनम मरण बंधन कटै जगत व्याधि छुटिजाय ॥५०॥

जो भक्तोंकी सेवा करै । यमके फन्दे नाहीं परै ॥
जिन साधोंका दर्शन देखा । तिनका यमसों रहा न लेखा ॥
जो भक्तनको शीश नवावै ।तन छूटै जब नहिं दुख पावै ॥
जो कोइ साधु संगमें रलै । जठर अग्निमें नाहीं जलै ॥
जो साधोंकी अस्तुति भाखै । भावै भक्ति प्रेमरस चाखै ॥
जो भक्तनसों प्रीति लगावै । वह निश्चय हरिको अपनावै ॥
जो भक्तोंकी वाणी गावै । समझै अर्थ परमपद पावै ॥
साधुसंग विन गति नहिं होनी ।क्यातपसीअरुक्या भयोमौनी ॥
चरणदास भक्तोंकी शरना । ह्वांई जीवन ह्वांई मरना ॥

### भक्तलक्षण ।

दोहा–भक्तिभाव निर्मल दिशा, संतोषी निर्वास ।
मन राखे नवधा विषे, और न दूजी आस ॥ ५१ ॥

दयावान दाता गुण पूरे । पैज धारणा वचनौ शूरे ॥
मुक्ति कामना फल नहिं चाहैं । ऋद्धि सिद्धि अरु त्यागैंलाहैं॥
हानि लाभ जिनके नहिं टोटा । वैरी मित्र खरा नहिं खोटा ॥
मानपमान कछू नहिं तिनके । दुखसुख एक बराबर जिनके ॥
शुभ अरु अशुभ कछू नहिंजानै । राव रंकको ना पहिचानै ॥
कंचन काच बराबर देखै । जग व्योहार कछू नहिं लेखै ॥

हार जीत नहिं वाद विवादा । सदा पवित्र समझ आगाधा ॥
हर्ष शोक जिनके नहिं कबहीं । लख चौरासी प्यारे सबहीं ॥
हिंसा अकस भाव नहिं दूजा । सब जीवनकी राखे पूजा ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । ऐसे लक्षण साधु कहावै ॥

दोहा—भक्तनकी पदवी बडी, इन्द्रहुसे अधिकाय ।
तीन लोकके सुख तजे, लीन्हो हरि अपनाय ॥५२॥
अनन्यभक्त निष्काम जो,करैं सोय चरणदास ।
चार मुक्ति वैकुण्ठलों, सबसे रहें निरास ॥५३॥

साधुमाहात्म्य ।

प्रभु अपने मुखसे कह्यो, साधू मेरी देह ।
उनके चरणनकी मुझे, प्यारी लागै खेह ॥५४॥
आठ सिद्धि वे लें नहीं, कनक कामिनी नाहिं ।
मेरे सँग लागे रहें, कभी न छोडे बाहिं ॥५५॥
सब तजिकर मोकों भजे, मोहीं सेती प्रीति ।
मैं भी उनके कर बिक्यो, यही जु मेरी रीति ॥५६॥
साधु हमारी आतमा, सबसे प्यारे मोहिं ।
नारद निश्चय कीजिये, साँच कहत हौं तोहिं ॥५७॥
जिनके कारण मैं रचौं, अद्भुत यह संसार ।
उनहींकी इच्छा धरूं, हर युगमें अवतार ॥५८॥
प्रेमीका ऋणियां रहौं, यही हमारो मूल ।
चारि मुक्त दइ ब्याजमें, दै न सकौं अब मूल ॥५९॥
सर्वस दीन्हो भक्तको, देख हमारो नेह ।
निर्गुणसों सगुण भयो, धरी पशूकी देह ॥६०॥
मेरे जन मोमें रहें, मैं भक्तनके माहिं ।
मेरे अरु सब सन्तके, कछु भी अन्तर नाहिं ॥६१॥

साधु सोवै तहँ सोय रहूं, भोजन सँगही जेवँ ।
जो वह गावै प्रेमसों, मैं हूं ताली देवँ ॥६२॥
मम भक्ता जित जित फिरै, गवनै लागा जावँ ।
जहां तहां रक्षा करौं, भक्तवत्सल मो नावँ ॥६३॥
भक्त हमारो पग धरै, जहां धरूं मैं हाथ ।
लारे लागोही फिरौं, कबहुँ न छोड़ूं साथ ॥६४॥
मोको वश कियो जो चहै, भक्तनकी करै सेव ।
उनमें ह्वैकर मैं मिलौं, करौं बहुतही हेव ॥६५॥
पृथ्वी पावन होत है, सबही तीरथ आदि ।
चरणदास हरि यों कहैं, चरण धरैं जब साधि ॥६६॥
जिनकी महिमा प्रभु करै, अपने मुखसों भाखि ।
तिनकी कौन बराबरी, वेद भरत है साखि ॥६७॥
जिनकी आशा करत हैं, स्वर्ग माहिं सब देव ।
कबहूं दर्शन पाय हैं, चरण कमलकी सेव ॥६८॥
अपने अपने लोकमें, सभी करैं उत्साह ।
साधू काया छोडकरि, गमन करै किस राह ॥६९॥
धनि नगरी धनि देश है, धनि पुर पट्टन गावँ ।
जहँ साधूजन उपजियो, ताके बलि बलि जावँ ॥७०॥
भगत जु आवैं जगतमें, परमारथके हेत ।
आप तरैं तारैं परा, मँडैं भजनके खेत ॥७१॥
भवसागरसों तारि करि, लै जावैं बहु जीव ।
साधू केवट रामके, पार मिलावैं पीव ॥७२॥
काम क्रोध मद लोभ हनि, गर्भ तजै जो साध ।
राम नाम हिरदै धरै, रोम रोम आराध ॥७३॥
साधू महिमा को कहै, शोभा अधिक अपार ।

रसना होय हजारसों, शेषहु जावै हार ॥ ७४ ॥
अन्यन भक्ति करि प्रेमसों, जीति लिये गोविन्द ।
चरणदास हो वश किये, पूरण परमानन्द ॥ ७५ ॥

सतसंगति महिमा ।

तपके वर्ष हजारहूं, सत्संगति घडि एक ।
तौभी सरवर ना करै, शुकदेव किया विवेक ॥ ७६ ॥

सत्संगति महिमा बड भाई । स्मृति वेद पुराणन गाई ॥
मुनि वशिष्ट कहो याही भेवा । साधु संगको तरसैं देवा ॥
साधु संगको नारद जानै । सो वह पिछलो जन्म पिछानै ॥
देखो संगतिकी अधिकाई । वालमीकि अरु शबरी गाई ॥
अजामील सतसंगति परिया । अनगिन पाप किये सब जरिया
सत्संगति बहु पतित उधारे । अधम सरीखे मुक्ति पधारे ॥
जाट जुलाहा अरु रैदासा । संगति साधु हुआ परकासा ॥
साधुनकी संगति मुक्ताई । चरणदास शुकदेव बताई ॥

दोहा—जब जब दर्शन राम दें, तब माँगों सतसंग ।
चाहों पदवी भक्तिकी, चढै सु नवधा रंग ॥ ७७ ॥

कुबजा सेना सदना नाई । बहुतक नीच भये उँचपाई ॥
जैसे ठौर ठौरको पानी । सुरसरि मिलि भो गंगा रानी ॥
तैसे काठ लोहको तारै । ऐसे संगति मिलि भव पारै ॥
जैसे पारस लोहा लागा । सो वह कंचन भयो सुभागा ॥
देवल तीरथ बहु मग धावै । साधुसंग बिन गति नहिं पावै ॥
ढाकापात पानके साथा । संगति मिलि गयो भूपन हाथा ॥
ज्यों गोविन्द संग गाई कुबरी । सुवाके संग गणिका उबरी ॥
हरिभगवानमें दीजै वासा । जन्म जन्म माँगे चरणदासा ॥

दोहा-ऊंची पदवी साधुकी, महिमा कही न जाय।
सुर नर मुनि जग भूपही,देखत रहे लजाय ॥ ७८ ॥

राग सारंग-करो नरहरी भक्तनको संग। दुख बिसरै सुख होय घनेरो तन मन पलटै अंग ॥ ह्वै निष्काम मिलौ सन्तनसों नाम पदारथ मंग। जिहि पाये सब पातक नाशैं उपजै ज्ञान तरंग॥ जो वे दया करै तेरे पर प्रेम पिलावैं भंग। जाके अमल दरश ह्वै हरिको नैनन आवै रंग॥उनके चरण शरणही लागो सेवा करो उमंग। चरणदास तिनको पग परशन आश करत है गंग ॥

दोहा-विन होनी हारि करिसकैं,होनी देहिं मिटाय।
चरणदास करु भक्तिही, आपा देहु उठाय ॥ ७९ ॥

हरि चितवै सो सांची बाता। औरनसों नहिं टूटै पाता ॥
जो कछु चाहा सो उन करई। अब चाहै सोभी सब सरई ॥
अग्नि माहिं तृण घास बचावै। घटमें सगरो सिंधु समावै ॥
पावक राखै पानी माहीं। जल राखै जहँ धरती नाहीं ॥
गिरिवर सागर माहिं तरावै। चाहै हलका काठ डुबावै ॥
सुइके नाके हस्ती काढै। मूल पांत बिन लकडी बाढै॥
नरकी छाती दूध निकासै। उपजावै वह खेत अकासै ॥
चाहै गूँगे वेद पढावैं। अँधरे आँखें खोलि दिखावैं॥
सब लायक सामरथ गुसाँई। चरणदास शुकदेव बताई ॥

दोहा-प्रभु चाहै सोई करै, ताकूं टोकै कौन।
देखि देखि अचरज रहा,चरणदास गहि मौन॥८०॥

महल पवनपर रचै मुरारी। अग्निके माहिं करै फुलवारी॥
चाहै विन बादल बरसावै।विन सूरज दिन करि दिखलावै॥

न्यारी भरै भरै निथरावै । जो चाहै सोइ प्रगटावै ॥
पाथर पानी करै बहावै । छिनमें सगरो सिंधु सुखावै ॥
चाहै जलका थल करि डारै । राईकूं परवत करि भारै ॥
रंकनकूं करै छत्तर धारी । चाहै भूपन देइ उजारी ॥
जो चाहै सो आपहि करै । औरनके शिर झूठे धरै ॥
चरणदास शुकदेव जनावै । सांचे गुणानुवाद जो गावै ॥

दोहा—यह अस्तुति करतारकी, जिन रचिया संसार ।
अद्भुत कौतुक करि रह्यो, लीला अगम अपार॥८१ ॥

उपजावै पालै विनशावै । अनगिन चन्द सूर दरशावै ॥
कोटिक अंड पलकमें करै । जब चाहै तब कुछ ना रहै ॥
जब फैलै तब रूप अनेका । जब समिटै तब एकहि एका॥
घटक बीजका खेलनहारा । एक बीजका सकल पसारा ॥
तासें बीज अनंतहि देखा । गिनूं कहांलौं रंग न रेखा ॥
ऐसे हरि आपा विस्तारा । कहत सुनत देखतहूं हारा ॥
अपरंपार पार नहिं पाऊं । अस्तुति करता मैं सकुचाऊं॥
समझि समझि मनमें रहि जाऊं। चरणदास हो शीश नवाऊं ॥

दोहा—लीलासिंधु अगाध गति,मोपै कही न जाय ।
चरणदास यों कहत है, शोचत गयो हिराय ॥ ८२ ॥

कोटिक ब्रह्मा अस्तुति करहीं । वेद कहत प्रभु परे परेहीं ॥
कोटिक शम्भु करै समाधा । जानि परै नहिं रूप अगाधा॥
कोटिक नारदसे यश गावैं ।गुण अगाध कछु अन्तनपावैं॥
कोटिक ध्यानी ध्यान लगावैं । हरिके सो कछु रूप न पावैं॥
कोटिक ज्ञानी कथैं बह ज्ञाना । समझ थकी उनहूं नहिं जाना॥
कोटिक शारद करै विचारा । बुद्धि थकी जब कहा अपारा॥
सुर नर मुनि वा भेद न लहिया॥शोचिशोचित्रकिरथकिरहिया॥

निरगुण सरगुण कहा न जावै । चरणदास शुकदेव सुनावै ॥

दोहा–चरणदास वा रूपकी, पटतर दई न जाइ ।
राम सरीखे राम हैं, और बताऊं काइ ॥ ८३ ॥

वाकी अस्तुति कहां बखानूं । जैसा वह तैसा नहिं जानूं ॥
बुधि विचार करि हारा ज्ञाना । अनभै थकी नाहिं पहिंचाना ॥
आदि न अंत मध्य नहिं जाका । दहिना बायाँ पीठ न आका ॥
हरा पीत पुनि श्वेत न काला । नारी पुरुष बूढा बाला ॥
रूप न रंग सिही नहिं मोटा । नया पुराना बडा न छोटा ॥
नाम रूप किरियासूं न्यारा । नहिं हलका नहिं कहिये भारा ॥
वानी चार पर निरवाना । काहू विधि वह जाय न जाना ॥
पुष्प गंध नादनतैं झीना । गुरु शुकदेव सुनाय जु दीना ॥

दोहा–कौन लखै को कहिसकै, अचरज अलख अभेव ।
ज्ञान ध्यान पहुँचै नहीं, निर्विकार निर्लेव ॥ ८४ ॥

सुनत अचम्भा मोकूं आया । जाके वचन रूप नहिं काया ॥
निराकार नहिं ना आकारा । नहिं अडोल नहिं डोलनहारा ॥
पांच तत्त्व त्रैगुणतें आगे । अद्भुत अचरज ध्यान न लागे ॥
नहिं परगट नहिं गुपन ठाऊं । समझसकूं नहिं थकि थकिजाऊं ॥
जैसो आगे मैं कहि आयो । फिर समझो वैसो नहिं पायो ॥
जो कुछ कहिया नाहीं नाहीं । सो सब देखा वाके माहीं ॥
सकल सर्वदा ह्वां पहिचानी । चरणदास शुकदेव बखानी ॥

दोहा–वामें गुण अनगिनत हैं, अपरंपार अगाध ।
देखौ परगटही भये, रूप नाम अरु नाद ॥ ८५ ॥

वृक्ष वीजका भेद वताऊं । भिन्न भिन्न परगट दिखलाऊं ॥
जो कोइ निरा वीजकूं बूझै । ताकूं वह निर्गुणही सूझै ॥
जव समझ तव सव गुणमाही । तामें डाल मूल फल छाहीं ॥

ऐसे पूरण ब्रह्म पिछानो । निराकार निर्गुण मत जानो ॥
वे निरगुण सरगुण ते न्यारे । निरगुण सरगुण नाम विचारे ॥
अकथ कथा कछु कथिय नजाई । जो भापू सोई सुरखाई ॥
कोई कहो सुनो मन आनो । वैसा नाहिं निश्चय करि जानो ॥
बड बड ऋषिमुनि पण्डित भारे । चरणदास सब खोजत हारे ॥

दोहा–यहि निरगुण सरगुण वही, वही दोइसे न्यार ।
जो था सो जाना नहीं, शोचा वारंवार ॥ ८६ ॥
अनंत सकल लीला अनंत, गुण अनंत बहु भाव ।
कौतुक रूप अनंत हैं, चरणदास बलि जाव ॥ ८७ ॥
नामभेद करिया अनंत, धर अनंत अवतार ।
बीस चार तिनमें अधिक, कहै शुकदेव विचार ॥ ८८ ॥
राम कृष्ण पूरण कला, चौबीसोमें होय ।
निरगुणसे सरगुण वही, भक्तों कारण दोय ॥ ८९ ॥

राग बिलावल ॥ अलख निरंजन अगम अपार । एक अनेक भेष बहु कीन्हें सुन्दर रचना रची सँवार ॥ निरगुण हरि सरगुण हो खेलो अचरज लीला करि विस्तार । अपनो चरित आपही देखे ऐसो अद्भुत कौतुक धार ॥ रूप वराह पकरि हिरण्याक्षहि धरती लाये ताहि सिधार । यक्षपुरुष अरु दत्तात्रेयी अरु श्रीवद्रीपतिही विचार ॥ सनत्कुमार ऋषभदेव ध्रुव वराह पृथु मच्छ कूर्म उदार । हयग्रीव अरु हंस रूपही महाबली नरसिंह बलधार ॥ हरि परगट है गजै छुटायो वामन कपिल सरस गुणसार । मन्वन्तर धन्वन्तर प्रगटे परशुराम रामचन्द्र सुगार । पूरण कलाईस तिहुँ पुरको कृष्ण प्रगट हो कंस पछार । वेदव्यास अरु बोध कल्की ये भये सब चौबीस अवतार ॥ युग युग माहिं आप परगट ह्वै दुष्ट दलन सन्तन रखवार ॥ चरणदास शुकदेव श्यामकी बाँकी गतिको वार न पार ॥

दोहा-एक एकसों आगरो, महिमा कही न जाय।
अनंत रँगीले महलमें, आपहि बैठे आय ॥ ९० ॥

अनन्त रँगीले महल बनाये। तामें आप रामहीं आये ॥
राप रूप गुण न्यारे न्यारे। गिनत शारदा गणपति हारे ॥
मन्दिर रूप बहुत छबि सोहै। जहाँ तहाँ मेरा मन मोहै ॥
हरियर श्वेत पीत अरु लाले। पिसताकी ऊदै अरु काले ॥
वेलदार लहरा छबि बूटे। चीतमलाले और तिखूंटे ॥
बूँद बूँद अवगंड दारे। जानौ चित्तर हाथ सँवारे ॥
रँगा रंग बहु चित्तरकारी। कहूं कहाँलौ मो बुधि हारी ॥
दो पायें अरु पुनि चौपाये। बहु पाये कछु कहे न जाये ॥
वृक्षरूप अरु पक्षी नाना। कीट पतंगा थिर चर जाना ॥
जलमें मीन बहुत परकारे। चरणदास शुकदेव विचारे ॥

दोहा-थावर जंगम चर अचर, बहुत छबीली भाँति।
राजस तामस सात्विकी, वहु अधीन बहुक्रांति ॥ ९१ ॥
वानर नर असुरा सुरा, यक्षगण गन्धर्व प्रेत।
सबही महल बराबरी, सबही सेती हेत ॥ ९२ ॥

खिरकी नैन चावसों खोलै। मुख द्वारे नानाविधि बोलै ॥
बहुत भाँतिकी नाना वानी। चतुर कूट भोली अरु यानी ॥
कहिं अबोल बोल न आवै। पै सब महलन वह दरशावै ॥
साक्षात हरिहीकूं जानै। भवन भवनमें ताहि पिछानै ॥
काया क्षेतर ज्ञानी जानै। क्षेत्रज्ञ आतम रूप बखानै ॥
देही क्षर गीतामें गायो। अक्षर जीव खोल दिखलायो ॥
काया मन्दिर आप रमायो। ताते राम नाम धरवायो ॥
देह सँयोग राम कहलायो। चरणदास शुकदेव बतायो ॥

दोहा—सूरज चींटी आदि दे, लघु दीरघके माहिं ।
सबमें पोई आतमा, बाहर कोई नाहिं ॥ १३ ॥
छोटे भांडेमें करै, छोटाही परकाश ।
बड जु भांडेमें करै, ज्यादा होय उकाश ॥ १४ ॥
ज्ञानवन्तकू में दियो, दीपकको दृष्टान्त ।
जो वह समझै चावसूं, मिटै तिमिर अरु भ्रान्त॥१५॥
जैसेही है पिण्डसें, तैसेही ब्रह्मण्ड ।
भीतर बाहर रवि रह्यो, सात द्वीप नव खण्ड ॥१६॥

आप लखेन वाकूं पावै । जो पै सद्गुरु भेद बतावै ॥
ज्ञान दृष्टी संती दरशावै । आपा मिटै ब्रह्म ठहरावै ॥
ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय जहँ नाहीं । ध्याता ध्यान ध्येय मिटि जाहीं॥
जब हो एक दूसरा नासे । बन्ध मुकतके रहै न साँसे ॥
मृतक अवस्था जीवत आवै । करमरहित अस्थिर गति पावै॥
नव कोइ मित्तर वैरी नाहीं । पाप पुण्यकी परै न छाहीं ॥
हर्ष शोक सम होजा दोऊ । रक्षा करो कि मारो कोऊ ॥
कोउ हाथसें भोजन देजा । कोउ छीनकर योंहीं लेजा ॥
दोनों एक बराबर वाके । जग व्योहार कछू नहिं जाके ॥
हरि बिन और पिछान न कोई । तिनके इच्छा रही न दोई ॥
ज्ञानदिशा ऐसे करि गाई । चरणदास शुकदेव बताई ॥

दोहा—ज्ञानदिशा आवन कठिन, विरला जानै कोय ।
ज्ञानदिशा जब जानिये, जीवत मृत्यक दोय ॥ १७ ॥

वाचक ज्ञानी ।

वाचक ज्ञानी बहुतक देखे । ज्ञानी लक्ष कोइ लेखे लेखे ॥
ज्ञानी बिगडे विषयी होई । कथा एक अरु चाले दोई ॥

बुरे करम औगुण चित लावै । भले करम गुण सब बिसरावै॥
विषय वासनाके रंग रातो । झूँठ कपट छलबल मदमातो॥
इन्द्री वश मन हाथ न आवै । पाप करनसों नाहिं डरावै ॥
ज्ञान कथै अरु वाद बढावै । रहन गहनका भेद न पावै ॥
महत्वतका आवन भारी । चरणदास शुकदेव विचारी ॥

दोहा—उनतीसों लक्षण लिये, भक्त सहतहो ज्ञान ।
ज्ञानदिशा जब आय है, करै आतमा ध्यान ॥९८॥

नवधाभक्ति ।

भक्तिदिशा अब कहत है, बिसरे आपा आप ।
चरणदास यों कहत है, छूटैं तीनों ताप ॥ ९९ ॥

अष्टपदी ।

नवधाभक्ति सँमारि अंग नौ जानिले। श्रवणन चिंतन और कीर्तन मानिले॥सुमिरण वन्दन ध्यान और पूजा करो।प्रभुसों प्रीति लगाय सुरति चरणन धरो॥ होकरि दासहि भाव साध संगति रलो।भक्तनकी कर सेव यही मत है भलो॥आपा अर्पण देय धीर्य्य दृढता गहौ ॥ क्षमाशील सन्तोष दया धारे रहौ ॥ यह जो मैंने कहा वेदका फूल है।योग ज्ञान वैराग्य सबनका मूल है॥प्रेमाभक्तिका तात पात तीनौं नसैं।धर्म अर्थ काम मोक्ष सकल तामें वसैं॥जो राखैं मनमाहि विवेक विचारसों।पावै पद निर्वाण बचै जग भारसों॥कहै गुरु शुकदेव मायाके भावसों । चरणहिं दासा होय सुनौं बहु चावसों ॥

राग सोरठ वा गौरी वा आसावरी ।

साधो नवधा भक्ति करो रे । कलियुगमें यह बडो पदारथ गहि गहि ताहि तरो रे।जे यासों भये शिरोमणि तिनको नाम

सुनाऊं । यहँ कथा विस्तारै कहूं तो यातें सूक्षम गाऊं ॥ जन प्रह्लाद तरो सुमिरणतें वंदनसों अक्रूर।चरणकमलकी सेवासेती लक्ष्मी रहत हजूर ॥ चन्दन चर्चतहूं पृथुराजा उतरो भवजल पार । बलि राजा तन अर्पण कीन्हों सदा रहे हरिद्वार॥परम-दास हनुमत हूं हवो उत्तम पदवी पाई।सखा सुभाव तरो है अर्जुन ताकी महिमा गाई ॥ मुक्त भयो है परीक्षित राजा सुन भागवत पुराना॥ श्रीशुकदेव मुनीश्वर वक्ता हुए रूप भगवाना ॥ ज्ञान योग वैराग्य सबनसों प्रेम प्रीति है न्यारी । चरणदासने गुरु किरपासों सांची बात विचारी ॥

प्रेमाभक्ति ।

दोहा--नवो अंगके साधते, उपजै प्रेम अनूप ।
रणजीता यों जानिये, सब धर्मनका भूप ॥१००॥

सब मत अधिकी प्रेम बतावें । योग युगतसूं बडा दिखावें ॥
प्रेमहिसूं उपज वैरागा । प्रेमहिसूं उपजे सब त्यागा ॥
प्रेम भक्तिसूं उपजे ज्ञाना । होय चांदना मिटे अज्ञाना ॥
दुर्लभ प्रेम जु हाथ न आवे । हरि किरपा करि दे तो पावे॥
प्रेम प्रीतिके वश भगवाना । सकल शास्तर कियो बखाना॥
किसी भक्ति हिय प्रेम जु जागे । तो हरि दरशत रहै जु आगे ॥
प्रेमहिसूं जगकूं उपजावै । निर्गुन सर्गुन हो हो आवै ॥
सकल शिरोमणि प्रेमहि जानो । चरणदास निहचै मन आनो॥

दोहा-प्रेम बराबर योग ना, प्रेम बराबर ज्ञान ।
प्रेम भक्ति बिन साधिबो,सबही थोथा ध्यान॥१०१॥
प्रेम छुटावै जगतकूं, प्रेम मिलावै राम ।
प्रेम करै गति औरही, लै पहुँचै हरिधाम ॥१०२॥

अष्टपदी ।

वह करै काग सूं हंसा । एक रहै पियाका संसा ॥
वह जात बरन कुल खोवै । अरु बीज विरहका बोवै ॥
जो प्रेम तनक चित आवै । वह औगुण सबै नशावै ॥
प्रेमलता जब लहरै । मन बिना योगही ठहरै ॥
कोई चतुर खिलारी खेलै । वह प्रेम पियाला झेलै ॥
जो धडपै शीश न राखै । सोई प्रेम पियाला चाखै ॥
तन मनसूं जा बौराई । वह रहै ध्यान लौलाई ॥
वह पहुँच हरिके पासा । यों कहैं चरणही दासा ॥

दोहा–प्रेमीजन हरि आपा हो, आपा निकसै नाहिं ।
गुरु शुकदेव दिखावई,समझ देखि मनमाहिं ॥१०३॥
हिरदे माहीं प्रेम जो, नैनो झलके आय ।
सोइ छका हरिरस पगा,वा पग परसो धाय ॥१०४॥
गद्गद वाणी कंठमें, आंशू टपके नैन ।
वहतो विरहिनि रामकी, तलफत है दिनरैन ॥१०५॥
हायहाय हरि कब मिलै, छाती फाटी जाय ।
ऐसा दिन कब होयगा,दर्शन करै अघाय ॥१०६॥
बिन दर्शन कल ना पडै, मनुआँ धरै न धीर ।
चरणदासकी श्याम बिन, कौन मिटावै पीर ॥१०७॥
पीव बिना तो जीवना, जगमें भारी जान ।
पिया मिलै तो जीवना, नहीं तौ छूटै प्रान॥१०८॥
मुख पियरो सूखै अधर,आँखैं खरी उदास ।
आहजु निकसै दुख भरी, गहिरे लेत उसाँस॥१०९॥
वह विरहिनि बौरी भई,जानता ना कोइ भेद ।
अगिनि बैर हियरा जरै, भये कलेजे छेद ॥११०॥

अपने वश वह ना रही, फँसी विरहके जाल ।
चरणदास रोवत रहै,सुमिरि सुमिरि गुण ख्याल॥१११॥
बातनको विरहा लगो, ज्यों घुन लागो दार ।
दिनदिन पीरी होत है, पिया न बूझै सार ॥११२॥
वे नहिं बूझैं सारही, विरहिन कौन हवाल ।
जब सुधि आवै लालकी,चुभत कलेजे साल ॥११३॥
पीव चहो कै मत चहो, वह तौ पीकी दास ।
पियकै रंग राती रहै, जग सो होय उदास ॥११४॥
पीपी करते दिन गया, रैनि गई पिय ध्यान ।
विरहिनिके सहजैं सधै, भक्तियोग अरु ज्ञान॥११५॥
विरहिनिके एक राम बिन,और न कोई मीत ।
आठ पहर साठौ घडी,पिया मिलनकी चीत ॥११६॥
जाप करै तौ पीवका, ध्यान करै तौ पीव ।
पीव विरहिनिका जीव है,जी विरहिनिका पीव॥११७॥

इति भक्तिपदार्थ सम्पूर्ण ।

## अथ चारौंयुग वर्णन ।

सतयुग ।

कुंडलिया॥सतयुग सांचा बोलते,परमहंसको ध्यान । सत बाही सत राखते,सत नहिं देते जान॥सत नहिं देते जान प्रान जौंपे तजि देही । निश्चय होती मुक्ति, दरशते रामसनेही ॥ शुकदेव कही चरणदास सों अबहीं सतयुग जान । संत बोलै सतसों रहो, सतकी गहिये आन ॥ १ ॥

त्रेता ।

त्रेतामें तप साधते, आसन संयम धार। पांचौ इन्द्री रोकते जब मन जाता हार॥जब मन जाता हार खैंचि अनहदमें धरते। कै अपनोही इष्ट ध्यान ताहीको धरते।आप विसर्जन होय मुक्ति निश्चय कर पाते।चरणदास शुकदेव तपस्या चाल दिखाते२

द्वापर ।

द्वापर पूजा वंदना,प्रेमसहित जो होय।कहा राजसी मानसी पूजा कहिये दोय॥पूजा कहिये दोय जैसी जाके मन भावै। धारै नेम अचार,अंत नाचित्त डुलावै॥हित कारि पूजा कीजिये द्वापरको यह भेव।चरणदास निश्चय करो।कहिया श्रीशुकदेव३

कलियुग ।

कलियुग हरिगुण गाइये,गुणवादही सार।भजन करो मन मगनह्वै,भय अरु सकुच निवार॥भय अरु सकुच निवार,जाति कुल गर्व बहावो।साज बाज लै संग,रामको गरिया झावो। कथा कीरतनसों तरै,कलियुगकेही माहिं॥शुकदेव कहि चरणदाससों तारौ गहि गहि बांहिं ॥ ४ ॥

इति चारोंयुग वर्णन सम्पूर्ण ।

## अथ अंगवर्णन ।



नाम महिमा ।

दोहा–प्रणऊं श्रीशुकदेवकूं, वाणी कहूं अगाध ।
महिमा गाऊं नामकी,सब मिलि सुनियो साध॥११८॥
ज्योंकी त्योंहीं कहत हूं, कछू न राखूं भेद ।
निश्चय आवै नामकी, छूटै सबही खेद ॥११९॥

जन्म मरण यमदंडके, गर्भ वासकी त्रास ।
नाम रटे सबही छुटें, लख चौरासी गास॥१२०॥

कई वार जो यज्ञ करि, योग करै चित लाय ।
चरणदास कहैं नाम बिन, सभी अफल ह्वैजाय॥१२१॥

अष्ट धातुमें गुण नहीं, जो पारस के माहिं ।
तप तीरथ व्रत साधना, राम नाम सम नाहिं ॥१२२॥
ज्यों सेमरका सेवना, ज्यों लोभीका धर्म्म ।
अन्न बिना तुस कूटना, नाम बिना यों कर्म्म १२३॥
छोड सबही वासना, हो बैठे निष्काम ।
चरणकमलमें चित धरै, सुमिरै रामहि राम॥१२४॥
ऐस है जब संत हो, तब रीझै करतार ।
दर्शन दे अपना करै, कभी न छोडै लार ॥१२५॥
चार वेद किये व्यासने, अर्थ विचार विचार ।
तामें निकसी भक्तिही, राम नाम ततसार ॥१२६॥
जिन कहिया शुकदेवकूं ,सुनिया प्रेम प्रतीति ।
तिन जगमें परगट कियो, जैसी चाहिये रीति॥१२७॥
ब्रह्महत्या अरु नारिकी, बालक हत्या होय ।
राम नाम जो मन बसै, सबकूं डारै खोय ॥१२८॥
हिय आवत जग दुख टरै,कंठ आय अघ जाय ।
मुखमूं बोल आयकरि, ताकी कौन चलाय ॥१२९॥
एसाहो हरिनामही, मोहिं रामकी सौंहिं ।
जाकूं होवै परखही, सो समझे क्यों लोहिं ॥१३०॥
बिन समझे पातक नशै, समझ जपै हो मुक्ति ।
चरणदास यों कहत हैं, जो कोइ जानै युक्ति ॥१३१॥

नामहिं लै जल पीजिये, नामहिं लेकर खाह ।
नामहिं लेकरि बैठिये नामहिं लै चल राह ॥१३२॥

जबलग जागै राम कहु, तन मनसूं यहि चीत ।
चरणदास यों कहत हैं,हरि बिन और न मीत॥१३३॥

तेरा तौ कोई है नहीं, मात पिता सुत नार ।
तातै सुमिरौ रामकूं, हे मन बारम्बार ॥१३४॥

जिहि कारण भटकत फिरै,घर घर करत सलाम।
तेरे तो वे हैं नहीं, ये मन सुमिरौ राम॥१३५॥

जीवतही स्वारथ लगै, मूये देह जराय ।
ऐ मन सुमिरो रामकूं, धोखे काहि पराय ॥१३६॥

हाथी घोडे धन घना, चन्द्रमुखी बहु नार ।
नाम बिना यमलोकमें, पावै दुःख अपार ॥१३७॥
जबलग जीवै राम कहु, रामहिं सेती नेह ।
जीव मिलैगो राममें, पडी रहैगी देह ॥१३८॥
अचरज साधन नामका, भक्तियोगका जीव ।
जैसे दूध जमायके, मथि करि काढा घीव ॥१३९॥
कु०-आठ मास मुखसूं जपै,सोला मास कँठ जाप ॥
बत्तिस मास हिरदै जपै, तनमें रहै न पाप ॥
तनमें रहै न पाप, भक्तिका उपजै पौधा ॥
मन रुक जावै जहां, अपरबल कहिये योधा ॥
शुकदेव कही चरणदाससूं, यही भेद ततसार ॥
बहुरू आवै नाभिमें, ताका कहूँ विचार ॥
दोह-पांच बरष जपनाभिसों, रगरग बोले राम ॥
देह जीव निज भक्त हो, पहुँचे हरिके धाम ॥१४०॥

त्रिकुटीमें जप रामकूं, जहाँ उजाला होय ।
स्वासा माहीं जपेते, द्विविधा रहे न कोय ॥१४१॥
गगन मँडलमें जाप करि, जित है दशवां द्वार ।
चरणदास यों कहत हैं, सो पहुँचै हरिदरबार॥१४२॥
नासा अग्र जाप करि, देखै नूर अगाध ।
बहुतक अचरज अरु खुलै, चरणदास कहे साध१४३॥
नाम उठाकर नाभिसूं, गगन माहिं लै जाय ।
जहाँ होय परकाशही, शुकदेव दिया बताय ॥१४४॥
मनही मनमें जाप करि, दर्पण उज्ज्वल होय ।
दर्शन होवे रामका, तिमिर जाय सब खोय ॥१४५॥
कूक कूक कर नाम जप, छुटै सात अरु पांच ।
जासों मन ठहरा रहे, चरणदास कहें सांच ॥१४६॥
सुरत माहिं जो जप करै, तनसूं न्यारा जौन ।
मिलै सच्चिदानन्दमें, गहै रहे जो मौन ॥१४७॥
सकल शिरोमणि नाम है, सब धर्मनके माहिं ।
अनन्य भक्त वहि जानिये, सुमिरण भूलै नाहिं१४८॥
आन धरम मानै नहीं, आन देव नहिं ध्यान ।
ऐसे भक्त अनन्यकूं, कोई पावे जान ॥१४९॥
पतिव्रता वह जानिये, आज्ञा करै न भंग ।
पिय अपनेके रँग रतै, और न सूने ढंग ॥ १५० ॥
अपने पियकूं सेइये, आन पुरुष तजि देह ।
पर घर नेह निवारिये, रहिये अपने गेह ॥१५१॥
आज्ञाकारी पीवकी, रहै पियाके संग ।
तन मनसूं सेवा करै, और न दूजो रंग ॥१५२॥
रंग होय तौ पीवको, आन पुरुष विष रूप ।

छाहँ बुरी परघरनकी, अपनी भली जु धूप ॥१५३॥
अपने घरका दुख भला,परघरका सुख छार ।
ऐसे जानै कुलवधू, सो सतवन्ती नार ॥१५४॥

पतिकी ओर निहारिये, औरनसे कह काम ।
सबै देवता छोडकरि, जपिये हरिका नाम ॥१५५॥

खसम तुम्हारो रामहै,इत उत झँख मत मारि ।
चरणदास यों कहत हैं,यही धारणा धारि ॥१५६॥
यह शिर नवै तो रामकूं, नाहीं गिरियो टूट ।
आन देव नहिं परसिये,यह तन जावो छूट ॥१५७॥
पतिव्रताको व्रत गहौ,व्यभिचारिणि अँग टार ।
पति पावै सब दुख नशैं, पावै सुक्ख अपार ॥१५८॥
जब तू जानैं पीवही, वह अपनो करिलेइ ।
परम धाममें राखिकरि, बाँह पकरि सुख देह ॥१५९॥
यही सिखाये देतहूं, धारो हिरदय माहिं ।
ऐसा पौधा बोइये, ताकी बैठो छाहिं ॥१६०॥
सतवादी सतसूं रहो, सतही मुखसूं बोल ।
एक ओर हरिनाम रख, एक ओर जग तोल ॥१६१॥
सभी निचोरे कहतहूं, भक्ति करी निष्काम ।
कोटि तपस्या यही है, मुखसूं कहिये राम ॥१६२॥
रामनाम मुखसूं कहै, रामनाम सुन कान ।
रोम रोम हरिकूं रटो, ऐसी गहिये बान ॥१६३॥
विद्या माहिं वाद है, तपके माहीं ऋद्धि ।
राम नाममें मुक्ति है, योगमाहिं यों सिद्धि ॥१६४॥
तातें त्यागौ वासना, राखो रामहिं नाम ।
कोटि बन्ध छुटि जायँगे,पहुँचौ हरिके धाम ॥१६५॥

राम नाममें यं सर्वे, ऋद्धि सिद्धि औं मोक्ष ।
ऐसा इष्ट सँभारिये, चरणदास कहि सोक्ष ॥१६६॥
जाका किया सब बना, सात द्वीप नवखण्ड ।
चरणदास यों कहत हैं, तीन लोक ब्रह्मण्ड ॥१६७॥
तब कारण सब कुछ किया, नाना विधि सुख दीन ।
तैं वाकूं जाना नहीं, नाम न कबहूं लीन ॥१६८॥
अब कै औसर फिरि भयो, पाई मानुष देह ।

चरणदास यों कहत हैं, राम नामहीं लेह ॥१६९॥

राग केदारा॥सुनो भाई नामकी महिमा॥मुक्ति चारों सिद्धि आठों बसत हैं तहँमा॥वाल्मीक सो वनको वासी किये थे जिन पाप॥भयो है सब ऋषि शिरोमणि जपो उलटो जाप॥गणिकासी अति महापापिन सो पढावत कीर । नामके परतापसेती कियो हरि पुर सीर॥अजामीलसे पतित कामी वेश्यासों रति कीन॥ चढि विमाने गयो सुरपुर नाम सुत हित लीन॥और बहुतेपतित तारे गिने कापै जाहि॥दान जपतप योग संयम नाम समतुल नाहि॥व्यास नारद शिव ब्रह्मादिक रटत जाकूं शेष । गुरु शुकदेव नामको चरणदासकूं उपदेश ॥

कवित्त ॥ नामके प्रताप नन्दलाल आप भये प्रभु, नामके प्रताप सुत दशरथको कहायोहै ।नामके प्रताप पैज राखी प्रहलादजूकी, नामके प्रताप दौरो द्वारकासूं धायो है ॥ नामके प्रतापकी न महिमा मोपै कहीजात,नामके प्रताप सब सन्तन सहायो है॥सोई नाम श्वास अब आस लगो चरणदाससोई,नाम चार वेद विमल विमल गायोहै॥ नामके प्रताप शबरी सुरनतें सरस करी, नामके प्रताप अधम लोककूं पठायो है । नामके

प्रताप अजामीलकूं विमान आयो, नामके प्रताप गज ग्राहसू छुटायो है ॥ नामके प्रताप सब दीननको दुःख हरो, नामको प्रताप शुकदेवजी हृढायो है ॥ सोई नाम वास अब आस लगो चरणदास, सोई नाम चारवेद विमल विमल गायो है ॥

पंचप्रेतवर्णन ।

दोहा–नाम अंग महिमा अधिक, मोपै कही न जाय ।
पांच प्रेत अब कहतहूं, जाकूं सुनि चितलाय ॥१७०॥
योग तपस्या भक्तिकूं, ज्ञान बिगाडन पांच ।
जीवत दुख दै जगतमें, मुये नरक दै आंच ॥१७१॥
काम क्रोध मोह लोभसे, और पांचवाँ गर्व्व ।
राज करै वसुधा विषे, इन वश कीने सर्व्व ॥१७२॥

कामवर्णन ।

काम बली वर्णन करूं, जिन मारे बलवन्त ।
जाका वकसी नारि है, जीते गुणी महन्त ॥१७३॥

नारीवर्णन ।

राग सोरठा ॥साधो नारि सबल रे भाई । नहिं मानै राम दुहाई॥बांदर ज्यों पकरि नचावै । हरिजीसूं नेह छुडावै ॥ दया धर्म सब खोवै।जब नैन कजल भरि जोवै॥जिनका चित चोरा रांडी । तिनकी जग थू थू भांडी ॥उन सबही सरवस खोया । नरशीश पकरि करि रोया॥ जनम पदारथ छीना । स्याहीका टीका दीना॥दोनों मुखसों खाया।फिर फिरकै गरभ दिखाया॥ काम कटक मैं सूरी।वह साँवत कहिये पूरी ॥ बडे बडे योधा मारे।अरु बहुतक शूर पछारे ॥ गुरु शुकदेव बतावै । बटमारन तोहिं दिखावै॥चरणदास यह जानौ।तुम छलबल कलापिछानौ॥

नारी नेहरि सुमिरणमूं खोये।राजा परजा मुंडत चुंडत नैन-कटाक्षन सोहै॥गाती चूनर चटक मटकले भूषण काजल सांचे। मुख मुसकावे मधुरी वानी प्यार प्रीति कर वांचे॥ बहुतनको उन योग छुटायो बहुतनका तप छीनों। बहुतनकी उन भक्ति बिगारी अंग विषय रस दीनों॥बँधुवा करि बहु नाच नचायो फंदा मोह लगायो।याते सावधानही रहियो मैं तुमकूं समुझायो ॥ गुरु शुकदेव बतावैं साधो निश्चय ठगिनी जानो । चरणदास कहै हाथ न आवो नीके ताहि पिछानो ॥

साधो पर तिरियामूं डरियें । जाके दरश परशके कीये जीवत नरकमें परियें ॥ गौतम घरनी सुन्दरि सुनिके इंद्रासन तजि आयो।जो गति भई जगतमें जानी भलो कलंक लगायो ॥ शृङ्गी ऋषि वनमें तप कीन्हो सुरपति देखि डरायो । रंभा भेज हरो सत जाको सबही सेज सिरायो॥दैवत देवत नर जो हूये नारी देख लुभायो।ताको फल ऐसोही पायो अजहूं कुयश सुनाये॥ चरणदास शुकदेव गुरूने दे उपदेश बचाये।यती सती कोइ हाथ न आयो कामी पकरि नचाये ॥

अरे नर परनारी मत तक रे । जिनजिन ओर तको डापनकी बहुतनकूं गई भख रे ॥ दूध आकको पात कटइया झाल अँगनकी जानो ।सिंह मुछारे विषकारेको ऐसे ताहि पिछानो॥ खानि नरककी अतिदुखदाई चौरासी भरमावे । जनम जनमकूं दाग लगावे हरि गुरु तुरत छुटावे॥जगमें फिर फिर महिमा खोवे राख तन मन मैला। चरणदास शुकदेव चितावे सुमिरो राम सुहेला ॥

दोहा—नर नारी सब चेतियो, दीन्हों प्रगट दिखाय ।
पर तिरिया पर पुरुषहो, भोग नरकको जाय१७४॥

पर नारी कै आपनी, दोनों बुरी बलाय ।
घर बाहरकी आग ज्यों,देवै हाथ जलाय ॥१७५॥

कामजीतन उपाय ।

चटक मटक सब छोडदे,देही रूप बिगार ।
देख न कोई रीझि हैं, ना होवै लगवार ॥१७६॥
यही ढाल है जगतकी,लगै न शस्तर काम ।
आठ अंग हैं कामके, तासूं रहु निष्काम ॥१७७॥
काम कानमें आय करि,फिर आवत है नैन ।
बहुरि हियेमें आय करि,लगै बहुत दुख दैन॥१७८॥
वह काम बुरा रे भाई । सब देवै तन बौराई ॥
पंचों में नाक कटावै । वह जूती मार दिलावै ॥
मुहँ काला गधे चढावै । बहु लोक तमाशे आवै ॥
झिडका ज्यों डोलै कूता । सबहीके मनकूं ऊता ॥
कोइ नीके मुख नहिं बोलै । शरमिंदा हो जगमें डोलै ॥
वह जीवत नरक मझारी । सुन चेतौ नर अरु नारी ॥
काम अंग तजि दीजै । सतसंगतिही मारि लीजै ॥
कहैं स्वामि चरणहीं दासा । हरि भक्तनमें कर वासा ॥
दोहा-तन मन जारै कामहीं, चित करै डावाँडोल ।
धरम करम सब खोयकै,रहै आप हिय खोल॥१७९॥
वह दया क्षमा को मारै । जत सतको पकरि पछारै ॥
शुचि नेमको दूरि कढावै । मुख ऊपर धूरि उडावै ॥
जग भीतर महिमा खोवै । पापोंकी माला पोवै ॥
वह धीरज नाहीं राखै । वह मुखसों झूंठी भाखै ॥
वह चाल चलै विपरीता । करि विषय भोगकी चीता ॥
काम बली जहँ आवै । अरु बहुतक औगुण लावै ॥

यह मन खोटका पूरा । कोइ जीते गुरुमुख शूरा ॥
साधु भक्त वही गुनियां । जिन काम दुष्टको हनियां ॥
चेत कही शुकदेवा । सब चरणदास सुनि लेवा ॥

दोहा—सुनिके जो चितमें धरै, फेरि चलै वह चाल ।
खाँडा पकरै शीलका, काम हनै ततकाल ॥१८०॥

अथ क्रोधअंग ।

दोहा—क्रोध महा चण्डाल है, जानत है सब कोय ॥
जाके अँग वर्णन करूं, सुनियो सुरति समोय॥१८१॥

क्रोधभूतके चरित सुनाऊं । भिन्न भिन्न परगट दिखलाऊं॥
क्रोध भूत जब तापर आवै । तनमनकी सब सुधि बिसरावै॥
नैना लाल वदन सब कारो । रोम रोम व्यापो हत्यारो ॥
महा चण्डाल नीच अति घोरी॥अति विपरीत बुद्धिकरि ओरी॥
अपने हाथ आपको मारै । अपने कपडे आपहि फारै ॥
मुहडे झाग मरोडे हाथा । कहै बहकती फूहर बाता ॥
हांफै बहुत आपको गाली । जेंवत आवै पटकै थाली ॥
कबहुँ शस्त्रसों मारन लागे । कबहूं कूँये पडने भागै ॥
भली कहै तेहि भोग सुनावै । बुरे भलेपर ईंट चलावै ॥
सबल देख शीला होजावै । निबल देख बहु दुन्दि मचावै॥
याका यतन करो मनभावै । चरणदास शुकदेव बतावै ॥

दोहा—जिहि घट आवै धूमकूं, करै बहुतही ख्वार ।
पति खोवै बुधिकूं हतै, कहा पुरुष कहा नारि ॥१८२॥

यह बुद्धि भ्रष्ट करि डारै । वह मारहि मार पुकारै ॥
यह सब तनहिंसा छावै । कहिं दया न रहने पावै ॥
वह गुरुसे बोलै बेंडा । साधोंसे डोलै एंडा ॥

वह हरिसूं नेह छुटावै । वह नरक माहिं ले जावै ॥
वह आतमघाती जानौ । वह महा मूढ पहिचानौ ॥
सौंटोंकी मार दिलावै । कबहूंके शीश कटावै ॥
वह नीच कभी ना कहिये । ऐसे सूं डरता रहिये ॥
वह निकट न आवन दीजै । अरु क्षमा अंकभर लीजै ॥
जव क्षमा आय किया थाना । तब सबही क्रोध हिराना ॥
कहे गुरु शुकदेव खिलारी । सुनु चरणदास उपकारी ॥

अथ मोहअंग ।

दोहा—क्रोध अंग पूरो कियो, कहूं मोहका अङ्ग ।
जाहि लगै दुखदे घना, कबहूं छोडे सङ्ग ॥१८३॥
माया मोह बिछाइया, जाल सँभारि सँभारि ।
आय आय तामें फँसे, बहुत पुरुष बहु नारि ॥१८४॥
फँसे आयकारि चावसूं, लेन गया नहिं कोय ।
चरणदास यों कहत हैं, पछिताये कहा होय ॥१८५॥
छूटि सकै नहिं जालसूं, मिरगा यों अकुलाय ।
कूद कूद निकसो चहै, ज्यों ज्यों उरझत जाय ॥१८६॥
मोह शहतसम जानिये, मक्खी सम जियजान ।
लालच लागै जित फँसे, शीश धुनै अज्ञान ॥१८७॥
वन्दीखानो भवन है, सब दिन धंधे जार ।
मोह छुटावै रामसूं, डारै नरक मँझार ॥१८८॥
लख चौरासी योनिमें, फिर वह भरमें जाय ।
हाँसे निकसै कठिनसूं, कबहूं औसर पाय ॥१८९॥

तिरिया मोह महा बलदाई । मोह संतान सदा दुखदाई ॥
मोह कुटुम्ब अरु भाई बंधा । समझै नहीं मूढ मति अंधा ॥
देव भूत जिहि कारण धावै । ठग चोरी करि खोट कमावै ॥
वस्तर भूषण वाहन मोहा । सबमिलि किया जीवसूं द्रोहा ॥

द्रव्य लाल अरु हीरा मोती । सब मिल मोह लगावें गोती ॥
मोह महल धरती अरु गाऊं । बडा मोह जो अपना नाऊं ॥
जामें फँसे रंक अरु राजा । तिहि कारण धंधा दुख साजा ॥
परकाजे बहुते दुख पाया । अपना सबही मूल गवाँया ॥
बडे बडे खेद उठाये सबहीं । भूले ध्यान रामका जबहीं ॥
जीते मोह शूरमा कोई । मिलै रामकूं साधू सोई ॥
होय मुक्ति जग बहुरि न आवै । चरणदास शुकदेव बतावै ॥

मोहनिवारण उपाय ।

दोहा—मोह बडा दुखरूप है, ताकूं मार निकास ।
प्रीति जगतकी छोड दे, जब होवै निरवास ॥१९०॥
जग माहीं ऐसे रहो, ज्यों जिह्वा मुखमाहिं ।
घीव घना भक्षण करै, तौ भी चिकनी नाहिं ॥१९१॥
जगमाहीं ऐसे रहो, ज्यों अम्बुज शर माहिं ।
रहै नारके आसरे, पै जल छूवत नाहिं ॥१९२॥
ऐसा हो जो साधु हो, लिये रहै वैराग ।
चरणकमलमें चित धरै, जगमें रहै न पाग ॥१९३॥
मोह बली सबसूं अधिक, महिमा कही न जाय ।
मोह बली सबसूं अधिक, महिमा कही न जाय ।
जाको बांधो जग सबै, छूटै ना बौराय ॥१९४॥

अथ लोभअंग ।

दोहा—लोभ नीच वर्णन करूं, महापापकी खान ।
मंत्री जाका झूठ है, बहुत अधर्मी जान ॥ १९५ ॥
तृष्णा जाकी जोय है, सो अंधा करि देय ।
घरी घडी सूझै नहीं, नहीं कालका भेय ॥ १९६ ॥
दम्भमकरछलबगुल जो, रहत लोभके संग ।
मुये नरक ले जाँयगे, जीवत करैं इढंग ॥ १९७ ॥

दे है धर्म छुटाय, आन धर्म लेजाय।
हरि गुरुतें वेमुख करैं, लालच लोभ लगाय॥ १९८ ॥
चहूँ देश भरमत फिरै, कलह कलपना साथ।
लोभ काज उठउठ लगै, दोउ पसारै हाथ॥ १९९ ॥

लोभि भक्त होय नहिं कहीं। साधु पुराण कहत हैं सबहीं॥
लोभी सती न होवै शूरा। लोभी दाता सन्त न पूरा॥
लोभी हितू न होवै सांचा। लोभी रहै जगतमें राचा॥
लोभी रहै द्रव्यके माहीं। तन छूटै पै निकसै नाहीं॥
लोभी करै जीवकी घाता। लोभी करै कपटकी बाता॥
लोभी पाप न करता डरै। लोभी जाय कष्टमें परै॥
लोभी वेंचै अपना सीसा। लोभी डूवै बिसवै बीसा॥
गुरु शुकदेव बतावै हमकूं। सो वह कथा कही मैं तुमकूं॥
चरणदास कहैं लोभ न कीजै। हरिके पदपंकज मन दीजै॥

दोहा—चींटी वांदर खगनकूं, लोभ बहुत दुख दीन।
याकूं तजि हरिकूं भजै, चरणदास परवीन॥२००॥
लोभ घटावै मानकूं, करै जगत आधीन।
बोझ घटा भिष्टल करै, करै बुद्धिको हीन॥२०१॥
लोभ गये ते आवई, महाबली संतोष।
त्याग सत्यकूं संग ले, कलह निवारण शोक॥२०२॥
घट आवै सन्तोषही, काह चहै जग भोग।
स्वर्ग आदिलों सुख जिते, सबकूं जानै रोग॥२०३॥
संतोषी निरमल दिशा, रहै राम लवलाय।
आसन ऊपर दृढ रहै, इत उतकूं नहिं जाय॥२०४॥
काहूसे नहिं राखिये, काहू विधिकी चाह।

परम संतोषी हूजिये, रहिये बेपरवाह ॥२०५॥
चाह जगतकी दास है, हरि अपना न करै ।
चरणदास यों कहत हैं, ब्याधा नाहिं टरै ॥२०६॥

अथ अभिमानअंग ।

दोहा–चार अंग पूरे किये, कहूं गर्व गुण गाय ।
बहुत सिकंदी मारिया, शिरपर छत्र फिराय ॥२०७॥
अभिमानी चढि करि गिरे,गये वासना माहिं ।
चौरासी भरमत भये, क्योंहीं निकसै नाहिं ॥२०८॥
अभिमानी मीजे गये, लूट लिये धन धाम ।
निर अभिमानी होचले, पहुँचे हरिके धाम ॥२०९॥
चरणदास कहै आपा थपै,गिनै आपको पाँच ।
मान बडाई कारने, सहैं जगतकी आँच ॥२१०॥
करै बडाई कारने, परपंची छल धूत ।
अभिमानी फूले फिरैं, ज्यों मर्घटका भूत ॥२११॥

अभिमानीकी मुक्ति न होई । अभिमानी मति अपनी खोई॥
ऐंठ अकड अभिमानी माहीं । अभिमानी नीचा हो नाहीं ॥
बिन नान्हापन सुख नहिंपावे। आनँद पदकूं कैसे जावे ॥
झूठ कपट अभिमानी खेले । कंचन बर्तन माटी मेले ॥
भगल दंभ नितही मन माहीं । निकट सांच कभि आवे नाहीं॥
हूं हूं हूं करताही डोलै । काहूते सीधा नहिं बोलै ॥
इन लक्षण जीवत दुख पावैं । नरक माहिं तन छूटै जावैं ॥
चरणदास शुकदेव बतावे । पूरा सो अभिमान नशावे ॥

दोहा–चरणदास यों कहत हैं,सुनियो सन्त सुजान ।
मुक्तिमूल आधीनता, नरकमूल अभिमान ॥२१२॥

रूपवन्त होकर गरवावै । कोई मोसम दृष्टि न आवै ॥
तरुणापा पाकर गरवाना । वह अंधरा होवै राना ॥
कहे धन मधिमें परवीना । सब मेरेही हैं आधीना ॥
कहे कुल अभिमानी सूचा । मैं सब जातिनमें हूं ऊंचा ॥
वह विद्या गर्व जु भारी । करै वाद विवाद अनारी ॥
अरु भूप करै अभिमाना । उन आपैहीकूं जाना ॥
उन काल नहीं पहिंचाना । सो मार करै घमसाना ॥
यम बाँधि पकरि लैजावैं । वे बहुतै त्रास दिखावैं ॥
गुरु शुकदेव चितावै । तोहिं परगट नैन दिखावैं ॥
जब कहा जाय अभिमाना । मेरा नीका सुन यह ताना ॥
फिर डारै नरक मँझारी । सुनि चेतो नर अरु नारी ॥
तो मद मत्सरता तजि दीजै । साधोंके ही चरण गहीजै ॥
हरि भक्ति करौ चितलाई । जब सकल व्याधि छुटिजाई ॥
कर जाति वरण कुल दूरा । हो सतसंगतिमें पूरा ॥
जब मुक्त धामकूं पावै । फिर गर्भ योनि नहिं आवै ॥
कहैं गुरु शुकदेव बखानौ । यह चरणदास मन आनौ ॥

दोहा–मनमें लाय विचारिकूं, दीजै गर्व निकार ।
नान्हापन जब जाय है, छूटै सकल विकार ॥२१३॥
पांचों उतरैं भूत जब, ह्वैहो ब्रह्म अरूप ।
आनँद पदकूं पायहो, जित है मुक्त स्वरूप ॥२१४॥
पांच प्रेत जो ये कहे, सद्गुरुके परताप ।
शील अंग अब कहतहूं जासूं छूटै पाप ॥२१५॥

इति पंचप्रेतवर्णन ।

# अथ पंचप्रेतनिवारणमन्त्र ।



## शीलअंगवर्णन ।

दोहा-अब मैं गाऊं शीलकूं, येहो सन्त सुजान ।
नर नारी सबही सुनो, देदे चित बुधि कान ॥२१६॥
रूपगुणी कुलवंत जो, अरु होवे धनवन्त ।
शील विना शोभा नहीं, विष्ट नरक पडंत ॥२१७॥
शील विना जो तप करै, करै शील विन दान ।
योगयुक्ति करै शील विन, सो कहिये अज्ञान ॥२१८॥
शील वडोही योगहै, जो कर जानै कोय ।
शीलविहीनो चरणदास, कबहुँ मुक्ति नहिं होय॥२१९॥
सब शुभ लक्षण तो विषे, शील न आया एक ।
जप तप निष्फल जाहिंगे, चरणहिदास विवेक॥२२०॥
पूजा संयम नेम जो, यज्ञ करै चितलाय ।
चरणदास कहै शील विन, सभी अकारथ जाय॥२२१॥
सोइ सती सोइ शूरमा, सोइ दाता अधिकाय ।
शील लिये नितही रहै, तौ निष्फल नहिं जाय॥२२२॥
शील अंग ऊंचो अधिक, उनतीसौंके बीच ।
जा घट शील न आइया, सो घट कहिये नीच॥२२३॥
शील न उपजै खेतमें, शील न हाट विकाय ।
जो हो पूरा टेकका, लखै अँग उपजाय ॥२२४॥
शील विना नरकै परै, शील विना यम दंड ।
शीलविना भरमत फिरै, सात द्वीप नव खंड॥२२५॥
शीलविना भटकत फिरै, चौरासीके माहिं ।
पहिले होवै प्रेतही, यामें संशय नाहिं ॥२२६॥

सब तजि सेवो शीलकूं, राम नाम लौलाय ।
जीवत शोभा जगतमें, मुये मुक्ति है जाय ॥२२७॥

जाको शील सुभाव है, जाकी दूर बलाय ।
ताकी कीरति जगतमें, सुनहो कान लगाय ॥२२८॥

शील रहेते सब रहैं, जेते हैं शुभ अंग ।
ज्यों राजाके रहेते, रहै फौजको संग ॥२२९॥

सत्य गया तौ क्या रहा, शील गया सब झाड ।
भक्ति खेत कैसे बचै, टूट गई जब बाड ॥२३०॥

ज्वानी शील न राखिया, बिगड गई सब देह ।
अब पछितावा क्या करै, मुखपर उडिया खेह ॥२३१॥

शील गये शोभा घटै, या दुनियाँके माहिं ।
कूकर ज्यों झिडक्यौ फिरै, कहिंभी आदरनाहिं ॥२३२॥

शील गये गुरुसूं फिरै, हरिसों वेमुख होय ।
चरणदास कहँलौं कहैं, सर्वस डारै खोय ॥२३३॥

धिक जीवन संसारमें, जाको शील नशाय ।
जगमें फिर फिर होत है, मुये ताचना पाय ॥२३४॥

शील कसैला आँवला, और बडोंके बोल ।
पाछे देवैं स्वाद व, चरणदास कहि खोल ॥२३५॥

शील निरोगा नींबसा, औगुण डारै खोय ।
पहिले करुवा दुख लगै, पाछे गुण सुख होय ॥२३६॥

लाख यही उपदेश है, एक शीलकूं राख ।
जन्म सुधारो हरि मिलौ, चरणदासकी साख ॥२३७॥

शीलवंतके चरणका, जो चरणोदक लेय ।
रोग दोष मिटि जायँ सब, रहै न यमका भेय ॥२३८॥

आठ अंगसे शीलही, जा घट माहीं होय ।
चरणदास यों कहत हैं, दुर्लभ दर्शन सोय ॥२३९॥
शीलवंत दर्शन बडे, देखत पातक जाय ।
वचन सुने मन शुद्ध हो, खोटी दृष्टि सिराय ॥२४०॥
शील सरोवर न्हाइ करि, करो रामकी सेव ।
यासम तीरथ और ना, कहिया गुरु शुकदेव ॥२४१॥
शील अंग पूरो कियो, महिमा अधिक अपार ।
दया अंग वर्णन करूं, समझे छुटै विकार ॥२४२॥

अथ दया अंगवर्णन ।

दोहा—परमारथमें दया बड, जो घट उपजे आय ।
परगट हो निर्वैरता, कर्म गाँठि खुल जाय ॥२४३॥
स्थावर जंगम चर अचर, या जगमें होय कोय ।
सबही पै हित राखिये, सुखदानीही होय ॥२४४॥
भोजन करो सँभाल करि, पानी पीजो छान ।
हरा वृक्ष नहिं तोडिये, कर्म बचै यों जान ॥२४५॥
औरो बहुत विचारि ले, जामें लगै न कर्म ।
यही तपस्य जानिये, यही दया यहि धर्म ॥२४६॥
इक इन्द्री दो इन्द्रियां, ती इन्द्री अरु चार ।
पंच इन्द्री लौ जीवकी, हिंसा अकस निवार ॥२४७॥
खावै वस्तु विचारिकै, बैठै ठौर विचार ।
जो कुछ करे विचारिकरि, किरिया यही अचार ॥२४८॥
मनसों रहु निर्वैरता, मुखसूं मीठा बोल ।
तनसूं रक्षा जीवकी, चरणदास कहि खोल ॥२४९॥
करुवा वचन न बोलिये, तनसूं कष्ट न देहु ।

अपनासा जी जानिकै, बनै तो दुख हरि लेहु ॥२५०॥
मुखसूं जो करुवा कहै, तनसूं देवै कष्ट ।
यही जु हिंसा जानिये, दया धर्म जा नष्ट ॥२५१॥
दश इन्द्री मन ग्यारवाँ, करि विचार ले जान।
इनहीं सूं सुख दीजिये, चरणदास पहिचान ॥२५२॥
काहू दुख नहिं दीजिये, दुर्जन हो कै मीत ।
सुखदाई सब जगतको, गहो दयाकी रीत ॥२५३॥
कोमलता पर पीरता, सज्जनता निर्दोष ।
सभी दयाके अंग हैं, इनते पावै मोष ॥२५४॥
दया ज्ञानका मूल है, दया भक्तिका जीव ।
चरणदास यों कहत है, दया मिलावै पीव ॥२५५॥
दया नहीं तौ कुछ नहीं, सबही थोथी बात ।
बाहर कथनी सोहनी, भीतर लागी घात ॥२५६॥
छापे तिलक बनायके, माला पहिरी दोय ।
दया बिना बगसम वही, साधरूप नहिं होय ॥२५७॥
दया न आई घटविषे, हीया बडा कठोर ।
यह नगरी कैसे बसै, तामें हिंसा चोर ॥२५८॥
पंडिताई बहुतै करी, दया न राखी जीव ।
छाँछि छाँछि तौ लेलई,डारि दया तत घीव ॥२५९॥
तोहिं पण्डित मैं कह कहूँ, मूरख कै परवीन ।
लिया न तैं मत सूपका, चलनीका मत लीन ॥२६०॥
दया गहेते सब नशै, पाप ताप दुख द्वन्द्व ।
ऐसी परम पुनीतकूं, तजै सो मूरख अन्ध ॥२६१॥
दया बिना नर पतित है, दया बिना नर दुष्ट ।
दया बिना सुनते बनै, सबही थोथी पुष्ट ॥२६२॥

जन्म मरण छूटै नहीं, नाहीं कर्म नशाहिं ।
दया बिना बदला भरै, चौरासीके माहिं॥२६३॥
काम क्रोध मोह लोभसे,गर्व आदि भजिजाहिं।
चरणदास कहैं दया जो, घटमें पहुँचे आहिं ॥२६४॥
जितने वैरी जीवके, तिनमें रहै न एक ।
चरणदास यों कहत है,दया जो आवै नेक ॥२६५॥
दुख भाजैं सुख हों घने, काया नगरी ढंग ।
हिंसा रानी जो भजै, लेकर अपनो संग ॥२६६॥
धन्य दया धनि शीलकूं, जिनसे रीझे राम ।
गुरु शुकदेवा बतावई, सबही सुधरैं काम ॥२६७॥

इति दयाका अंग संपूर्ण ।

---

## अथ मायारूप वर्णन।

राग भैरव ।

बैठा गुरुसे चलता चेला । सुखी होय रहै रैन अकेला ॥
दया क्षमा रख राम सुहाती ।बात कहैं करुवी नहिं ताती ॥
बिन जांचे उपदेश न दीजे । तरकीसूं चर्चा नहिं कीजे ॥
मौन गहै थोरासा बोले ।पलक न मिलै नैन रहै खोले॥
दृष्टि राख नासाके आगे ।सत्य वचन मीठा मुख भाखै ॥
रसना उलट अकाश चढावै । बिनहीं बादल जल बरसावै ॥
पवन साधि मनकूं ठहरावै । कामिनि कनकरूप बिसरावै॥
आसन अडिग सुरतअनहदसें।अन्तर खोलमिलै नहिं जगमें॥
चरणदास शुकदेव बतावै । ऐसा होय महन्त कहावै ॥

दोहा—जो बोलै तो हरिकथा, मौन गहै तो ध्यान ।
चरणदास यह धारणा, धारै सो सुज्ञान ॥२६८॥
मायाकी अस्तुति करूं, होय रही संसार ।
अद्भुत लीला कर रही, शोभा अगम अपार ॥२६९॥
माया सकल पसार हैं, नाना रँग बहु क्रान्ति ।
जहँलग यह आकारही, चंचल मिथ्या भ्रान्ति॥२७०॥
जैसे सुपना रैनका, मुख दर्पणके माहिं ।
भासै है पर है नहीं, ज्यों तरुवरकी छाहिं ॥२७१॥

यह माया सवहीको मोहै । होय न वश अस को जग है॥
यह तो वहुत सोहनी लागै । सबही नर नारिनको पागै ॥
कहिं चमक दमक वहुरूपा । अरु कहीं रंक कहीं भूपा ।
अरु जहँ तहँ वहुत तमासे । वह भाँति भाँतिही भासे ॥
अरु जहँलग सकल सवादा । कोइ करै जु वाद विवादा ॥
अरु काम क्रोध मद लोभा । अरु मान बडाई शोभा ॥
अरु पाँचों इन्द्री जानौ । सब मायारूप पिछानौ ॥
अरु पांच तत्त्व गुण तीनों । सो मायाहीकूं चीनों ॥
वह मकर पेच छल जानै । अरु पहर पहर बहुवानै ॥
अरु शुकदेव जनावै । सब माया खेल दिखावै ॥

दोहा—जेते सुख संसारके, सवही माया जार ।
तामें दो कणका धरे, एक द्रव्य इक नार ॥२७२॥
लालच लागे चावसूं, गिरे आयकरि लोय ।
फँसे आपसूं आपही, गहि नहिं लाया कोय ॥२७३॥
पांचौ इन्द्रीसों लखै, सो माया आकार ।
याहीसती सब भयो, जहँ लग है साकार ॥२७४॥

अरु मायारूप अनन्ता । कोइ जानै साधू सन्ता ॥
कहा सुना अरु देखा । सब माया रूप विशेषा ॥
आठ सिद्धि नौ माया । जहँ योगी तपी भुलाया ॥
अरु माया फंदे माहीं । सब जीव आइ फँसि जाहीं ॥
वे नरक माहिं दुख पावैं । यम छप्पन त्रास दिखावैं ॥
फिर भुगतै लख चौरासी । वे गरभ योनिके वासी ॥
वे पशू देश धरि धावैं । नहिं मुक्ति ठिकाना पावैं ॥
चरणदास कहैं नर चेतौ । तजौ मायाहीकूं हेतौ ॥

दोहा—जगत वासनाके तजे, मायाकी न बसाय ।
करम छुटे मिटि जीवता,मुक्तरूप हो जाय ॥२७५॥

इंद्रीवर्णन ( मन )

फसे न इन्द्री स्वादमें, चरणकमलमें ध्यान ।
पर आशा कोइ न रहे,लगे न माया बान ॥२७६॥
सबसे अधिकी ज्ञान है, तासे ऊंचो ध्यान ।
ध्यान मिलावे पीवकूं, पावे पद निरवान ॥२७७॥
ध्याता ध्येय कैसे मिले,होंय न बिचमें ध्यान ।
तीनों एक हुये बिना, लहे न पद निरवान ॥२७८॥
इन्द्रिनके वश मन रहे, मनके वस रहे बुद्धि ।
कहो ध्यान कैसे लगे, ऐसा जहां विरुद्ध ॥२७९॥
जित जित इन्द्री जात हैं,तित मनकूं ले जात ।
बुधि भी सगहि जात है,यह निश्चयकर बात ॥२८०॥
जित इन्द्री मनहू गया, रही कहाँसूं बुद्धि ।
चरणदास यों कहत हैं,करि देखो तुम शुद्धि ॥२८१॥
इन्द्री मनके वश करे, मनकर बुधिके संग ।

१ नौ निधि ।

बुधि राखै हरिपद जहां,लागै ध्यान अभंग ॥२८२॥
इन्द्री मन मिल होत है,विषयवासना चाह ।
उपजे जैसे कामही, नारी मिल अरु नाह ॥२८३॥
न्यारे न्यारे तत रहैं, होत न कछू उपाध ।
जुदे राख मन इन्द्रियन,गुरुगम साधन साध॥२८४॥
इन्द्रिनसूं मन जुदा करि, सुरत निरत करि शोध ।
उपजे ना विष वासना,चरणदास कर बोध ॥२८५॥
इन्द्री रोकेते रुके, और यतन नहिं कोय ।
मन चंचल रिझवार है, रसक सवादी सोय ॥२८६॥
चलौ करै थिर ना रहै,कोटि यतन करि राख ।
यह जबहीं वश होयगा, इन्द्रिनके रसनाख ॥२८७॥
न्यारे न्यारे चहत हैं, अपने अपने स्वाद ।
इन पांचोंमें प्रीति है, कछू न वाद विवाद ॥२८८॥
दुर्जनके फूटे विना, तेरी होय न जीत ।
चरणहिदास विचारि करि, ऐसी कहिये रीत॥२८९॥
जुदी जुदी पांचों कहूँ, एक एकका भेद ।
जो कोइ इनकूं वश करै, सबही छूटै खेद ॥२९०॥

नेत्रइन्द्री ।

यह इन्द्री आँख विचारो । सो देत महादुख भारो ॥
वह राग द्वेष उपजावै । अरु हरप शोक लै आवै ॥
सो रूप माहिं फँसि जावै । तन मनसें व्याधि उठावै ॥
वह देह औरके हाथा । करि डारै बहुत अनाथा ॥
वह फंदे माहीं डारै । अरु काम अगिनिमें जारै ॥
यह डोलै दौरी दौरी । कर चित बुधिकी गति औरी ॥
कोइ साधु शूरमा मोडै । जग सेती नैना तोडै ॥
कहै चरणदास सुनि लीजै । कछु याका यतन करीजै ॥

दोहा-दीपक त्रिया निहारि करि, गिरै पतंग ज्यों जाय ।
कछू हाथ आवै नहीं, उलटो आप जराय ॥२९१॥

उन तन मन सभी जराया । कछु भोंदू हाथ न आया ॥
अरु विषय वासना फैला । जब छुटा रामका गैला ॥
तो मुक्ति कहाँसों होई । दिया जन्म पदारथ खोई ॥
अब क्या शिर मारै कोई । घरहीमें दुर्जन सोई ॥
यह दृष्टि सदाकी वैरी । जो सुरत बिगारै तेरी ॥
वह माया मोह लगावै । अरु चौरासी भरमावै ॥
शरम सकुच सब खोवै । अरु बीज कुबुधिका बोवै ॥
यह ठग चोरीकी बानी । अरु जार करम अगवानी ॥
यह पानप सभी घटावै । यमपुरके त्रास दिखावै ॥
कहैं गुरू शुकदेवा । ये आँख महादुख देवा ॥

दोहा-ऐसी इन्द्री आँखकी, सो अपनी नहिं होय ।
गुरु शुकदेव बतावई, चरणदास सुन लोय ॥२९२॥
दर्शन कीजै साधुका, कै गुरुका कर लोय ।
जहँ तहँ ब्रह्महिं देखिये, दुविधा दुर्मति खोय ॥२९३॥
वैरी मितर एकसा, एकै रूप कुरूप ।
ऐसी होवै दृष्टिही, जब समझै मन भूप ॥२९४॥

श्रवण इंद्री ।

सुन दूजै इन्द्री काना । सो गुरु परतापै जाना ॥
जब सुनै कामरस गीता । तब भूलै पद सुन गीता ॥
मन उपजै काम तरंगा । तब होत ध्यानमें भंगा ॥
फिर लोभ वचन सुन औरै । जब तृष्णा चहुँदिशि दौरै ॥
कहिं द्रव्य हाथ लगि जावै । यों शोचि शोचि दुख पावै ॥
कहैं ठग चोरीकर लाऊं । कहिं गडा दबा हो पाऊं ॥

काहू सुनै जु दौलत बंधा । मनहीं मनमें रोवै अंधा ॥
यों उपजै अधिकी लोभा । जब बढै पापकी गोभा ॥
कहैं चरणहिंदास विचारी । सुन चेतो नर अरु नारी ॥
फिर सुनैं बढाई कुलकी । जब पुलक हँसत है मुलकी ॥
जो अपनी सुनै बढाई । जब अहूं होत अकडाई ॥
फिर करन बढाई लागै । सोता ज्यों कूकर जागै ॥
जब उपजै बहु अभिमाना । अरु नेक न होवै नान्हा ॥
परनिन्दा बहुत सुहावै । नहिं और बडाई भावै ॥
अहंकार बडा मनमाहीं । आधीन बिना गति नाहीं ॥
सुनि उपजै तामस अंगा । जब करै बहुतही दंगा ॥
मन क्रोध रूप हो जावै । उठ उठकर मारन धावै ॥
कभी सुनै मोहके बैना । लगै हर्ष शोक दुख दैना ॥
जब सुनै कुटुँबकी नीकी । तब करि खुशी बहु जीकी ॥
कोइ कुटुँब माहिं दुख पावै । सुन रो रो नैन गवाँवै ॥
जो हिरन कानवश हूवा । तौ तीर लगा करि मूवा ॥
शुकदेव कहैं सुन जानौ । सब कान विकार पिछानौ ॥

श्रवणका सत्कर्म ।

दोहा-मन दे सुनिये हरि कथा, सुनिये हरियश कान ।
ताहि विचारि जु कीजिये,होय भक्तिका ज्ञान॥२९५॥

उपजै ज्ञान भक्ति अरु योगा । सुनसुन उपजै राम वियोगा॥
उपजै प्रेम अनन्य उमाहा । होय उछाह दरशका चाहा ॥
सुन सुन उपजै लक्षण साधू । सुनि सुनि पावै भेद अगाधू॥
उपजै साधु संतकी सेवा । गुरुमुख होय सुनै नहिं भेवा॥
सुनि२उपजै भय अरु लाजा । सोवै सकल सँवारन काजा ॥

सुनि सुनि यती सती हो जावै। नान्हा हो अभिमान नशावै॥
सुनि सुनि छूटै यमकी त्रासा। चौरासीमें लहै न वासा॥
सुनि सुनि चार पदारथ पावै। आवागमनके बीज जरावै॥
सुनि सुनि काग हंस हो जाई। चरणदास शुकदेव बताई॥

दोहा-सुनि सुनि उपजै सुबुधिही, लागै हरिका रंग।
सुनि सुनि उपजै कुबुधिही, खोटी उठै तरंग॥२९६॥
ऐसी इन्द्री कानकी, जाके युगल सुभाव।
कथा कीरतनहीं सुनो, करि २ कोटि उपाव॥२९७॥
वचन सुनो गुरु साधुके, मनकूं लावो मोर।
विषय वासनासूं निकस, आवै हरिकी ओर॥२९८॥

जिह्वाइन्द्री।

सरवन इन्द्रीमें कही, दोनों अंग दिखाय।
जिह्वा इन्द्री कहत हैं, चरणदास चित लाय॥२९९॥
कुटिल जु इन्द्री जीभकी, चाहै षटरस स्वाद।
या वश हो औगुण करै, जन्म जाय बरबाद॥२००॥

यह बहुत चटोरी कहिये। याहीतें डरते रहिये॥
यह चोरीभी करवावै। यह पकड बन्धमें द्यावै॥
कर याहि कारण जारी। यह करै बहुतही ख्वारी॥
यह अमल खान सिखलावै। अरु गाली मार दिलावै॥
अरु बहुतै झूठ बुलावै। हो मीत नरक ले जावै॥
खेलै याही कारण जूवां। दुनियाँमें फिट फिट हूवां॥
ये पांचों ऐब सुनाऊं। रसनामें सभी दिखाऊं॥
यह महा अपरबल जानो। अरु रणजीता हो मानो॥

दोहा-जिह्वाके जीते बिना, गये जन्म सब हार।
चरणदास यों कहत हैं, भये जगतमें ख्वार॥२०१॥

बंशी डारी तालमें, मछरी लागी आय ।
जिह्वा कारण जिव दियो, तलफि तलफि मरिजाय ३०२ ॥
तजा न जिह्वा स्वादकूं, वा सँग दीन्हें प्रान ।
जो कोइ ऐसा जगतमें, सो अज्ञानी जान ॥ ३०३ ॥
यासूं ले हरनामही, गुण वादही भाख ।
जो बोले तौ सांचही, नाहीं मुखमें राख ॥ ३०४ ॥
मीठा वचन उचारियो, नवता सबसूं बोल ।
हिरदै माहिं विचारि करि, जब मुख बाहर खोल ॥ ३०५ ॥
विना स्वादही खाइये, राम भजनके हेत ।
चरणदास कहै शूरमा, ऐसे जीतो खेत ॥ ३०६ ॥
जिन जीता है जीभकूं, तिन जीती सब देह ।
कहै गुरू शुकदेवजी, मुक्ति धाम फल लेह ॥ ३०७ ॥
रसना जीतै भक्त जो, सो योगी सो साध ।
अगम पन्थ वहि पग धरै, पहुँचै देश अगाध ॥ ३०८ ॥

त्वचाइन्द्री ।

त्वचा सु इन्द्री कामकी, नितही खेलै दाव ।
पशुपक्षी असुरा नरा, फँसे आयकरि चाव ॥ ३०९ ॥

यह त्वचा सुमल मल मांजै । अरु काजल सुरमा आंजै ॥
यह तेल फुलेल लगावै । अरु चिकना गात बनावै ॥
अरु वस्तर भूषण पहिरै । करै अंजन मंजन गहिरै ॥
अरु सपरसकी विधि ठानै । सब याहीकूं सुख मानै ॥
अरु फँसे आयकरि दोऊ । अब निकसन कैसे होऊ ॥
हित गांठ पेंच गहि दीन्हा । दोउ नेह वचन बहु कीन्हा ॥
अरु एक एकनै बाधा । वह समझै नाहीं आधा ॥
अब शीश धुनैं पछितावैं । दोउ चले नरककूं जावैं ॥

कहैं चरणदास नहिं जानों । तुम औगुण ना पहिचानों ॥

दोहा–त्वचा स्वाद सब वश भये, फंदे जगतके माहिं ।
जो कोई निकसो चहै, सोभी निकसै नाहिं ॥२१०॥
धोखेकी हथिनी लखी, आयो गज ललचाय ।
खंदक माहीं रुकि गयो, शीश धुनै पछिताय ॥२११॥
कछू हाथ आयो नहीं, परो फन्दमें जाय ।
मन महावत वश भयो, शिरमें अंकुश खाय ॥२१२॥
जङ्गलमें आनन्दसूं, बहुतै केलि कराय ।
अब तो द्वारे सूतके, परो बन्धमें आय ॥२१३॥
ऐसेही यह नर फसो, देखि कामिनी रूप ।
जन्म गँवायो दुख भरो, पड़ो अविद्या कूप ॥२१४॥
करी न हरिकी भक्तिही, गुरुसेवा तजि दीन ।
सुनी न हरिकी गुणकथा, सतसंगत नहिं कीन ॥२१५॥
फिर ऐसो कब होयगो, पावै मानुष देह ।
अब तो चौरासी विषे, जाय कियो उन गेह ॥२१६॥
जीतो इन्द्री त्वचाकी, कहिया श्रीशुकदेव ।
यासे तपही कीजिये, चरणदास सुन लेव ॥२१७॥

शीत उष्णका दुख नहिं मानै । कोमल सकत एककरि जानै ॥
तपसूं काया उसर गवाँवै । अष्ट सुगन्ध निकट नहिंजावै ॥
आन त्वचा स्पर्श नहिं करै । काम अगिनि हियमें ना जरै ॥
काया ताबन करनी ठानै । यही तपस्या मनमें आनै ॥
त्वचा सु इन्द्री जीतो ऐसे । मैं यह भेद बतायो जैसे ॥
गुरु शुकदेव बतावै सबही । चरणदास कर तनसूं तपही ॥

दोहा–त्वचासु इन्द्री वश किये, छूटै काम कलेश ।
यत शत शील सन्तोषसूं, लगै न माया लेश ॥२१८॥

नासिका इन्द्री ।

त्वचा अंग पूरो कियो, कहूँ नासिका अंग ।
ता वस अलिसुत जी दियो, जाको कहूँ प्रसंग॥३१९॥
वास आस गुंजत फिरौ, बैठो कमल मँझार ।
सूर छिपेसे मुँदि गयो, अब शिर दैदै मार ॥३२०॥
कुँजर आयो तालपै, जल पीवनके काज ।
प्यास बुझी करनेलगो, खेल करनको साज ॥३२१॥
खेल करत कमलहीगह्यो, लीन्हो ताहि उपारि ।
फोरि दियो मुख माहिंहीं, चाबि गयो दे जाड॥३२२॥
ऐसेही ये नर फँसे, परे काल मुख जाय ।
चरणदास यों कहत हैं, चले जन्म गवाँय ॥३२३॥
सुगँध ओर हरपै नहीं, दुरगन्धै न रिसाय ।
ऐसी जीतै नासिका, मन भवँरा ठहराय ॥३२४॥
समझनकूं तुक एक है, भूलनकूं तुक लाख ।
गुण औगुण इन्द्री कहे, सो तू मनमें राख ॥३२५॥
जो इन्द्रिनके वश भयो, बांधो नरकै जाय ।
चौरासी भरमत फिरै, गर्भयोनि दुख पाय ॥३२६॥
जो इन्द्रिनके वश भयो, पावै ना आनन्द ।
वार वार जगमाहहीं, छूटै ना सम्बन्ध ॥३२७॥
भक्ति माहिं चित ना लगै, सबही बिगडै काम ।
जो इन्द्रीके वश भयो, ताको मिलै न राम ॥३२८॥
चरणदास यों कहत हैं, इन्द्री जीतन ठान ।
जगभूलै हरिकं मिलै, पावै पद निर्वान ॥३२९॥

इन्द्री जितै सो ब्रह्मज्ञानी । इन्द्री जीतै सोई ध्यानी ॥
इन्द्री जीतै सो हरिदासा । अमर लोकमें पावै वासा ॥

इंद्री जीतै सोई सिद्धा । अष्टकला अरु पावै ऋद्धा ॥
इंद्री जीतै सोई शूरा । इंद्री जीतै सो जन पूरा ॥
इंद्री जीतै सो सतवन्ता । इंद्री जीतै गुणी महन्ता ॥
इंद्री जीतै राम रिझावै । इंद्री जीतै सब कुछ पावै ॥
इंद्री जीतै सो संन्यासी । इंद्री जीतै सोइ उदासी ॥
इंद्री जीतै सब फलदायक । इंद्री जीतै सब कुछ लायक ॥
इंद्री जीतै छुटै विदेशा । या जगमें कछू लगै न लेशा ॥
इंद्री जीतै परम सुखारा । निश्चय पहुँचे हरि दरबारा ॥
इंद्री तजै सो रणजीता । इंद्री जीतै आतम मीता ॥
इंद्री जीतै ध्यान लगावै । सो निश्चय ईश्वर ह्वै जावै ॥
इंद्री जीतै मिलै भगवंता । इंद्री जीतै जीवनमुक्ता ॥
चरणदास सुन कहैं शुकदेवा । इंद्री जीतै सो गुरुदेवा ॥

## मन ।

दोहा—मन इन्द्रिनके वश भयो, होय रह्यो वेढंग ।
आपा विसरो जग रलो,हुवो जो नाना रंग ॥२२०॥
आवै तरंग क्रोधकी, होत युवाको रूप ।
काम लहर कबहू उठै, ताके होत स्वरूप ॥२२१॥
लोभ कामना जब उठै,जभी लोभ रँग होय ।
मोह कल्पनाके उठै, मोह वरण हो सोय ॥२२२॥
मनहीं खेलै खेल सब,मनहीं कर अभिमान ।
मनहीं यह जग ह्वै रहो,अब सुनु मनका ज्ञान॥२२३॥

कबहू यह मन होवै गिरही । कबहूं यह मन होवै विरही ॥
कबहू यह मन होवै रोगी । कबहू यह मन होवै शोगी ॥
कबहू यह मन होवै नारी । कबहू यह मन राखै ख्वारी ॥
कबहू यह मन दौरा डोलै । कबहू यह मन टंडा बोलै ॥

कबहूं यह मन कुलका ऊंचा । कबहूं यह मन नकटा बूंचा ॥
कबहूं यह मन दुन्दि मचावै । कबहूं क्षमा शील घर आवै ॥
कबहूं यह मन होवै दाता । कबहूं करै सूमसी बाता ॥
चरणदास कहैं मनकूं जानौ । ऐसी विधि मनकूं पहिंचानौ ॥

दोहा-बहुरूपी बहुरंग या, बहुत रंग बहु चाव ।
बहुत भांति संसारमें, करि करि घने उपाय ॥२२४॥

यह मन राजा होवै भोगी । यह मन त्यागी होवै योगी ॥
यह मन होवै हरिका भक्ता । यह मन होवै योग रु युक्ता ॥
यह मन होय विवेकी ज्ञानी । यह मन तपिया जपिया ध्यानी ॥
यह मन करै दयाकी बातैं । यह मन करै जीवकी घातैं ॥
यह मन यती सती अरु शूरा । यह मन काशी पण्डित पूरा ॥
यह मन तीरथ वर्त्ती उपासी । यह मन ठकुरानी अरु दासी ॥
यह मन होवै देवी देवा । या मनका कोई लहे न भेवा ॥
यह मन प्रेमी नेमी जनहीं । चरणदास कहै सब कुछ मनहीं ॥

दोहा-या मनके जाने विना, होय न कबहूं साध ।
जगत वासना ना छुटै, लहै न भेद अगाध ॥२२५॥
तैं मनकूं जाना नहीं, करी न याकी सार ।
चौरासी छूटी नहीं, उपजा बारंबार ॥२२६॥

मनजीतन उपाय ।

मनकूं सत्संगति लै जावो । कानो हरियश कथा सुनावो ॥
भाँति भाँतिके रँग ललचावै । तौ हरिके रँग क्यों न रँगावै ॥
तौ याको ज्ञानीही कीजे । जक्त और जाने नहिं दीजे ॥
कै कीजे हरिहीका ध्यानू । राम भक्तिमें याकूं सानू ॥
कै कीजै यह योगी पूरा । याहि सुनावो अनहद तूरा ॥
या मनकूं कीजै वैरागी । याकूं कीजे सर्वस त्यागी ॥

जग रँग उतरि ब्रह्म रँग लागै । जाते कर्म भर्म भय भागै ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । मन फेरनिकी राह दिखावै ॥

दोहा–मनने आयु गवाँइया, ज्ञान बुझाया दीव ।
करम लगा भरमत फिरो, मिला न अपने पीव ॥२३७॥
दौरि दौरि रस ओरही, होय रहा कंगाल ।
नातरु आगे भूप था, ऊंचा बडा दयाल ॥२३८॥
पांचों इन्द्री स्वादमें, भयो निपट आधीन ।
राज बडाई सब नशी, भयो मूढ मति हीन ॥२३९॥
सरकि जाय विष ओरही, बहुरि न आवै हाथ ।
भजन माहिं ठहरै नहीं, जो गहि राखूं बाथ ॥२४०॥
मन निश्चल आवै नहीं, निकसि२ भजि जाय ।
चरणदास यों कहत हैं, काहूकी न बसाय ॥२४१॥
पचि हारे ज्ञानी तपी, रहे बहुत शिर नाय ।
मन परेतसूं डर लगै, ले डूबै मझधार ॥२४२॥
यह मन भूत समान है, दौडे दांत पसार ।
बाँस गाडि उतरै चढै, सब बल जावै हार ॥२४३॥
ज्यों आतममें मन धरै, होय जहां लौलीन ।
ठहरि रहै फिरि नाचलै, सकल विकल हो क्षीन ॥२४४॥
भज तौ जानि न दीजिये, घेरि घेरि करि लाव ।
या मनकूं परचाय करि, ध्यानहिं माहिं लगाव ॥२४५॥
और कहौं विधि दूसरी, सुनियो चित्त लगाय ।
रामनाम सनसूं जपै, चंचलता थकि जाय ॥२४६॥
पवन रुकै जब मन थकै, और हरि ठहराय ।
ऐसी साधन साधिये, गुरुगम संत सिखाय ॥२४७॥
इन्द्री रोकै मन रुकै, अरु उलट निरि गहु ।

चरणदास यों कहत हैं, यह साधन करिलेहु ॥३४८॥
इन्द्रिनकूं मन वश करै, मनकूं वश करै पौन।
अनहद वशकर वायकूं, अनहदकूं लै तौन ॥३४९॥
याको नाम समाधि है, मन तामें ठहराय।
जन्म जन्मकी वासना, ताकूं दग्ध कराय ॥३५०॥
इन्द्री लपटै मन विषे, मन लपटै बुधि माहिं।
बुधि लपटै हरि ध्यानमें, फेरि होय लै जाय ॥३५१॥
दग्ध वासना होय जब, आवागमन नशाय।
कहै गुरू शुकदेवजी, मुक्तरूप है जाय ॥३५२॥

असत्यका वर्णन।

मनके सगरे भेदही, जाको दियो जिताव।
चरणदास यों कहत हैं, झूठ सांचको न्याव ॥३५३॥
जो कोइ बोलै झूठही, ताकूं लागै पाप।
जन्म जन्म छूटै नहीं, दुखदे तीनों ताप ॥३५४॥
बोलै झूठ महा अपराधी। धर्म छुटै उठि लागै व्याधी॥
झूठा सौ सौ सौगँध खाय। झूठा लेवै कर्म लगाय॥
झूठा करै विराना बुरा। झूठा लेवै जगतमें गिरा॥
झूठेकी परतीत न होई। झूठा बोल न बोलै कोई॥
झूठा हरिकी भक्ति न पावै। झूठा घोर कुण्डमें जावै॥
झूठेकूं लागै यम मार। झूठा चौरासीमें ख्वार॥
झूठ वचनका भारी दोष। झूठेकी होय गती न मोष॥
झूठेके नाहिं गुरू न राम। झूठेकूं नाहीं विश्राम॥
चरणदास शुकदेव बतावैं। झूठे सबी नरककूं जावैं॥
दोहा–झूठेके मुँह दीजिये, नोसादरका बाप।
डरा करै सकुचा रहै, वह शरमिंदा आप ॥३५५॥

झूठकूं हत्यारा जानौं । झूठको ठग चोर पिछानौं ।
झूठा कुटिल लगारी होय । झूठा कहिये कामी सोय ॥
झूठहीको जानौं ज्वारी । समझि देखि सबही नर नारी॥
सकल पाप झूठम पाऊं । एकएक कथा खोल दिखाऊं॥
पांचों खोट सबनके राजा । सो मैं कहे चितावन काजा ॥
झूठ पापकी कहिये खानी । सो वह करै पुण्यकी हानी ॥
सबही अवगुण झूठे माहीं । चरणदास शुकदेव बताहीं ॥

सत्यवर्णन ।

दोहा–साँच बिना साधू नहीं,कबहुँ न मिलि हैं राम ।
सांच बिना गति ना लहै,पावै ना निजधाम ॥२५६॥
सत सत मुखसूं बोलिये,सतही चलिये चाल ।
सतही मनमें राखिये, सतही रहिये नाल ॥२५७॥
सांचेकूं ग्रह ना लगै, सांचेकूं नहिं दाग ।
सांचे शाप न लागई, सब दुख जावै भाग ॥२५८॥
बड़ी तपस्या सांच है, बड़ा बरत है सांच ।
जासों पाप सभी जरैं,लगै न गर्भकी आंच ॥२५९॥
जाका वचन मुड नहीं, सांचे सब व्यवहार ।
चरणदास त्रयलोकमें, कभी न आवै हार ॥२६०॥

सांचके मनहीमें राम । सांचा करै न छलके काम ॥
सांचा होकर सुमिरण करै । आप तरै औरन लै तरै ॥
सतवादीकी पति है सांच । ताकूं लगै न दिवकी आंच ॥
सांचे चोरैं चुराया घोडा । परमेश्वर ताका रँग मोडा ॥
और चोर चोरीमूं गया । सांच प्रताप अचम्भा भया ॥

१ भक्तमालमें देखो पाटनजिकी कथा । सटीक भक्तमाल सम्पतिकादकी "श्रीवे-ङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस बम्बईसे मिलेगा ।

औरो सांच प्रताप अनंता । सबही जानै साधू संता ॥
लाख बातका एकहि जोड । सांचा पुरुष सबन शिरमोड ॥
आवै सांच परम सुख पावै । चरणदास शुकदेव सुनावै ॥

दोहा-सांचेकी पदवी बडी, दुष्ट साधके माहिं ।
दोनों अस्तुतिही करैं, निन्दक कोई नाहिं ॥२६१॥

गुरुमुखवर्णन ।

दोहा-गुरू कहै सो कीजिये, कर सो कीजै नाहिं ।
चरणदासकी सीख सुन, यही राख मनमाहिं॥२६२॥

गुरुमुखलक्षण ।

कथा सुनी व्रतहू किये, तीरथ किये अघाय ।
गुरुमुखके होये बिना,जप तप निष्फल जाय॥२६३॥

अब गुरुमुखके लक्षण गाऊं । जुदे जुदे करि सब समुझाऊं॥
इनकूं समझ धरे हिय कोई । पूरा गुरुमुख कहिये सोई ॥
प्रथमहिं गुरुसों झूंठ न बोले । खोटी खरी करै सब खोले ॥
दूजे गुरुको पय न लगावे । निश्चय गुरुके चरण मनावे ॥
तीजे आज्ञाकारी जानौ । इन लक्षण गुरुमुखी पिछानौ॥
जो कोइ गुरुका लेवै नाम । ताको निहुरि करै परणाम ॥
जो कहुँ देखै गुरुका बाना । ताकूं जानै गुरू समाना ॥
चरणदास शुकदेव बखानै । गुरुभाईकूं गुरुसम जानै ॥

दोहा-गुरुभाई कूं पूजिये, धरिये चरणन शीश ।
चरणोदक फिरि लीजिये,गुरुमत विश्वा बीश॥२६४॥

जो कहुँ गुरुका बस्तर पावै । हिये लगाय चूक दृग ल्यावै॥
गुरूदेशका मानुष जावै । दै परिकर्मा बलि बलि जावै॥
कहां दया करि दर्शन दीन्हें । मेरे पाप भये सब क्षीन्हें ॥
जो अपने गुरु द्वारे जइये । देखत पौरि बहुत हरषइये ॥

ठाढ़िं दण्डवत गुरु कीजै । दर्शन करि करि सर्वस दीजै ॥
फिर ठाढ़ो रहै जोरै हाथा । बैठै तब आज्ञा दे नाथा ॥
जो बोलै सो मनमें धरिये । अपने अवगुण सबही हरिये ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । ऐसा गुरुमुख राम रिझावै ॥

साधुमाहात्म्य ।

दोहा–साधुनकी निंदा बुरी, मत कोइ कीजो भूल ।
दुनियामें दुख पाइ है, रहै नरकमें झूल ॥२६५॥

साधुका निन्दक तनमन दुखी । साधुका निन्दक हो ना सुखी ॥
निन्दक साधु दरिद्री होय । निंदक डारै सर्वस खोय ॥
साधुका निंदक नरक मँझार । निश्चय खावै यमकी मार ॥
साधुका निंदक पूरा पापी । साधुका निंदक डूबै आपी ॥
मूरख होय सो निन्दा करै । साधु संतकूं अवगुण धरै ॥
साधुका निंदक श्वानसमान । साधुका निंदक शूकर जान ॥
साधु रामकी कहिये देह । निंदकके मुखमाहीं खेह ॥
चरणदास निन्दा तजि दीजै । भक्तनकी अस्तुतिही कीजै ॥

दोहा–साधुनकी अस्तुति किये, हरिकी अस्तुति होय ।
भक्तनकी निन्दा किये, प्रभुकी निन्दा सोय ॥२६६॥

अथ मोह छुटावन अंगवर्णन ।

कुण्डलिया ॥ भक्ति दृढावनकूं कहे, नानाही परसंग । शुकदेव कृपासों अब कहूं, मोह छुटावन अंग॥ मोह छुटावन अंग कोई हियमाहीं धारै । कुटुंबजानिसूं छूटि लगै हरिचरणों लारै । चरणदास यों कहत है, उपजे मन वैराग । जगत नींदसूं खुलै चौथे पनमें जाग ॥

दोहा–गुरु पूजि जग छोडिये, भवसागरके फन्द ।
साधुनकी संगति करौ, तजौ जाति कुल बन्द ॥२६७॥

बन्धु नारि सुत कुटुँब सब, यमकी फाँसी जान ।
तोहिं छुटावै रामसूं, इनका कहा न मान ॥३६८॥
खैंचि पकडि ह्वां राखि है, जहां मोहका जाल ।
जीवत दुख वहु भाँतिके, मुये नरक ततकाल ॥३६९॥
या प्राणीकूं ठग लगे, सकल कुटुँब परिवार ।
तिनमें दो बलवन्त हैं, एक द्रव्य एक नारि ॥३७०॥
नारि किये दुख बहुत हैं, बन्धन बध अनेक ।
जो सुख चाहे जीवका, तिरियाकूं मत पेख ॥३७१॥
द्रव्यमाहिं दुख तीनि हैं, यह तू निश्चय जान ।
आवत दुख राखत दुखी, जात प्राणकी हान ॥३७२॥
तातै इनकी प्रीति मन, उठै तभी निरवार ।
ये दुर्जन दुखरूप हैं, ऐसो करो विचार ॥३७३॥
जो कोई इनमें पगै, तिनसों छूटै राम ।
चरणदास यों कहत हैं, क्यों पावै हरिधाम ॥३७४॥
हेरि फेरि धनको करत, वितै पहर इक रात ।
तीन पहर निशिके रहैं, खोवै नारी साथ ॥३७५॥
नारीके फैलावको, दीखै ओर न छोर ।
द्रव्यमाहिं तृष्णा रहै, चाहै लाख करोर ॥३७६॥
द्रव्य जोरि मरि जाय जब, हो बैठे तहँ नाग ।
नारिमें जो चित रहै, ह्वै है कूकर काग ॥३७७॥
ऐसे ही भरमत फिरै, लख चौरासी देह ।
कनक कामिनीकूं तजै, जबलग नाहीं नेह ॥३७८॥
मूरख त्याग न करिसकै, ज्ञानवंत तजि देह ।
चौंकायल मृग ज्यों रहै, कहीं न साजै गेह ॥३७९॥
जो कोइ छौडै कुटुँबकूं, ऐसी कर पहिंचान ।

जैसे छूटै बन्धसूं, यम जोरासू जान ॥२८०॥
जीवन यम तो कुटुंब है, घेरि घेरि दुख देय ।
ऐसे मानुष देहकूं, लूटेही नित लेय ॥२८१॥

कै ठग सबकूं जानिये, कै धाडी कै चोर ।
रणजित कहै तू देख ले, लूटत है निशि भोर॥२८२॥

बाहर कलकल करत है, भीतर लावहिं लाव ।
ऐसो बांधो खेंचकरि, छूटै हाथ नहिं पाव ॥२८३॥
जाल तौक गलमें पडा, ममता बेरी पांय ।
रसरी सूरुख नेहकी, लीन्हे हाथ बँधाय ॥२८४॥
डारि दियो अज्ञानमें, परो परो बिललाय ।
निकसनकूं जबहीं चहै, कुतका मोह लगाय ॥२८५॥
रखवारे जहँ पांच हैं, इंद्रिनके रस जान ।
तबहीं देह भुलायके, जो कुछ उपजै ज्ञान ॥२८६॥
कुटुंब और इन पांचकूं, एक मतोही जान ।
प्राणीकूं जगमें फँसा, चहै खान अरु पान ॥२८७॥
ये सब स्वारथीही लगें, इनका सगा न कोय ।
जो शिर मारे धरणि पर, कलप कलप करि रोय॥२८८॥
मात पिता सुत नारिकी, इनकी उलटी रीति ।
जगमें देह फँसायके, करिके प्रीतिहि प्रीति ॥२८९॥
जैसे बधिक बिछायके, जाल सांहि कण्डार ।
प्रीति करे पक्षी गहे, पाछे करे जु रुशार ॥२९०॥
जैसे ठग बहु प्यार करि, भोलापनहीं देह ।
पहिले लड्डू खवायके, पाछे सरवस लेह ॥२९१॥
हितसूं हरिण बोलायके, गोली मारे तान ।
चरणदास यों कहत है, ऐसे इनकूं जान ॥२९२॥

जलमें वंशी डारिया, अटकाया जहँ मांस ।
मछरी जानै हित कियो, लखो न अपनो नास॥३९३॥
भोंदू यह गति ना लखी, पडो कुमतिके धंध ।
ज्योंकी त्यों सूझी नहीं, किया मोहने अंध ॥३९४॥
सब ठग यह देखी नहीं, कपट हेत नहिं जान ।
इनहींमें मिलकर चलौ, समझौ ना अज्ञान ॥३९५॥
अब इनके छल कहतहूं, समझे होय उदास ।
जानै ना ह्वांई रहै, कहै चरणही दास ॥३९६॥

अव इनके छल कहि समझाऊं। भिन्न भिन्न परगट दिखलाऊं॥
पिता कहै तुम पुत्र हमारे। बहुत भरोसे मोहिं तुम्हारे ॥
अव तुम ऐसी विद्या पढो। अपने कुलमें ऊंचे चढो ॥
सत संगतिमें कभी न जइये। अपने घरमें चित्त लगइये ॥
हम तौ हैं दुनियाके कूते। जाति वर्णमें होहिं सपूते ॥
कृत्य करौ पालौ सुत वामा। कथा कीरतनकूं क्या कामा॥
अव तुम ठौर हमारी हूजे। हमने किये सो तुमहू कीजे ॥
ऐसी बुद्धि वडाई दीन्ही। इनहू हिरदैमें धरि लीन्ही ॥
चरणदास कहैं देखो प्यारा। मुये नरक जीवतही ख्वारा ॥

दोहा-पिता बुद्धि एंसी दई, रहिये कुटुँब मँझारि ।
जो कुछहै सो जगतमें, धन सम्पति सुत नारि॥३९७॥
हरिकी राह भुलाय करि, दीन्हो कुटुँब चिताय ।
तातै दुख जगमें घने, चौरासी भरमाय ॥३९८॥

अव सुन माताहूकी वातैं। अपना जानि सिखावै तातैं ॥
द्रव्य काज उद्यमहीं कीजै। लै, माताकी गोदी दीजै ॥
करै कमाई सोइ सपूता। नाहीं तौ वह पूत कपूता ॥
नारीकूं भूषण पहिरावो। सुत पुत्रीको ब्याह रचावो ॥

पूजो पित्तर देवी देवा । सकल कुटुँबकी कीजे सेवा ॥
अपने कुलको ज्योति जिमावो । ताते बहुत बडाई पावो ॥
बहु विधि स्वारथही सिखलावे । परमारथकी राह भुलावे ॥
बार बार जगमें उरझावे । ऐसे तौ नितही चलि आवे ॥
जितका तित ह्वांई रखि लीन्हा । चरणदास कहैं जान न दीन्हा॥

दोहा–माताहूने प्यार करि,बहुत दिया शिरभार ।
यहीं जो नीको धारिये,महल द्रव्य सुत नार ॥३९९॥

अब नारीकी गति सुनि लीजे । तामें चित कबहूं नहिं दीजे॥
छल बलकरि वश अपने राखे । मधुर वचन रसनासों भाखे ॥
कहै कि शिरके छत्र हमारे । हम तो लागीं शरण तुम्हारे॥
तुम तो बहुतै लगौ पियारे । सोकों तजि मत हूजो न्यारे ॥
ऐसे कहि कहि बांधा चाहै । आठों अंग कामके वाहै ॥
बस्तर भूषण देह सिंगारे । नानाविधि करि रूप सँवारे ॥
करै कटाक्ष बहुतही मारे । वश करनेको टोना डारे ॥
काजल भरी आँखकूं जोहै । अंग विष रस दै दै मोहै ॥
ह्वांसूं निकसन कैसे पावे । चरणदास शुकदेव सुनावे ॥

दोहा–तिरियाहीके जालमें, आय फँसे जो कोय ।
तलफि तलफि ह्वांई रहे,निकसि सके नहिं कोय॥४००॥

सुत पुत्री वनिताकूं जानों । समधान यासूं पहिचानों ॥
और बँधे बहुतै बँधवारा । नाई ब्राह्मण बहु परिवारा ॥
सेढ मशानी देवी भूत । ग्रह नक्षत्रहु लगे अऊत ॥
चौथ अहोई लागे मौन । तिरिया कारण साजो भौन ॥
औरो बहुत बखेडे जान । नारीसे तोहीं पहिचान ॥
महा अपरबल दुख तेहि माहीं । मरिके चौरासीमें जाहीं ॥

तातें हूजै वेगि उदास । समुझि तजौ तिरियाकी आस॥
श्रीशुकदेवहि चरणहिं दासा । सभी कुटुँब हैं नरकनिवासा ॥

दोहा–सुतकी बोली तोतली, करै चोचली चाय ।
मन मोहै बाँधै घनो, छूटन कौन उपाय ॥४०१॥
हँसि गोदीमें आयकरि, बहुत बढावै नेह ।
तामें घने विकार हैं, अन्तकाल दुख देह ॥४०२॥
मोह लगा मरजाय जब,तन मन लागै आग ।
चरणदास यों कहत हैं,सुख चाहै तो त्याग ॥४०३॥
जिहि कारण चिन्ता लगै,जबलग घटमें प्रान।
हरि गुरु हिये न आवई,यही जु पूरी हान ॥४०४॥
तन छूटै सुतमें रहै, एक न तेरी आस ।
जनम जु शूकरको लहै, मुये नरकही जास ॥४०५॥

कुटुँब बंध ऐसे करि जानौ । फाँसीगर तिनकूं पहिचानौ॥
तोकूं डारै नरक–मँझारा । तातें होहिं सबनसे न्यारा ॥
बहुतक दुर्जन हैं घटमाहीं । तू उनकूं जानत है नाहीं ॥
है वैरी तू जानत मीता । स्वपनेहूं इनकी नहिं चीता ॥
काम क्रोध अरु लोभ हु मोहा । सबही राखैं तोसूं द्रोहा ॥
जिनसे गर्व मछरता मारी । जगत बडाई तिनकी नारी ॥
आपा लिये सदाहीं रहै । टेढे वचन झूँठ बहु कहै ॥
इनके संग घनेही दुष्टी । तेरे तनमें रहैं अदृष्टी ॥
नितही करैं अकारज तेरा । चरणदास कहैं या विधि घेरा॥

दोहा–बहु वैरी घटमें बसैं, तू नहिं जीतत कोय ।
निशिदिन घेरेही रहैं, छुटकारा नहिं होय ॥४०६॥

जो कहुँ निकसि बाहरै आवै । अरु विरक्तका रूप बनावै ॥
कुटुँब छोडि उपजै वैरागा । जगत रहा चरणोंसे लागा ॥

कछू वासना मनमें धँसी । जवहीं लोक बडाई हँसी ॥
पुष्ट भयो आपा अभिमान । सहजहि आया मोह दिवान॥
सवही संगी लिये बुलाय । या विरक्तकूं घेरो आय ॥
ताकूं बांधि मुरंडा कीन्हा । फेरि कुटुम्बके माहीं दीन्हा ॥
कुटुम्ब मित्र गाढा करि बाँधा। बडी बडी आँडि ऐसा आंधा॥
चरणदास कहें घरमें आया । घटके दुर्जन वाहि वँधाया ॥

दोहा—कुनवेमेंसे निकसि करि, फिर कुनवेमें जाय ।
निश्चय नरकी होयगा, दुनियामें दुख पाय ॥४०७॥

एक दृष्टान्त ।

एक तपोवनमें जा रहा । शीत उष्ण पावस शिर सहा ॥
सूखे पातों किया अहारा । छूटे सवही जग व्यवहारा ॥
रहे ध्यानमें निशिदिन लागा। हरिके चरणकमलमें पागा ॥
महिमा सुनि राजा तहँ आया। दे परिकरमा शीश नवाया ॥
हाथ जोरि ठाढो फिरि भयो। तपसी मुख ना वैठन कह्यो ॥
ठाढे भये वार वहु भयी । तव राजाने मनमें कही ॥
यह तपसी है वहु अभिमानी। सो आवन महिमा नहिं जानी॥
ऐसी कहि मनमाहीं ऐंठा । आपहि आप भूप वह वैठा ॥

दोहा—जो हरिके रँगमें रँग, भूपनसूं क्या काम ।
चरणदास कुछ भय नहीं, ना कुछ चहिये दाम॥४०८॥

तपसी कछू न मुखसूं भाषा । राजा उठि चढि मारग लागा॥
क्रोध भरा महलनमें आया । खोटा मनमें मता उपाया ॥
पातुरि भेजि वाहि अजमाऊं । भेद झूठ सांचेको पाऊं ॥
जवहीं पातुरि लई वुलाई । ये वातें वाकूं समुझाई ॥
कहै पातुरी आज्ञा दीजे । देखि तमाशा वाका लीजे ॥
आयसु लै पातुरि घर आई। प्रथमें लौंडी एक पठाई ॥

वा तपसीका लावो भेद । कौन वस्तुसे वाको हेत ॥
कहाँ सु भोजन करै अहारा । छुटै भजनसूं कौनी बारा ॥
बाँदी गई भेद सो लाई । पातुरिकू सब बात सुनाई ॥

दोहा-झारे जा मुख धोयकै, फिरि तलावमें न्हाय ।
चरणदास फल पात जो, गिरै पडेही खाय ॥४०९॥

पातुरि सुनि मनमें डरपाई । कैसे वाकूं वश करुं जाई ॥
विन वश किये भूप नहिं रीझै। काढि नगरसूं बहुतै खीझै ॥
तातें मकर पेंच कछु कीजै । तपसी काम नरकमें लीजै ॥
जो कहुँ इच्छा नेकहु पइये । छलबल करि वा मदन जगइये॥
यह विचार पातुरि जब कियो। नाना विधि भोजन करि लियो॥
गई तहां तपसी अस्थाना । वह तौ करत हतो हरि ध्याना॥
बैठ रही धीरज उर धारी । जबलग उठै ध्यान निरवारी ॥
उठे ध्यानते आँखें खोली । करि दण्डवत नारि यों बोली॥
पुत्र नहीं हमरे घरमाहीं । जिस कारण दर्शनकूं आई ॥
यह कहि भोजन आगे राखा। तपसी भोजन लिया न भाखा॥
वा दिन तौ योंही उठि आई। अंगुली टिकन ठौर नहिं पाई ॥
दूजे दिन गइ वहुत सवारा । न्हाकर आये थे उहि बारा ॥
कहा कि भोजन हमरा कीजै । हमरे नैननको सुख दीजै ॥
तपसी कहै न चित्त डोलाऊं । सूखे पात और फल खाऊं ॥
पातुरि कहै दूरसूं आई । तुम तौ दयावंत सुखदाई ॥
यही मान मेरो तुम राखो । वहुत नहीं अँगुली भरि चाखो॥
कहि कहि वचन वाहि पघिलाया।अंगुली भरि भोजन चटवाया॥
चाटत चाटत चाटत रहा । रणजित कहै यों मन वहि गया॥

दोहा-पातुरिने कर जोरि करि, बहुरो वचन सुनाय ।
एक वार अरु लीजिये, इन्द्रीजित ऋषिराय॥४१०॥

फिरि मागी अंगुली धरि लीन्हा । वहरौ मुखके माहीं दीन्हा ॥
अंगुली टिकन काम करि आई। घर आकर बहुते हुलसाई ॥
फिर ह्वां दिना चार ठहराई । उत नहिं गइ यही मन आई ॥
पातुरि चतुर ढीलकूं गई । तपसी कही कहां तुम रही ॥
जबहीं पातुर प्रीति पिछानी । अपनी कला पैठती जानी ॥
वा दिन व्यंजन कछू न लाई। बहुविधि भोजन बात सुनाई ॥
घर ठाकुर सेवा चित लाऊं । नानाविधिके भोग लगाऊं ॥
ले आज्ञा निज भवन पधारी । चरणदास कहै छल कियो नारी॥

दोहा—तपसीकूं जीतन कियो, टेक बाँधिकरि वाद ।
हौरे हौरे लायहूं, या जिह्वाके स्वाद ॥४११॥
नानाविधिके स्वाद करि, लै गइ वाही पास ।
कह्यो कि यह परसाद है, लीजै कोई ग्रास ॥४१२॥

ठाकुरको परसाद जु लीजै । याको नाहीं कबहुं न कीजै ॥
नाहीं किये होय अपराधा । तुम तौ कहिये पूरे साधा ॥
कछूक पातुरि वचन सुनायो । कछूक तपसीके मन आयो ॥
डारो हाथ थारके माहीं । ज्यों ज्यों खात सराहत जाहीं॥
पातुरि कह्यो सदा लै आऊं । जो जो ठाकुर भोग लगाऊं ॥
यामें कछू दोष नहिं लागै । तन मनका सब पातक भागै॥
वाकूं वश करिकै घर आई । सखियनकूं यह कथा सुनाई॥
कामदेवकी सौगँध खाऊं । तपसी बँधुवा करि दिखलाऊं॥

दोहा—रसना स्वादहि वश किये, मनमें जीतन वाद ।
कभी आप बांदी कभी, पहुँचायो परसाद ॥४१३॥

कबहुं वा तपसी ढिग आवै । नानाविधिके भोजन खावै ॥
कबहुं भेज बांदी हाथा । कहिये छुट्टी मोहिं न नाथा ॥
वह जानै मम सेवा करै । यह तो भजन तपस्या हरै ॥

एक दिना पातुरि ह्वां गई । हाथ जोरि भाषत यों भई ॥
कहो कि मेरे भवन पधारो । करौ पवित्तर जूँठनि डारो ॥
लावनकी बहु बात बनाई । सो तपसीके मन नहिं भाई ॥
ह्वांई रही टोना सो कीन्हों । तपसीको मन वश करिलीन्हों॥
दूजे रसकी कला दिखाई । मोह बडो अरु आँख लजाई ॥
भोर भये फिर बात सुनाई । छलबल करि घरही लै आई ॥
चरणदास तपसी नहिं जानी । अजहूं ठगनी ना पहिंचानी ॥

दोहा–घरमें ला बहु सुख दिया,दिना आठही राखि ।
तपसीहू वा वश भयो, पांचनसूं रस चाखि ॥४१४॥

इन्द्रीवश पातुरि घर आया । अपने तपका तेज घटाया ॥
सिमटा मन भया फूटकफूटा । लागा ध्यान रामका छूटा ॥
देखो घरके वैरी किया । पकड बांधि औरै करदिया ॥
फिर पातुरि राजा पै गई । तपसी ठगन बात सब कही ॥
नेक नेक सब कहि समझाई । तब राजाकूं हाँसी आई ॥
योंही कही वेगि लै आवो । वाकी सूरत हमैं दिखाओ ॥
फिर पातुरि उलटीही धाई । तपसीकूं इक बात सुनाई ॥
राजा दर्शन करन बोलावै । जितसेती खानेकूं आवै ॥
वाकूं चलिकरि दरशन दीजै । किरपा प्यार बहुतही कीजै ॥
हम तौ उनकी सदा कहावैं । नित उठि करि मुजरेको जावैं॥
ह्वां तौ अपना घरही जानौ ।उठिये चलिये सकुच ना मानौ॥
पाछे तपसी आगे वाला । ऐसे राज दुआरे चाला ॥
जा राजाकूं दई अशीशा । राजा बैठे नायो शीशा ॥
हँसकरि कही जु किरपा कीन्हा।यह नगरी अपनी करिलीन्हा॥
घर बैठे हम दर्शन पाये । वै धनि हैं जो तुमको लाये ॥
तपसी कही धन्य तुम राजा । बहुतनको सारत हौ राजा ॥

तुम्हरो तेज देखि हम चीन्ही । तुमहूँ तपस्या आगे कीन्ही॥
विना तपस्या राज न पावै । वेद पुराणनमें यों गावै ॥
हमहूँ दर्शन तुम्हरे पाये । तपसी कहि यों वचन सुनाये॥
भूपति वहुत अचम्भा कीन्हा । वहुत द्रव्य पातुरिको दीन्हा॥
फिर राजा तपसीसूं बोला । खोट हियेका सवही खोला॥
एक दिना हम तुम ढिग धाये । वनमें तुम्हरे दर्शन पाये ॥
ठाढ रह्यो हीं वहुतीं वारा । ना तुम बोले नैन उघारा ॥
आज योग ऐसा हद कीन्हा । ह्यांई आ तुम दर्शन दीना ॥
यह सुनि तपसी शोचि विचारा । तवही पातुरिसूं भयो न्यारा ॥
वेगहि उठि जंगलकूं गया । चरणदास कहै रमता भया ॥

दोहा–जो इंद्रिनके वश भयो, यही हाल है जाय ।
पछतावा मनसें रहै, करै हाय दुख हाय ॥४१५॥

पांचों चोर महा दुखदाई । सोया जगमें देह फँसाई ॥
तन मनकूं वहु व्याधि लगावैं । कायिक वाचिक पाप चढावैं॥
करम लगा वहुतै भरमावैं । यमके छप्पन वास दिखावैं ॥
फिर चौरासी माहिं फिरावै । जठर अग्निमें ताहि तपावै ॥
जन्म मरण भारी दुख देवै । मानुष देहका सर्वस लेवै ॥
तीन लोकमें डोलै हाला । सुरपुर मृत्यु और पाताला ॥
कैसे मुक्ति धामकूं पावै । जो इन्द्रिनके वश हो जावै ॥
छूटै जव गुरु किरपा करैं । चरणदासके शिर कर धरैं ॥

दोहा–स्वारथकेही सव सगे, कुटुंव मित्र कुल गोत ।
परमारथ समझावई, जो दयालु गुरु होत ॥४१६॥
परमारथमें दुख मिटै, कलह कल्पना जाय ।
स्वारथमाहीं सुख नहीं, तामें चित न लगाय॥४१७॥
स्वारथमें चिन्ता घनी, जो ह्वांकर हो गेह ।

विना आगकी चितामें, जीवत जरि है देह ॥४१८॥
चिन्ता घटमें नागिनी, ताके मुख हैं दोय ।
निशिदिन खाये जात है,जानसकै नहिं कोय॥४१९॥
ता घट चिन्ता नागिनी, जा मुख जप नहिं होय।
जो टुक आवै याद भी, वहीं जाय फिरि खोय॥४२०॥
चिन्ताहीसूं लगत है, चरणदास उर आग
तहां ध्यान हरिचरणको, कैसेही अब लाग ॥४२१॥
जगत वासनाके विषे, घर चिन्ताका जान ।
जगकी आशा छोडकरि, हरि सुमिरणही ठान ॥४२२॥
आशा नदीमें चलै, सदा मनोरथ नीर ।
परमारथ उपजै वहै, मन नहिं पकडै धीर ॥४२३॥
धीर विना नहिं ध्यान है,निश्चल जप नहिं होय।
जो चाहै हरिभक्तकूं, जगत वासना खोय ॥४२४॥
जबलग जगसूं प्रीति है,तबलग दुःख अपार ।
भय भारी चिन्ता धनी, भवन पिछानौ दार॥४२५॥
जगसूं छुटि बाहर परै, उसी समय सब चैन ।
उपजै आनँद परमहीं, तहँ कुछ लेन न दैन ॥४२६॥
रहै एक हरिभक्तिहीं, बाधा सब छुटि जाहिं ।
जबै राम अपनो करैं, वेगहि पकरैं बाहिं ॥४२७॥

तातै सुन मन मेरे मीत । जक्त छुटनकी राखो चीत ॥
ऐसा अवसर फिर नहिं पावै । काहे मानुप देह गँवावै ॥
संगी तेरा नहिं धन धाम । तू क्यों पचै मूढ बेकाम ॥
पिछली गई तासकूं रोय । आगे रही योंहि मत खोय ॥
इकइक घरी अमोलक जान । चेत चेत मत होय अजान ॥
अपने घरका करो सँभाल । ललकारत आवत है काल ॥

यातें कीजे यही विचार । डारि सिदौसी जगजंजार ॥
शुकदेव कहें सुन चरणहिं दास । हरिके चरणकमल कर वास ॥
दोहा–यामें ढील न कीजिये, यह विचार मन आन ।
चरणदास यों कहत है, यह गो यह मैदान ॥४२८॥
आयुर्दा यों जात है, ज्यों तरुवरकी छांह ।
चेत सितावी भक्तिमें, तजो जगतकी वांह ॥४२९॥
तूही पकरो जगतने, तैंहीं पकरो आय ।
ज्यों नलिनीको सूवटा, धोखे पकडो जाय ॥४३०॥
जैसे बांदर आपहि फँसिया । समझवान मनमाहीं हँसिया ॥
मूठ चनोंकी जो वह तजता । तौ काहेकूं फँसा जु रहता ॥
ज्यों कांटेसूं मच्छी लागी । आपहि आई चली अभागी ॥
सरुवरमें तरुवरकी छाहीं । अजया देखि गिरी वा माहीं ॥
जैसे पक्षी जाल मँझारा । आपहि आय फँसा वजमारा ॥
खन्दकमें हाथी आ परिया । लेनगयो कोउ आपहि गिरिया ॥
बाजत बीण मृगा चलि आया । पकर कौन चंचलकूं ल्याया ॥
योंहीं तुम अपनी गति जानौ । आपहि बँधे यही पहिचानौ ॥
ऐसे जगने तोहिं नहिं पकडा । चरणदास कहें योंहीं जकडा ॥
दोहा–छोड जगतकी वासना, यही जु छुटन उपाव ।
ये मन ऐसी धारिये, अवहीं नीको दांव ॥४३१॥
अवकी चूके चूक है, फिर पछितावा होय ।
जो तुम जक्त न छोंडिहौ, जन्म जायगो खोय ॥४३२॥
जगमाहीं न्यारे रहो, लगे रहो हरिध्यान ।
पृथ्वी पर देही रहै, परमेश्वरमें प्राण ॥४३३॥
ज्यों तिरिया पीहर वसै, सुरति पियाके माहिं ।

---

१ बन्दी ।

ऐसे जन जगमें रहैं, हरिकूं भूलैं नाहिं ॥४३४॥
ज्यों किरपण बहु दामहीं,गाडि जिमीके नीच।
सदा वाहि तकतो रहै,सुरति रहै ता बीच ॥४३५॥
तन छूटै हो सरपही, जा बैठे वा ठौर।
जहां आश तहँ वास है, कहूं न भमैं और ॥४३६॥
चित रहै गोविंदके विषै,जगमें सहज सुभाय।
तन छूटै हरिकूं मिलै, चरणकमल लपटाय ॥४३७॥
जग त्यागो वैराग लै, निश्चय मनकूं लाव।
आठ पहर साठौ घरी,सुमिरन सुरति लगाव॥४३८॥
सबसूं रहु निरवैरता, गहौ दीनता ध्यान।
अंत मुक्तिपद पाइहौ, जगमें होय न हान ॥४३९॥
चरणदास यों कहत हैं, बडी दीनता जान।
औरनकी तो क्या चलै, लगै न माया बान ॥४४०॥
दया नम्रता दीनता, क्षमा शील संतोष।
इनकूं लै सुमिरण करै, निश्चय पावै मोष ॥४४१॥
ये सब लक्षण रामसें, प्रगटत देखैं मोहिं।
जो वे आवैं तुझविषै, प्यार करैं हरि तोहिं ॥४४२॥
हरिसूं प्रीति लगायकै, सबसों लेहि उठाय।
रहै सदा इक रामहीं,और सकल मिट जाय॥४४३॥
मिटतेसूं मत प्रीति कर, रहतेसूं कर नेह।
झूठेकूं तजि दीजिये, सांचेसें करि गेह ॥४४४॥
सांचा हरिका नाम है, झूठा यह संसार।
शुकदेव कहै चरणदास हो,सुमिरण करो विचार॥४४५॥
दश इंद्रिनकूं खैंच करि,अभय अमर फल चाख।
सहजहि सुमिरण होत है, तामें मनकूं राख ॥४४६॥

मानसरोवर देहमें, मुक्ताहल जो श्वाँस ।
चुगिये हंस स्वरूप है, खुलै कर्म्मकी गांस ॥४४७॥
अजपाको यहि अर्थ है, विना जपेही होत ।
कछुवाकी ज्यों सिमट करि, तहां लगावो गोत ॥४४८॥
आवतहीकूं देखिये, जातेकूं जो निहारि ।
ऐसे सुरत लगाइये, चरणदास हिय धारि ॥४४९॥
सकारेतन सींचिये, हकारे सुख होय ।
ऐसे सुमिरण सत्तकूं, जानै विरला कोय ॥ ४५० ॥
नाभिहिसेती उठतहै, फिर तामाहिं समाय ।
याको भेद अपार है, सद्गुरु देहि बताय ॥४५१॥
नाभि नासिकामाहिं करि, घाल हिंडोला झूल ।
उपजे अति आनन्दही, रहै न दुखका मूल ॥४५२॥
ब्रह्म सिंधुकी लहर है, तामें न्हान सजोय ।
कलिमल सब छुटि जायँगे, पातक रहे न कोय ॥४५३॥
अरसट तीरथ तो विषे, बाहर क्यों भटकाव ।
चरणदास यों कहत है, उलटाही घर आव ॥४५४॥
श्वासा सँभल विचारि करि, तहां करो विश्राम ।
जाते हरिही हरि कहो, आवत कहिये श्याम ॥४५५॥
श्वासा लेवै नाम विन, सो जीवन धिक्कार ।
श्वास श्वासमें राम जप, यही धारणा धार ॥४५६॥
उलट पलट जप रामही, टेढा सीधा होय ।
याका फल नहिं जायगा, कैसेही लो कोय ॥४५७॥
खाते पीते नाम ले, बैठे चलते सोय ।
सदा पवित्तर नाम है, करै उजला तोय ॥४५८॥
नीचनकूं ऊंचा करै, ऊंचनको कर देव ।

देवनकूं हरिही करै, रहै न दूजा भेव ॥४५९॥
भरमंत भरमत आइया, पाई मानुष देह।
ऐसो अवसर फिरि कहां, नाम शिताबी[1] लेह॥४६०॥
कै घरमें कै बाहरे, जो चित आवै नाम।
दोनों होहिं बरावरी, कै जंगल क ग्राम ॥४६१॥
करै तपस्या नाम विन, योग यज्ञ अरु दान।
चरणदास यों कहत हैं, सवही थोथे जान ॥४६२॥
अधिकी ऊंचा नाम है, सब करणीका जीव।
अष्टादश अरु चारिका, मथिकरि काढा घीव ॥४६३॥
चारों युगमें देखि ले, जिन जपिया जिन नाव।
टेक पकरि आगे धँसे, परा न पीछे पाव ॥४६४॥
जैसी गति इनकी भई, गावत साधु पुरान।
वैसी तेरी होयगी, यह निश्चय करि जान ॥४६५॥
दुख धन्धकूं छोडिकरि, कलह कल्पना त्याग।
शुकदेव कहि चरणदासकूं, रामभजनमें लाग ॥४६६॥
हरिके गुण माला करौ, रसना ऊपर लाव।
किया कियाही देखिकरि, ताहि सराहत जाव ॥४६७॥
देखि देखि देखत रहो, अस्तुति मुखसूं भाख।
वाकी चतुराई सबै, लेकरि मनमें राख ॥४६८॥
वैसा तो रँगरेज ना, वैसा छीपी नाहिं।
वैसा करीगर नहीं, या दुनियाँके माहिं ॥४६९॥
अजब अजब अचरज किये, अद्भुत अधिक अपार।
जलथल पवन अकाशमें, देखो दृष्टि उघार ॥४७०॥

---

1 जल्दी।

सृष्टि बाग माली रच्यो, भाँति भाँति गुलजार ।
रीझरीझ शिर दीजिये, एहो निरख बहार ॥४७१॥
कबहूं जग परगट करै, कबहूं करै अलोप ।
नानाविधि बाजी करै, आप रहत हैं गोप ॥४७२॥
बाजीगर बाजी रची, सब गति पूरण साज ।
किये तमाशे बहुतही, तोहिं दिखावन काज ॥४७३॥
देखी होय परसन्नहीं, तू वाको गुण मान ।
चरणदास जो बुद्धि है,अधिक सुघरता जान॥४७४॥
बहुत प्यार तोपै करै, तू नहिं जानत सार ।
वाहि भुला योंही रहै, नेक न करै सँभार ॥४७५॥
राम बिसारो आदिसूं,लियो द्रव्य अरु नार ।
याहीते भरमत फिरो, तन धरि बारंबार ॥४७६॥
गई सु गइ अब राखिले, एहो मूढ अयान ।
निष्केवल हरिकूं रटौ, सीख गुरूकी मान ॥४७७॥
सोवनमें नहिं खोइये, जन्म पदारथ पाय ।
चरणदास ह्वै जागिये, आलस सकल गँवाय॥४७८॥
सोवनहीमें हानि है, जागनमें बहु लाभ ।
बुद्धि उज्ज्वलही होत है,मुखपर चढै जु आभ॥४७९॥
दिनकूं हरि सुमिरण करो,रैनि जाग करि ध्यान।
भूँख राखि भोजन करौ,तजि सोवनकी बान॥४८०॥
चारि पहर नहिं जगि सकै,आधी रात सु जाग ।
ध्यान करो जपही करो;भजन करनकूं लाग ॥४८१॥
जो नहिं श्रद्धा दो पहर, पिछिले पहरे चेत ।
उठ बैठे रटना रटै; प्रभुसूं लावहि हेत ॥४८२॥
जागै ना पिछिले पहर, ताके मुखडे धूल ।

सुमिरै ना करतारकूं, सभी गँवावै मूल ॥४८३॥
जागै ना पिछिले पहर, करै न आतमध्यान ।
ते नर नरकै जाइँगे,बहुत सहैं यमसान ॥४८४॥
जागै न पिछिले पहर,करै न गुरु मत जाप ।
मुँह फारे सोवत रहै, ताको लागै पाप ॥४८५॥
पिछिले पहरे जागिकरि,भजन करै चितलाय ।
चरणदास वा जीवकी,निश्चय गति है जाय ॥४८६॥
पिछिले पहरे जागि करि,भरिभरि अमृत पीव ।
विषय जक्तकी ना रहै,अमर होय करि जीव॥४८७॥
जन्म छुटै मरणा छुटै,अवागमन छुटि जाय ।
एक पहरकी रातसूं, बैठा हो गुण गाय ॥४८८॥
पहिले पहरे सब जगै, दूजे भोगी मान ।
तीजे पहरे चोरही, चौथे योगी जान ॥४८९॥
मरयादाकी यह कही, क्या विरक्त परमान ।
आठ पहर साठों घरी, जागै हरिके ध्यान ॥४९०॥
जे कोइ विरही रामके, तिनकूं कैसी नींद ।
शस्तर लागा नेहका, गया हियेको बींद॥४९१॥
तिनसूं जग सहजै छुटा, कहाँ रंग कहँ भूप ।
चले गये घर छोडिकै, धरि विरक्तका रूप ॥४९२॥
जिनको मनविरकत सदा,रहौ जहाँ चित होय।
घर बाहर दोउ एकसा, डारी दुविधा खोय॥४९३॥
सोये हैं संसारसूं, जागे हरिकी ओर ।
तिनकूं इक रसही सदा,नहीं सांझ नहिं भोर॥४९४॥
उनकूं नींद न आवई, राम मिलनकी चीत ।
सोवै ना सुख सेजपै, तजिकै हरिसों मीत ॥४९५॥

कैसे व हरिसूं मिले, जिनके ऊंचे भाग ।
कैसे व हरि त्यागिके, रहे जगतसूं लाग ॥४९६॥
सोवन जागन भेदकी, कोइक जानत बात ।
साधूजन जागत तहां, जहां सबनकी रात ॥४९७॥
जो जागे हरिभक्तिमें, सोई उतरै पार ।
जो जागे संसारमें, भवसागरमें ख्वार ॥४९८॥
कै जागत हूका भरा, कै जागा वश काम ।
कै जागा जग टहलमें, लाग रहो धन धाम ॥४९९॥
ऐसे जन्म गँवाय दिय, महामूढ अज्ञान ।
चौरासीमें फिरि चलै, मनका कहा जु मान॥५००॥
सद्गुरु शरणै आयकरि, कहा न मानै एक ।
ते नर बहु दुख पाइ हैं, तिनकूं सुख नहिं नेक॥५०१॥
सद्गुरु चरणों ना लगे, किया न हरिका खोज ।
सो खर कूकर शूकरा, अरु जंगलका रोझ ॥५०२॥
पेट भरे भर सोइया, ते नर पशू समान ।
परनारी कै आपनी, तिनको नाहीं ज्ञान ॥५०३॥
जैसा तैसा खायकरि, पेट भरे भरि लेह ।
पडकर सोवै भोरलौं, सो शूकरकी देह ॥५०४॥
हरि चरचा बिन जो बकै, सो कूकरकी भूस ।
कह रणजित वह सांझलौं, खाय घूंसही घूंस॥५०५॥
जो पावै सोई चरै, करै नहीं पहिचान ।
पीठ लदै हरि ना जपै, ताकूं खरही जान ॥५०६॥
रोझ जान वा देहकूं, ताकूं नहीं विचार ।
फिरै विना मर्य्यादही, बहुता करै अहार ॥५०७॥
बहुता किये अहारही, मैलो रहै जु बुद्धि ।

हरिके निर्मल नामकी, कैसे आवै शुद्धि ॥५०८॥
सूक्षम भोजन खाइकरि, रहिये ना पारि सोय ।
ऐसी मानुष देहकूं, भक्ति विना मत खोय ॥५०९॥
जन्म चलोही जात है, ज्यों कूवेमें लाव ।
दौरत मृगकी छाँवको, नेक नहीं ठहराव ॥५१०॥
समझ शिताबी भक्ति ले,नेक न ढील लगाव ।
आपा हरिकूं दे चुको, याको यही उपाव ॥५११॥
जगका कहा न मानिये, सद्गुरुसों लै बुद्धि ।
ताकूं हियमें राखिये, करो शिताबी शुद्धि ॥५१२॥
गुरुसेती सद्गुरु वडे, परमेश्वरके रूप ।
मुक्ति छाँह पहुँचाय दें, जगत छुटावें धूप ॥५१३॥

कुण्डलिया-पहिला गुरु दाई कहूँ, दूजे माई जान । तीजा गुरू खिलावडी, चौथा पिता पिछान ॥ चौथा पिता पिछान पाँचवे पाधा जानौं । कनफूका गुरु छठा तास पूजा दे मानौं ॥ सतवां सद्गुरु जानिये,जगसूं करैं उदास । मुक्तिधाम सोइ देत हैं कहैं चरणही दास ॥

दोहा-गुरु मिलते ऐसे कहै, कछू लाय मोहिं देह ।
सद्गुरु मिल ऐसे कहै, नाम धनीका लेह ॥५१४॥
कनफूका गुरु जगतका,राम मिलावन और ।
सो सद्गुरुको जानिये,मुक्ति दिखावन ठौर ॥५१५॥
गलियारे गुरु फिरत हैं, घर घर कंठी देत ।
और काज उनकूं नहीं, द्रव्य कमावन हेत ॥५१६॥
सद्गुरु डंका देत हैं, भक्ति रामकी लेहु ।
पहिले हमकूं भेंटही, शीश आपनो देहु ॥५१७॥

सो सद्गुरु शुकदेव हैं, समझि हियेमें राखि ।
तिनके शरणे आव मन, चरणदास कहे भाखि ॥५१८॥
यह सिगरो उपदेशही, मैं आपनकूं कीन ।
सो मनकूं आपा घना, कहीं होय आधीन ॥५१९॥
सद्गुरुसूं मांगों यही, मोहिं गरीबी देहु ।
दूर बडप्पन कीजिये, नान्हाही करि लेहु ॥५२०॥
जनक परमगुरु देवजी, सुनु सद्गुरु शुकदेव ।
यही अर्ज मैं करतहूं, मोहिं साधु करिलेव ॥५२१॥
चारो युगके भक्तजन, तुम हो सुखके धाम ।
चरणहिंदासा होयकै, तुम्हें करूं परणाम ॥५२२॥
आदि पुरुष किरपा करो,सब अवगुण छुटिजाय।
साध होन लक्षण मिले, चरणकमलकी छांहिं॥५२३॥
तुम्हरी शक्ति अपार है, लीलाको नहिं अंत ।
चरणदास यों कहत हैं, ऐसे तुम भगवंत ॥५२४॥

छप्पय—रच्यो आपमें जगतरूप नारायण कीन्हों। दूजे लक्ष्मी भई बहुरि पानी रँग भीन्हों ॥ नाभिकमल फिरि भयो जहां ब्रह्माजी उपजे।विधिकी त्रिकुटी माहिं तहां शंकरजी निपजे ॥ चारि वेद अरु विष्णु ह्वै सकल जगत छिनमें कियो । निराकार आकारसों चरणदास जिहिं मन दियो ॥

कवित्त ॥ वही तो अडिग्ग राम चौथे पद वास जाको,वही तो अडिग्ग राम मथुरामें आयो है ।वही तो अडिग्ग राम योगी जाको ध्यान धरै,वही तो अडिग्ग राम सीतापति पायो है॥ वही तो अडिग्ग राम सभी ठाम रमि रह्यो, वही तो अडिग्ग राम संतन सहायो है । वही तो अडिग्ग राम चरणदास चरो जाको, वही तो अडिग्ग राम काया खोजि पायो है ॥ माया-

भ्रम फंद देख साधनको संग पेख, रामको पहिरि भेख कंचन तन ताव रे । मनकूं पहिचान ज्ञान एकाएकी सबै जान, नादके गहेते तू अनहद बजाव रे ॥ उलटि पलटि काया बीच चारो कर दूर, ऐसी विधिमेरुपै समीरकूं चढाव रे । कहैं चरणदास गगन मध्य करो वास, जहां नहीं शीत उष्ण निर्भय पद ध्याव रे ॥

दोहा–दुर्योधन रावण गये, अरु यादव परिवार ॥
चरणदास थिर कोइ नहीं, होय मिटै संसार ॥५२५॥

कवित्त ॥ भोरसो विहानो जाव ढरगी दुपहरीसी, समझ विचारि देखि चली आवे रात है । भवँत सुचान काल तेरेपर तकि रहो, छिन पलकी खबर नाहिं करे आय घात है ॥ दारा सुत द्रव्य सब सपनको सुख भयो, जानहुगे जभी जब छूटिजाय गात है । कहै चरणदास अब तजे क्यों न विषय वास, पानीमाहिं नाव जैसे आयु चली जात है ॥ कुमारगसूं भाज और लाज खोटे करमनसूं, चौरासीके त्रासनसूं मूढ क्यों न लज रे । साधुनके संग बैठि धर्महूकी नाव लेटि, गुरुहूको ज्ञान राखि प्रेम भक्ति सज रे ॥ छूटैं जब नारी यम देवैं दुख भारी डारैं, नरकमँझारी आवागमन क्यों न तज रे । कहै चरणदास तजै क्यों न विषय वास, गमके सँवारे अब रामराम भज रे ॥

सवैया ।

भूलि रहो जगमें जडता वश, दारा सुता सुत प्रीति बढावै । इनसूं मन बाँटि रहो गृहबीच सो, अन्तसमै कोइ पास न जावै आनि गहे यमजाम तेरो सबही, मिलि प्रीतम राम बतावै । चरणदास कहै चेतो नर मूरख, राम विना कोइ काम न आवै

कवित्त ॥ धावै भस्म देवनकूं भीतनके लेवनको, कोई संग साथी नाहिं भीर परे तेरा है । परसता है चण्डकी भूत अरु शीतलाकूं, भज क्यौं न रामनाम कटै यम वेरा है ॥ भैरों अरु

वराही पाखंड पूजा सभी करै, है सब हरि किन्हूं नैनन न हेरा है ॥ चरणदास कूर सब सन्तनको चेरो कहैं,ऐसा जग अन्धा जानि कर्मनने घेरा है ॥

दोहा–यंतर टोना मूड हलावन, और कीमियाँ झूठ ।
चरणदास कहैं सब भग लहै,यह जग लीन्हालूट॥५२६॥

कवित्त–भूतन सो भूतनमें जाय मिलै, जादू को सेवै सो चमार ताकी माईसूं । देवतोंकूं सेवै तौ देवलोक वास लहै, औषधीकूं सेवै तौ मिलाप रावराईसूं ॥ कीमियां सेवै तौ खराब होय दुनियामें, ऐसे धन खोवै जो सुनावै नहि भाईसूं । कहै चरणदास हम इतनेकूं मानैं नाहिं, देखी सबी छाँडि मान लगो हैं कन्हाईसूं ॥

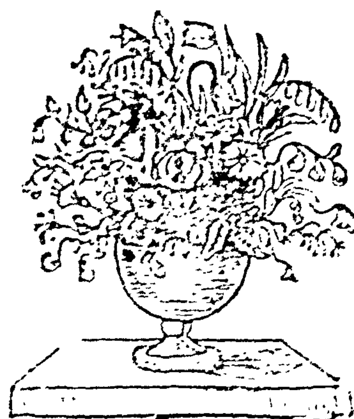
कुं०–पारा मारा ना मरै, गंधक होय न तेल ॥
केते पचि पचि मरिगये, शिरमें मिट्टी मेल ॥
शिरमें मिट्टी मेल भटक करि जन्म सिरायो ॥
जडी बूटिकूं फिरे कहीं कुछ हाथ न आयो ॥
बौरे हरि क्यों न भजै काहे जन्म सिरायो ॥
चरणदास कीमियां झूठो गुरु शुकदेव सुनायो ॥

अरिल्ल ॥ सात पांचकी सेवत जो लगि एकसूं ॥ साधनकी करिसेव मुडो मत भेपकूं ॥ भेपी माहिं अलेख यही तू जानियो । चरणदासकी सीख निश्चय करि मानियो ॥

दोहा–आपै भजन करै नहीं, औरै मने करैं ।
चरणदास कहैं वे दुष्ट नर, भर्मभर्म नरकै परैं॥५२७॥
औरनकूं उपदेश करि, भजन करैं निष्काम ।
चरणदास वे साधुजन, पहुँचे हरिके धाम ॥५२८॥

शून्य शहर हम वसत हैं, अनहद है कुलदेव ।
अजपा गोत विचारिले, चरणदास यहि भेव ॥५२९॥
भक्तिपदारथ उदयसूं, होय सभी कल्याण ।
पढें सुनें सेवन करैं, पावैं पद निर्वान ॥५३०॥
भक्तिपदारथ मैं कही, कछु इक भेद बखान ।
जो कोइ समझै प्रीतिसूं, छूटै यमदुख सान ॥५३१॥
पाठ करै मनसें धरै, वहुरू करै विचार ।
कहै गुरू शुकदेवजी, उतरै भवजल पार ॥५३२॥
जयजय श्रीशुकदेवजी, तुम्हैं करूं परणाम ।
तुम प्रसाद पोथी कही, भये जो पूरणकाम ॥५३३॥
हिरदयमें शीतल हुये, तपनि गई सब दूर ।
या बाणीके कहेत, कायर मन भयो शूर ॥५३४॥
चन्दन चरचै पुष्प धरि, वहुरि करै परणाम ।
कथा बांचि सवही सुनै, कहा पुरुप कह वाम ॥५३५॥
कहै सुनै जो प्रेमसूं, वाकूं राखै याद ।
चरणदास यों कहत हैं, बनिहो पूरे साध ॥५३६॥

इति श्रीस्वामिचरणदासजीकृतभक्तिपदार्थवर्णनं सम्पूर्णम् ।



॥ अवधूताय नमः ॥



# अथ मनविकृतकरनगुटकासार ।

—◇(०)◇—

दोहा—नमो नमो श्रीव्यासजी, सद्गुरु परमदयाल ।
ध्यान किये आशा नशै, लगै न जगत बयाल॥ १ ॥

अष्टपदी ।

नमो नमो शुकदेव तुम्हैं परणाम है । तुम किरपासों आप मिलैं घनश्याम है ॥ तुम्हरी दयासों होय जु पूरण योग है । तनकी व्याधा छुटै मिटै मन रोग है॥ तुव किरपासों ज्ञान पदारथ पाबई । उपजै सार विचार असार छुटावई॥ तुम्हरी दयासों होय भक्ति निस भोर है । हिय सरोवर उठत जु प्रेम हिलोर है॥ तुम किरपा बैराग दूर लगि आवई॥ सकल वासना छूटि परमपद पावई॥ सब गुणदायक लायक परमदयाल हौ॥ मम हिरदयमें आय

भेद सबही कहो॥मोसे कछु नहिं होय जू तुम विन नाथजू।नितहि रहै तुव हाथ जु मेरे साथजू॥ अरज करै रणजीत सुनो गुरुदेवजी। मो सुखसंती भापि कहो सब भेवजी॥

दोहा-एकादश भागवतमें, जाकी यह मति जान।
दत्तात्रेयीने कह्यो, राजा यदुसों ज्ञान॥ २॥
अब मैं भाषा कहत हौं, तुमहीं करो सहाय।
ज्योंकी त्यों सुखसे निकसि, पूरीही ह्वै जाय॥ ३॥
सुनियो ज्ञानी सन्तजन,रहन गहनकी चाल।
जो कोइ लै हिरदय धरै,होवै तुरत निहाल॥ ४॥
चरणदास हौं कहत हौं, परमारथके काज।
जो अँग श्रीभागवतमें,साधु होनके साज॥ ५॥
गुरु शुकदेव प्रतापसों, कहूं विचार विवेक।
दत्तात्रेयीने किये, चौबीसो गुरु देख॥ ६॥

कुं०-एक दिना यदुभूपही, खेलन गये शिकार॥
तहां नगरके निकट जो, ह्वां थी अधिक उजार॥
ह्वां थी अधिक उजार, एक अवधूता लेटे॥
मूरति पुष्ट प्रसन्न, जक्तके भय सब मेटे॥
राजा देखि प्रणाम करि, पूछा शीश नवाय॥
पाये आनँद कहां तुम, मोंसे कहो सुनाय॥

दोहा-बोले दत्तात्रेय तब, सुन हो भूप विशाल॥
चौविस शिक्षा गुरु किये,तासों भये निहाल॥ ७॥
कुं०-पृथ्वी पवन अकाश है,नीर अग्नि शशि भान॥
कपोत गुरु अजगर लखो,और सिंधुको जान॥

और सिंधुको जान पतंगा भँवरा कहिये ॥
माखी हाथी मृगा मीन अरु पिंगला लहिये॥
चील्ह बाल कन्या कहूं, तीर बनावनहार ॥
साँप माकरी भृंग जो, चौवीसों अरु उर धार॥

दोहा–भिन्न भिन्न अब कहत हौं, जुदो जुदो विस्तार ।
ताको सुनि करि चेतियो, चरणदास नर नार ॥ ८ ॥

अष्टपदी ॥ दत्तात्रेयकी बात सकल अब गायहौं । बीच चारि गुरु किये ताहि समुझायहौं ॥ जिस कारण जिस हेतु जु उन ऐसी करी । जो जो शिक्षा लई समझ हिरदय धरी ॥ जासों भजै मन रोग जक्त व्याधा नसी । उपजि परम संतोष क्षमा हिय आवसी ॥ भये परम आनंद परमपद पाइया । जीवन्मुक्ता होयके चाह उठाइया॥सोई कहूं अब साध सबै सुनि लीजिये । शुकदेव परीक्षितसों कहो सांच पतीजिये ॥ दत्तात्रेय अवतार श्रीभगवानके । राजा यदुसों बोलि वचन भाषत भये ॥ हमने गुरू चौवीस करे संसारमें । तिनको ज्ञान विचार कहूं निर्धारमें ॥ पहिले गुरुकी शरण गही बहु प्रीतिसों । उन दीनो उपदेश मंत्र जो रीतिसों ॥

दोहा–सद्गुरुने किरपा करी, धरो हाथ मम शीश ।
यही कही सुमिरण करौ, ध्यान करो जगदीश ॥ ९ ॥

अष्टपदी ॥ काया छीजत देखि यही मनमें धरो । विरथा खोव न आयु नेम तपको करो ॥ गहि विरक्तकी रीति तभी गृहको तजो । रामभक्तिको चाव हमारे मन रचो ॥ जगसों रहो उदास बास हरिपद जहां । छुटि छुटि जावें ध्यान न मन लागे तहां ॥ बालक गारी देइ कोई बोलै नहीं । शिरपै धारै खेह सोई बेकाजहीं ॥ हँसि हँसि ताली पीटि जु हमरे

सँग लगें। मैंहू चलो उठाय तौ वे आगे भगैं ॥ ताते निशि दिन क्रोध आपने मन धरूं। हरि सुमिरण गो भूल जक्तमें यों फिरूं ॥ अब शिक्षा गुरु कियो चौबीसौं भेदही। सो अब वर्णन करूं छुट सब खेदही ॥ तिनसों सीखी चाल सभी उरसें धरी। चरणहिं दास होय सुरती आनँद भरी ॥

पृथ्वी १

दोहा–पहिले गुरु पृथ्वी किया, तीन सीख लेइ तास।
गिरिवर तरुवर मही जो, भयो चरणको दास ॥१०॥

अष्टपदी ॥ पहिले पृथ्वी गुरू हमरो जानिये। ताते लइ मति तीन सांच हिय आनिये ॥ पहिले पर्वत एक मही ऊपर लखा। जा निकटै जाय जु चढि वैठा शिखा ॥ कोई ऊपर चढि जाय कोई आवे तले। जल वरषै ना बहै पवन सो ना हिले ॥ वा पर्वतकी सीख बुद्धिमें मानियां। देह लोभ दिय त्याग जु थिरता आनियां ॥ क्रोध दियो बिसराय जो तामस डारई। कोउ कहौ दुर्वचन कोउ क्यों न मारई ॥ क्रोध लोभ जो होय करै मन भंग है। कैस सुमिरण होय लगै हरि रंग है ॥ क्रोध लोभ छुटि जाय यह रहन अगाध है। पर्व्वतके सम होय जो निश्चय साध है ॥ वृक्ष कहूं अब जान जाकी मति पाइया। कहै चरणको दास जो चित्त लगाइया ॥

दोहा–तरुवरने काया धरी, परमारथके हेत।
कोऊ वैठै छाँहमें, कोऊ कारज लेत ॥ ११ ॥

अष्टपदी–दूजे देखे वृक्ष धरणि ऊपर भले। उनहूँकी लइ सीख गयो उनके तले ॥ मन न हुती यह बात जु पर काज करूं। या प्राणीके काज नहीं करतो फिरूं ॥ जब आई यह रीति वृक्षकी दृष्टिमें। मैं लीन्ही सोइ धारि भली विधि सृष्टिमें ॥

कोई बैठे छाहँ कोई डारी हनै।कोई ले फल फूल वृक्ष कछु ना भनै परमारथके काजवृक्षदेही धरी।सकल जीवव्योसाय कही मनस करी॥जो विरक्तसों काज कोई अपनो कहै । वाको नाटै नाहिं सभी शिरपर सहै॥काहूको कछु काज जो कायासों करै । यह शिक्षा भलि भाँति वृक्षकी मन धरै॥तीजे शिक्षा और महीकी धारिया।चरणहिं दासा होय अहूंको मारिया ॥

दोहा—कोई खोदै नीवको, कोई खोदै कूप ।
अरु ऐसे कारज किते, ऐसो धरो स्वरूप ॥ १२ ॥

अष्टपदी ॥ काहूको वह भलो बुरोहू ना कहै । ऐसे विरक्त रहै सभी दुख सुख सहै॥हरिसुमिरणमें मगन सदा आनँद रहै।भलो बुरा नहिं मान एकता दृढ गहै ॥

पवन २.

दूजे गुरु कियो पवन सीख लइ जासुकी।दोय भाँति पहिंचान हिये धारि तासुकी ॥ इक दिन वागके माहिं सहजही मैं गयो । देखन लाग्यो फूल जाय ठाढो भयो॥पुष्पनसों लगि पवनवास मोहिं आइया।जबहीं कीन्हों ज्ञान वास सब माइया ॥ वह तौ अतिहि सुगन्ध हर्ष उपजावई । फिर आई दुर्गन्ध बहुत अनखावई॥गन्धदिसों लगि पवन आप गन्धहि भई । फुनआई विन गन्ध शुद्ध निर्मल वही ॥ वाको देखि स्वभाव यही मन आइया । चरणहिं दासा होय अंग उपजाइया ॥

दोहा—एक दिना इच्छा करी, भिक्षा माँगी जाय ।
अपनी श्रद्धा उन दियो, भोजन करमें लाय ॥ १२ ॥

अष्टपदी॥वाकी अस्तुति नाहिं कछू मुखतें कही॥फिर गयो दूजे द्वार दई भिक्षा नहीं॥ जाकी निंदा नाहिं कछू उचारिया।

अस्तुति निंदा त्यागि यही जु विचारिया ॥ जिन कछु दीन्हों नाहिं नहीं औगुण धरो । जो कछु पहिले आयो सोइ भोजन करो॥जो कहुँ अपने काज गयो भलि ठांवहीं॥गरहण कीन्हों नाहिं रंग नहिं लावहीं॥जो गयो भोंडीठौर बुरो नहिं जानिया। आतमरूप सँभाल जहाँ मन आनिया॥सबहीसों निर्लेपसबनके माहिंहू। सहज भवनमें आय सहज कारि जाहिंहू ॥ परालब्ध जो पाय ताहि भोजन कियो।ना तौ कारि परणाम बैठि योहीं रह्यो॥जिह्वा लौहीं जान स्वाद भोजन सभी । इकरस सबही होय उदर जावै जभी॥अब आयो सन्तोष कलपना सब गई। चरणहि दास भयो जभी यह मति लई ॥

आकाश ३.

दोहा-तीजे गुरु आकाशको, कीन्हो सभाँ सभार ।
जाकी मतिके लेतही, पायो ब्रह्म-विचार ॥१४॥

अष्टपदी॥तामें बरसै मेह और आंधी चलै।बिजली चमकै वामहिं और पावक जलै॥सदा रहै निर्लेप और निर्मल रहै । सबही जग वामाहिं आप निर्लम्ब है ॥ पवन हलावै नाहिं अग्नि जारै नहीं।ताहि न भिजावै नीर मरै मारै नहीं॥ लघु दीरघ नहिं होय पुरुष नहिं नार है। नाहिं सूक्षम नहिं भार वार नहिं पार है॥शब्द उठै बहु भाँति वही जो अबोल है॥उतपतिपरलयमाहिं सदा जो अडोल है ॥ यह नभ ब्रह्म समान लखे दृष्टांत है । निरखि हियेकी आँखि गयो सब भ्रांत है॥भाँडे कनकके होहिं चांदिके देखिया । कांसी पितलके होय मट्टीके देखिया॥ सबमाहीं आकाश एकही जानिया । यों घट घटमें ब्रह्म सकल पहिंचानिया ॥ थिर चरहीके माहिं जु थावर

जंगमें न्यारा अरु सब बीज भली विधि रंगमें॥जो बर्तन गयो फूटि रह्यो आकाशहू। ऐसेहि काया विनशि रहै नित ब्रह्मज्ञ॥ नित्य अनित्य विचार तभी निश्चय भई। पायो आतमज्ञान सभी दुविधा गई॥ना काहूसे वैर नाहिं काहूसे प्रीति हो ना काहू दुख देहुं नहीं सुख रीति है॥ काहूसे नहिं डरूं न काहू सँग लगूं। काहूकी शरण न जावँ न काहूसे भगूं॥ कहै श्रीशुकदेव विवेक विचार सों। दत्तात्रेयी कह्यो असें यदुराजसों॥ यह शिक्षा आकाशसों लीन्ही जानिके। चरणहिदास भयो यही मत मानिके॥

नीर ४.

दोहा–चौथे गुरु किय नीरही, जाको सुनिय प्रसंग।
आप सदा उज्ज्वल रहै, मिलि जावै सब रंग॥१५॥

अष्टपदी॥ जल ज्यों निर्मल होय सदा बिरकत वही। तजै न शीतल अंग वसै नितही मही॥ गृही संग जो चलै वाट कबहूं कहीं। मनसों न्यारा रहै लेप लागै नहीं॥ ऐसो रखै विचार जैसे बरषा समै॥ जल मैला ह्वै जाय खेह सँगही रमै॥ संगति गुणसों होय जु गँदला आपही। जाडेमें ह्वै शुद्ध लगै नहिं पापही॥ समझो यों चितमाहिं संगको गुण यहै। निर्म्मल नीर स्वभाव सदा उज्ज्वल रहै॥ संसारीके संगसों जब मन फिरगयो। तब नारायण रूप ध्यान आनँद लयो॥ कछु मैल मनमाहिं कबहुँ व्यापै नहीं। जल अरु साधू भाँति एक जानो तहीं॥ जो कुचील कछु होय सो जलसों धोइये। वाको कीजै शुद्ध मैल सब खोइये॥ साधू ऐसा होय ज्ञान मुख उच्चरै। श्रोताके सब पाप ताप व्याधा हरै॥ तातेहो उपदेश भक्तिका कीजिये। नीच ऊंच मत देख वृक्ष ज्यों सींचिये॥ मीठे शीतल नीरको यह गुण लीजिये।

मीठा सबसों बोलि परमसुख दीजिये॥ गुरु शुकदेव प्रतापसों जल गुण गाइया। चरणहिं दास होय न मनता आइया॥

अग्नि ५.

दोहा-पंचम गुरु कियो अग्निको, समुझि निहारि निहारि।
उत्तम मध्यम जार दे, राखै कछु न विचारि॥१६॥

अष्टपदी।

ब्रह्मणहु करै होम शूद्र जोपै करै। दोऊ करैं पवित्र युगलके अघ हरै॥ ऐसे साधूलोक जहां भोजन करैं। वाको पावन करैं पाप सबहीं हरै॥ गृही जु सेवा करै आश ऐसी धरै। विरकत भोजन किये पाप निश्चय जरै। धान्य हमारो खाय जु साधूजन कभी। हमरे प्राछत जाहि और व्याधा सभी॥ साधूजन जो होय अग्निके भांतिही। सकलपाप करै छार जु वाकी क्रांतिही॥ सदा गुप्तही रहै प्रगट किये होत है। ऐसे साधू भेद छिपावै जोत है॥

चन्द्रमा ६.

छठवाँ गुरु कियो चन्द सदा इक सम बहै। कला घटै अरु बढै मावस लग ना रहै। पूनोको सब होहिं कला भरपूरही। चांदनि सब जगमाहिं विराजत नूरही॥ शशिमण्डल इक भाँति रहै नाहीं घटै। योंहीं आतमरूप चरणदासा रटै॥

दोहा-उतपति परलय देहको, घटै बढै दुख होय।
आतम इक रस जानिये, अविनाशी है सोय॥१७॥

अष्टपदी॥ तातें कियो विचार यह काया ना रहै। जन्म मरण नहिं होय कलाके ज्यों बहै॥परमातम इकभाँति सदाही जानिये, घटै बढै वह नाहिं यों मनमें आनिये॥ काया छोटी

होय वही पुनि होत हैं । कबहूँ हो मन मगन कभूं रोवै वहै ॥ आतमहीं नित जानि जु कायामें रहै । वही सदा इक भाँति कोई ज्ञानी लहै॥ ताते श्रीभगवानको सबठां पेखिकै। मनमाहीं वैराग फिरतहू देखिकै ॥

सूर्य ७.

सतवें गुरु किया सूर जु शिक्षा दो लई । आठ महीने किरणि नीर सोखत वही ॥ चार मास वह आप फेरि वरषा करै । वा जलको कछु मोह नहीं मनमें धरै॥ऐसे साधु होय जु कछु कोई देत है । वाको आछी भाँति सोई वह लेत है॥मोह न कबहू करै जु कोई कछु चहै । चरणहिं दासा जानि सोई यह गति लहै ॥

दोहा—लेते कछु हरषै नहीं, देते दुख नहिं होय ।
ऐसे निर्लोभी रहै, चरणदास है सोय ॥ १८ ॥

अष्टपदी ।

दूजे जो प्रतिविम्ब सूरको देखिये।जल भांडोंके माहिं सबन अवरेखिये॥खोजिकै देखो वाहि सूर तौ एक है । घटघटमें प्रतिविम्ब विचारि अनेक है॥ ना काहूसे वैर प्रीतिहू ना करै । सूरज एक निहारि सकल घट छबि धरै ॥ ऐसेही निर्मोह सदा निर्लेप है । वाको साधू जान सो ऐसी विधि रहै ॥

कपोत ८.

अठवें कियो कपोत गुरू मैं विचारिकै। निर्मोहित मन भयो तभी जु निहारिकै ॥ उठी एक मनमाहिं नारि सुत कीजिये । जगमें ह्वै निश्चिन्त बहुत सुख लीजिये ॥ सहज बागके माहिं जाय ठाढो भयो । द्रुमपै एक कपोत कपोतिनिको लह्यो ॥ ता ऊपर उन गेह आपनो साजिया । बहुत प्रीति सुख मानि सकल दुख भाजिया ॥

दोहा-करि विचार मनमें धरी, धन्य भाग सुख होय।
हम समान या जगतमें, और न दीखै कोय ॥ १९ ॥

अष्टपदी॥भयो कपोतिनि गर्भ अण्ड द्वै वा दिये। प्रीतिसों सेवन किये फूटि द्वै सुत भये॥केतिक दिवसन माहिं पंख निकसे सभी।उडिकै बैठन लगे डार ऊपर तभी॥निरखत बहु सुख मानि कपोत कपोतिनी। हमरे अति बडभाग दियो यह सुख धनी॥एक रहे घरमाहिं जु रक्षा धारने। दूजे बनमें जाय जीविका कारने॥वनसे चूगा लाय बचन-मुख डारई।वाते उनकी क्षुधा सकल निरवारई॥जन्म सुफल मन जानि रैन दिन यों रहै। वसुधामें कछु शोच न हियमाहीं लहै॥इक दिन कह्यो कपोत कपोतिनि साथहीं।ये बच्चा अब बडे भये सब गातही ॥ एतौ रहें गृहमाहिं दोऊ हम वन चलें। चूगा लावैं बहुत करैं भोजन भले ॥ह्वै करि निस्संदेह दोऊ वनको चले। कहैं चरणहीं दास चुगन लागे भले ॥

दोहा-पाछे वधिक जु आइया, दीनो जाल बिछाय।
पकरनकी मनमें करी, बैठ्यो घात लगाय ॥२०॥

अष्टपदी ॥ दोऊ गे वनमाहिं वधिक इक आइया। उन बच्चनको देखिकै जाल बिछाइया॥ तापर किणका डारि आप तो छिपि रह्यो॥बच्चन चूगा देखि भेद कछु ना लह्यो॥यह कण कारण मात पिता वनको रमें। सो पायो यहि ठौर चुगैं क्यों ना हमें ॥ दोऊ उतरे तहां जबै मुख डारिया। तब वहि वधिकने जाल फंदको मारिया॥आय कपोतिनि जबै शब्द नाहीं सुनौ। घरमें पाये नाहिं शीश तबहीं धुनौ ॥ बच्चन कारण शब्द कियो हंकारिकै। बोले पिंजर माहिं जु बचन निहारि कै ॥ देखि कपोतिनि जालमें यह मन आनियां । अपना जीवन अफल

जगतमें जानियां॥तनमें अति दुख पाय कल्पना वहु करी । कहें चरणहीं दास बुरी आशा धरी ॥

दोहा—जालमाहिं मोसुत फँसे, जाय परौं वा ठौर ।
विकल होय चाली तबै,कियो विचार न और॥२१॥

अष्टपदी॥मोह फंदवश होय जालमाहीं परी । वाहूको गहि वधिक पिंजरमाहीं धरी॥आयो वहुरि कपोत लख्यो सुत वा-लहूं॥इन विन कैसे जिऊं मरों वेहालहूं॥परो जालके माहिं बहुत दुख मानिकै॥चारों गहिले चलो वधिक सुख जानिकै॥राजा मोसन हुती जु सतदारा कहूं। निरखि लई यह सीख वहुरि नहिं चितधरूं॥वाको कीन्हो गुरू यह कौतुक देखिकै॥हरिसुमिरणमें पगो रहूं जु विशेषिकै॥मोह महा दुखरूप सकल बिसराइया॥ लिये रहूं वैराग परमसुख पाइया॥सदा रहूं निर्वंध द्वन्द सव भाजिया॥चरणकमलको ध्यान हियेमें साजिया॥तहां वसों निशि भोर अंत नाहीं वहूं॥चरणहिं दास होयकै निज आनँद लहूं॥

अजगर ९.

दोहा—नववाँ गुरु अजगर कियो,लियो परम संतोष ।
परालब्ध दृढ करि गही, रहा राग नहिं रोष ॥२२॥

अष्टपदी—जिहि कारण गुरु कियो कहूं कारण सभी । जासों रहौं दृढ वैठि आयो धीरज तभी ॥ आगे भिक्षा काज ध्यान तजि डोलतो । कोऊ देतो भीख कोऊ दुर्वोलतो ॥ जो कोउ भोजन दियो मगन होतो तहां । जो कोऊ नाहीं दियो क्रोध करतो तहां॥अजगरइक दिन लखो जहां उतपति भयो। निशिदिन ह्वांई रह्यो कहूं नाहीं गयो॥आय अचानक मृगा सिंह वा मुख धँसे।चौपाये यों आय तासु मुखमें फँसे ॥ जो वह जागत होय उन्हें मुखसों गहे।तिनको भोजन करै उदर योंही भरै॥ परालब्ध जो होय सोई ह्वां आरहे । परो रहै वहि

ठौर सभी दुख सुख सहे ॥ वाकी लीनी रहनि बहुत सुख पाइया । चरणहिं दासा होय अधीर गँवाइया ॥

दोहा-जबसों पर आशा तजी, गृहीद्वार नहिं जावँ ।
लगो रहौं हरिध्यानसें, सहज मिलै सो खावँ॥२३॥

अष्टपदी॥मन राखौ प्रभु ध्यान सदा आनँदमें।ज्ञान दिशा अब भई रहो नहिं द्वन्द्वमें॥याचक घर घर फिरै न भिक्षा पावई। साधनको मनमाहिं भोजन हरि ख्वावई॥जब भइ ऐसी समझ निचल बुधि आइया।जहँलग जिह्वा स्वाद सभी जु गँवाइया॥ स्वादी अरु विन स्वाद जो भोजन आवई।सबही करूं अंगीकार सुरुचिसों पावई॥सूखो गीलो होय जु भूनो हो कछू।ताको फेरो नाहिं सभी लेकर भछूं॥जोकछु आवै नहिं ढांई बैठो रहूं।परा-लब्धही जानि बुरो भलो ना गिनूं॥सकल विकल नहिं होय न आशा कछु कही।नारायणके ध्यान रहूं लागो वही ॥ अजगर-कीसी वृत्ति निरी मेरी रही । चरणहिं दासा होय भक्ति दृढ करि गही ॥

सिंधु १०.

दोहा-दशवें गुरु कियो सिंधुको, कहुँ सोई परसंग ।
लीन्हे समझ विचारिकै, जाके तीनौ अंग ॥२४॥

अष्टपदी॥ खारी नीर स्वभाव सदा इक रस वही । मीठी सरिता बहुत चली आवैं बही॥मिलि नहिं फिरै स्वभाव तासु-को जानिये।ऐसे विरक्त रहैं जगतमें मानिये॥बहुतै होय गँभीर थाह नहिं पावई। ऐसा साधू जानि राम मन भावई॥वर्षाऋ-तुकी नदी मिलें बहु वादसों।घटै बढै वह नाहिं रहै मर्यादसों ॥

पतंग ११.

एकादश जो पतंग कहूं मैं सुनायकै।देखि दीपकी ज्योति गिरो है आयकै॥दीन्हों आप जराय हाथ कछु ना लगो।समुझि कामिनी

रूप सो में दूरी भगो॥ ज्ञान जाय अरु नरकपरै इस रीतिसों।
सुन्दर रूप निहारि करो मत प्रीतिसों ॥

भँवरा १२.

दोहा–फूल फूलपर बैठिकै, उदर भरै तिस नाल ।
सो भँवरा गुरु चारखां, लई जु वाकी चाल ॥ २५ ॥

अष्टपदी॥भिक्षा कारण मांगन घरघर जात हो । कोऊ देतो आनि कोऊ जु रिसातहो॥ताते शिक्षा भवँर कि यह उरमें लही। सूक्षम सबही पुष्पसों उन रसना गही ॥ तब मैं कियो विचार इकट्ठो लेनते । देनहारको दुःख बहुतही देनते ॥ नेक नेकही लेहु बहुत घर जायकै । उदर पूरणा करूं जु आनँद पायकै॥ जितना होय अहार सोई अब लेतहौं । बासी नेक न राखि न काहू देतहां ॥ अलिसुतकी यह रीति भूख भरि खावई । और दिनाके काज न नेक बचावई॥फूलनको रस चाटि नहीं उनसों बँधै । ऐसे विरकत रूप जगतमें ना फँधै॥ चरणहिं दासा होय त्याग मन राखई । राजासों इहि भांति ऋपीश्वर भाखई ॥

मधुमक्खी १३.

दोहा–देखि दशा माखीनकी, तजो सकल संग्रह ।
मिटि दुविधा निर्भय हुये,भई सुखारी देह ॥ २६ ॥

अष्टपदी॥सेरहू शहतकी माखी ताहि पिछानियाँ।सबवृक्षनको मीठो इकठाँ आनियाँ॥जब छत्ता भयो पूर किसीने तोरिया । सब रस लीन्हों काढिकै वाहि मरोरिया ॥ बहुत भयो उन कष्ट जु वे भागी फिरीं।बहुत मरीं वहि ठावँ बहुत सिसकें गिरीं ॥ ताते माखी गुरू हियेमाहीं धरो।कोउ जककी वस्तुको संग्रह ना करो ॥

हाथी १४.

चौदहवें हाथी जानि कामवश होयके । आपा आप बँधाय जन्म दियो खोयके ॥ इक गज मातो हुतो जंगलके बीचही । अति बलवंत विशेषि कोऊ वासम नहीं॥ वा ढिग हस्ती और कोइ नहिं जात हौ॥मानुष पशु जिया योनि कहूं कह बातहौ॥ वाकी आई बात जु राजापै चली।इक कुंजर वनमाहिं रहत है अति बली ॥ भूपति आज्ञा दई पकरि वा लीजिये । जामें आवे हाथ यतन सोइ कीजिये ॥

दोहा-पीलवान आज्ञा लई, खोदी खंदक जाय ।
चरणदास तहँ छल कियो,दीन्हों घास बिछाय ॥२७॥

अष्टपदी॥भगलकी हथिनि बनाय सवाँरी बुद्धिसों । खंदक ऊपर धरी खडी करि शुद्धिसों ॥ जल पीवनके काज जु हस्ती आइया।वा हथिनीको देखिकै अधिक लोभाइया ॥ जब हथिनीकी ओर चलो मतिहीन ही । सपरस इच्छा धारि परो खंदक मही॥निकसन कैसेहोय बहुत लंघन करे।अति दुर्बल तन भयो पराक्रम सब हरे॥तब वापर चढि बैठ महावत आयकै । बाहर लायो काढि जु ताहि सधायकै॥फिरि राजाके पास खडो कियो लायकै।अंकुश शिरके माहिं जु बेडीपायकै॥शीशधुनैपछिताय वे आनँद कित गये।जो सुख वनकेमाहिं सभी स्वपना भये॥सदा हुतो निवधआय बंधन बधो।कहैचरणही दासकाम फंदनफँधो॥

दोहा-सपरशकी इच्छा किये, भया जु ऐसा हाल ।
पशु पक्षी नर नारिही, फँसे कामके जाल ॥ २८ ॥

अष्टपदी ॥ भाषत दत्तात्रेय जु साधूजन कभी।कामिनि ओर निहारि करै सपरस तभी ॥ हस्तीकेसो हाल साधुको होय है ।

सुमिरण ज्ञान रु ध्यान जु सबही खोय है॥जोकहै हम हैं साधु जु कोइ भाख्यो कहा। तूमै हमरे चरण तासु होय है कहा॥चरणन तूमे आय हाथ धारे पायपे। साधूमन चलि जाय स्पर्श सुख पायके॥वाको सुख उर धारि करै इक कामिनी।वाते पुत्र कलत्र वहु तही यामिनी॥वनमें तप अरु योग जु करतो निशि दिना । सो सवही गो भूलि नहीं सुख इक क्षना॥ताते हस्ती गुरु हियेमें धारिया॥कामिनिको परसंग सकल निर्वारिया॥काठकी पुतली होयके कागजमें रची।चरणहिं दासा होय सोभी देखन तजी॥

मृग १५.

दोहा—पन्द्रहवाँ गुरु मृग कियो, ताकी गति सुनि लेहु ।
औगुणहींको छोडि करि,गुणहींमें चित देहु ॥ २९ ॥

अष्टपदी॥मृग देखो वनमाहिं ताकी मति आनियां । जीव दियो वहि ठौर सोई हम जानियां॥वधिक बजाई वीण राग गावन लगो।सरवण सुनि वह हिरण रीझि आयो भगो॥पहुँचो पारधि पास वाण उन मारिया। ता दिन रागको चाव सकल निर्वारिया॥जो विरक्त सुनै राग जु रस शृंगारको । ऐसेहि होवै ख्वार नरकमें जाय सो ॥ सुनिये गुण गोपाल चारित कर्तारको। जासों दुख छुटि जाय ये माया जारको ॥ तासों उपजै ज्ञान ध्यान दृढ करि गहै।पावै पद निर्वाण जहां सुखसों रहै॥ निश्चयही तू जान जु मैंने यह कही । चंचलता गइ छूटि जु बुधि निश्चल भई ॥ ना नारी री राग नाच विसराइया।चरणहिं दासा होय चरण चित लाइया ॥

मछली १६.

दोहा—कहूं सोलवीं मीनकी, बुरी जीभकी स्वाद ।
जो कोई यामें फँसे,लगै वहुत उठि व्याध ॥ ३० ॥

अष्टपदी ॥ सोलहो गुरु सुन मीन जो ऐसे देखिया । वा

मच्छीको एक वधिक अवरेखिया॥थोरो मांस लगाय जु बंशी साथही।जलमें दी छुटकाय डोर गहि हाथही ॥ जिह्वा स्वादके काज मीन वह खाइया।गई उदरके माहिं हिये अटकाइया॥ तीक्षण कांटा लोह हियेको फारिया।ताही क्षणं वह मीन प्राण तजि डारिया॥ताते मच्छी गुरु हिये माहीं करो।जिह्वाको कछु स्वाद नहीं मनमें धरो॥जो विरक्तको स्वाद जीभको चाहिये। वहुत भाँति दुख होय नहीं सुख पाइये ॥जिह्वास्वादके काज गृही घर जाय है।आछो भोजन पाय तौ रुचिसों खाय है ॥ भोंडो भोजन होय तौ नाक चढावई। हरिसुमिरणको त्यागिकै जित तित जावई॥ताते साधूलोग नहीं घर घर फिरै।जिह्वाको कछु स्वाद नहीं चितमें धरैं ॥ ऐसो भोजन खाय लखै ज्यों औपधी।सवही रोग नशाहिं रहै काया शुधी॥ चीकन भोजन खाय नींद वहु आवई।ध्यान भजनकी रीति सकल बिसरावई॥सव इन्द्रिनके माहिं जो जिह्वा वश करै । जो आवै सोई खाय कभूं भूखो रहै॥जो जिह्वा वश होय तौ इन्द्री वश सबै। जो रसना वश नाहिं तौ सव परबल तवै॥चीकन भोजन खाय तौ इन्द्री सव जहां । अतिही ह्वै बलवन्त करैं औगुण तहां॥ पटरसहीके स्वादसो नारी वश भये।जगमाहीं दुख पाय मुये नरक गये॥मनमें देखि विचारि गुरू कियो मीनहूं । जासों लीनी साख इन्द्री भइ क्षीनहूं ॥ सवही स्वाद भुलाय शरण हरिकी लई । चरणहि दासा होय सुरति निर्मल भई ॥

पिंगला १७.

दोहा—सत्रहवाँ गुरु पिंगला, लीन्हों जासों ज्ञान ।
आशा तजि निर्मल भयो, लगो रहू हरिध्यान॥२१॥

अष्टपदी॥गुरु सत्रहवाँ जान हमारो पिंगला। पर आशा दइ छाँडि रहूं आनँद मिला॥इक दिन राजा जनक विदेहीके नगर।

गया आचानक लखो पिंगलाको वगर।पिंगला उठि परभात यथाविधि न्हाइया। भूषण वस्तर पहिरि सुगन्ध लगाइया ॥ घरके द्वारे बैठि जु बाट निहारई । कोऊ दे बहु द्रव्य सु ह्यां पग धारई ॥ मारगसे नर देखि यही आशा करै । आवत जानै-ताहि खुशी हियमें धरै ॥ जब वह आयो नाहिं दुखी मनमें भई । कबहूं आश निराश ऐसही निशि अई ॥ ऐसे सब दिन बीति गयो यहि भाँतिही । मनमें भई मलीन आइ पुनि रातिही॥काया आलस धारि जु घर भीतर गई । पलँगा बैठी जाय जहां भलि सेजही॥बिछे बिछौना श्वेत फूल तापर धरे । लेटी तहँ मग जोय नैन निद्रा भरे॥कबहू उठि जा द्वार कभूं जा भीतरे । कहै चरणहीं दास नींद नाहीं परै ॥

दोहा–आशाकी डोरी बँधी, क्षण घरमें क्षण द्वार ।
थिरता ना संतोप बिन, दुखी पिंगला नार ॥ ३२ ॥

अष्टपदी॥ऐसे आधीरात गई जब बीतिकै । कोऊ आया नाहिं सु ह्वां कछु प्रीति कै ॥ पिंगला उपजो ज्ञान हिये पर-काशही । उदय भयो संतोप लोभ गयो नाशही ॥ वर्ष सहस दश माहिं जु तप कोऊ करै।हिरदै निर्मल होय सभी कलिमल हरै ॥ ऐसो ज्ञान उजास पिंगलाको भयो । तब उन हिरदै माहिं वचन ऐसो कह्यो॥हीन हमारे भाग जन्म योंही गयो । मनुप रूपसों काम क्रोध लोभै छयो ॥ ताते जिविका आश हियेमें चाहिया।परमातम भगवानसों प्रीति न लाइया ॥ सदा विराजत निकट दूरि नहिं होत है।सब विधि पूरण काम सकल जग ज्योति है ॥ सबहीको नित देत खान अरु पानई । चरणहिं दासा होय सोई यह जानई ॥

दोहा–लख चौरासी योनिमें, सबको भोजन देय ।
सदा वही पालन करे, अपनो नाम न लेय ॥ ३३ ॥

अष्टपदी॥मनुषरूप जो देय एक दिन खानको। दूजे दिन वह वहुत घटावै मानको॥ नारायणसों भक्ति जो जगको सुख चहै।ऐसे वाको देय सदा इक रस रहै॥जाके लीन्हे नाम सकल पातक नशैं। कथा जु उनकी सुनै हिये आनँद लशैं॥ ऐसो हरि विसराय मनुषको चाहिया। विरथाजन्म गवाँयकै सुख नहिं पाइया॥ काया है इक गेह हाड अरु माँसको। नाडी गुणसों वांधि रखो है तासको॥ चाम रु लोहू पीव तहां नव द्वार हैंसदा वहतही रहत यही जु विचार हैं॥ विष्ठा मूत जो होय या गेहके माहिंहीं। ऐसे घरसों भोग मुदित मन चाहहीं॥ ऐसे विरथा आयु सकल जु गवाँइया। हरिके चरणनदास नहीं जु कहाइया॥

दोहा--अव उरमें ऐसी उठी, करूं भक्ति चित लाय।
चरणकमलमें मन धरूं, जासों नेह उठाय॥३४॥

अष्टपदी॥ अव करूं भक्ति उपाय जु हरि मन भाइया। ताते लेहुं रिझाय परमगुण गाइया॥ जैसे लक्ष्मी सेव करी मन लायकै।कीन्हें महा प्रसन्न सिरीपति धायकै॥ ऐसे मन भगवानसों अपनो लायहों। पावैं पुरुष निधान प्रीतिके भायहौं॥ लक्ष्मी करी जु भक्ति पुराणनमें कहै। नारायण दई ठौर सदा हियमें रहै॥मैंहू ऐसी भक्ति करूं अति प्रेमसों।करूं महापरसन्न अधिकही नेमसों॥ आजके दिनसे आश मनुषकी त्यागिकै। राखूं प्रभुकी आश चरणहीं लागिकै॥जो कछु हरि मोहिं देयँ सोइ निर्दोष है।करूं भजन भगवन्त,तासुसो मोष है॥ मनुषरूप कहा वस्तु जु आशा कीजिये।वहुत वहाँलौं देतजहांलौं लीजिये॥

दोहा--दुखमें काम न आवई, मुये न संगी कोय।
चरणदास यों कहत हैं, ये संसारी लोय॥३५॥

अष्टपदी॥ जव वह मृत्यक होय नहीं कछु हेत है। हरि जु

सदाही संग सभी सुधि लेत है॥मनुप आपनी नाहिं जु इच्छा करिसकै।औरनको कह देय मूर्ख योंही तकै॥पगला कहो यह ज्ञान मुझे क्यों आइया।नीके काजनमाहिं न चित्त लगाइया॥ तीरथ वर्त्त न साधू दर्शन देखिया।हौं तिरिया बुरे कर्मकि चाल विशेपिया॥परमेश्वरकी दयासों यह पहिचानिये।और वात कछु नाहिं हियमें आनिये॥जो कोइ कहै आज कछू धन ना लयो। कोई आयो नाहिंज्ञान ताते भयो॥आगेहू बहु दिवस कोई नहिं आइया। कीन्हें लंघन वहुत द्रव्य नहिं पाइया॥ ज्ञान कबौं नहिं भयो आज जानत नहीं।कौन भाग वड मोर भयो परगट नहीं॥ कहैं गुरू शुकदेव जु उन नहिं जानिया। दत्तात्रेयके दर्शसों कुमति भुलानिया॥

दोहा—पिंगला आई घर विपे,छोंडि मनुपकी आश।
सुखी होय सोवन लगी,जव वह भई निराश॥२६॥

अष्टपदी॥मनमें किय सन्तोप सकल दुख मिटि गये। छोडी जगकी आश हिये आनँद छुये॥यों कहैं दत्तात्रेय राजासों यही।वाकी में लइ सीख सोई दृढ कारि गही॥गृही द्वार नहिं जाँव न माँगों कछु कहूं।ताते सुखि रु शान्त सदा वैठो रहूं॥ उद्यम करूं कछु नहिं वासना त्यागिके।आनँद तन मन मोहिं वहुत अनुरागिके॥मनुप दुखी वह होय रहै आशा लिये। काम क्रोध अरु लोभ मोह उतपति किये॥ जो आशा मन आय कबौं वह ना भई।क्रोध भयो उत्पात्ति यही मनसा ठई॥ काहूते इक वस्तु कछू जु मँगाइय।वाने दीन्हीं नाहिं क्रोध उपजाइय॥ वाते कीन्हों वैर अधिक रिस ठानिया।नारायणके ध्यान सुरति नहिं आनिया॥यह शिक्षा लइ मानि पिंगलासे तभी।जगकी छोडी आश भये कारज सभी॥

चील्ह १८.

दोहा–चील्ह अठारहों गुरु कियो,मिटो सकल सन्देह ।
रही अकेलो संग तजि,करो न कछु संग्रह ॥३७॥

अष्टपदी॥जब गृहसेती निकसि वैरागी हम भये ।तब हमरे मनमाहिं जु ये कारज छये॥दो भाजन सँग होहिं एक जल पीजिये। दूजे भाजनमाहिं खानको लीजिये॥इक चादर कौपीन दोय हू चाहिये।ताते ओढि नहानकी युक्ति बनाइये ॥ करिकै जब अस्नान ध्यान करने लगो।मनमें चित्यो कोऊ कौपीनहि लै भगो॥समझो यह मनमाहिं बहुत अधिकारते।अन्त महादुख होय मोह उरधारते॥ऊंची पदवी पाय बहुरि नीचे परै।जब वह संयुत जाय घनो मनमें झुरै॥जो कोइ रहै इकन्त अकेलोई सहै। ताहि उदरको शोच कछू नाहीं रहै।दश विश सौ जो साथ अधिक दुखलहत है । आप अकेलो रहै परम दुख सहत है॥सकलविकल विसराज जु आनँद पावई।चरणहिं दास। होयकै बांझ बगावई॥

दोहा–उडती देखी चीलहको, पंजे माहीं मांस ।
वहु पक्षी घेरे फिरैं, लेन न देवैं श्वास ॥ ३८ ॥

अष्टपदी॥पक्षी सभी लोभाहिं मांसको देखिकै।वाको मारैं चोंच जु लोभ विशेषिकै॥कोइ नोचै पंख कोई मस्तक भनै।वह दुख पावै बहुत समझिमूडी धुनै॥मैं काहूसे वैर प्रीति नाहिंमानिया॥या भक्षणके काज कष्टही जानिया॥मांस दियो छिटकाय जुदो पक्षी भये।वा भक्षणकेपास सभी दौरे गये॥वह बैठी मन मुदित जु पंखपसारिकै।दीन्हो दुख विसरायजु व्याधा टारिकै॥वा दिनते लइ सीख जु संग्रह ना करौं।कछु ना राखौं पास नग्न तन में फिरों॥जहँ चाहूँतहँ जावँ भजनआनन्दसों।कछु मनचिंता

नाहिं छूटो मन बन्धते ॥ काहू वस्तु न शोच कोई लै जायगो॥ चरणहिं दासा होय ध्यान हरि पायगो ॥

वालक १९.

दोहा—बालक गुरु उन्नीसवों, ताके लिये स्वभाव ।
नहीं मान अपमान है, लोभ न कछू उपाव ॥ ३९ ॥

अष्टपदी॥बालकमाहीं नहीं मान अपमानहूं॥लोभ जु वामें नाहिं रहै अनजानहूं॥मारै कोई वाहि रोष वह ना करै ।करै जु फिरि वह प्यार बाल हँसि हँसि परै॥निन्दा अस्तुति दोय कभी नहिं धारही।वैर प्रीतिको अंग कछू न विचारही॥जो मणि बहुतै मोलकी वासे लीजिये।खेल खिलौना फूलको पलटै दीजिये॥ मणिको लोभ न करत कछू नहिं भाषई।चितको अपने खेलके माहीं राखई॥जो कोउ नारी पकारि हिये सो लागई।बालक अरु वा नारिको काम न जागई।नगन जु बालक फिरत लाज नहिं आवई । ज्यों भावै त्यों रहै कोई न चलावई । क्रिया कर्म अरु सकुच कछू वाकेनहीं । ठाकुर अरु चरणदास कछू जानै नहीं॥

दोहा—बोले दत्तात्रेयजी, राजासो यह बैन ।
इक दिन बालककी सबै, देखी अपने नैन ॥ ४० ॥

अष्टपदी॥भाषैं दत्तात्रेय बालगति देखिकै । वाकेलिये स्वभाव सभी जु विशेषिकै॥जो कहुँ हमसों प्रीति बहुत आदर कियो।काहू गारी काढि बहुत झिडको दियो॥दोनों एक समान और नहिं व्यापई।वैठूं सहज स्वभाव उठूं फिरआपई॥जो कीन्हो भोजन दियो चाटि हांई लियो ।करहीको कर पत्र जहाँ पानी पियो॥अष्टधातुको लोभ त्यागिसबही कियो।कैसो हि वस्तरदेहु छाँडि तिनही दियो ॥ज्यों बालक निज खेलमें आनंदसों रहै। त्यों परमातम संग कछू दुखहू न है । तुरिया पद निर्वाण मातु

समही कहूं। ताकी गोदीमाहिं सदा सुखसों रहूं॥ चरणहिं दासा होयके गर्व नशाइया। छोटापनके अंग सबै तबै आइया॥

कन्या २०.

दोहा–कन्या गुरु कियो बीसवाँ, समझि विचारिकै देखि।
रहौं अकेलो तभीसों, पायों यही विवेकि॥ ४१॥

अष्टपदी॥ पुण्य तू विसवो जान गुरु कन्या कियो। वाको सत अनुराग हियेमाहीं लियो॥ इक नगरीके माहिं एक दिन हम गये। इक ग्रहचारीके गेह जाय ठाढे भये॥ स्यानी कन्या तासु जु घरमाहीं हुती। मात पिता कोइ काज गवन कीन्हों तभी॥ करन सगाई आय लोग बैठे तहीं। या कन्याकी करैं सगाई आजहीं॥ कन्या कीन्हों शोच यही कैसे कहूं। मात पिता कहिं गये अकेली मैं अहूं॥ ऐसे मात और पिता चिन्ता मनमें करैं। भोजनको कछु नाहिं जु हम आगे धरैं॥ कन्या करिके शोच ये वचन उचारिया। मात पिता गये न्हान अभी पग धारिया॥ आवो बैठो खाट रसोई खाइये। भोजन होत सवार कहीं नाहिं जाइये॥ वाके गृह कछु नाहिं धान थोरे हुते। कूटन लागी ताहि सोई अपने मते॥ चूरी हाथके माहिं बहुत करकन लगीं। फिरि समझी मनमाहिं शोच-माहीं पगीं॥ यों समझे ये लोग कछू गृहमें नहीं। भोजन कारन धान जु कूटति है तहीं॥ चूरी डारी फोरि दोय तहँ राखिया। तऊ न खरको गयो शब्दही भाषिया॥ दूजी दइ बिगसाय एकही रहगई॥ तब खरको नहिं होय कूटत निर्भय भई॥ वादिन कन्या गुरू जु हमने चित धरा॥ साधु अकेलो रहै सदा आनँद भरा॥ धर्मशालाते निकसि शिष्यको साथ लै॥ कबहूँ उपजै क्रोध शिष्य भाषे यहै॥ आप नहीं लियो बहुत हमें थोरो दियो॥ गुरुको चहिये

टहल शिष्य रूठे गयो ॥ गुरु कहैं कछू और शिष्य औरै कहै।झगडैं आपसमाहिं प्रीति थिर ना रहै ॥ दोउमें कलकल होय शान्ति नहिं आवई । विना अकेले रहे चैन नहिं पावई॥ पशुपक्षी नर नारि संग नहिं लीजिये । दूजेहीको साथ सभी तजि दीजिये ॥ छूटै सकल कलेश ध्यान लागै भलो । चरणहिं दासा होय रहै हरिसों मिलो ॥

तीर बनानेवाला २१.

दोहा–गुरु कीन्हों इकीसवों, ताहि तीरगर जान ।
चरणदास यों कहत हैं, वासों सीखो ध्यान ॥ ४२ ॥

अष्टपदी ॥ पुनि इकीसवों गुरू तीरगर हम कियो । ताते ध्यानको भेद सीख हियमें लियो॥इक दिन नगरीमाहिं तीरगर हाटमें । ठाढो भयो तहँ चलतही बाटमें॥वह तो बनावत तीर आपनी जानमें । और कछू सुधि नाहिं पगो वा ध्यानमें ॥ वाके आगे होय भूप इक आइया । हस्ती अरु दल साज निशान बजाइया ॥ भयो मुहूरत एक मनुष तहँ आइके । भूप गयो इस राह बुझो जु सुनायकै॥वर तो साजत तीर यही उत्तर दियो।हम तो जानत नाहिं नहीं दर्शन कियो॥ भाषत दत्तात्रेय जु हम वासों कह्यो । राजा सँग बहु भीर शब्द दुन्दुभि भयो ॥ वहुत कटक लिये साथ जु भूप सिधारिया । तैं काहे नहिं सुनो न दृष्टि निहारिया ॥ उन यों उत्तर दियो तीरके ध्यानहीं। सुरति रही तेहि माहिं याते नहिं जानहीं ॥ वाको कीन्हो गुरू हियेमें धारिकै। मन हरि चरणन पास रखुं निर्धारिकै॥दृष्टि मना अरु बुद्धि जहां जु लगाइया । ऐसो कहिये ध्यान विरले कहुँ पाइया ॥

दोहा–ध्यान करे दृग मूँदि करि, जो कोई नर नार ।
खटका सुनि पलकैं खुलैं,मन चलै बारम्बार॥ ४३ ॥

अष्टपदी॥वह नाहिं कहियत ध्यान जो खुलि खुलि जात है। निश्चल लागे ध्यान जु पूरी बात है॥ध्याता ध्यानके बीच ध्यान ध्येयमाहिं है। तीनों एकहि होहिं विघ्न कछु नाहिं है॥ मन हरिचरणन पास कायकी सुधि नहीं। भूख प्यास कछु नाहिं ध्यान लागत तहीं॥ मन गयो औरे ठावँ ध्यान जो लाइये। सो वह डिगि डिगि जाय न थिरता पाइये॥जब नारायण साथ मगन मन ह्वै गयो।सब कारज गयो भूलि कछू सुधि ना रह्यो॥ जैसे भापत लेय समाधी पुरुषको। दिन बीतैं दश बीस नहीं सुधि बुधि कहू॥कहिये यही समाधि वासना सब जरैं।कोटिन मध्ये एक ध्यान ऐसो धरैं॥ सोइ चरणको दास सोई योगी सहै। सोइ साधक सोई सिद्धि जु बिस्वे बीस है॥

दोहा-ध्यानी ध्यान लगायकै, रहै राम लव लाय।
आपा बिसरै हरि मिलै,बहुरि न उपजै आय॥४४॥

अष्टपदी॥ तनकी सुधि बिसराय कछू सुधि ना रहै। या विधिसे जो करै ध्यान ताको कहै।हलचल ध्यान जो करै सो हरिसों ना मिलै। अफल ध्यान सोइ होय जो मन क्षण क्षण चलै॥ तीर बनावनहार गुरू हमने कियो। ताते यह उपदेश हिये माहीं लियो॥ ऐसे मनको साधि प्रभू चरणन धरै। ह्वाँई रहै चितलाय जु इत उत ना फिरै॥

सांप २२.

बाइसवों गुरु सांप हमारो जानिये। ताते लीन्ही सीख यही पहिचानिये॥सदा अकेलो रहै कबौं घर ना करै। रैनि जहां कहुँ होय वहीं वह बसि रहै॥वाकी देखी रहनि जु मनमें लाइया। सदा रहूं निर्बंध न मन्दिर छाइया॥ उपजौ मोह न लोभ नहीं मन दाग है।चरणहिं दासा भयो द्वेष नहिं राग है॥

दोहा–बँधा जु पानी गांदला, चलता निर्मल होय ।
दोनों रीति विचारिकै, भली होय सो लेय ॥४५॥

मकरी २३.

तइसवों मकरी गुरू, उगिलि तार भखि जाय ।
ऐसे जग परकाश करि, प्रभु ले आप लुकाय ॥४६॥

अष्टपदी–तेइसवों गुरु जान हमारो माकरी।आपसों काढै तार रहै वामो खरी॥फिरि वह तार समेटि लेय उरमें धरै । यों हरि लीला जानिय कौतुकसों करै ॥ वसुधाको उपजाय करै पालन जभी । फिरि सब लेय मिलाय आपमाहीं तभी ॥ जैसे मकरी तारसों जाल बनाइया । फिरि आपन वा बीचमें सहज समाइया ॥ जब चाहै वह जाल उदरमें लै धरै । मक्षी जालमें फसै सो नाहीं ऊबरै॥भाषै दत्तात्रेय मुक्ति जो चाहिये । हरि उतपति क्षय करनकि शरनमें आइये ॥ जन्म मरण भय मानि भक्तिमें पागिये । जगके जालसे छूटि वेगही भागिये । लीजे त्यागि वैराग चरणहिं दास हो । हरियश हरिगुण गाय तजो जगवास हो ॥

भृंगी २४.

दोहा–भृंगी मिलि भृंगी भवे, सुनो हतो यह वैन ।
अब मन आई सांचही, देखा अपने नैन ॥४७॥

अष्टपदी–चौवीसवों गुरु कियो जु भृंगी जानिकै । वासों निश्चय भई हियेमें आनिकै॥सुनी हुती यह बात जु कोई हरि भजै । निशि दिन मन हां लायकै प्रभुसेवा सजै॥सो नारायण रूप आप ह्वै जात है॥यामें संशय नाहिं सांच यह बात है॥मन ठहरत ना हुतीय बात सुहावनी । सेवक जो कोइ होय सो क्यों होवै धनी ॥ भृंगीको हम लखो कीट इक

आनिकै । राखो उन गृहमाहिं आपनो जानिकै ॥ आपन वाहर वैठि ताहि सम्मुख कियो । केतक दिवसन माहिं वह भृंगी करि लियो ॥ भृंगी रूपको देखिकै भृंगी ह्वै गयो । ताते भृंगी गुरू हमारे मन छयो ॥ जैसैं करै कोई ध्यान सो वासम होत है । नहीं रहै चरणदास रहै ब्रह्मज्योति है

दोहा-चौवीसों पूरे किये,समझि समझि करि देखि ।
ह्वै विरक्त जगमें रहूं, लगै न माया रेखि ॥४८॥
फिरि अपनी काया लखी,रही न जासों प्रीति ।
थके जु इन्द्री स्वादही, सहज गई सब रीति ॥४९॥

देह ।

अष्टपदी ॥ आपें दत्तात्रेय गुरू इक देह है।पहिले मोको हौ तो अधिक सनेह है॥देखो क्षण क्षण देह क्षीण ह्वै जातही । नित उठि सुखके काज भला कुछ खातही॥वहुत चाव करि आप कछू भोजन कियो । दूजे दिन वहि भांति घनोही दुख दियो॥इक दिन वस्तर विमल वनाय लायकै । फिरि वस्तरके काज फिरूं दुख पायकै ॥ जितनो कियो उपाय काय सुख काजही । कवहूं सुख ना भयो फिरत वेलाज ही ॥ इक दिन एक उपाय जु सुखको धारिया । दूजे दिन वहि दुःख वहुत विस्तारिया ॥ और लखी इक वात यह काया आपनी । अपनी होवै नाहिं विचारीही घनी ॥ मूरख जानै नाहिं सु याही भेदको । होवै ना चरणदास सहै वहु खेदको ।

दोहा--वालपने अरु तरुणसें, और वुढापे माहिं ।
तीनों पनमें देह यह, कवहुँ आपनी नाहिं ॥ ५० ॥

अष्टपदी॥वालकपनमें हाथ वाप अरु मायकै । तरुणापनमें फँसे त्रिया कर जायकै ॥ वृद्ध अवस्था-माहिं पुत्रके

साथही।पुनि जब मृत्यक होय अगिनि जारें तहीं॥जो योंहीं रहि जाय पशु आदिक भंपें देह न अपनी होय जान माहीं लपें ॥ वा दिनतें सुख काज नहीं श्रम धारिया । परालब्ध जो आय उदरमें डारिया॥कायातें इक काज भलो पुनि होत है । हरिकी प्रापत होय जु ज्ञान उदोत है॥ मृत्यू जवहीं होय यह काया ना रहै । भारेंकैसो गेह जीव काया लहै ॥ जवहीं आवै काल नहीं ठहरायगो।खर्चे जो बहु द्रव्य न क्षण रहि जायगो॥ जवहीं समुझो ज्ञान देहको जीयमें । भयो विरक्त विचार आपने हीयमें ॥ लई सीख चौवीस देहहित त्यागिकै ।कीन्हों हरिको ध्यान बहुत अनुरागिकै ॥ दत्तात्रेय ये वचन कहे बहु चावसों । पुनि तीर्थनको गये भक्तिके भावसों ॥ राजा सुनि यह ज्ञान हियेमें धारिया । हरिसों सुरति लगाय सकल दुख टारिया ॥ चरणहिं दासा होय परम सुखही लियो । तनको जगमें राखि जु मन हरिको दियो ॥

दोहा–दत्तात्रेयजीने कहे, जो राजासे वैन ।
सो मैं भाषामें कियो, समझो पावो चैन ॥ ५१ ॥

अष्टपदी ॥ चौवीसोंके माहिं होय उपदेश दे । सद्गुरु वाहि उचारि किये सब दूरि से॥उनहींके परताप चौवीसों समझही। आई घटके माहिं जु उज्ज्वल बुद्धिही॥चौवीसों तन धारि जु अंग बताइया।जासों भयो कल्याण अधिक सुख पाइया॥ ऐसे हैं गुरुदेव ये निश्चय जानिये।सकल विकल सब छोंडि गुरुही मानिये ॥ गुरुहीके परसाद मिलें नारायणा । जन्म मरण बँध छूटि होय पारायणा ॥ समरथ श्रीगुरुदेव शीशपर राखिये । भवसागरकी व्याधि सकलही नाखिये ॥ कहैं मुनी शुकदेव चरणही दासको । वही जु पावै चौथे परम निवासको ॥

दोहा-गुरु समान तिहुँ लोकमें, और न दीखै कोय ।
नाम लिये पातक नशैं, ध्यान किये हरि होय ॥५२॥
गुरुहीके परतापसों, मिटै जगतकी व्याध ।
राग द्वेष दुख ना रहै, उपजै प्रेम अगाध ॥५३॥
गुरुके चरणनमें धरो, चित बुधि मन हंकार ।
जब कछु आपा ना रहै, उतरै सबही भार ॥५४॥
मन विरक्तके करनको, कीन्हों गुटकासार ।
पढै सुनै चितमें धरै, भवसागर हो पार ॥५५॥

इति श्रीस्वामिचरणदासकृतमनविरक्तकरन-
गुटकासारवर्णन सम्पूर्ण ।





# अथ श्रीब्रह्मज्ञानसागरप्रारम्भ ।



दोहा—जैसे हैं शुकदेवजी, जानत सब संसार ।
भगवत मत परगट कियो,जीव किये बहु पार॥ १ ॥
तिन मोपै किरपा करी, दियो ज्ञान विज्ञान ।
सो शिख तुमसों कहत हौं, छूटै सब अज्ञान ॥ २ ॥
शिष्य सुनो अब कहत हौं,परम पुरातन ज्ञान।
निगुरेको नहिं दीजिये, ताते तपकी हान ॥ ३ ॥
कुं०—मोक्ष मुक्ति तुम चहत हौ,तजो कामना काम ॥
मनकी इच्छा मेटि करि,भजो निरंजन—नाम ॥
भजो निरंजननाम तत्त्व देह अध्यास मिटावो॥
पंचनके तजि स्वाद आपमें आप समावो ॥
जब छूटै झूठी देह जैसेके तैसे रहिया ॥
चरणदास यह मुक्ति गुरूने हमसे कहिया ॥
दोहा—देह मरै तू है अमर, पारब्रह्म है सोय ।
अज्ञानी भटकत फिरै, लखे सो ज्ञानी होय ॥ ४ ॥
देह नहीं तू ब्रह्म है, अविनाशी निर्वान ।
नित न्यारो तू देहसों, देह कर्म सब जान ॥ ५ ॥
डोलन बोलन सो बनो, भक्षण करन अहार ।
दुख सुख मैथुन रोग सब, गर्मी शीत निहार ॥ ६ ॥

जातिवर्ण कुल देहकी, सूरति मूरति नाम ।
उपजै विनशै देहसों, पांच तत्त्वको ग्राम ॥ ७ ॥

पंचतत्त्व ।

पावक पानी वायु है, धरती अरु आकाश ।
पंचतत्त्वके कोटमें, आय किया तैं वास ॥ ८ ॥

तीन गुण ।

पांच पचीसौ देह सँग, गुण तीनों हैं साथ ।
घट उपाधिसों जानिये, करत रहै उत्पात ॥ ९ ॥

तमोगुण ।

तामस अरु हिंसा करै,वचन चलन विपरीति ।
आलस अरु निन्दा करै,तामस गुणकी रीति॥ १० ॥
दम्भ कपट छल छिद्र बहु,खोटे सब व्यवहार ।
झूठ वचन ऐंठो रहै, तामसके गुण धार ॥ ११ ॥

रजोगुण ।

मान बडाई नाम ना, सिद्धि चहैं भजि राम ।
भोजन नाना स्वादके, राजस गुणके काम ॥ १२ ॥
खेल तमासे राजसी, अरु सुगन्धकी वास ।
आपनको ऊंचो गनै, औरनकी करि हास ॥ १३ ॥

सत्त्वगुण ।

दया क्षमा आधीनता, शीतल हिरदय धाम ।
सत्य वचन गुणसात्त्विकी,भजन धर्म निष्काम॥ १४ ॥
दुखी न काहूको करै,दुख सुख निकट न जाय ।
समदृष्टी धीरज सदा,गुण सात्त्विकको पाय ॥ १५ ॥

ग्रहण करनेयोग्य गुण ।

राजससों तामस बढै, तामससों बुधि नाश ।

रजगुण तमगुण छाँडिकै, करो सतोगुण वास ॥१६॥
सतगुणसें मन थित करो, करि आतमसों नेह ।
आतम निर्गुण जानिये, गुण इन्द्रीसँग देह ॥१७॥
सात्त्विक राजस तामसी, त्रैगुणते संसार ।
तीन पांचको नाश है, माया ब्रह्म विचार ॥१८॥
अहंतत्त्व ओंकार भो, जिनते तीनो देव ।
जिनके परे जु आतमा, अगम अगोचर भेव ॥१९॥
उपजै सो माया सभी, विनशि नेकमें जाय ।
छल माया सो कहत है,स्वप्ना सकल विहाय ॥२०॥
निराकार अद्वैत अचल, निर्वासी तू जीव ।
निरालम्ब निर्वैर सो, अज अविनाशी सीव ॥२१॥

ज्ञान इंद्री ।

जिह्वा इंद्री नीरकी, नभकी इंद्री कान ।
नासा इंद्री धरणिकी, करि विचार पहिंचान ॥२२॥
त्वचासो इंद्री वायुकी, पावक इंद्री नैन ।
इनको साधै साधु जो, पद पावै सुखचैन ॥२३॥

पृथ्वीकी प्रकृति ।

चाम हाड नाडी कहौं, रोम जान अरु मांस ।
यह पृथ्वी परकृति है, अन्त सबनको नास ॥२४॥

पानीकी प्रकृति ।

रक्त बिन्दु कफ तीसरो, मेद मूत्रको जान ।
चरणदास प्रकृती इते, पानीसों पहिंचान ॥२५॥

अग्निकी प्रकृति ।

निद्रा संगम आलकस, भूख प्यास जो होय ।
चरणदास पांचौ कही, अग्नि तत्त्व सो जोय ॥२६॥

वायुकी प्रकृति ।

बल करना अरु धावना, उठना अरु संकोच ।
देह बढै सो जानिये, वायु तत्त्व है शोच ॥२७॥

अकाशकी प्रकृति ।

काम क्रोध मोह लोभ भय, तत्व अकाशको भाग ।
नभकी पांचौं जानिये, नित न्यारो तू जाग ॥२८॥

प्रकृतिविचार ।

रोम गगन नाडी पवन, मांस अग्निका अंश ।
त्वचा नीरसों जानिये, अस्थि महीको वंश ॥२९॥
कफाकाश बिंदु वायुसों, रक्त अग्निसों बूझ
मूत्र नीर रणजीत मन, मेद पृथ्वीसों सूज ॥ ३० ॥
नीर व्योम सपरश पवन, आलस अग्नि पिछान ।
प्यास नीर रणजीत मन, भूख महीसों जान ॥३१॥
उठना तौ आकाशसों, बल करना है वायु ।
बढनि अग्नि धावन उदक, संकोचन महि आयु॥३२॥
लोभ जु नभका अंश है, काम वायुका भाग ।
क्रोध अग्नि जल मोह है, भय पृथ्वीका लाग ॥३३॥

ब्रह्म ।

पांच पचासौं एकही, इनके सकल स्वभाव ।
निर्विकार तू ब्रह्म है, आप आपको पाव ॥३४॥
निराकार निर्लिप्त तू, देही जान अकार ।
आपन देही मान मत, यही ज्ञान ततसार ॥३५॥
शस्त्र छेदि तिहिं सकै नहिं, पावक सकै न जारि ।
मरै मिटै सो तू नहीं, गुरुगम भेद निहारि ॥३६॥

जल कटै काया यही, बनै मिटै फिरि होय।
जीवऽविनाशी नित्य है, जानै विरला कोय॥ ३७॥
जरा मरण धर्म देहको,भूख प्यास धर्म प्रान।
सकल विकल मन जानिये,स्वाद सु इंद्री जान॥ ३८॥
आँख नाक जिह्वा कहूं,त्वचा जान अरु कान।
पाँचों इन्द्री ज्ञान हैं, जानैं संत सुजान॥ ३९॥
जो जो इनसों जानिय, निश्चय ना ठहराय।
कहै सुनै चाखै लखै, सो सोई मिटिजाय॥ ४०॥
इन्द्री जानि सकै नहीं,मन बुधि लहै न ताय।
ज्ञान दृष्टि पहिंचानिये, वासों वाको पाय॥ ४१॥

कर्म इन्द्री।

गुदा लिंग मुख तीसरो, हाथ पावँ लखि लेह।
पांचों इन्द्री कर्म हैं, यह भी कहिये देह॥ ४२॥
देह मिटत है स्वप्न ज्यों, जीव रहत है नित्त।
देहकर्म विसराय करि, आतमसों कर हित्त॥ ४३॥

साधन।

मनै जीतै इन्द्री गहै, चित्त स्थिर जब होय।
आतमसों परचो रहै, राखै सुरति समोय॥ ४४॥

पृथ्वी।

पृथ्वी काल जे ठौर है, मुखै जानिये द्वार।
पीरो रँग पहिंचानिये, पीवन खान अहार॥ ४५॥

जल।

जलको वासा भाल है, लिंग जानिये द्वार।
मैथुन कर्म अहार है, रंग सफेद निहार॥ ४६॥

अग्नि ।

पित्तमें पावक रहै, नैन जानिये द्वार ।
लाल रंग है अग्निको, मोह लोभ आहार ॥४७॥

पवन ।

पवन नाभिमें रहत है, नासा जानि दुवार ।
हरो रंग है वायुको, गंध सुगन्ध अहार ॥४८॥

आकाश ।

आकाश शीशमें वास है, श्रवण दुवारे जान ।
शब्द कुशब्द अहार हैं, ताको श्याम पिछान ॥४९॥

तीन शरीर ।

कारण सूक्षम लिंग है,अरु कहियत अस्थूल ।
शरीर तिनसों जानिये, मैं मेरी जडमूल ॥५०॥

अवस्था चार ।

जाग्रतका अस्थूल है, स्वप्ने लिंग शरीर ।
कारण जान सुषुप्ति है, तुरिया साक्षी वीर ॥५१॥
जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति औ,तुरी–अवस्थ विचार ।
परा पश्यंती मध्यमा, वैखरि वाणी चार ॥५२॥

वाणी ।

जाग्रत वासा नैनमें, स्वप्न कण्ठ अस्थान ।
जान सुषुप्ती हियमें, नाभि तुरिय मन तान ॥५३॥
नाभि मध्य वाणी परा, हिये पसंती सुख्य ।
कंठ मध्यमा जानिये, कहूं वैखरी मुख्य ॥५४॥
चित बुधि मन हंकार जो, अन्तःकरण सुचार ।
ज्ञान अग्निसों जारिये, आतम तत्त्व विचार ॥५५॥

अन्तःकरण[1]।

जलसों मन निश्चय कियो,भयो वायुसों चित्त।
अहंकार भो अग्निसों, बुधि पृथ्वीसों मित्त ॥५६॥

पंच विषय।

शब्द स्पर्श रु गंध है, अरु कहियत रसरूप।
देह कर्म तनमात्रा, तू कहियत निहरूप ॥५७॥
शब्दा गुण आकाशका, सपरश गुण है वाय।
पृथ्वीका गुण गंध है, सो यह प्रगट दिखाय ॥५८॥
रूप अग्निका गुण कहूं, रसगुण जलका जान।
रणजीत बतावे खोलिकरि,ए शिष ले पहिंचान॥५९॥

इन्द्रियोंकी उत्पत्ति।

श्रवण मुख सु इन्द्री भई, तत्त्वाकाशसों होय।
त्वचा हाथ इंद्री युगल, वायु तत्त्वसों होय ॥६०॥
पावकसे इन्द्री युगल, भये नैन अरु पावँ।
जलसों जो इन्द्री भई, लिंग रसना दो नावँ ॥६१॥
गुदा नासिका दो भई, पृथ्वीसों पहिंचान।
चरणदास यह कहत हैं, एक कर्म इक ज्ञान ॥६२॥
राजससों इन्द्री भई, तामससों तत्त्व पांच।
सात्त्विकसों चारों भये,चरणदास कहैं सांच ॥६३॥
तीनों गुणसे है परे, सो आतमको रूप।
सो वह दृष्टि न आवई, अगम अगोचर रूप ॥६४॥

चौवीस तत्त्व।

दश इन्द्री तन पांच हैं, तन्मात्रा भी पांच।
चारों अन्तःकरण हैं, ये चौवीसों सांच ॥६५॥

---

१ अन्तःकरण—मन, बुधि, चित्त, अहंकार।

पन्द्रहको अस्थूल है, नौको लिंग शरीर ।
कारण झीनी वासना, तुरिया निर्म्मल धीर ॥६६॥
जाग्रतमें चौवीस हैं, स्वप्नेमें नौ जान ।
सुपुप्तिमें सब लीन है, ये अँग जडके मान ॥६७॥
तुरिया इकरस आतमा, निर्म्मल अचल अनाद ।
घटै बढै उपजै नहीं, तहाँ न वाद विवाद ॥६८॥
घटै बढै उपजै मिटै, जडको यही स्वभाव ।
सो सब कौतुक कर रही, नाना किये उपाव ॥६९॥
चेतन ज्योंकी त्यों सदा, सदा अकर्त्ता जोय ।
सब कर्मनसों रहित है, आतम ऐसो होय ॥७०॥
काहूते उपजो नहीं, वाते भयो न कोय ।
वह न मरै मारै नहीं, राम कहावै सोय ॥७१॥
योग युगत करि खोजिले, सुरति निरति करि चीन ।
दश प्रकार अनहद बजै, होय जहां लवलीन ॥७२॥

दशवायु ।

तीन बंध नौ नाटिका, दश वाईको जान ।
प्राणापान समान है, और कहत उद्यान ॥७३॥
व्यान वायु अरु किरकिरा, कूरम बाई जीत ।
नाग धनंजय देवदत, दश बाई रणजीत ॥७४॥

नाडी तीन ।

नवो द्वारको बंधकरि, उत्तम नाडी तीन ।
इडा पिंगला सुपुम्ना, केलि करै परवीन ॥७५॥

प्राणायाम ।

करतै प्राणायामके, पावै आतम बेख ।
अनहद ध्वनिके बीचमें, देखै शब्द अलेख ॥७६॥

पूरक करि कुंभक करै, रेचक पवन उतार ।
ऐसे प्राणायाम करि, सूक्षम करै अहार ॥ ७७ ॥
धरती बन्ध लगाय करि, दशौं वायुको रोक ।
मस्तक प्राण चढायकै, करै अमरपुर भोग ॥ ७८ ॥
पांचौ मुद्रा साधिकै, पावै घटको भेद ।
नाडी शक्ति चढाइये, पट चक्करको छेद ॥ ७९ ॥
नासा ध्यान दृष्टि भृकुटीमें, सुरति श्वासके माहिं ।
आतम देखो जात है, यामें संशय नाहिं ॥ ८० ॥
योग युक्ति कै कीजिये, कै आतमको ध्यान ।
आपा आप विचारिये, परम तत्त्वको ज्ञान ॥ ८१ ॥

वर्णविचार ।

शूद्र रु वैश्य शरीर है, ब्राह्मण औ रजपूत ।
बूढा बाला तू नहीं, चरणदास अवधूत ॥ ८२ ॥

आत्मज्ञान ।

काया माया जानिये, जीव ब्रह्म है मित्त ।
काया छुटि सुरति मिटै, तू परमातम नित्त ॥ ८३ ॥
पाप पुण्य आशा तजौ, तजौ मान अरु थाप ।
काया मोह विकार तजि, जपै सु अजपा जाप ॥ ८४ ॥
आप भुलानो आपमें, बँधो आपही आप ।
जाको ढूढत फिरतहौ, सो तू आपहि आप ॥ ८५ ॥
इच्छा दुई बिसारिकै, क्यों न होय निर्वास ।
तू तौ जीवन्मुक्त है, तजौ मुक्तिकी आस ॥ ८६ ॥
आपा खोजे आप लखि, आप अपनको देख ।
चरणदास नहिं तू ब्रह्म है, तूही पुरुष अलेख ॥ ८७ ॥

जैसे कछुवा सिमिटिकै,आपहि माहिं समाय।
तैसे ज्ञानी श्वासमें, रहै सुरति लवलाय ॥ ८८ ॥
सब घट रमो सो राम है,आदि पुरुष निर्गम्य।
लख चौरासी योनिमें, एक समानो आय ॥ ८९ ॥
दृष्टि मुष्टि आवै नहीं,रूप न देखो जाय।
बिन सूरति बिन नामको, घट घट रहो समाय॥९०॥

छप्पय ॥ इच्छा दुई कर दूर आप तू ब्रह्म ह्वै जावै। और सो द्वितीया कौन तासुकी शीश नवावै॥ माला तिलकबनाय पूर्व अरु पश्चिम दौरा। नाभि कमल कस्तूरि हिरण जंगल सो बौरा॥चरणदास लखि दृष्टि भरि एक शब्द भरपूर है। निरखि परखि ले निकटही कहन सुननको दूर है ॥ झूठीसी यह दृष्टि जगत सब झूठो दरशै। मूरख जानै सत्य तासुसों फिरि फिरि परशै ॥ चंद सूर थिर नहीं नहीं थिर पौन न पानी। त्रदेवा थिर नहीं नहीं थिर मायारानी ॥ नवनाथ चौरासी सिद्ध जो चरणदास थिर ना रहै। ब्रह्म सत्य सर्वज्ञ है आतम विचार क्यों ना गहै ॥

दोहा–जो मुखसेती बोलिये,अरु सुनियत है कान।
जो आखिनसों देखिये, सबही माया जान ॥ ९१ ॥
एकै सब तन रमि रह्यो, चेतन जड़के माहिं।
माया दर्शत है सभी, ब्रह्म लखत है नाहिं ॥ ९२ ॥
जैसे तिलमें तेल है, फूल मध्य ज्यों वास।
दूध मध्य ज्यों घीव है, लकडी मध्य हुलास॥ ९३ ॥
थावर जंगम चर अचर, सबमें एकै होय।
ज्यों मनिकैमें डोरि है, बाहर नाहीं कोय ॥ ९४ ॥

एक डोरि मनिका गुहै,अवरण वरण निहारि ।
आतम तो निररूप है, नित्य अनित्य विचारि॥९५॥
माया यही स्वभाव है, उदय होय छिपि जाय।
चंचल चपल सुहावनी, ओला ज्यों गलि जाय॥९६॥
परमातम तो नित्य है, ताको आदि न अंत ।
सदा अचल चंचल नहीं,सब गुण रहत अनन्त ॥९७॥
सत चेतन आनन्द है, आदि अन्त मधि हीन।
आदि अन्त आकारको, सो तू झूठो चीन ॥ ९८ ॥
सूरति नाम अकार है, ज्यों भूतनको नाच ।
मृग तृष्णाको नीर है, निकट गये नहिं सांच॥ ९९ ॥
चितवत सांचीसी लगे,खोज किये मिटि जाय ।
दीखै है पर है नहीं, कौतुकसो दरशाय ॥१००॥

शिष्यवचन ।

ब्रह्म विना खाली नहीं, धरवेको इक पाँव ।
मायाको कहँ ठौर है, सद्गुरु मोहि बताव ॥१०१॥
निर्विकार तो ब्रह्म है, अद्वय अचल अपार ।
आई माया कहांते, सद्गुरु कहो विचार ॥१०२॥

गुरुवचन ।

आप ब्रह्म माया भयो, ज्यों जल पाला होय ।
पाला गलि पानी भयो, ऐसे नाहीं दोय ॥१०३॥
झूठी माया सो कहैं, ज्ञानी पंडित लोय ।
भर्म भूल सांची लगे, समझे सांच न होय ॥१०४॥
सोनेको गहनो गढे, कहन सुननको दोय ।
गहनो ना सोनो सबै, नेक जुदो नहिं होय ॥१०५॥
झूठ सांच दोनो वहै, झूठ मिटै इक सांच ।

नाम मिटे सूरत मिटे, भूषणको लग आंच ॥१०६॥
जाको माया कहत हैं, सो तू नेक निकास ।
जैसे हींग कपूरकी, नेक जुदी करवास ॥१०७॥
जल समान तो ब्रह्म है, माया लहर समान ।
लहर सवै वह नीर है, लहर कहै अज्ञान ॥१०८॥
खेल खिलौना खाँडके, कीजै लाख पचास ।
सकल खिलौना खाँड है,ऐसे गहु विश्वास ॥१०९॥
दास खिलौना खाँडके, भाजन राखे खाँड ।
विन विनशेभी खाँड है,विनशि जाय तौ खाँड ॥११०॥
माटीके भांडे भवैं, सूरति अरु बहु नाम ।
बिगसि फूटि माटी भई,बासन कहु केहि ठाम ॥१११॥
ऐसेही माया नहीं, समझि देखु मन माहिं ।
जो दीखै सो ब्रह्म है, रंचक माया नाहिं ॥११२॥
इच्छा मेटै दुइ तजै, एकै मन विश्राम ।
ब्रह्मज्ञान विज्ञान है, समझ परमपद धाम ॥११३॥

सवैया॥श्वास उसाँस चलै जब आवहि है जु अखण्ड टरै नहिं टारो।भीतर बाहर है भरिपूर सो,ढूंढौं कहां नहिं नाहिं न न्यारो ॥ दास कहै गुरुभेद दियो भ्रम, दूरि भयो जु हुतो अति भारो । दृष्टि अदृष्टि जु रामको देखत, राम भये पुनि देखनहारो ॥

विज्ञापन ।

दोहा–आप आपमें आप है, खेलौ बहु विस्तार ।
द्वितिया तौ कछु है नहीं, एकहि एक निहार ॥११४॥
कहिं नारायण नाभि है, कहीं ब्रह्म कहिं वेद ।
कहिं शंकर गिरजा कहीं,कहीं अभेदहिं भेद ॥११५॥

कहिं ऋषि मुनि कहिं देवता, कहीं सिद्ध कहिं नाथ ।
आपनको आप खडो, कहूं न नावै माथ ॥११६॥
कहिं आसन कहिं तप करै, कहीं ज्ञान कहिं योग ।
कहीं दुखी कहिं सुख भयो, कहीं रोग कहिं भोग ॥११७॥
कहीं नारि कहिं नर भयो, कहिं वालक कहिं बाल ।
कहिं मँगता दाता कहीं, कहीं सुखी कंगाल ॥११८॥
कहीं वृक्ष कहिं फल भयो, कहीं फूल कहिं बीज ।
कहीं मूल शाखा भयो, कहिं माली कहिं सींच ॥११९॥
कहिं मालिनि कहिं मालती, कहिं फुलवा कहिं नार ।
कहीं महल खिडकी भयो, दीपक कहिं उजियार ॥१२०॥
कहीं वाग क्यारी भयो, कहीं भँवर गुंजार ।
कहीं घटा कहिं विज्जुली, दादुर मोर वहार ॥१२१॥
कहिं पर्वत जंगल भयो, कहिं वारिद कहिं वारि ।
कहिं वडवानल अग्नि है, धारो तेज अपार ॥१२२॥
मानसरोवर भयो कहिं, मोती नहीं मराल ।
कहिं सरिता धीवर कहीं, कहीं मीन कहिं जाल ॥१२३॥
कहीं कथा श्रोता कहीं, कहीं कीरतन रूप ।
कहीं त्याग वैराग लै, कीन्हों संत स्वरूप ॥१२४॥
कहिं पृथ्वी कहिं वृक्ष हो, कहिं गोपी कहिं ग्वाल ।
कहीं प्रेमके रूप है, कहिं प्रेमी कहिं ख्याल ॥१२५॥
कहिं कालिंदी निकट हो, कहिं वृन्दावनधाम ।
कहिं कुंजें अति सोहनी, कहीं युगल ल्यो नाम ॥१२६॥
कहिं सुगन्धशीतलपवन, कहिं वंशीवट ठावँ ।
कहीं चरणहीं दास है, वार वार वलि जावँ ॥१२७॥
कहीं कन्हैया है खडो, एक पाँव अँग मोर ।

कहिं मुरली अधरन धरी, बाजत है घनघोर ॥१२८॥
कहीं मुकुट कुण्डल भयो,अलकैं कहीं कपोल ।
कहिं ललचौं हैं नैन हैं,नासा मुकुत सडोल ॥१२९॥
कहीं धुकधुकी कंठ है,कहिं मोतियनकी माल ।
कहिं बाजू नवरत्नके, नटवर मदन गोपाल ॥१३०॥
कहीं कडा कहिं कर भयो,कहिं पहुँची जहँगीर ।
रतन चौक गूंठी भयो, लागी संग जँजीर ॥१३१॥
कहीं बादलो जर्द है, नीमो ह्वै गयो अंग ।
कहिं बद्धी गल जिंद है, कहीं साँवरो रंग ॥१३२॥
कहिं पेंजनि कहिं पग भयो,कहीं चरणको दास।
कहीं आपही नख भयो,शशि समान परकास ॥१३३॥
आप आपमें आप है, आप आपमें आप ।
आप अपनसें जपत है, आप आपनो जाप ॥१३४॥
अविनाशी नाशै नहीं, नाश न कबहूं होय ।
[illegible] स्वरूपी एक है, [illegible] होय न हिं दोय ॥१३५॥
आप ब्रह्मसूरति भयो,ज्यों बुदगल जलमाहिं ।
सूरति विनशै नामसँग, जल विनशत है नाहिं॥१३६॥
बुदगल देखो जल सबै, बुदगल कहुं न होय ।
कहबेको दूजो कहो,जल बुदगल नाहिं दोय ॥१३७॥
भयो नेकमें बुलबुलो, नाच कूद मिटिजाय ।
निराकार रहि जायगो, सूरति ना ठहराय ॥१३८॥
निराकार आकार धर, खेलौ कै इकबार ।
स्वप्नो ह्वै ह्वै मिटि गयो, रहो सारको सार ॥१३९॥

आप आपसें खेल मचायो । ज्यों पानी बुदगल ह्वै आयो ॥
ऐसे ब्रह्म धरी है काया । आपहि पुरुष आपही माया ॥

आप नरायण लक्ष्मी भई । नाभि कमल अरु आपहि दई ॥
आपहि धरती आपहि पानी । आपहि रुद्र चतुर विज्ञानी ॥
ह्वै नारायण विष्णु कहायो । शेषनाग ह्वै तले पठायो ॥
तेतिस कोटि देवता भयो । ऋषिमुनि कोटि अठासी छयो ॥
चारोंयुग आपहि भयो लोका ।पापपुण्य आपहि भयो शोका ॥
आपहि फूल शूल अरु वारी । आपहि पुरुष आपही नारी ॥

दोहा–जल थल पावक राम है,राम रमो सब माहिं ।
हरि सबमें सब राममें, और दूसरो नाहिं ॥१४०॥

दश अवतार आप धरि आयो । सेवक साहब आप कहायो ॥
आपहि गिरिवर आपहि तरुवर। आपहि हंस आपही सरवर ॥
आपहि चारि वर्ण षट दर्शन । पूजे आप आपही पर्शन ॥
आपहि ध्यानी आपहि प्रेमी ।आपहि योग भोग अरु नेमी ॥
चरणदास शुकदेव बतायो । अपनो भेद आपही गायो ॥
तारा मंडल आप अकाशा । आपहि चंद सूर परकाशा ॥
जैसे जल तरंग ह्वै आई । उलटि फेरि जलमाहिं समाई ॥
आप आपमें स्वप्न उठायो । आपहि स्वप्न आप ह्वै आयो ॥
ना कछु गयो नहीं कछु आयो । अपनो भेद आप ही पायो ॥
ना कछु मिलै कटै नहिं छीजै । ना कछु उठै चलै नहिं भीजै ॥
स्वप्नो मिटि भया एकाकारा । ज्ञानी अबही ल्योह निहारा ॥
नहीं सूक्ष्म अस्थूल न भारी । रूप रंग नाहिं है परकारी ॥
वार पार कछु दीखत नाहीं । कवसों है अरु कवसों नाहीं ॥
कहा कहौं कछु कहन न आवै। गूंगो स्वप्नो कहा बतावै ॥
वारापार पार नहिं पायो । ढूँढत ढूँढत आप भुलायो ॥
कहत कहत में गयो हिराई ।अब मोपै कछु कह्यो न जाई ॥

दोहा—हद कहूं तो है नहीं, वेहद कहौं तो नाहिं ।
हद वेहद दोनों नहीं, चरणदास भी नाहिं ॥१४१॥
जग स्वप्नो सो ह्वै गयो, गयो पेखनो गाँव ।
जब जागो तब मिटि गयो, चरणदास नहिं नाँव॥१४२

छप्पय ॥ तब न चंद नहिं सूर नहीं नभमें तारागण । नहिं धरती नहिं शेष नहीं अगती पारायण ॥ तब न रूप नहिं नाम नहीं त्रगुण त्रैदेवा॥तब न ब्रह्म नहिं जीव नहीं साहब नहिं सेवा॥ रणजीत मीत नहिं वैर तब निर्गुण सर्गुण ना हुता ॥ तब न वेद वाणी नहीं नहिं ज्ञानी नहिं पंडिता ॥ जो श्रवणनसों सुनै और मुख सेती वागै । जो कछु देख नैन और सोवै अरु जागै॥ औ आवै दुर्गन्ध गंध नासाके माहीं।यह सब झूठो जान कछू ठहरत है नाहीं ॥ अरु चरणदास उपजै नशै विनशै नहिं संसार कहुँ । ब्रह्म सत्य सर्वज्ञ है सु झूठो दरशै स्वप्न यहुँ ॥

दोहा—ब्रह्म विना खाली नहीं, सरसों सम कहुँ ठोर ।
स्वप्नोसो जग देखिये, स्वप्न भयो मन मोर ॥१४३॥
शुद्ध ब्रह्म है रैनि सम, जगत दिवाली दीव ।
ज्यों तरंग जलसें उठैं, ब्रह्मबीच ये जीव ॥१४४॥
वार न जाको पाइये, पार परे नाहिं चीन ।
ऐसे सिन्धु अथाहमें, जगत जानिये मीन ॥१४५॥
ब्रह्मबीच ये जीव सब, फिरत रहत आधीन ।
जैसे सागर सिन्धुमें, नानारूपी मीन ॥१४६॥
जैसे लहरि समुद्रकी, उठत रहत तेहि माहिं ।
विन इच्छा विन भावना, ह्वै ह्वै मिटि मिटिजाहिं॥१४७॥
औंडो सीव गँभीर है, विन इच्छा विन दोय ।
निजस्वभाव जग होत है, मिटि२फिरि२ होय ॥१४८॥

धरतीमें लीकट खिंचे, उठि नहिं आवै हाथ ।
ब्रह्म सत्य जग झूंठ है, ह्वै ह्वै मिटि मिटि जात॥१४९॥
जगत ब्रह्ममें यों दिपै, ज्यों धरतीपर रेख ।
रेख मिटै धरती रहै, ऐसे ही जग देख ॥१५०॥
झूंठ सांच दोउ नाम हैं, झूंठ मिटै थिर सांच ।
ज्यों लोहा पावक मिलो, लोह रहे मिटि आंच॥१५१॥
ज्यों सोवत स्वपनो उठो, दृष्टि खुली जब नाहिं ।
जग स्वप्नोसो ह्वै मिटै, समझि देखु मनमाहिं ॥१५२॥
देखनको अति निकट है, कहवेको बहु दूरि ।
एकै ब्रह्म अखण्ड है, सकल रह्यो भर पूरि ॥१५३॥
अद्वै अचल अखंड है, अगम अपार अथाय ।
नहीं दूर नहिं निकट है, सद्गुरु दियो बताय ॥१५४॥
भूल हुती जब दो हुते, अब नहिं एक न दोय ।
अटक उठी धोखो मिटो, आपनहू गयो खोय॥१५५॥

छप्पय–जहां गुरू नहिं शिष्य जहां नहिं साहब दासा ॥ जहां गुफा नहिं योग जहां नहिं गगन निवासा ॥ जहां नहीं तप दान जहां नहिं देवल पूजा । जहां ब्रह्म नहिं जीव जहां नाहिं एक न दूजा । चरणदास मिलि मिटि गयो सो अचरज ऐसो न सूझिया । कौन सुने कासों कहै सो आप आप नहिं दूजिया ॥

दोहा–अपरम्पार अपार है, आदि अनादि अडोल ।
पुरुष पुरातन ब्रह्म है, बिन काया बिन बोल ॥१५६॥

चौ०–अगम अगोचर अजर अनंता। अद्वैरूप अगम भगवंता॥ निराकार निर्भय निर्वाना । परमेश्वर परमात्मा ग्राना ॥ अर्ध उर्ध्व वह नहीं गोसाईं । नहिं बाहर नहिं मध्यम माहीं॥

नहीं जीव नहिं सीव सहाई। श्वेत श्याम नहिं है अरुणाई॥
है जैसो तैसो ही राजै। आपन–माहिं आपही गाजै॥
नहीं नाँव नहिं भावन भारी। है अखण्ड नाहिं खंडित कारी॥
है सर्वज्ञ सत्य विज्ञाना। अभेद् अछेद् अकत्थ सुज्ञाना॥
ज्योंका त्यों जैसेका तैसा। नहिं ऐसा नाहिं कहिये वैसा॥

दोहा–नीचे नीचे अन्त ना, ऊपर ऊपर ऊप।
बाँये बाँये हद्दना, दहिने दहिने गूप॥१५७॥
नहीं नीच ऊपर नहीं, नहिं दहिने नहिं वाम।
मध्य नहीं आकार ना, निराकार नहिं नाम॥१५८॥
निर्गुण ना सर्गुण नहीं,उपजै ना मिटि जाय।
सब कुछ है अरु कुछ नहीं,सदा ब्रह्म थिरथाय॥१५९॥
जहां सांच जहँ झूठ है, जहां झूँठ जहँ सांच।
झूठ सांच दोनों नहीं,तहँ कुछ शीत न आंच॥१६०॥
बंध नहीं मुक्तौ नहीं, पाप पुण्य भी नाहिं।
उतपति ना परलय नहीं,नहीं नहीं भी नाहिं॥१६१॥
इन्द्री ना निग्रह करौं, मन नहिं जीतूं ताहि।
भूलौं ना चेतौं नहीं, मैं नहिं खोजौं वाहि॥१६२॥
योग नहीं युगता नहीं,नहीं ज्ञान नहिं ध्यान।
बुधि विचार पहुँचै नहीं,तहँ कछु लाभ न हान॥१६३॥
जैनधर्म शिवशक्ति ना,स्वर्ग नरक नहिं वास।
षट् दर्शन चौवर्ण ना, नहीं करम संन्यास॥१६४॥
सिद्ध नहीं साधक नहीं,नहीं तिमिर नहिं भान।
शून्य नहीं वेशून्य ना, नहीं तत्त्व विज्ञान॥१६५॥
धर्म कर्म अरु मोह ना, अरु नाहीं वैराग।
ज्योंका ज्यों सो भी नहीं,नहीं दुखी अनुराग॥१६६॥

चौ०—ब्रह्मज्ञान बिन मिटै न दोई। ब्रह्मज्ञान बिन मुक्त होई॥
दान यज्ञ तप नाना भोगा। ब्रह्मज्ञान बिन सब ही रोगा॥
कलह कल्पना मनमें दोष। ब्रह्मज्ञान बिन ना सन्तोष॥
तिमिर अविद्या सब ही भागै। ब्रह्मज्ञानमें जो तू जागै॥
मत मारग मिलि भर्म बढावै। पक्षपात लै सब भर्मावै॥
गुरु बिन ब्रह्मज्ञान नहिं पावै। गुरु बिन तत्त्व कौन दर्शावै॥
गीता अरु वेदान्त बतावै। सामवेद भी योंही गावै॥
ब्रह्मज्ञानमें निश्चय आवै। जीवन्मुक्ता सोइ कहावै॥

दोहा—तू नाहीं सब राम है, वेद भेदकी सीख।
एक रमैया रमि रह्यो, सकल अण्ड व्यापीक॥१६७॥
सिद्ध स्वरूपी ब्रह्ममें, ज्यों पाला सब लोक।
पाला गलि पानी भवै, कछू न निकसै फोक॥१६८॥
उलझेको सुलझायकै, कई जन्मको सूत।
चरणदास निर्भय भये, आशा तजि अवधूत॥१६९॥

कवित्त—स्वर्गहू न चाहिये जो होम यज्ञ दान करौं, इन्द्र आदि भोगनको चितते उठायो है। ऋद्धिहू न चाहिये जो जक्तमें बडाई चलै, सिद्धिहू न चाहि सब साधन विसरायो है॥ जातिहू न चाही जो कुलकी मर्य्याद चलूं, चारि वर्ण एक योंही वेदनमें गायो है। कासों कहं मुक्त और बंध तौ न सूझे कहूं, कहै चरणदास आप आपन लौ लायो है॥

सवैया—आदिहु आनँद अन्तहु आनँद, मध्यहु आनँद ऐसेही जानो। बंधहु आनँद मुक्तहु आनँद, आनँद ज्ञान अज्ञान पिछानो॥ लेटहु आनँद बैठहु आनँद, डोलता आनँद आनँद आनो। दास विचारि सबै कछु आनँद, आनँद छाँडिके

दुःख न ठानो ॥ १ ॥ आदिहु चेतन अन्तहु चेतन, मध्यहु चेतन माया न देखी । ब्रह्म अद्वैत अखण्ड निरालँभ, और न दूसरो आनँद पेखी ॥ सिन्धु अथाह अपार विराजत, रूप न रंग नहीं कुछ रेखी । दास नहीं शुकदेव नहीं, तहँ न कोइ मारग ना कोइ भेखी ॥२॥ भक्षत हैं नहिं भक्षत भोजन, पीवत हैं नहिं पीवत पानी। डोलत हैं परसों नहिं डोलत, बोलत हैं नहिं बोलत बानी ॥ रूप अनेक ब्योहारमें देखत, निश्चय मध्य कछू नहिं आनी । दास बताय दियो शुकदेवने, ऐसे रहै तेहि जानिये ज्ञानी॥३॥सोवत है नहिं सोवत नींद सो,जागत है नहिं जाग दिखानी । योग करैं न करैं कछु साधन, ध्यान करें न करें कछु ध्यानी ॥ वाक्य विशाल करैं चरचा, न करें चरचा नहिं होय बिरानी । दास बताय दियो शुकदेवने, ऐसे रहै तेहि जानिये ज्ञानी ॥ ४ ॥

कवित्त-मंदिर क्यों त्यागे अरु भागै क्यों गिरिवरको, हरिजीको दूर जानि कलपै क्यों बावरे । साधन बतायो अरु चारिवेद गायो सब, आपनको आप देखि अन्तर लौ लाव रे ॥ ब्रह्मज्ञान हिये धरो बोलतेका खोज करो, माया अज्ञान हरो आपा बिसराव रे। जैहै जब आप धाप कहा पुण्य कहा पाप, कहै चरणदास तू निश्चय घर आव रे ॥

अथ ब्रह्मज्ञानी लक्षणवर्णन-( ज्ञानपरीक्षा )

निरालंब१ निर्भ्रम२ निर्वासिक३ निर्विकार४ (अथ विचारपरीक्षा)निर्मोहत१ निर्बंध२ निर्हिंसक ३ निर्वाण४( अथ विवेकपरीक्षा ) सावधान१ सर्वंगी२ सारग्राही३ संतोषी४ (अथ परमसंतोपपरीक्षा ) अयाच१ अमानी२ अपक्षीक३ स्थिर ४ (अथ

सहजपरीक्षा ) निष्प्रपंच १ निहतरंग २ निर्लिप्त ३ निष्कर्म ४ (अथ निर्वैरपरीक्षा ) सुहृत १ सुखदायी २ शीतलताई ३ सुमति ४ (अथ शून्यपरीक्षा )शीलवंत १ सुबुद्धी २ सत्यवादी ३ ध्यान-समाधी ४ जामें ये लक्षण होयँ ताको ब्रह्मज्ञानी कहिये और जामें ये लक्षण न होयँ ताको वाचकज्ञानी वितंडा जानिये ॥

दोहा—जनक गुरू शुकदेवजी, चरणदास शिष्य होय ।
आपा रामहि राम हैं, गई दुई सब खोय ॥१७०॥
ब्रह्मज्ञान पोथी कही, चरणदास निर्वार ।
समझे जीवन्मुक्त हो, लहै भेद ततसार ॥१७१॥

इति श्रीशुकदेवजीके शिष्य श्रीस्वामिचरणदासजी-
कृत ब्रह्मज्ञानसागर सम्पूर्ण ।



॥ ॐ ॥

अथ ।

# श्रीचरणदासकृतशब्दवर्णन ।

मंगलाचरण। गुरुस्तुति ।

दोहा-ब्रह्मरूप आनन्द घन, निर्विकार निर्लेव ।
मङ्गल करण दयालजी, तारण गुरु शुकदेव ॥ १ ॥
सतियनमें तुम सत्य हौ, शूरनमें हौ वीर ।
यतियनमें तुम यती हौ, श्रीशुकदेव गँभीर ॥ २ ॥
पतित उधारण तुम लखे, धर्म्म चलावन भेव ।
संकट सकल निवारिये, जै जै श्रीशुकदेव ॥ ३ ॥
चिंता मेटन भवहरन, दूरि करण जग व्याध ।
गुरु शुकदेव कृपा करो, चरण लगे सब साध ॥ ४ ॥
दाता चारौ वेदके, श्रीशुकदेव दयाल ।
चरणदास पर हूजिये, वारंवार कृपाल ॥ ५ ॥

रागकल्याण-नमो शुकदेव हो चरण पखारणम्॥ द्वंद संकट हरण करणसुख मंगल परम आनन्द घन पतितके तारणम् । नाव तक त्याग वैराग है मुक्तिलौं तीनहूं गुणनते निर्विकारम् । महानिष्काम और धाम चौथे रहौ सिद्धि चेरी भई फिरैं लारम् ॥ ज्ञानके रूप अरु भूप सब मुनिनमें दयाकी नाव किये जीव पारम्। उदै भागौत मति भान परगट कियो तिमिर कियो दूर अरु धर्मधारम्॥ मोहदल जीति अनरीतिके खण्डनं भक्तिके दृढ करन भवविडारम् । चरणदासके शीशपर हाथ नितही रहै यही मांगों गुरु वारवारम् ॥

अथ चरणोंके चिह्नका मंगलाचरण ।

दोहा—दशचिह्न दहिने चरण, बांये हैं दश एक ।
जिनके निश्चय ध्यानते, कटै जो विघ्न अनेक ॥ ६ ॥
श्रीशुकदेव आज्ञा दई, चरणदास उच्चार ।
सो अब वर्णनन करत हूं, शब्दमाहिं विस्तार ॥ ७ ॥

रागकल्याण—चरणचिह्न चितलाव फेरि तेरा जन्म न होगा। पद्म झलक छवि निरखि नैनभरि अंकुश मन अटकाव॥अम्बर छत्र कुलिश जो राजत ध्वजा धेनु पदभाव।शंख चक्र अरु कलश सुधाह्रद तासूं चित उरझाव॥स्वस्तिक जम्बूफलकी शोभा जासों सुरति लगाव।अर्द्धचन्द षटकोन मीन बुन्द उर्ध रेख लखि चाव॥अष्टकोन तिरकोण विराजै धनुष वाण उरधाव।कोटि काम नख ऊपर वारूं नूपुर सुन्दर पाव॥श्रीशुकदेव चिह्नपद वरणे सो तू हियमें लाव । चरणदासहित राखि भोरनिशि वारवार वलि जाव ॥

आरती राग भैरव ।

मंगल आरति या विधि कीजै । हर्ष पाय आनँदरस पीजै ॥
प्रथमै मंगल गुरुकी जान । जिनसूं पायो पद निर्वान ॥
ज्ञान भानु परगट कियो भोर ।मिटिगइ रैन तिमिर घनघोर॥
दुतिये मंगल श्रीगोपाल । भक्ति वछल वहुपतित उधार॥
राम कृष्ण पूरन अवतार । दुष्टदलन सन्तन रखवार ॥
तृतिये मंगल प्रभुजीके साध । मानसरोवर मता है अगाध ॥
तिनकी संगति उठिगयो शंसा । काग पलटि गति है गय हंसा॥
चौथे मंगल श्रीभागोत । घट उजियार करनकूं ज्योत ॥
पाप ताप दुख मेटनहारी । जिहिं नौका चढि उतरो पारी ॥
पँचवें मंगल श्रीशुकदेव । तन मनसूं करि उनकी सेव ॥

चरणहिंदास चरण चितलायो। मंगलचार भयो जस गायो ॥
मंगल आरति कीजे प्रात । सकल अविद्या घट गइ रात ॥
सूरज ज्ञान भयो उजियारा ।मिटिगये औगुणकुबुधिविकारा॥
मनके रोग शोक सब नाशै । सुमतिनीर शुभ जलजप्रकाशै॥
मे अरु मर्म्म नहीं ठहराई । दुविधा गई एकता आई ॥
जाति वर्ण कुल सूझे नाके । सब सन्देह गये अब जीके ॥
घट घट दरशै दीन दयाला । रोम रोम सब होगइ माला ॥
दृष्टि न आवै दुख जगजाला । काग पलटि गति भये मराला॥
अनहद बाजन बाजन लागे ।चोर नगरिया तजि तजि भागे ॥
गुरुशुकदेव कि फिरी दोहाई । चरणदास अन्तर लवलाई ॥

भोरकी ध्वनि । राग भैरव ।

आरति आदिपुरुपकी कीजै । साधौ अगम अपार अचल मन दीजै॥अद्भुत आरती ॐकारा।त्रैदेवा है जगत पसारा॥पहिले मच्छरूप हरि धारो । वेद लाय शंखासुर मारो॥रई मँद्राचल वासकनेती।चौदह रत्न मथे दधि सेती॥रूप वराह धारि हरि धाये।हिरण्याक्ष हनि धरती लाये॥खम्भफारि हिरणाकुश मारो । नरसिंह ह्वै प्रहलाद उबारो॥वामन ह्वै करि बलि छलि लीन्हे । तीनि लोक तीनों पग कीन्हे ॥ परशुराम भै शस्तर धारे । क्षत्री सबै निकछ करिडारे ॥ रामरूप रावन दलमलिया। लंका राज विभीपण मिलिया॥कृष्णरूप भै कंस पछारो। दर्शन दे व्रज सकल उधारो ॥ बुद्धिरूप अचरज गति तेरी। कौतुक देखि थकी बुधि मेरी ॥ निष्कलंक निर्लिप्त निरासा। संभल सुरति लियो जहँ वासा ॥ हरि हैं एक रूप बहु धारे। निराकार आकार नियारे ॥ दश अवतार आरती गाऊं। निर्भय होय अभयपद पाऊं ॥ चरणदास शुकदेव

बतायो । निर्गुण हरि सगुण ह्वै आयो ॥ आरति रमता-रामकि कीजे । अन्तर्द्धान निरखि सुख लीजे ॥ चेतन चौकी सतको आसन । मगन रूप तकिया धरि दीजे ॥ सोहं थाल खैंचि मन धरिया । सुरति निरति दोउ बाती बरिया ॥ योग युगतिसूं आरति साजी । अनहद घंट आपसूं बाजी॥ सुमति साँझकी बिरिया आई।पांचपचीस मिलिआरति गाई॥ चरणदास शुकदेवको चेरो।घटघट दर्शै साहब मेरो ॥ आरति करत हँसै मन मेरो । वारपार कछु दिखै न तेरो॥अमर अडोल निरीक्षण भेखा।त्रिगुण रहित रूप नहिं रेखा ॥ चेतन आनँद नित निर-धारा ।निराकार निर्लिप्त नियारा॥निराकार आकार विराजति। निरगुण अरु सगुण तेरी गति॥हाथ पाँव अरु शीश घनेरे। कैसे आरति करूं प्रभु मेरे ॥ सोहं बाती घीव अखण्डा । एकहि ज्योति बले ब्रह्मण्डा ॥ तुही थाल तुहि आरति साजे । तुहि घंटा तुहि झाझर बाजे ॥ चरणदास शुकदेव लखायो । सुरति थकी पै पार न पायो ॥ गगन मँडलमें आरति कीजे । उत्तम साज सकल सजि लीजे ॥ सुखमन अमृत कुम्भ धरावै । मनसा मालिनि फूल चढावै॥घीव अखंडा सोहं बाती॥त्रिकुटी ज्योति जलै दिनराती ॥ पवन साधना थाल करीजे ॥ तामें चौमुख मन धरि लीजै ॥ रवि शशि हाथ गहौ तिहिमाहीं । खिन दहिनो खिन बायें लाई॥सहसकमल सिंहासन राजै । अनहद झाँझरि नितही बाजै॥इहि विधि आरति सांची सेवा। परमपुरुष देवनको देवा॥चरणदासशुकदेव बतावै।ऐसी आरति पार लँघावै॥ऐसी आरति करि हुलसावै । दै परिक्रमा शीश नवावै ॥ तनको थाल अरु मनको चौमुख । ज्ञान ध्यानकी बाती लावै । भक्ति भावको घी भरि तासें ॥ जगमग जगमग

ज्योति जगावे ॥ अर्घ उर्घ हितसूं करि फेर रचना रचैं फूल वर्षावे । सुरति मृदंग अरु निरति तँबूरा झैगड झैगड झाँझ बजावे ॥ ताल विना मुरचंग शंखध्वनि प्रेम मगन है हरिगुण गावे । सो रनकलशा जलकी राखै धूप रु अगर सुगन्ध धरावे ॥ या विधिसों शुकदेव श्यामकी गाय आरतीको फल पावे । युगल किशोर निरखि नैननसों चरणदास सखि बलि बलि जावे ॥

राग विभास—या विधि गोविंद भोग लगावो । भक्तवछल हरि नाम कहावो ॥ बेर भीलनीके तुम पाये । देखि ऋषीश्वर सकल लजाये । जैसे साग विदुर घर पायो।दुर्योधनको मान घटायो॥भक्त सुदामाके तंदुल लीन्हे । कंचन महल अधिक सुख दीन्हे ॥ ज्यों कर्माकी खिचरी खाई । नेह लियो सब शुचि बिसराई॥तुम्हरी विभो प्रभु तुम्हरेहि आगे।हमसूं दीन-नकूं कहलागे॥प्रेम प्रीतिसूं भोजन कीजै।बचै सीथ संतनकूं दीजै॥चरणदास भरि राखी झारी।अँचवो हरि शुकदेव मुरारी॥

भांगके आंगकी ध्वनि—काफी ।

जै जै पारब्रह्म परधान । जाकूं पावै गुरुके ज्ञान ॥ ब्रह्म पुरुषको धरो स्वरूपा।सो तो कहिये अधिक अनूप ॥ जैजै ॐ ओंकार त्रैदेव । जै जै दश औतार अभेव॥ जै जै वृन्दावन निज धाम । जै जै गोकुलअरु नँदग्राम॥जै जै गोपी जै जै ग्वाल । जै जै सदा विहारीलाल॥जै जै कुंजगली नंदलाल । मोरमुकुट मुरली बनमाल ॥ जै जै राधे कृष्ण मुरार । जै जै व्यासदेव उचार ॥ जै जै महाविदेह जनकजी । जै जै श्रीशुकदेव दयाल ॥ इनको नाम जपै जो कोय । प्रेमभक्ति पावत है सोय ॥ चरणदास शुक वास लहैं हरिचरणनके पास रहैं ॥

अथ गुरुदेवका अंग कल्याण ।

सद्गुरु पांचों भूत उतारो।जन्म जन्मके लागेहि आये दे मंतर अब तिन्हें विडारो ॥काम क्रोध मोह लोभ गर्भने मन बौराय कियो आप भायो ।जिनके हाथ परो जियमेरो घेरा घेरी बहुत दुख पायो॥एक घरी मोहिं छोंडत नाहीं लहरि चढायकै बहुत निवावो । कपि ज्यों घर घर द्वार नचावै उत्तम हरिको नाम छुटावो ॥ अबके शरणि गही है तुम्हरी चरणहिदास अजाने । किरपा करि यह व्याधि छुटावो गुरु शुकदेव सयाने ॥

रागधनाश्री–अब में सद्गुरु शरणौ आयो। बिन रसना विन अक्षर वाणी ऐसोहि जाय सुनायो॥काम क्रोध मद पाप जराये त्रैविध ताप नशायो।नागिनि पांच मुई सँग ममता हृष्टसूं काल डरायो ॥ किरिया कर्म अचार भुलानो ना तीरथ मग धायो । समझो सहज वचन सुनि गुरुके भर्मको बोझ बगायो॥ज्यों ज्यों जपूं गरक हो वामें वह मो माहिं समायो । जग झूठो झूठो तन मेरो यों आपा नहिं पायो॥वाकूं जपै जन्म सोइ जीतै सोहं शुद्धि बतायो । चरणदास शुकदेव दया या सागर लहरि समायो ॥

रागसोरठ–गुरुदेव हमारे आवो जी।बहुत दिनोंसे लगो उत्साहो आनँद मंगल लावोजी ॥ पलकन पंथ बहारूं तेरो नैनन परि पग धारोजी ॥ बाट तिहारी निशिदिन देखूं हमरी ओर निहारोजी ॥ करौं उछाह बहुत मन सेती आँगन चौक पुराऊंजी । करूं आरती तन मन वारूं वारवार बलि जाऊंजी॥ दे परिकर्मा शीश नवाऊं सुनि सुनि वचन अघाऊंजी । गुरु शुकदेव चरणहू दासा दर्शन माहिं समाऊंजी ॥ हो अँखियां गुरु दर्शनकी प्यासी ।इकटक लागी पंथ निहारूं तनमूं भई उदासी ॥ राति दिना मोहिं चैन नहीं चिन्ता अधिक सतावे ।

तलफत रहूं कल्पना भारी निश्चल बुधि नहीं आवै ॥ तन गयो सूक हूक अति लागी हिरदय पावक बाढी।खिनमें लेटी-खिनमें बैठी घर अँगना खिन ठाढी॥भीतर बाहर संग सहेलीबात नहीं समझावै । चरणदास शुकदेव पियारे नैनन ना दर्शावै ॥

रागभैरव ।

गुरु विन मेरे और न कोय । जगके नाते सब दिये खोय॥
गुरुही मातु पिता अरु वीर । गुरुही सम्पति जीव समीर ॥
गुरुही जाति वरण कुल गोता । जहां तहां गुरु संगी होता ॥
गुरुही तीरथ वरत हमारा । दीन्हें और धरम सब डारा॥
गुरुही नाम जपौं दिन रैन ।गुरुको ध्यान परम सुखदैन ॥
गुरुके चरणकमल करि बास । और न राखूं कोई आस ॥
जो कुछ चाहें गुरुही करैं । भावै छांह धूपमें धरैं ॥
आदि पुरुष गुरुहीकूं जानूं । गुरुही मुक्तीरूप पिछानूं ॥
चरणदासके गुरु शुकदेव । और न दूजा लागै लेव ॥

अथ भक्ति अंग-वणन । राग करखा ।

राखिय लाज महाराज गोपालजी दीन जन शरण आयो तिहारी।लगा मोह ध्यान दृढ चरणही कमलमें कीजिये किरपा सुनि हो विहारी॥विषयजंजार रस स्वाद घेरो घन्यो पांचहूं चोर दुख देइ भारी।नीच वहु दुष्ट वलवान पच्चीस ठग तकैं निशिद्योस हिय घातडारी॥पकरि गजराजकूं ग्राह खैंच्यौ तबै टेर दे हेर कीन्ही पुकारी।गरुड तजि धाय आये छुटायो तुरत हरि हिये व्याध तनविपति टारी॥ध्रुवअचलकियो प्रहलादकूंदर्शदियोकियो हनुमानसूं प्रीति भारी।भीलिनी अरुकासीअजामिलसे अधमअति पतितगणिका उवारी॥पाण्डु सुतहूं बचाये जरत अग्निसूं द्रौपदी चीरबाढो अपारी । नामदेव सैनपीपाकबीरासदन नरसियादास

मीरा उधारी॥कोटि अनगन भक्त तारि दिये तिनको मैं कहां मेरी सुगति क्यों विसारी।तो विना कहां जाऊं कहीं ठौर ना तेरेही द्वारको हूं भिखारी॥सकल संशयहरण तूही तारणतरण श्याम शुकदेव गिरिधर मुरारी। चरणदास रणजीतको आसरो तूही है आप तौ जानलीजै सँभारी ॥ साधौ सोई जन शूर जो खेतपै मड्ड रहै भक्तिमें दानमें रहै ठाढा। सकल लज्जा तजै महा निरभै गजै पैजनी शान जिन आय गाडा॥भये बहुवीर गम्भीर जे धीर मत सबनको यह कहत ग्रन्थ होई। तिनविषे कछू इक नाम वर्णन कहूँ सुनो हो सन्त दे चित्त सोई॥पितासों रूठि ध्रुव पांचही वर्षको टेक गहि भक्तिके पन्थ धायो । छल भयो ना डिगो टेक पूरी भई जीति मैदान हरिदर्श पायो॥ हटो प्रहलाद हरिनाम छाँडो नहीं बापने त्रास दै बहु डिगायो।टेक जव ना टरी राम रक्षा करी दुष्टको मारिके जन जितायो ॥ कवीर दादू वने पहिरि वख्तर वने नामदेव सारिखे बहुत कूदे। सन सदना भक्त वलि पीपा वडो रामकी ओरकूं चले सूधे॥मलूक जैदेव गज ग्राह कलकी धरे शूरदास मुख नाहिं मोडा। ध्यान वन्दूकमें प्रेम रञ्जक जमा भीर माधो चला कुदाय घोडा ॥ दास मीरा मिली प्रेमसम्मुखं चली छोडि दई लाज कुल नाहिं माना।और शवरी मढी तोडि ऊंची चढी दौर करमा चली प्रेम जाना॥श्री शुकदेव रणजीत सांवत कियो लडे कलियुगविषे खम्भ गाडे । वहुत सेना लिये ललक हूहू किये चरणहीं दास सँग नाहिं छांडे॥

राग काफी—हो जगके करतार तेरी कहा अस्तुति कीजै । तूही एक अनेक भयो है अपनी इच्छाधारा॥तूही सिरजै तूही पाले तूही करै संहारा।जित देखूं तित तूही तू है तेरा रूप अपारा॥तूही रामनरायण तूही तूही कृष्ण मुरारा।साधोंके रक्षाके कारण युग

युग ले औतार॥तुही आदि अरु मध्य तुही अन्त तेरा उजियार । दानव देव तुहीसूं प्रगटे तीन लोकविस्तार॥जल थलमें व्यापक है तूही घटघट बोलनहार । तो बिन और कौन है ऐसो जासों करों पुकार ॥ तूही चतुरी शिरोमणि है प्रभु तूही पतित उधार ।चरणदास शुकदेव तुही है जीवन प्राण अधार॥तव गुण कहूं बखान यह मेरी बुद्धि कहां है । चतुर्मुखी ब्रह्मा गुण गावैं तिनहुँ न पायो जान ॥ गुण गावत शंकर जब हारे करने लागे ध्यान। गुण अपार कछु पार न आयो सनकादिक कथ ज्ञान॥ गुण गावत नारदमुनि थाके सहसमुखनसूं शेश।लीलाको कछु पार न पायो ना परिमाणन भेश॥शक्ति घनी अनगिनत तुम्हारी बहुतरूप बहु नावँ।जबहिं विचारूं हियमें हारूं अचरज हेरि हिरावँ॥अति अथाह कछु थाह न पाऊं शोच अचक रहि जावँ । गुरु शुकदेव थके रणजीता मैं कहु कौन कहावँ ॥

राग परज—रामगुण कोई न जाने हो । शेष महेश गणेश अरु ब्रह्मा रहे थकाने हो॥सुरति निरति बुधि गम नहीं सब देव भुलाने हो । सनकादिक नारदहू हारे कौन बखाने हो ॥ योगी जंगम ऋषि मुनि तपसी सुर ज्ञाने हो । ध्यान लगावें अन्त न पावें गये हिराने हो ॥ पशू मनुष कहा कहि सकें विषैरस लपटाने हो । चरणदास शुकदेव दया यह बात पिछाने हो॥

राग काफी—रामा रामा जी साँईं॥अलख निरंजनरूपा॥तूही एक अनेक स्वरूपा॥तेरी ज्योति सकल जगछाई॥तू घटघट रहो समाई॥तूही आदि अनादि कहावे॥ब्रह्मादिक पार न पावै॥अविगत अविनाशी जाना॥निरगुण सरगुण पहिचाना॥बहुविधिके भेप बनावै॥सिरजै पालै बिनशावै॥अचरज कौतुक विस्तारा॥ जनकारण ले औतारा॥तूही है देवनको देवा॥सनकादिक लहैं

न भेवा॥चाहे सो करे पलमाहीं॥तूही व्यापक है सब ठाहीं॥तूही ज्ञानी गुणी अपारा॥पूरण परमातम प्यारा॥हैं गुण बहुत कहां लौं गाऊं। विनती करि शीश नवाऊं॥शुकदेव गुरू बतलाया। चरणदास शरण तेरी आया॥रामारामा जी० ॥ सुनि लीजे विनती मेरी। मैं शरण गही है तेरी॥तैं बहुतै पतित उधारे। भवजलसूं पार उतारे॥हौं सबको नाम न जानूं।अब कोइ कोइ नाम बखानूं॥अंबरीप सुदामा नामा॥सो पहुँचाये निज धामा॥ ध्रुव पांच बरपको बाला॥तेहि दर्शन दियो गोपाला ॥ प्रहलाद तक सुत राखी। यों जानत है सब साखी ॥ शबरीके फल तुम खाये। अचलोचनके घर आये ॥ पाण्डुनकी करी सहाई। द्रौपदीकी लाज बचाई॥ गणिकाहू पार लखाई। करमाकी खिचरी खाई ॥मीरा तुम्हरे रँग भीनी। नरसीकी हूंडी लीनी ॥ धनाको खेत जमायो। तैं साग विदुर घर खायो ॥ कबिराके बालद लाये। सब काज किये मन भाये॥सदनासे सेना नाई। तैं बहुत किये मुकताई॥ग्राहसों गज जाय छुडायो। तैं मोकूं क्यों बिसरायो ॥ सनकादिक ब्रह्मा ध्यावैं । तेरा शेष आदि यश गावैं ॥ तेरा वेद पार नहिं पाया। जिन नेति नेति बत- लाया॥ मैं काम क्रोधने घेरा। ममताकी उर डर डेरा ॥ मोह लोभके फंदे परिया॥तेरा नाम बिसरि दुख भरिया॥अब तुमहीं करो निबेरा॥मोहिं जानि चरणको चेरा॥मैं पापी महासंतापी। अपराधी बहुत कलापी॥तुम छाँडि काहुपै जाऊं। यह दुख कौनै समझाऊं॥ शुकदेव गुरू मैं पाया। जिन तेरहि नाम बताया ॥ चरणदास आपनो कीजै॥मोहिं भक्तिदान वर दीजै॥

राग रामकली—पतित उधारन विरद तुम्हारो। जो यह बात सांच है हरिजी तौ तुम हमको पार उतारो॥बालपने अरु तरुण

अवस्था और बुढापे माहीं। हमसे भई सभी तुम जानौ तुमसे नेकहुँ छानी नाहीं ॥ अनगिन पाप भये मनमाने नखशिख अवगुण धारी। फिरि फिरिकै तुम शरणै आयो अब तुमको है लाज हमारी॥शुभ करमनको मारग छूटो आलस निद्रा घेरो। एकहि बात भली वनि आई जगमें कहायो तेरो॥ चेरो दीनदयाल कृपाल विश्वंभर श्री शुकदेव गुसाईं जैसे और पतित घन तारे चरणदासकी गहिये वाहीं॥१॥अर्ज सुनौ जगदीश गुसाईं। ग्रह नक्षत्र अरु देव विसारो चरण कमलकी आयो छाईं ॥ सत विश्वास यही हिय धारो तोहिं न भूलों एक घरी।इत उतसे मन खैंचि लियो है काहूसे कछु नाहिं सरी॥अब चाहो सो करो प्रभु तुमहीं द्वार तुम्हारे सुरति अरी।भावै नरक स्वर्ग पहुँचावो भावै राखो निकट हरी ॥ अपनी चाह रही नहिं कोई जबसूं तुम्हरी आश धरी। आन भरोसो छोंडि दियो है सकल विकल सब छार करी॥यह आपा तुमहींको दीयो मेरी मो में कछु न रही। आदि पुरुष शुकदेव सुनो जी चरणदास यों टेरि कही ॥ २ ॥

राग विभास—अबकी करो सहाय हमारी। दुष्टदलन अरु भक्तबचावन ऐसी साखि तुम्हारी ॥ जिन प्रहलाद असुर गहि बांध्यो लीन्हो खड्ग निकारी। हिरणाकुश हनि दास उबारो नरसिंहको तनु धारी॥खैंचि ग्राह गज वोरन लागो राम कहो चक्रधारी। सुनत पुकार पयादेहि धाये तजिकै गरुड सवारी॥ द्रौपदी—लाज उबारण कारण आये सभामँझारी। दीनानाथ लई सुधि वेगहि वाढो चीर अपारी॥ जिन जिन शरण गही संकटमें कहा पुरुष कह नारी। चारोंयुग हरि करी सहाई रक्षक भये मुरारी॥गुरु शुकदेव बतायो तोकों सन्तनकी रखवारी। चरणदास थकि द्वारे तेरे गुण पौरुष दियो डारी ॥१॥

१ रवि, चंद्र, भौम, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु, केतु इति नवग्रहाः।

राग धनाश्री—अब तुम करो सहाय हमारी ॥ मनके रोग होगये दीरघ तनके बड़े विकारी । तुमसों वैद और को दूसर जाहि दिखाऊं नारी ॥ सञ्जीवन मूल अमर मूल हो जासों सोहि दया तुम्हारी । क्रिया कर्मकी औषधि जेती रोग बढा- वनवारी ॥ दीजे चूरण ज्ञान भक्तिको मेटो सकल व्यथा री । जनके काज पयादे धावत चरणकमल पर वारी ॥ मैं भयों दास अधीन तुम्हारो मेरी करो सँभारी । जो मोहिं कुटिल कुचालि जानिके मेरी सुरति विसारी ॥ चरणदास शुकदेव है तेरो दुष्ट हँसेंगे भारी ॥ हरिजी संकट वेगि निवारो । जनकूं भीर परी है भारी चक्र सुदर्शन धारो ॥ कंस निकन्दन रावण गञ्जन हरणाकुश गहि मारो । दुष्टलदन अरु भक्तउबारण जन प्रह्लाद उबारो ॥ पांचो पाण्डव राख लिये हैं कौरवदल संहारो । जिन जिन द्वेष कियो सन्तनसों सोइ सोइ हनि डारो ॥ निरभय भक्ति करें जन तेरे ऐसो समय विचारो । चरणदासके घटमें वैरी तिनको क्यों न विदारो ॥

राग विभास—राखोजी लाज गरीबनिवाज ॥ तुम बिन हमरे कौन सँवारे सबही बिगरे काज ॥ भक्त बछल हरिनाम कहावो पतित उधारणहार । करो मनोरथ पूरण जनको शीतल दृष्टि निहार ॥ तुम जहाज मैं काग तिहारो तुम तजि अन्त न जाऊं । जो तुम हरिजी मारि निकासो और ठौर नहिं पाऊं ॥ चरण- दास प्रभु शरण तिहारी जानत सब संसार । मेरी हँसी सो हँसी तिहारी तुमहू देखि विचार ॥

राग बिलावल—प्रभुजी शरण तिहारी आयो । जो कोइ शरण तिहारी नाहीं भर्मि भर्मि दुख पायो ॥ औरनके मन देवी देवा मेरे मन तुहि भायो । जबसों सुरति सँभारी जगमें और न शीश नवा-

यो॥नरपति सुरपति आश तिहारी यह सुनि करि मैं धायो। तीरथ वरत सकल फल त्यागे चरणकमल चितलायो॥ नारद-मुनि अरु शिव ब्रह्मादिक तेरो ध्यान लगायो। आदि अनादि युगादि तेरो यश वेद पुराणन गायो॥ अब क्यों न बांह गहो हरि मेरी तुम काहे विसरायो। चरणदास कहैं करता तूही गुरु शुकदेव बतायो॥

राग केदारा–अबकी तारिहौ बलबीर। चूक मोसो परी भारी कुबुधिके सँगसीर॥भवसागरकी धारा तीक्षण महागँधीलो नीर। काम क्रोध मद लोभ भँवरमें चित न धरत अब धीर॥ मच्छ जहां बलवन्त पांचहू थाह गहर गंभीर।मोह पवन झकोर दारुण दूर पै लवतीर॥नाव तो मँझधार भरमी हिये बाढी पीर। चरणदास कहै कोई नहीं संगी तुम बिना हरिहीर।

राग सोरठ–अब जगफन्द छुटावोजी हौं तो चरणकमलको चेरो।परो रहूँ दरवार तिहारे सन्तनमाहिं बसेरो॥बिना कामना करूं चाकरी आठों पहर नेरो।मन सब भक्ति क्रिया करि दीजे मोहिं यही बहुतेरो॥खानेजाद कदीमी कहिये तुही आसरो मेरो। झिड़क बिडारो तहूं न छांडौ सेवा सुमिरण तेरो॥ काहूं और आन देवनसों रहो नहीं उरझेरो।जैसे राखो त्योंहीं रहहूं कर लीजो सुरझेरो॥ तेरे घर बिन कहूं न मेरो ठौर ठिकानो डेरो।मोसे पतित दीनको हरिजी तुमही करो निवेरो॥ गुरु शुकदेव दयाकरि मोकूं ओर तिहारी फेरो। चरणदासको शरणै राखो यही इनाम घनेरो॥

राग बिलावल–तुम साहब करतार हो हम बन्दे तेरे। रोम रोम गुनहगार हैं बकसो हरि मेरे॥दशौ दुवारेसें लहैं सब गन्दम गन्दा।उत्तम तेरो नाम है बिसरो सो अन्धा॥गुण तजिकै औगुण किये तुमसब पहिचानौ।तुमसों कहा छिपाइये हरिघटकी जानौ

रहम करो रहनासत यह दास तिहारो । भक्तिपदारथ दीजिये आवागमन निवारो॥गुरु शुकदेव उवारलौ अब मेहर करीजे । चरणहिदास गरीबको अपना करलीजे ॥

राग रामकली—चारि वरणसों हरिजन ऊंचे । भये पवित्तर हरिके सुमिरे तनके उज्ज्वल मनके सूचे ॥ जो न पतीजे साखि बताऊँ शबरीके जूँठे फल खाये। बहुत ऋषीश्वर होई रहते तिनके घर रघुपति नहिं आये ॥ भिलनी पाँव दियो सरितामें शुद्ध भयो जल सब कोई जाने। मन्द हतो सो निर्मल हूवो अभिमानी नर भये खिसाने ॥ ब्राह्मण क्षत्री भूपहुते बहु बाजो शंख श्वपच जब आयो।बालमीकि यज्ञ पूरन कीन्हो जयजयकार भयो यश गायो ॥ जाति वरण कुल सोई नीको जाके होय भक्ति परकासा।गुरु शुकदेव कहत हैं तोको हरिजन सेव चरणहीदासा ॥१॥ सब जातिनसें हरिजन प्यारे। रहनी तिनकी कोई न पावे तनसों जगमें मनसों न्यारे॥साखि सुनो अँबरीप भूपकी दुर्वासा जहँ आयो । लगो शराप देन राजाको चक्रसुदर्शन जारन धायो ॥ प्रभुजी आये दुर्योधनके गृह वह मनमें गरवायो ।नाना विधिके व्यंजन त्यागे साग विदुर-घर रुचिसो पायो॥सतयुग त्रेता द्वापर कलियुग मान सन्तको राखो।भक्तों वश भगवान सभाहीं वेद पुराणनमें यों भाखो ॥ ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र घर कहीं होय क्यों न वासा । धनि कुल वह शुकदेव बखाने यह तुम सुनो चरणहीदासा ॥ २ ॥

राग कान्हरा—धनि वे नर हरिदास कहाये । रामभक्ति दृढही करि पकरी आन धर्म सबही बिसराये ॥ आठपहर गलतान भजनमें प्रेम मगन हियमें हुलसाये । आप तरे तारे औरनको बहुतक पापी पार लगाये ॥ प्रभु दर्शन बिन और न आशा

अर्थ धर्म्म काम अरु मोक्ष न चाहै । आठौ सिद्धि फिरैं सँग लागी नेक न देखैं नैन उठाये ॥ तिनको ऋषि मुनि जाप करत हैं हरि हरिजन दोउ सँगही गाये।ऊंची पदवी इन्द्रहुते देवन देखि अधिक ललचाये॥ कहैं शुकदेव चरणहीं दासा धनि माता ऐसे जन जाये।जीवत शोभा जगमें पाई तन छूटै हरिमाहिं समाये॥

राग सोरठ-मोको कछु न चहिये राम। तुम बिन सब ही फीके लागें नाना सुख धन धाम ॥ आठ सिद्धि नौ निद्धि आपनी और जननको दीजै। मैं तो चेरो जन्म जन्मको निजकरि अपनो कीजै ॥ १ ॥ स्वर्ग-फलनकी मोहिं न आसा।ना वैकुंठ न मोक्षहि चाहौं चरणकमलके राखौ पासा॥ भक्ति न छांडौं मुक्ति न मांगौं सुन शुकदेव मुरारी। चरणदासकी यही टेक है तजौं न गैल तुम्हारी ॥

राग भैरव-वह पुरुषोत्तम मेरा यार । नेह लगा टूटै नहिं तार ॥ तीरथ जाउं न बर्त्त करूं। चरणकमलको ध्यान धरूं ॥ प्राण पियारे मेरेहि पास। वन वन माहिं न फिरूं उदास॥ पढूं न गीता वेद पुराण। एकहि सुमिरौं श्रीभगवान ॥ औरनको नहिं नाऊं शीश। हरिही हरि हैं विस्वेबीश ॥ काहूकी नहिं राखूं आस। तृष्णा काटि दई है फाँस ॥ उद्यम करूं न दाखूं राम। सहजहिं ह्वै रहै पूरण काम ॥ सिद्धि मुक्ति फल चाहौं नाहिं। नितहि रहूं हरि संतन माहिं॥ गुरु शुकदेव यही मोहिं दीन। चरणदास आनँद लवलीन ॥

सन्त-महिमा ।

राग भैरव-यों कहैं हरिजी दया निधान। सन्त हमारे जीवन प्रान॥ सन्त चलै जहँ सँगही जावँ।सन्तको दीयो भोजन खावँ॥ सन्त सुलावै जित रहुँ सोय।सन्त विना मेरे और न कोय॥ संत हमारे माइ बाप।सन्तहिको मन राखूं जाप॥ सन्तको ध्यान धरौं

दिन रैन । सन्त विना मोहि परै न चैन ॥ सन्त हमारी देही जान । सन्तहिकी राखूं पहिचान॥ सन्तकी सकल बलइया लेवँ सन्तकूं अपनो सर्वस देवँ॥ सन्तहिहेत धरूं अवतार। रक्षाकारण करहुं न वार॥ सुख देऊं दुख सब निरवार। चरणदास मेरो परिवार॥

राग सोरठ—भक्तजन सो हरिके मन भावै । निष्कामी अरु प्रेम हियेमें अनन्य भक्ति चितलावै॥ आन देव जो मोती बरषै तौ नाहीं पतियावै। प्रभुके चरणकमलके ऊपर भँवर गयो लिपटावै॥ सिद्धि न चाहै ऋद्धि न मांगै दर्शनको ललचावै । मुक्ति आदि दे चाह न कोई आशा सकल गँवावै॥ रोमहिरोम पुलकी सब देही गोविन्दके गुण गावै । गद्गद वाणी कंठ उसाँसै नैनन नीर ढरावै ॥ परमेश्वर मिलनेकी लहरैं इक आवैं इक जावैं । कहैं शुकदेव चरणदासाही हरिहू कण्ठ लगावैं ॥

राग बिलावल—हमारे चरणकमलको ध्यान । मूरख जगत भर्मता डोलै चाहत जल असनान॥ सब तीरथ वाहींसो प्रकटे गंगा आदिक जान । जिन सेवन सब पातक नाशै नित होवै कल्यान॥ सो कत गिरही बाने धारी है सबही अज्ञान। हरिसों हीरा छांडि दियो है पूजै काच पषान॥ हरि चरणनकी महिमा जानैं है वे सन्त सुजान। भोंदू नर मायाके चेरे इनको कह पहिंचान ॥ चरणदास शुकदेव गुरूने दीन्हो अंजन ज्ञान। हरिसों प्रीतम सूझ परा है बिसरि गयो सब आन ॥

राग नट व बिलावल सारंग—हमारे रामभक्ति धन भारी। राज न डांडै चोर न चोरै लूटि सकै नहिं धारी॥ प्रभु ऐसे अरु राम रुपैया मुहर मुहब्बत हरिकी। हीरा ज्ञान युक्तिके मोती कहा कमी है जरकी ॥ सोना शील भँडार भरे हैं रूपा रूप अपारा। ऐसी दौलत सतगुरु दीन्ही जाका सकल पसारा॥ बांटों बहुत घटै नहिं कबहूं दिन दिन ड्योढी ड्योढी । चोखा माल

द्रव्य अति नीका बट्टा लगै न कौडी ॥ साह गुरू शुकदेव विराजे चरणदास बन जोटा । मिलि मिलि रंक भूप हो बैठै कबहुँ न आवे टोटा ॥

राग नट बिलावल—जो नर हरि धनसों चित लावै । जैसे तैसे टोटा नाहीं लाभ सवाया पावै ॥ मन करि कोठी नाव खजानो भक्ति दुकान लगावै । पूरा सतगुरु साझी करिकै संगति वणिज चलावै ॥ हुंडी ध्यान सुरति लै पहुँचै प्रेम नगरके माहीं । सीधा साहूकारी सांचा हेर फेर कछु नाहीं ॥ जित सौदागर सबही सुखिया गुरु शुकदेव बसाये । जन रंजीत विलसि रहे ह्वांई योनी-पंथ न आये ॥

राग देवगन्धार—मनुवाँ रामके व्योपारी । अबकै खेप भक्तिके लादी वणिज कियो तैं भारी ॥ पांचौ चोर सदा मग रोकत इनसों कर छुटकारी । सतगुरु नायकके सँग मिलि चल लूट सकें नहिं धारी ॥ दो ठग मारगमाहि मिलैंगे एक कनक इक नारी । सावधान हो पेंच न खइयो रहियो आप सँभारी ॥ हरिके नगरमें जा पहुचोगे पैहौ लाभ अपारा । चरणदास तोको समझावे ये मन बारंबारा ॥

राग सोरठ—हरि पावनकी गति न्यारी है।कष्ट तपस्या पढन लिखनमें ढूढन मूढ अनारी है॥अडसठ तीरथ भरमत डोले देह गई सब हारी है । निरजल व्रत्त किये बहु भाँती आश फलनकी धारी है॥तप करनेको वन जा बैठे कीन्हीं त्वचा उघारी है।पौन-अहारी तनहूं गारो दर्श नाहिं मुरारी है॥विद्या पढिपढि पण्डित हूवा अर्थ करे बहु भारी है।अभिमानी ह्वै जन्म गँवायो भयो न प्रेम खिलारी है॥सांचि भक्तिबिन हरि नहिं रीझें बहुत गये शिरमारी है॥चरणदास शुकदेव श्यामपर तन मनसूं बलिहारी है॥१॥सुन

राम भक्ति गति न्यारी है । योग यज्ञ संयम अरु पूजा प्रेम सब-नपर भारी है ॥ जाति वरणपर जो हरि जाते तो गणिका क्यों तारी है । शबरी सरस करी सुरमुनिते हीन कुचील जो नारी है ॥ दुश्शासन पति खोवन लागो सबही ओर निहारी है । होय निराश कृष्ण कहँ टेरी बाढो चीर अपारी है ॥ टेढी लौंडि कंस राजाकी दीन्हों रूप करारी है । एकसूं एक अधिक ब्रजनारी कुबिजा कीन्ही प्यारी है ॥ पांचों पाण्डुन यज्ञ सजो है सगरी सजी सवारी है ॥ बालमीकि बिन काज न हो तो बाजो शंख मुरारी है ॥ साधोंकी सेवामें राचो भूपकी सुरति बिसारी है । सैन भक्तके कारण हरिजी वाकी सूरत धारी है ॥ दास कबीरा जाति जोलाहा ब्राह्मण मिलकी ख्वारी है ॥ बनिजारा हो बालिधलाये ताकी करी सँभारी है ॥ साखि सुनों रैदास चमारा सो जगमें उजियारी है । कनक जनेऊ काढि दिखायो विप्र गये सब हारी है ॥ अजामील सदना तिरलोचन नामा नाम अधारी है ॥ धन्ना जाट काल अरु कूबा बहुत किये भव पारी है ॥ प्रीति बराबर और न देखे वेद पुराण विचारी है । चरणदास शुकदेव कहत हैं तावश आप मुरारी है ॥ २ ॥

राग गौरी—आवो साधो हिलमिल हरियश गावैं ॥ प्रेमभक्तिकी रीति समझ करि हितसों रामरिझावैं ॥ गोविंदके कौतुक लीला गुण ताको ध्यान लगावैं ॥ सेवा सुमिरण वंदन अर्चन नौधासों चित लावैं ॥ अबकी औसर भलो बनो है बहुरि दावँ कब पावैं ॥ भजन प्रताप तरैं भवसागर उर आनन्द बढावैं ॥ सतसंगतिको साबुन लेकर ममता मैल बहावैं । मनको धो निरमल करि उज्ज्वल मगनरूप है जावैं ॥ ताल पखावज झांझ मँजीरा मुरली शंख बजावैं । चरणदास शुकदेव दयासूं आवागमन मिटावैं ॥

राग बिलावल–करिले प्रभुसों नेहरा मनमाली यार।कहा गर्व मनसें धरै जीवन दिन चार॥ज्ञानबेलि गहु टेककी दया क्यारी सवाँर।यतसत दृढको बीजहि बोवै तासु मंझार॥ शील क्षमाके कूपको जल प्रेम अपार। नेम डोलभरि खैंचिकै सींचो बाग विचार॥छल कीकरकूं काटकें बाँधो धीरज बार। सुमति सुबुद्धि किसानको राखो रखवार॥धर्म गिलेल जु प्रीतिकी हित धनुष सुधार।झूठ कपट पक्षिनकूं तासों मार बिडार॥भक्तिभाव पौधा लगे फूलै रङ्गफुलवार।हरिरस माता होयके देखै लाल बहार॥ सतसंगति फल पाइये मिटै कुबुद्धि विकार। जब सतगुरु पूरा मिलै चाखै अमृतसार॥समझावैं शुकदेवजी चरणदास सँभार। तेरी कायामें खिलै साँचो गुलजार॥

राग मंगल–सोई सुहागिल नारी पियामन भावई। अपने घरको छोंडि न परघर जावई॥अपने पियको भेद न काहू दीजिये। तनमन सुरति लगायके सेवा कीजिये॥पतिकी आज्ञा चाल पाल पियको कहो। लाज लिये कुलवंत यतनहीसूं रहो॥ धनि धनि है जगमाहिं पुरुष बहु हित धरै। सबसे नायक होय जो सबको करै॥पियको चाहौ रूप शृङ्गार बनाइये। पतिव्रता कुल दोयमें शोभा पाइये॥नांवा वस्तर पहिरि दया रँगलाल है। भूषण क्षलनधार विचित्तर वाल है॥रङ्गमहल निर्दोष हां झिलमिल नूर है।निर्गुण सेजविछाय सभी करि दूर भै॥मन्दिरदीपक बाल विना बाती घीवको।सुघर चतुर गुणराशि लाडिली पीवको॥कहें गुरु शुकदेव यों बालम सोहिये। चरणदास ले सीख प्रेम समोइये॥१॥परमसुखी सोइ साधु जो आपानाथपै।मनके रोग मिटाय नाम निर्गुण जपै॥परनिन्दा परनारि द्रव्य नाहीं हरै।

जिन चालन हरि दूरि बीज अन्तर परै॥क्षण नहिं बिसरै राम ताहि निकट तकै॥हरिचर्चा बिन और वाद नाहीं बकै॥झूठ कपट छल भगल ये सकल निवारिये । यत सत शील सँतोष क्षमा हिय धारिये ॥ काम क्रोध मद लोभ विडार न कीजिये । मोह ममता अभिमान अकस तज दीजिये॥सब जीवन निर्वैर त्यागि वैराग ले । तब निरभै ह्वै सन्त भाँति काहू न भै ॥काग करम सब छोडि होय हंसागता॥तृष्णा आश जलाय सोई साधूमता॥ जगसूं रहै उदास भोग जित ना धरै ।जब रीझै करतार दास अपनो करै॥कहै गुरु शुकदेव जो ऐसा हूजिये । चरणहिंदास विचार प्रेमसें भीजिये॥२॥राधेकृष्ण राधेकृष्ण राधेकृष्ण गाव रे।या देहीको कहा भरोसो पल पल छिन छिन छीजत आव रे॥कहा अभिमान करै मायाको यह धोखासा जान बावरे। मानुषजन्म भाग्यसों पायो बहुरि न ऐसो कबहूं दाँव रे। भव-सागर जो उतरो चाहै सतसंगतिकी चढले नाव रे ।ज्ञानबली गहि पार मुक्तिहो निश्चय तत्त्वपदारथ पाव रे॥सतयुगमें सतही सत कहते त्रेता तप करते तन ताव रे।द्वापर पूजा राजमानसी कलियुग कीर्त्तन हरिहि रिझाव रे॥ ताते सब तजि हरिही हरि भजि निशिदिन चरणकमल चित लाव रे ।चरणदास शुकदेव बतावे श्याम मिलनको यही उपाव रे॥३॥जगमें दो तारणको नीका । एक तो ध्यान गुरूका कीजे दूजे नाम धनीका॥कोटि भांति करि निश्चय कीयो संशय रहा न कोई। शास्त्र वेद पुराण टटोले जिनसें निकसा सोई॥इनहींके पीछे सब जानो योग यज्ञ तप दाना।नौविधि नौधा नेम प्रेम सब भक्ति भाव अरु ज्ञाना॥ और सबै मत ऐसे मानो अन्न विना भुस जैसे । कूटत कूटत बहुतै कूटा भूख गई नहिं तैसे॥थोथा धर्म वही पहिंचानो तामें ये दो नाहीं।चरणदास शुकदेव कहत हैं समझि देखु मनमाहीं ॥४॥

राग आसावरी–साचौ भक्ति नफा करि लीजै। दिन दिन काया छीजै॥ मकर तजै तो मथुरा मनसे कपट तजै तो कासी। और तीर्थ सबही जग न्हाया नाहिं छुटी यमफांसी॥ भाल तले तिरवेणी संगम बिरले जन कोइ न्हावे। सुगुरा होय सो नित उठि परसै निगुरा जान न पावै॥ काया मन्दिरमें हरि कहिये वेद पुराण बतावै। इत उत भूले लोग फिरत हैं धोखेको शिर नावें॥ मंतर टोना झूठ हलावन ताकूं सांच न मानौ। जिये सार असार गन्यो है तापर भयो सयानौ॥ चरणदास शुकदेव कहत हैं निज-करि मूल गहीजै। पारब्रह्म जिन सृष्टि उपाई ता ओरी चित दीजै॥

राग बिलावल–नमो नमो श्रीरामजी देवनके देवा॥ शिव नारद सनकादि लौं कोइ लहै न भेवा॥ एजी निर्गुणनसों सरगुण भये कौतुक विस्तारे। साधुनकी रक्षा करी दानवदल मारे॥ दशरथसुत भूले कहैं कोइ जानत नाहीं। इकशत अंड दिखाइया अपने मुखमाहीं॥ गोरानै परचो लियो सिषवेष बनायो। देखे रूप अनन्तही जब मन बौरायो॥ आदि निरंजन एक तू दूजा नाहिं कोई। शुकदेव कह्यो चरणदासको नित सुमिरो सोई॥ १॥ नमो नमो गोविन्दजी हूं दास तिहारो। चौरासी दुख सब हरो आवागमन निवारो॥ कर्मनको प्रेरो फिरूं नहिं पायो नेरो। अबके ऐसी कीजिये दीजै चरण बसेरो॥ पतित उधारण तुम सुने वेदनमें गाये। अजामील गणिका तारी ले पार लगाये॥ एजी गुरु शुकदेव बताइया गही तुम्हारी आस। आन धर्मको छांडिके भयो चरणहिंदास॥ २॥

राग जैजैवन्ती–आदि तो सनातन सोई अज अविनाशी है साईं। जाको नहिं वारपार निर्गुनको तत्त्वसार तासों भयो जग सब आप निवासी है॥ अद्वै निराकार जानौ सतचिदानन्द

मानों पुरुषको रूप धरि माया परकासी है । नेति नेति वेद कहै अस्तुतिमाहिं सदा रहैं भेद कछु नाहीं लहैं थकथक जासी है ॥ योग ध्यान आवै नाहीं ज्ञानसों न गह्यो जाई भक्तोंके हिये माहीं सदा जो विलासी है । सन्तों हेतु देह धरै आयके सहाय करै पृथ्वीको दुःख हरै घटघटवासी है॥ एहो चरणदास जन वासों क्यों न लावो मन शुकदेव कृपा घन खोल दई गांसी है॥१॥ साँवरो सलोना प्यारो मेरे मन भायो है माई कहा कहूं शोभा वाकी तीन लोक माया जाकी शेषहूकी रसना थाकी पारहू न पायो है॥ निरगुण निराकार कोऊ कहा जानै सार सन्तोंकी सहाय काज देह धरि आयो है । व्रजहूमें कौतुक कीन्हे सन्तनको सुख दीन्हे मुरली बजाय गाय रीझिकै रिझायो है॥ योगी जाको ध्यान लावैं ब्रह्मा अरु वेद गावैं याको तौ यशोदा माता गोदमें खिलायो है । चरणदास साखी परशुदेव कृपा कीन्हीं है वांकोसो विहारी एक पलमें दिखायो है ॥२॥

बधाई राग मलार—बधाई सबही व्रज सोहाई । मुदित भये वसुदेव देवकी मनमें अतिअधिकाई । पहुँचे जाय सहरि घरमाहीं काहू भेद न जानो । यशुमति रानी बालक जन्यो सबने योंकर मानो ॥ घर घर मंगलचार भये हैं वन्दनवार बँधाई । नूतन वस्तर पहरि पहरिके नारि सबै घिरि आई ॥ करि कौतूहल मिलि २ गावति करैं उछाह घनेरा । याचक भीर बहुत भई द्वारे बजतदमामें भेरी ॥ जिस लायक देखा सो दीन्हा करि शुश्रूषाभारी । इकआवत इक जात विदा हो देत अशीश हमारी ॥ धनि गोकुल धनि पौरि सवन धनि आये हैं जगदीशा ॥ शिवब्रह्मादिक ध्यान धरत हैं लख ईशनको ईशा॥ दुष्टदलन सन्तन सुख काजें लीन्ह्यो है अवतारा । चरणदास शुकदेव कहत हैं जगपति सिरजनहारा ॥ १ ॥

नन्दघर कौतुक करत नवीने । जो जो वचन किये थे आगे सो अब पूरण कीने ॥ भक्तवच्छल करतार गुसाईं धरि आये अवतारा । रक्षा कारण साधु ऋषिनकी भूमि उतारण भारा ॥ जब जब भार बढत पृथ्वीपर तब तब होत सहाई । मर्यादा पुरुषोत्तम यही बिगरी सबै बनाई ॥ निरगुणसों सरगुण वपु धारें कष्ट निवारण काजे । योगेश्वर जेहि ध्यान लगावें नाम लिये अघ भाजें ॥ भाग बडे यशुमति रानीके दर्शन दीन्हें आई । चरणदास शुकदेव कहत हैं सुर मुनि करी बधाई ॥२॥ जगपति देखि सहरघर आये । बालचरित्र सही दिखलावन आनँद अधिक बधाये । तप कीन्हों थो नन्द यशोदा पिछले जन्म अघाई॥वर मांगो थो हम सुत होके खेलो भवन–मँझाई॥ वचन न मोडा आय विराजे भक्तोंवश सुखदाई ॥ जो जो चाहा सो सुख दीया हूये कुँवर कन्हाई । संग लिये सामीप मुक्तिको व्रजमें आवन कियो है ॥ सुख उपजायो नर नारिनको दर्शन आय दियो है । जब जब प्रगटे चारों युगमें सत कलि द्वापर त्रेता॥ चरणदास शुकदेव कहत हैं सन्तनहीके हेता॥३॥सखी री आज गोकुल भाग बडाई । दर्शन दे वसुदेव देवकी नन्दघर प्रगटे आई॥भादोंमास वदी बुध आठें ग्रह नक्षत्र सब नीके । यशुमति रानी गोद सिरानी भये मनोरथ जीके॥ भयो उछाह स्वरगके माहीं देव सभी हर्षाये । अपने अपने बैठि विमानन पुष्प बहुत वर्षाये॥यह धरती परफुल्ल भई है फूल उठा बनसारा । कालिन्दीको बडो उमाहो करि हैं लाल विहारा॥ किरपासागर होय उजागर मर्यादा बँध बाँधन । चरणदास शुकदेव कहत हैं कारण अपने साधन ॥४॥ सखी री सुनि देख अभी मैं आई । यशुमतिरानी बालक जायो यह तोहिं आनि

सुनाई॥नाचन डोलें हँसि हँसि बोलैं घर घर कहत बधाई। भयो उछाह सकल गोकुलमें बात भई मनभाई ॥ सुन सुन आपसमें मुसक्याने देन बधाई लागे।भूषण वस्तर लगे सवाँरन नरनारी रसपागे॥बनसों रहे गये नँदद्वारे ग्वाल सभी हरषाये। बडी पौरिके आगे याचक गावनहींको आये ॥ मैं घर जाऊं बनकर आऊं तुमहूं देह शृँगारो। साथ चलैंगी जाय मिलैंगी होइहै कौतुक भारो॥श्रीशुकदेवका मुँह देखेंगी करि हैं अधिक हुलासा।ऐसो कहि वह भवन सिधारी भनै चरणही दासा॥८॥

राग हिंडोलनो—झूलत हरिजन सन्तभक्ति हिंडोलने ररास मा दृढ खम्भ रोपे प्रेमडोरी लाय।टेक पटरी बैठि सजनी अति अनन्द बढाय॥ध्यानके जहँ मेघ बरसैं होय उमँग हुलास ॥ गुरुमुखी जहँ समझ भीजें पूरण हरिके दास ॥ बुद्धि विवेक विचारि गावें सखी सहेली साथ ॥ अगम लीला रटैं सजनी जहां ब्रह्मविलास। परमगुरु श्रीजनक झूलैं झूलैं गुरु शुकदेव। चरणदास सखी सदा झूलैं कोई न पावै भेव ॥

राग हेली—और न मेरे कोय हेली प्राणपियारे लालजी रोम रोम वेई रमे री अरी हेली ॥ तन मन व्यापक सोय जित देखों तित लालको री अरी हेली। दूजा नाहीं और आदि अन्त है लालजी सर्वमयी सब ठौर देशकाल सबलाल है री अरी हेली ॥ अर्ध ऊरध है लाल दहिने बायें लालजी दशों दिशामें लाल सोवतहीमें लालहैरी अरी हेली । जाग्रतहीमें लाल माहिं सुषोपति लालजी तुरियाहीमें लाल ज्ञान ध्यान सब लाल हैं री अरी हेली ॥ लालही गुरु शुकदेव चरणदास हैं लालकी विरला जाने ॥ १ ॥ जो होवे हरिदास हेली एते कुल तारे सही ॥ फल न मुक्ति चाहे नहीं री अरी हेली भक्ति करे निर्वास॥बीस चार कुलवादकैरी अरी हेली बीस नानाके

जान ॥ सोलह कुल ससुरारके द्वादश सुता बखान बहिनीके ग्यारह तेरे री अरी हेली दश भूवाके पार ॥ मौसीके कुल आठही वेद कहत हैं चार ॥ अष्टादश यों कहैं री अरी हेली कहैं साधु अरु सन्त ॥ चरणदास शुकदेव सी कहैं कमलको कन्त ॥ २ ॥ छूटे आलजञ्जालहेली । चरणकमलके आसरे भूतप्रेत सबही छुटेरी अरी हेली ॥ सौन नक्षत्र नाल जन्तर मन्तर सब छुटेरी अरी हेली । छूटे वीर मशान मूठडीठ अब ना लगै नहीं वातको वान ॥ शनीश्चर बल अब ना चलै री अरी हेली नहीं राहु अरु केतु । मंगल बृहस्पति ना दहैं नहीं भोग उन देतु ज्योति बाल परसो नहीं री अरी हेली मानूं न कैसो देव । सतगुरु मोहिं बताइया साँचो झूठो भेव ॥ अठसठ तीरथ ना फिरूं री पूजूं न पाथर नीर । श्रीशुकदेव छुटाइया जन्म मरणकी पीर ॥ निश्चल हो हरिकी भई री अरी हेली सुमिरूं निर्मल नावँ । अनन्य भक्ति दृढ कारि गही मारग आन न जावँ ॥ गोविन्द तजि और न भजै री अरी हेली जाके मुँहड छार । चरणदास यों कहत हैं रामउतारे पार॥३॥

अथ सुमिरणका अंग ।

राग काफी—क्या कहि तोहिं पुकारूं करतार हमारे । नाम अनन्त अन्त नहिं जाको बहुगुण रूप तिहारे॥अजर १अमर २ अविगत ३ अविनाशी ४ अलख ५ निरञ्जन ६ स्वामी ७। पुरुष पुरातन८ पुरुषोत्तम९ प्रभु १० पूरण अन्तरयामी११॥ कृष्ण१२कन्हैया१३विष्णु १४ नरायण १५ ज्योतीरूप १६ विधाता१७अपरमपार१८मुकुन्द१९मुरारी२०दीनबन्धु २१ व्रजनाथा २२ ॥ यादवपति २३ जगदीश २४ चतुर्भुज २५ निर्भय२६सर्वप्रकाशी२७। पारब्रह्म २८ प्राणनको दाता २९ सबमें घटघटवासी३०॥निर्विकार३१परमेश्वर३२गिरिधर ३३

माधव२४गोविंद प्यारा२५।कमलनैन२६केशव २७ मधुसूदन २८नवमें२९ सबसे न्यारा४० ॥ हृषीकेश ४१ मुरलीधर ४२ मोहन४३ॐ४४अखिल४५अयोनी ४६। भगवत४७ वासुदेव ४८भगवाना४९ज्ञानी५०ध्यानी५१मोनी५२ ॥ दीनानाथ५३ गोपाल५४ हरी ५५ हर ५६ गरुडध्वज ५७ घनश्याम ५८। भक्तवच्छल५९अरु देवकीनन्दन६०करता सबविधिकास ६१॥ आदि प्रधान ६२ माधुरी मूरति ६३ धरणीधर ६४ बलवीरा ६५। नन्दनँदन ६६ अरु यशुदानन्दन६७सुन्दर श्याम शरीरा ६८॥ परशुराम ६९ नरसिंह ७० विश्वंभर ७१ अचल ७२ अखण्ड७३ अरूपी ७४ईश७५ अगोचर ७६ और जगतगुरु ७७परमानँद७८बहुरूपी७९ ॥ करुणामय ८० कल्याण ८१ अनंता८२दयासिंधु८३वनवारी८४।धारणशंखचक्र८५ रुक्मिणिपति८६आनँदकन्द८७बिहारी८८॥परमदयाल ८९ मनोहर ९०नरहरि९१कृपानिधि९२फलदाता ९३। कंसनिकन्दन ९४ रावणगंजन९५जगपति९६लक्ष्मीनाथा९७॥जगन्नाथ ९८ अरु बद्रीनाथा९९निरगुण१००सरगुणधारी १०१। दामोदर १०२ रघुवर१०३सीतापति रामा१०४कुंजविहारी१०५ ॥ दुष्टदलन १०६सन्तनको रक्षक१०७सकल सृष्टिको साईं १०८। दुःख हरणके कौतुक अनगिन शेष पार नहिं पाई ॥ सौ अरु आठ नामकी माला जो नर मुख उच्चारै। अपने कुलकी सारी पीढी एक रु सौको तारै॥गुरु शुकदेव मन्त्र निज दीन्हो रामनाम ततसारा।चरणदास निश्चय सो जपकरि उतरो भवजलपारा ॥

राग केदार–हरिको सुमिरि संकट–हरन । कोटि कष्ट निवारि टारन जगपति पोषण भरन ॥ भक्तिपूरण देखि निश्चल अननव बाधों परन॥अग्निमें प्रह्लाद राखो दियो नाहीं जरन ॥

गिरिशिखरसों डारि दीन्हों लगो करुणा करन । दीन जानि संभार लीन्हों कियो ठाढो धरन॥खम्भ बाँधो खड्ग काढो दुष्ट लागो अरन । अब बता तेरो राम कित है गहौ वाकी शरन॥ ढीट ह्वै प्रह्लाद भाष्यो डारिशंका डरन।मोमें तोमें खड्ग खम्भमें सब्ब लागे नरन ॥ खम्भ फटकर भये परगट धरो नरसिंह बरन । असुर मारो जन उबारो पुष्प बरषें सुरन ॥ सोहिं गुरु शुकदेव कहिया सेव सोई चरन । चरणदास उपासना दृढ होय तारण तरन ॥

राग अलहिया-सुमिरु मन राम नाम ततसार । जिन जिन सुमिरो नाम सो उबरे भवसागरसों पार ॥ वेद पुराण और पट्सांही तारणको यहि योग । जोपै पांचौ प्रेत निवारै अरु इन्द्रिनके भोग॥ साधन संयम पूजा अर्चन और करै तपदान । नाम समान न फल काहूमें करि देखी पहिचान ॥ जो जप करे धरै हिरदेमें आशा सकल विडार। तीन लोकमें धनि धनि होवे शोभा अगम अपार ॥ सबधर्मन परधान नाम है सब इष्टन शिरमोर । निश्चय पकड रहो याहीको सकल विकल तजि दौर ॥ तामें ज्ञान भरोही देखै पावै ब्रह्म विचार । गुरु शुकदेव दियो दृढ मोकूं चरणहिदास सँभार ॥

रागविलावल-अब तू सुमिरण कर मन मेरे। अगले पिछले जनके कीये पाप कटैं सब तेरे। यमके दंड दहन पावककी चौरासी दुख प्रेरे।भर्मकर्म सबही कटि जैहैं जगत व्याध उरझेरे॥ पैहै सकल मुक्ति गति आनँद अमरहिं लोक बसेरे।जन्मैमरैन योनी आवे या जगकेरे न फेरे॥सुमिरणसाधनमाहिं शिरोमणि जो सुमिरणजानै।काम क्रोध मदलोभ जरावैं हरिबिन और

न मानै॥गुरु शुकदेव लोभ दियो है बिन सुमिरण जिह्वा करि लीजै । चरणदास कहै घेरि घेरिकर अर्थ ऊर्ध मन दीजै ॥

राग केदार–अरे मन करो ऐसो जाप । कटै संकट कोटि तेरे मिटे सगरे पाप॥चित चेतन खोज करले देख आपा आप। कागसों जब हंस होवै नामके परताप ॥ ध्यान आतम सुरति रावो छुटै निरगुण ताप । सुरति माला सुमिरि हिरदै छोड सकल संताप ॥पराभक्ति अगाध अद्भुत विमल अरु निष्काम। चरणदास शुकदेव कहिया बसै निजपुर धाम ॥

राग भैरों–राम राम राम राम राम राम गावो । मनके रोग सकल विसरावो ॥ नाम प्रताप शिला जल तारी । सोई नाम जपो नर नारी॥नाम लेत प्रल्हाद उबारो।परगट ह्वै हिरणाकुशमारो॥पतित अजामिल सब जग जानै । नाम लेत चढि गयो विमानै ॥ सुवा पढावत गणिका तारी । नाम लेत निजधाम सिधारी ॥ सोई नाम नारदमुनि गायो । वेदव्यास मुख प्रगट जनायो॥हरिके नामको करो विचारा। सतसंगति मिलि उतरो पारा॥शिव ब्रह्मादिक नाम उपासी । आठ सिद्धि नौ नामकि दासी ॥ गुरु शुकदेवने नाम बतायो । चरणदास हरिसों चित लायो ॥

राग बिलावल–रामनाम चारों वेदको कहियत है टीको ।पाप ताप दुख द्वंदकूं मेटनकूं नीको ॥ एजी जेहि सुमिरे रक्षाकरी प्रह्लाद उबारो ।निर्गुणसों सर्गुण भयो जानत जगसारो॥एजी जप तप संयम योगमें सबहुन पर भारी । नाम लिये सबही तरैं बालक नर नारी ॥ जो हिरदै दृढ कर गहै सोइ हरिदर्शन पावै । चौरासी बन्धन कटैं आवागमन नशावै॥गुरु शुकदेव दयाकरी हरिनाम बतायो।चरणदास आधीनके निश्चय मन आयो॥१॥ सांचा सुमिरणको लिये जामें मीन न मेख॥ ज्यों आगे साधुन

कियो वाणीसेंही दूस॥टेक गहो दृढभक्तिकी नौधा हिय धारि। सन्तनकी सेवा करो कुलकानि निवारि॥जासों प्रेम ऊपजै जब मुक्ति दरशाय।आगे पीछेही फिरै प्रभु छोडि न जाय॥चारिमुक्ति चौंरी भवें सिद्धि चरणनमाहिं।तीरथ सब आशा करैं अघ देख नशाहिं॥कहैं गुरु शुकदेव चरणदास गुलाम।ऐसो साधन धारिये रहिये निष्काम ॥२॥ऐसा सुमिरण कीजिये सुनिहो मन मेरे। रसना राम उचारिये कर माला फेरे॥ निन्दा अकस न रखिये काहू दुख नहिं दीजै।सन्तनसूं सनमुख रहो गुरुसेवा लीजै॥भूखे भोजन दीजिये प्यास नीर पियावो।सबसे नीचा ह्वै चलो अ-भिमान नशावो॥सतसङ्गतिमें मिलेरहो गुरुसतसूं रहिये।आन धर्म नहिं चालिये यमदण्ड न सहिये॥तामसकूं विष ज्यों तजौ शुकदेव बतावै।चरणदास हरिहरि जपै मुकती ह्वै जावै॥३॥थोथे सुमिरण कहा सरै।मनके रोग शोक नहिं खोये हिंसा डूब अकस जरै॥नारी सुतसूं मोह कियो है नेक न हरिके प्रेम अरै।कुल नाते परिवार सँसारै साधनकी नहिं टहल करै॥माला तिलक सुधारि सँवारे राखत छलबल मकर बनै। अन्तर और निरन्तर औरै सिंह गऊ मुख रहत बनै॥ ऐसी भक्ति छुक्ति नहिं पावै करम लगै अरु नरक परै। यमके दण्ड दहन पावककी जनम मरण यों नाहिं टरै॥लक्षण प्रेम सहित जप कीजै भीतर बाहर एकर नचै। चरणदास शुकदेव कहत हैं हरि रीझैं जग व्याधि बचै ॥ ४ ॥ माला फेरे कहा भयो। अन्तरके मनको नहिं मेरा पाप करत सब जन्म गयो॥ परनिन्दा पर नारि न भूलो खोट कपटकी ओर नयो। काम क्रोध मद लोभ न खोये ह्वै रह्यो मूरख मोह-मयो॥ दुनिया साँच समझ बर कीन्हो धन जोरनको परन लयो। दया धर्म दोउ मारग छोडे सँगतनको

नहिं दान दयो॥गुरुसों झूठ मगल साधनसों हरिको नाहीं नेह जयो।चरणदास शुकदेव कहत हैं कैसे कहियो सुकति हयो॥८॥

राग हेली—और उपसन कोय हेली टेक हमारे नामकी। आन शरण जाऊँ न हेरी अरी हेली होनी होय सो होय॥ योग यज्ञ तप नामहीरी अरी हेली नाम नक्षत्तर वार। सकल शिरोमणि नाम है तन मन डारूं वार॥ अडसठ तीरथ नाम थीं री अरी हेली नाम हमारे। नामहीसूं राची रहूं नाम हमारे प्रेम॥मरत हमारे नाम री अरी हेली इष्ट हमारे नाम। अर्थ धर्म्म फल नामहीं नाम मुक्तिको धाम॥ पढन लिखन सब नामहीं री अरी हेली नाम गरहीं सब देव। जो कुछ है सो नामहीं नाम हमारो सेव॥राम नाम शुकदेव दियो री अरी हेली सो राखो मनमाहिं।चरणदासके नामहीं इह समतुल कछु नाहिं॥

अथ सगुण उपासना अंग रासशब्दोंके—दोहा।

धन सतगुरु शुकदेवजी, मेरी करी सहाय।निज वृन्दावनधामकी, लीला दई दिखाय॥१॥अब कुछ कौतुक रासको,वर्णत हैं चरणदास।लाल लाडिली कृपासों, पावै निज वृजवास॥२॥

राग रासविहागरा—नृत्य करत छविसों बनवारी। टेरिलई सबही व्रजवनिता मुरली मधुर बजाय विहारी॥ सुनत श्रवण धुनि होय प्रेमवश व्याकुल भईं सुन्दरि सुकुमारी।गृहके काज लाज तजि पियकी उठि धाईं तनु सुरति बिसारी॥ आय गवन छहूं रागमिलि पांच पांच इक इककी नारी। आठ आठ इक इकके बेटा मूरतवन्त स्वरूप महारी।तालवीण मुरचंग मँजीरा तननतनन तँबुरा गति न्यारी।तधिन तधिन धिन बजत पखावज घुंघुरू झनक झनक झनकारी॥ इक इक गोपियनके सँग इक इक सुन्दर वेप धरो गिरिधारी।ऐसो रच्यो रासको मण्डल मध्य राधिका कृष्णमुरारी॥ गावत प्रीति बढाय परस्पर सान

करत पियसों पिय प्यारी । लेत सनाय लाडिलो प्यारो हँसि हँसि चितवत दे दे तारी॥ ततथेई ततथेई थेईथेई ततथेई उरप तृरप सांगीत उचारी।नटवररूप करो मनमोहन शेष थको वरणत शोभा री॥भये चकित सुर मुनि ऋषि किन्नर बाढी रैनि शरद उजयारी । चरणदास शुकदेव श्यामकी अद्भुत लीलापै बलिहारी ॥

राग भैरों रास—देख सखी री रास रच्यौ साँवर बिहारी।ब्रह्मा शिव इन्द्र शेष नारदसे थकित भये ऐसो कवि कौन करै वरणत उपमा री॥सोहै शिर मुकुट और कुण्डल छबि तिलक भार किंकणी कटि पीताम्बर नूपुर झनकारी।बहुत नारी सुघर सखी राधाजू चन्द्रमुखी ललितादिक सहचरी शृंगारसों सवाँरी ॥ कोऊ तँबूरा कोउ मुचरंग कोऊ बजावै गति मृदङ्ग कोऊ ताल देत कोऊ सुर उठान भारी । बंशीसें करत गान बाँकीसी मधुर तान श्यामा जब करत मनश्याम लै मना री ॥ कबहूं कर जोर दोऊ नाचत हैं नवकिशोर कबहूं हरि नृत्य करत कबहूं पियप्यारी। ता ता ता ता ता ता थेई हैरही बाढी निशि शरद देखि हरिकी नृतकारी ॥ गउवन तृण छाँडि दियो बछरन पय नाहिं पियो मुरली धुनि सुनत मोहे मुनिजन व्रतधारी । शुकदेवजी गुरुको चरणदास सब ऊपर नाम करै रासको बिलास दियो परगट दरशा री ॥

रास राग बिहागर—राससें निरत करत बननारी । मुदित मनोहर रंग बढावत सँग वृषभानु दुलारी॥मोरमुकुट छबि शीश बिराजत नाक बुलाक सुधारी। कर मुरली कटि काछनि काछे अलकैं घूँघुरवारी॥राधाजूके शीश चन्द्रिका नीलाम्बर जरतारी।गावैं सखी श्याम श्यामा सँग नखशिख रूप उजारी॥ताधिना ताधिना धिना बजत पखावज ताल वीण गति न्यारी।ठनन

ठनन ठन नूपुरकी धुनि झनन झनन झनकारी ॥ थेई थेई थेई थेई नचत दोऊ मिलि विहँसि विहँसि मुसकारी । चरणदास शुकदेव दयासूं पायो दरश मुरारी ॥

रास रामकलेवा भैरों—नृत्यत गोपाललाल तत्तत तांथेई ॥ नख शिख शृंगार किये राधा गल बाँह दिये सखिया सँग नाचत स्वर ताल दान देई ॥ तननन तूवर गिड गिड धुधकधू मृदंग ताल झम झम झ झांझ बजत बीन बाँसुरी । झननन झनकार होत पायल ठनकार राग गावत कल्याण और नट धनासिरी ॥ कबहूं लै कान्हरा अलाप कभू सोरठको परज अरु विहाग रु केदारा आसावरी । कबहूं कै वीभास मालसिरी ललित रामकली भरहूं बिलावल धुनि ध्रुपदको चाव री ॥ सुन्दर बहुवेष धरे रासको विलास करे मुनिजन मन हरे बढो आनँद रहे ठांई। अद्भुत छबि कहा कहूं किरपा शुकदेव चहूं चरणदास होय रहूं चरणकमलमाहीं ॥

रास राग पंचम—सखी दोऊ रसिक प्रीत पिय प्यारी मिलि खेलत हैं रास छवि कहि न जाई । एककी एकसों सरस शोभा बनी निरखि सब सुरमुनि रहे लुभाई ॥ कोऊ कर बीन लै सुघर सुर ताल दै गावत संगीत रीझत रिझाई । थुंकना थुंगना धुधक धूधूकत बजत मिरदंग गति यति सुहाई ॥ तार मुरचंक सुरसप्तसों मुरलिका मधुर धुनि चतुर सारंग बजाई। नचत दोउ भावसों अधिक बहु चावसों तत्तथेई थेई गति लगावई ॥ कबहूं पिय प्यारी जू मान करैं लालसों कबहुँ भुज गहि पिया ले मनाई । धरत सुन्दर डगन बजत नूपुर पगन हँसत दोऊ लसत दिये गरबाहीं ॥ बढ़ी निशि शरदकी कौन वर्णन करे शेष हू सहस मुख रहे थकाई। कहे

चरणदास शुकदेव किरपा करी ध्यानके माहीं लीला दिखाई॥

दोहा—बस री बैरन बाँसुरी, तूही ब्रजके माहिं।
लगी रहत पिय मुख जु तू, पल छिन छाँडत नाहिं॥८॥
जब तू बाजत तानसूं, ऐ बंसी बड भाग।
कसक उठे जियरा जलै, तन मन लागी आग॥ ९॥
हमरे पिय तैं वश किये, करत अधर रसपान।
कहा टोना कीन्हो जु तैं, वर पाये भगवान॥१०॥
ब्रह्मा भूले वेदधुनि, शंकर छोडो ध्यान।
रणजित कह सुनि बाँसुरी, इन्द्र तजो अभिमान॥११॥
छैल छबीलो लाडिलो, रंग रंगीलो लाल।
चरणदासके मन बसो, बंशीधर गोपाल॥ १२॥

राग काफी—मोहन प्यारेकी वंशी बाजै री। हमकूं जरावत विरह अग्निसों जब अधरनपै राजै री॥ लालनमुख लागी रहै निशिदिन नेक न नाहिंन लाजै री। तनक बांसकी बनी वँसुरीया गरब भरी अति गाजै री॥ तैं वश कियो शुकदेव हमारो सुनत कलेजे दाझै री। चरणदास कहैं अब कहा कीजै तुही भई सिरताजै री॥ १॥ वंशीवारेसों नेहरा कीन्हो री। काहूको कछु कह्यो न मानूं यह तन मन वहि दीन्हो री॥ भर्मत भर्मत बहुते हारी भटक भटक जग बीनो री। आन देवसों काज न मेरो सांचो प्रीतम चीन्हो री॥ शोभाको सागर गुणको आगर कुवर किशोर नवीनो री। नवल लाडिलो मोहन सोहन सोई वर वर लीन्हो री॥ प्रभुको छाँड भजूं औरनको तौ कहियो बुधिहीनो री॥ २॥ वा मुरलीयाने हेली मेरे प्राण हरे॥ जब बाजत पियके मुख लागी सुनि धुनि तनकी सुधि बिसरे॥ ऐसो

जप तप कहा कियो है मोहन सोहन लाल वरे । जाके रसवश भये श्यामजी ता विन पलछिन कल न परे॥तीन लोक विच धूम मचाई सुर मुनि ऋषिके ध्यान टरे॥चरणदास शुकदेव दयासों मनवांछित सब काज सरे॥३॥या मुरलियाके बोल मेरे हिये कसके॥बाजत मान गुमान गरब ले कारि राखो हरिको वशके॥ बाँकी तान बान ज्यों लागत चुभत कलेजेमें धसकै । नेक न होत पियासों न्यारी अधरनके रसको चसकै ॥ कहा कहूं कुछयतन न दीखै कोइ उपाय न होय सकै। चरणदास शुकदेव पियारे कबहूँ बोलेंगे हँसकै ॥४॥ वंशीवारे तू साडी गलीआय जावो । तेरे कारण भई बावरी टुकमुख छबि दिखला जावो॥ व्याकुल प्राण धरत नहिं धीरज तनकी तपनि सिरा जावो । चरणदास तलफत दर्शन विन शुकदेव दुःख मिटा जावो॥५॥

राग परज–तुम्हारे रूप लोभानी हो। जात वरण कुल खोयके भई प्रेम दिवानी हो॥खान पान सुधि सब गई और अकबक बानी हो । तुम्हरे चरणकमल मन मेरो रहो लिपटानी हो॥सुंदर सूरत मोहनी मेरे नैन समानी हो॥तुम विन चैन नहीं दिन रीती सुनि पिय जानी हो॥ दरश दिखावो सांवरे जब हिये सिरानी हो । नातर वह गति ह्वै है हमरी मीन ज्यों पानी हो ॥ शुकदेवो दुख सब हरो काहे बिसरानी हो । चरणदास यह सखी तिहारी मिलजा छानी हो ॥

राग विहागरा--सुधि बुद्धि सब गइ खोय री मैं इश्क दिवानी। तलफत हूँ दिन रैन सखीरी जैसे जल विन मीननी॥विन देखे मोहिं कल न परत है देखत आँख सिरानी।सुधि आये हियसें दौ लागे नैनन वर्षत पानी॥जैसे चकोर रटत चन्दाको जैसे पपीहा स्वाती।ऐसे हम तलफत पियदर्शन विरह व्यथा इहि भाँ-

नी॥जबसे मीत बिछोहा हूवा तबते कछु न सुहानी॥अंग अंग अकुलात सखीरी रोम रोम मुरझानी॥बिन मनमोहन भवन अँधेरो भरि भरि आवै छाती॥चरणदास शुकदेव मिलावो नैन भये मोहिं बाती॥ १ ॥ भईहूं प्रेमसे चूर हो मोहिं दरशन दीजै॥ हूं तो दासी तिहारी मोहन वेगि खबरिया लीजै॥ ज्ञान ध्यान और सुमिरण तेरो तुव चरणन चित राखूं। तेरो नाम जपूं दिन राती तुव बिन और न भाखूं॥तनु व्याकुल जिय हूं-मोहि आवत परी प्रीति गल फाँसी॥तुम तो निठुर कठोर महा पिय तुमको आवै हाँसी॥विरह अग्नि नख शिखसूं लागी मनसें कलपन भारी॥गिरोहि परत तनु सँभलत नाहीं रहत भवनमें डारी॥कै विष खाय तजों यह काया कै तुम्हरे सँग रहसूं। चरणदास शुकदेव बिछोहा तेरीसूँ नहिं सहसूं ॥ २ ॥

राग कान्हडा-तुम बिन अतिव्याकुल भइया॥मोहूंको दर्श दिखाव रे मोहन प्यारे चितवन नैन हँसन दशननकी अटक रही हिय मइयाँ॥वह लटकन मटकन चटकन पर मोरमुकुटकी छवि छइयाँ॥अधर मधुर मुरली सुर गावत टेरि बुलावत गइयाँ॥ नाचत आऊं शीश नवाऊं और परौं तोरि पइयां। वारीहूं बारी मुख ऊपर दोउ कर लेहुँ बलइयां ॥ अब तो धीर रहो नहिं रञ्चक हो शुकदेव गुसइयां। चरणदास भई प्रेम बावरी आनि गहो क्यों न बहियां ॥

राग परज-तुम बिन कैसे जीऊं प्यारे नँदलाल॥भूख प्यास कछु लागत नाहीं तनुकी सुधि न सँभाल॥कल न परत पल पल अकुलावों छिन छिन छिन बेहाल। विरहव्यथाको रोग बढो है पीर महा विकराल॥ कहरी कहूं कितै जाऊं री सजनी कौन मेटै जंजाल॥लटक चलन बाँकी चितवनकी चुभत कलेजे भाल॥भइ

फूले यह देह दूबरी मूझ परो नलजालातलफत हूं हियमें दौ लागी नैना बरत मशाल ॥ चरणदास यह सखी तिहारी हो शुकदेव दयाल । आप कृपा करि दर्शन दीजे कीजे वेगि निहाल ॥

राग बिलावल ॥ लागी री मोहनसों। आनि कानि कुलकी तजि दीन्ही कोइ कैसी बात कहो री॥श्याम सलोनेके रँगराती मगन भई कोइ परी ठगो री॥निरखत छबि तनुकी सुधि बिसरी प्रेम प्रीति रसमें भइ बोरी॥ऐसो रूप रजारो प्यारो शोभा वर्णत शेष थको री । तीन लोक ब्रह्माण्ड सकल सब जाकी मायासों दरशो री॥कानन कुण्डल गल माल विराजै शीश मुकुट माथे तिलक फबो री॥नखशिख भूषण करलिया लकुटी काँधे सोहै पीत पिछौरी॥कल न परत निशि दिन बिन देखे रोमरमेरे वही रमो री । कान्ह सुजान सदा सुखदाई चरणदासके हिये बसो री॥

राग झंझोटी ॥ आया मेरा मोहन मदनगोपाल । मानो रङ्क अष्ट सिधि पाई निरखत भई निहाल ॥ वलि वलि जा दिया अंगन समादिया मोहिं दरश दियो लाल । कोटि भानु छबि मुखपर वारूं वेंदी सोहै भाल॥अद्भुतरूप अनूप साँवरो सुन्दर नैन विशाल॥घूँघरवारी अलकैं झलकैं चिकने लंबे बाल॥ चितवत तीखी भौंह मरोरत करलिये वेणु रसाल । गावत तान आनि वांकीसों चलत अनोखी चाल॥श्रीशुकदेव दयाके सागर नटनागर नँदलाल॥चरणदासको किरपाकरिकैरीझदईउरमाल ॥

राग काफी॥लटकरी चालपै मैं वारी वारीजादिया । रैनदिना सानूं ध्यान तुम्हारो मन वच कहूं दीवादिया ॥ कुण्डल कान मुकुट शिर सोहै शोभा अधिक सुहादिया॥अलबेली छबि बाँके नैना निरखत नैन लुभादिया॥जब बाजी प्यारे तेरी बंशीखान पान बिसरादिया । भूलगई घर काज साज सब लाज छार उठ

आ दिया॥चरणदास हम भई बावरी फूली अंग न समादिया॥ गाहि शरण शुकदेव पियारो चरणकमल लिपटा दिया॥१॥ कोई समझावो री मोहनलालकूं॥ग्वालबाल सबही सँग लेकर सूने घर धँसि आवै । याकी चाली मोरी आली माखन रहन न पावै॥लेकर मटुकी चट दे झटके गटके माखन सारो॥चटपटचाट पोंछ धरि पटके नट ज्यों मटकै प्यारो ॥जबहीं जावँ गगरिया भरने ठाढो रहै बिहारी । आगे आकर कांकर मारै भीजै मोरी सारी॥जो अपने घर बैठि रहूं तो अँगना धूम मचावै॥जो कबहूंकै सोऊं सजनी स्वपनेमें दर्श दिखावै॥मेरे पीछे लागो आली जित जाऊं तित डोलै । कहँ लगि कहूं ढीठता वाकी बात अटपटी बोलै॥बांको छैल महा अलबेलो प्रगट्यो है बृजमाहीं॥चरणदास शुकदेव पियारो सदा रहै या ठाहीं ॥२॥ कोइ आनि मिलावो री श्यामसुजानको ॥नन्ददुलारो मोहन सोहन अजब अनोखो छैला । मदनगोपल मुकुन्द मुरारी मेरो जीवन प्रान री॥नैनन नींद न आवै सजनी कल न परै दिन रैना॥व्याकुल भई फिरत हूं बौरी भूली खान रु पान री॥जो कोउ हितु होहै मेरो आली लालनकी सुधि लावै॥दर्श दिखाय हरै सब बाधा मोको दे जीदान री॥छिन छिन छिनगति और होति है लागो बिरहको बान री॥चरणदासकी पीर मिटावो सुन्दर सुखके निधान री॥३॥

राग सोरठा॥हमारे घर आये हो सुन्दर श्याम॥तनकी तपन मिटी देखतही नैनन भयो अराम॥अँगन लिपाऊं चौक पुराऊं फूल बिछाऊं धाम । आनँद मंगलचार गवाऊं होय पूरनकाम॥ अब जागे सखि भाग हमारे मन पायो विश्राम॥चरणदास शुकदेव पियाकूं हितसों करूं प्रणाम॥१॥सो अब घर पाया हो मोहन प्यारा॥लखा अनाचक अज अविनाशी उघरि गये दृग तारा ॥

झम रहो मेरे आंगन में टरत नहीं कहुँ टारा॥रोम रोम हिय-मांही देखों होत नहीं छिन न्यारा ॥ भयो अचरज चरणदास न पइये खोज कियो बहु बारा ॥२॥ वह घरी कौनसी लागे मोरे नैना । छोटि उमर भोलापन भारी जानूं एक न बैना ॥ जब लागे तब कछू न जानी अब लागे दुख दैना । चरणदास शुकदेवकूं देखे जब पावे सुख चैना ॥ ३ ॥

राग मलार ॥ सो विथा मोरी जानत हो अकि नाहीं । नख शिख पावक विरह लगाई बिछुरन दुख मनमाहीं ॥ दिन नहिं चैन नींद नहिं निशिकूं निश्चल बुधि नहिं मेरी । कासूं कहूं कोउ हितू न हमारो लगन लहरि हरि तेरी ॥ तन भयो क्षीन दीन भये नैना अजहूं सुधि नहिं पाई । छतिया दरकत कर्क हियमें प्रीति महा दुखदाई ॥ जल बिनमीन पिया बिन बिरहिनि इन धीरज कहु कैसी । पक्षी जरै दब लगी बनमें सबगति भइ एसी॥तलफत हूं जिय निकसत नाहीं तनुमें अति अकुलाई । चरणदास शुकदेव विना यो दर्शन द्यो सुखदाई ॥

राग सोरठ—हमारे नैना दर्श पियासे हो । तन गयो सूखि हाय हिय बाढी जीवतहूं वहि आशा हो॥बिछुरन थारो मरण हमारो मुखमें चले न ग्रासा हो । नींद न आवै रैनि विहावै तारे गिनत अकाशा हो॥भये कठोर दर्द नहिं जाने तुमको नेक न सांसाहो॥हमरी गति दिन दिन औरेही विरह वियोग उदासा हो ॥ शुकदेव पियारे मत रहु न्यारे आनि करो उर वासा हो॥रणजीता अपना करि जानो निजकरि चरणन दासा हो ॥१॥ ऊधोजी कहां रहे भगवान । हम जानी काहूने मोहे सोहन चतुर सुजान ॥ तवसूं नैनन नींद न आवै धीरज धरत न प्रान॥उमँगि उमँगि हियरो हुलसत है वह सुन्दर मुसकान॥ योग कथा तुम काह सुनावो हमकूं नाहीं ज्ञान । प्रेमकी रीति

अनोखी चोखी कापै होत बखान ॥ ऐसो हितू न कोऊ दीखे जाय सुनावै कान ॥ बाढी व्यथा विरहकी तनुमें सुधि लो कृपानिधान ॥ आवो दर्श दिखावो प्यारे देहु हमें जी–दान । चरणदास शुकदेव श्यास विन तजौं खान अरु पान ॥ २ ॥

राग सारंग–ऊधो क्या जानै हमरे जीवकी । चातक बूँदे चकोर चंदकूं ऐसे हमको पीवकी॥नेह कमान बिछुरनकै खैंची मारि गये हरि तीरकी।भाल वियोग हिये विच खटकै सुधि न लई या पीरकी॥चरणदास सखि निशिदिन तलफैं ज्यों मछली विन नीरकी।कहैं कुछ और करैं कुछ औरै आखिर जात अहीरकी॥

रेखता–फरजन्द नन्दजीका दिल बीच आवँदा । बरपाय खूब नूपर सुन्दर सुहावँदा॥ वह साँवला सलोना महबूब यार मन । आहिस्ता लटक चाल सटक मेरे आवँदा ॥ टीका संदलक खेंचिकै माथे पै अदासों । बरसर बिराजै अफसर हीरे जरावँदा ॥ कुण्डल झलकते हैं दरहरदो गोशसें । आवाज बाँसुरीकी शीरीं बजावँदा॥जामा जरीका गलसें कटि काछनी बनी है । पीर डुपट्टेवाला बीरे चबावँदा ॥ करता है नृत्य नादरघुँघरू कि झनकसों।ततत्ततात थेई थेई गति लगावँदा ॥ नैनोंकी आन तानिके अबरू कमानसूं । पलकोंके प्रेम तरी कलेजे चुभावँदा ॥ घायल किया है मेरे तई उसके इश्कने । शुकदेव चरणदासके जियमें समावँदा ॥

राग हिंडोला–हिंडोला झूलत नन्दकुमार।जोडी युगलकिशोर विराजै नान्ही परत फुआर॥ कंचन खंभ जटित हीरनसों नग लागे तामाहिं।पटुली अधिक अनूपम सोहै डोरी सुरँग सुहाहिं॥ चहूं ओर बदरा घिरि आये उमड घुमड घहराहिं।गरजत मत पवन झकझोरत दामिनि दमकत जाहिं।।गावत गीत मलार सहेली मिल मिल दै दै तारा।झोटा देत विशाखा ललिता आनँद बढो

अपार॥बोलत मोर पपीहा कोयल दादुर हंस चकोर। हरि भूमि ऋतु भई सुहाई शोर करत अतिशोर॥भीजत रंग रँगीलो प्यारो शोभा कही न जाय। चरणदास शुकदेव श्यामकी दोउ कर लेत वलाय ॥ १ ॥

झूलत कोइ कोइ संत लगन हिंडोलने।पौन उसाह उछाह धरती शोचत सावन मास। लाजके जहां उडत वगले मोर है जगहास ॥ हरप शोक दोउ खंभ रोपे सुरत डोरी लाय।विरह पटरी बैठि सजनो उमँग आवै जाय॥सकल विकल तहाँ देत झोटे विपति गावनहार। सखी बहुतक रंगराती रँगी पांचों नार।नैन बादल उमँगि बरसैं दामिनी दमकात।बुद्धिको ठहराव नाहीं नेह की नहिं जात॥शुकदेव कहैं कोइ वली झूलै शीश देत अकोर।चरणदास भये बौरे जात वरण कुल छोर२॥

हेली–मो विरहिनिकी बात हेली विरहिनि हो सोइ जानि है। नैन विछोहा जानती री अरी हेली विरहै कीन्हो घात॥या तनकूं विरहा लगो री अरी हेली ज्यों घुन लागो काठ।निशिदिन खाये जात है देखूं हरिकी वाट ॥ हिरदेमें पावक जलै री अरी हेली तपि नैना भये लाल।आशूं पर आशूं गिरै यही हमारो हाल ॥ प्रियतम विन कल ना परे री अरी हेली कलकल सब अकुलाहिं।डिगी पढूं सत ना रहो कब पिय पकरैं वाहिं॥गुरु शुकदेव दया करें री अरी हेली मोहि मिलावैं लाल।चरणदास दुख सब भजें सदा रहूँ पति नाल ॥१॥ तरसैं मेरे नैन हेली राम मिलन कब होयगो।पिय दर्शन विना क्यों जिऊं री अरी हेली कैसे पाऊं चैन ॥ तीरथ व्रत वहुतै किये री अरी हेली चित दे सुने पुरान।वाट निहारतही रहूँ छाँड दई कुल कान॥ लगी उमाहही रहूँ री अरी हेली सुधि नहिं लीनी आय। यह यौवन योंही चलो चालो जन्म सिराय ॥ विर-

बादल साजे रहै री अरी हेली छिन छिनमें दुख देह । मन लालनके वश परो भई भाखसी देह॥ गुरु शुकदेव कृपा करोजी अरी हेली दीजे विरह छुटाय।चरणदास पियसूं मिलैं शरण तुम्हरी धाय ॥ २ ॥ तनकूं कछु न सुहाय हेली प्रीति लगी घनश्यामसूं । जो सुख हैं संसारकेरी आरे हेली।सो सब दिये वहाय॥भवन तजो अरु धन तजो री अरी हेली तजी कुलनकी रीत । मान बडाई सब तजी रहा एक हरि मीत॥भूख प्यास निद्रा तजी री अरी हेली तजि दियो वाद विवाद । राग रोष दोऊ तजे तजो पांचको स्वाद॥बहुत डरे सकुची रहै री अरी हेली कहै न काहू बात।लगी रहै हरिध्यानमें ऐसे रैनि बिहात॥ श्रीशुकदेव भले कहीरी अरी हेली बारम्बार सँभार।चरणदास हो श्यामकी वही निवाहनहार ॥ ३ ॥ सो मन कछु न सुहाय हेली प्रीति लगी प्यारे लालसूं । हँसि हँसिकै टोना कियो री अरी हेली दे गयो मुरली गहाय ॥ जबहीं सूं चेटक लगो री अरी हेली ढूंढूं कुंजनहिं । बौरी हो डौरी फिरूं वह छबि दीखै नाहिं॥मोहि मिलावै सांवरो री अरी हेली ताके बलि बलि जावँ।जन्म जन्म दासी रहूं कबहूँ न छोडो पावँ ॥ है कोइ पूरी गमकीरी अरी हेली मोहिं बतावै ठौर । जहाँ विराजै श्यामजी वह बडभागी पौर॥चरणदास घायल भई री अरी हेली मोहन मारो बान।श्रीशुकदेव दिखाइये मेरे जीवन प्रान॥४॥ वह छवि कहूं बखान हेली जा छबिसों नैना लगे।हितू देखि तोसूं कहूं री अरी हेली और न पावें जान ॥ मोर मुकुट माथे दिये री अरी हेली कुण्डल शरवणमाहिं । अलकें बल खाई रहैं योगी देखि लुभाहिं ॥ सोहनमधि बेंदा दिये री अरी हेली सुन्दर नैन विशाल । मोती नासा सोहना अरु बैजन्ती माल ॥ नीको अंग पीरो लसो री अरी हेली झूमझूमारो

फर । लाल लगाऊं पावँमें मोमन राखत घर ॥ पहुँचनमें पहुँची कड़े री अरी हेली अँगुरिन मुँदरी छाप । अधरनपै मुरली धरे गावत रीझत आप ॥ चरणदास तिनकी भई री अरी हेली तन मन डारो वार।गुरु शुकदेव सराहिया बुरो कहो परिवार॥८॥वंशीवटकी छाहिं हेली लाल लाडिली मैं लखे। दोउ खंड गावें हँसे री अरी हेली अरु डारे गलबाहिं॥मोर मुकुट माथे दिये री अरी हेली सुंदर नैन विशाल।पीताम्बर पट सोहनो कर मुरली उर माल॥वाके विराजे चन्द्रिका री अरी हेली लील वसत जरतार । नख शिख भूषण सोहने अरु फूलनके हार॥ गुरु शुकदेव बताइया री अरी हेली जब हम लिये पिछान । चरणदास तिनकी भई लगो रहै वहि ध्यान ॥ ९ ॥

अथ सन्त शूरमाका अंग ।

दो०—सन्त समान न शूरसा, कह रणजीत विचार ।
टेक गहें सन्मुख चलें, बांधि प्रेम हथियार ॥ १२ ॥

राग सोरट—ना कोई सन्त समान है शूरा । मोह सहित जय सेना मारी ऐसो सावँत पूरा ॥ क्षमाकि ढाल गही कर अपने बांधे सत तरवारा । करै धर्मके दलको पेलैं पल पल बारम्बारा ॥ सुरतको तीर हृदयको तरकस ध्यान कमान बनावै । प्रेम हाथसूं खेंचन लागे चोट निशाने लावै ॥ बुद्धि विवेक कटारी बांधे, वचन विलासकि बरछी । सतपुरुषोंके निधरे बांधे कहि कहि बतियां तिरछी॥ चितसें चाव चौगुनो उनके सुनसुन अनहद तूरा । अगम पंथसों पग न डिगावें होय जाय चकचूरा॥मनहु हुलास आश धर पीकी सुनत खेतसें धावैं । चरणदास शुकदेव कहत हैं अमरलोक पद पावै ॥

राग सोरठ वा आसावरी—साधू पै जग है सोइ शूरा।काके

सुन्दर चढ़ है जब बाजे मारू तूरा ॥ कलँगी अरु गजगाह बनावै इनका परम दुहेला । सावँत वप बनाय चलत है यह नहिं सहज सुहेला॥या बानेको नेम यही है पग धरि फिरि न उठावै । जो कछु होय सो आगेहि आगे आगेको ही धावै ॥ रनमें पैठि झड़ाझड़ खेलै सन्मुख शस्तर खावै । खेत न छोड़ै हारि जुझै तबहीं शोभा पावै ॥ गुरु शुकदेव दियो है हेला ऐसा होय सो आवै।चरणदास बाना संतनका तो लै शीश चढ़ावै॥१॥साधो टेक हमारी ऐसी।कोटि यतन करि छूटै नाहीं कोई करो अब कैसी ॥ यह पग धरो सँभाल अचल हो बोल-चुक सोइ बोलो। गुरु मारगमें लेन न दीन्हो अब इत उत नहिं डोलो॥जैसे शूर सती अरु दाता पकरी टेक न टारैं । तन करि धन करि सुख नहिं छोडैं धर्म्म न अपनो हारैं॥पावक जारो जल-में बोरो टूकटूक करि डारो।साध संगति हरि भगति न छाँडूं जीवन प्राण हमारो ॥ पैज न हारूं दाग न लागै नेक न उतरे लाजा।चरणदास शुकदेव दयासूं सब विधि सुधरे काजा॥२॥

राग सारंग—हमारे राम नामकी टेक टारी ना टरै । लाख करो कोइ कोटि करोजी काहूतें कुछ नाहिं सरै॥ज्यों कामीकूं तिरिया प्यारी ज्यों लोभीको दाम । अमलदारकूं अमल पियारो ऐसे हमकूं राम ॥ दुष्ट छुटावैं गहि गहि पकरों नारियलकी लकड़ी भई । अब कैसे करि छूटै मोसों रोम रोम तन मन मई ॥ ज्यों प्रहलाद पैज हठ कीन्हीं हिरणाकुशसे बहु अराइवगो संत असुर गहि मारो परगट हो हरि आ खरे॥ गुरु शुकदेव सहाय करी है अब पग पाछे क्यों परै । चरण-दास वचन नहिं मोड़ै शूर सती सूपै टरैं॥१॥साधो टेक गई जाको सब गयो।लाज गई अरु काज गये सब वचन धर्म कछु

ना रह्यो॥जगमें हांस फांस हियमाहीं कायरपन यों दाहि गयो। अब पछितायें होत कहा है वह पान पतेरो बहि गयो॥पेज तजी सूख कागेहूयो धिक धर्म जीवन तासुको । बोझ गयो ओछकी संगति यह प्रताप कुवासको॥चरणदास शुकदेव कहै यों टेकन देवो शिर देवो॥बारबार नरदेह न पइये अपयश जगमें क्यों लेवो॥

राग सोरठ—साधो वप वही जामें टेक है । टेक नहीं तो कहा भरोसा टेक विना नर ते कहे ॥ टेक विना कैसी सतवंती टेक विना नहिं शूरमा । टेक विना दाता भी नाहिं टेक बिना योगी घूमना॥टेकविना नहिं भक्ता हरिको टेक विना नहिं सिद्ध है। टेक विना सब भरमत डोलैं टेक विना नहिं ऋद्धि है॥ साधु सन्त अरु वेद कहत हैं टेक पकरि चढु धामकूं॥चरणदासशुकदेव बतावें टेक मिलावै रामकूं॥१॥साधो जो पकरी सो पकरी अब तो टेक गही सुमिरणकी ज्यों हारिलकी लकरी ॥ ज्यों शूराने शस्तर लीन्हों ज्यों बनियेने ताबरी॥ज्यों सतवंती लियो सिंधोरा तार गह्यो ज्यों मकरी॥ज्यों कामीकूं तिरिया प्यारी॥ज्यों किरपिनकूं दमरी॥ऐसे हमकूं राम पियारे ज्यों पालककोॆ भमरी॥ ज्यों दीपककूं तेल पियारो ज्यों पावककूं समरी॥ ज्यों मछलीकूं नीर पियारो बिछुरे देखे यमरी॥साधोंके सँग हरिगुण गाऊं ताते जीवन हमरी॥चरणदास शुकदेव दृढायो और छुटी सब गमरी॥२॥ अरे ले गुरुके वचन चित धर रे। छिन छिन तेरी आसु घटत है बीगि समारो वरे॥शील क्षमायत दृढ करि राखो गर्व गुमान निवारो॥पाँचों इन्द्रिय वश करि अपने मन गनीमको मारो ॥ काया कोटि दुहारि युक्तिसूं सिंहासन धारिये । तापर बैठि अमर पदवी ले राज अभैपुर करिये॥सबपर अमल चलै अब तेरो तो सम और न कोई॥सेवक साहिब लोहा कञ्चन बूंदसमु-

न्दर होई॥विघ्न कलेश आपदा नाशै निर्मल आनँद पावै॥चर-
णदास शुकदेव दयासूं रहनि गहनि समुझावै ॥३॥ जब गुरु
शब्द नगारे बाजें । पांच पचीसों बडे मवासी सुनिकै डंका भाजें॥हद दस्तक ले ज्ञान सजावल जाय नरकके माहीं।हरिके
नाम भजन करि सांचे चित्त चौधरी पाहीं ॥ कानोगोय लोभके
खोटे छलबल पाहीं झूठे। काम किसान रु मोह मुकद्दम सबै
बांधि करि लूटे॥तृष्णा आमिल मदको मातो पकरि गांवसूं
काढे॥मन राजाको निश्चल झण्डा प्रेमप्रीति हित गाढे॥सुबुधि
दिवान शीलको बकसी यतको हाकिम भारी । धर्म्म कर्म्म
सन्तोष सिपाही जाके आज्ञाकारी॥साँच करिन्दा औ पटवारी
धीरज नेम विचारे । दया क्षमा अरु बडी दीनता पूरी जमा
सँभारे॥सगन होय चौकस कण करिकै सुमति मेवडी मापै ।
दर्शन द्रव्य ध्यानको पूरण बांटा पावै आपै॥श्रीसुकदेव असल
करि गाढो सूबस देश बसावै॥चरणदासहूं तिनको नायब तत
परवाना पावै॥४॥जो नर इकछत भूप कहावै । सतसिंहासन
ऊपर बैठे यतही चँवर ढुरावें ॥ दया धर्म्म दोउ फौज महाले
भक्ति निशान चलावैं॥पुण्य नगारा नौवति बाजे दुर्जन सकल
चलावै॥पाप जलाय करे चौगाना हिंसा कुबुधि नशावै । मोह
मुकद्दम काढि मुलकसों लावै राग बसावै॥साधन नायब जित
तित भेजे दे दे संयम साथा॥राम दुहाई सिगरै फेरै कोइ न
उठावै माथा॥निर्भय राज करै निश्चल ह्वै गुरु शुकदेव सुनावै॥
चरणदास निश्चय करि जानो विरला जन कोइ पावै ॥ ५ ॥

राग कल्याण-वह राजा सो यह विधि जानै॥काया नगर जी-
तिबो ठानै॥काम क्रोध दोउ बलके पूरे मोह लोभ अति सावंत
सूरे॥बल अपनो अभिमान दिखावै॥इनको मारि राह गढ धावै

पांचों थाने देह उठाई॥जब गढसे कूदे मनराई॥ ज्ञान खड्ग ले द्वन्द्व मचावै। कपट कुटिलता रहन न पावै॥ चुनि चुनि दुर्जन सब हनि डारे।रहते पहते सकल बिडारे॥मनसों ब्रह्म होय गति सोई॥लक्षण जीव रहे नहिं कोई॥अचल सिंहासन जब तू पावै। मुक्तिखवासी चँवर डुलावै॥आठों सिद्धि जहां कर जोरैं। सोहीं ताके मुख नहिं मोरैं॥निश्चल राज असल करै पूरा।बाजै नौबत अनहद तूरा॥तीन तीस अरु कोटि अठासी॥वैसी सततेरी करैं खवासी॥गुरु शुकदेव भेद दियो नीको।चरणदास मस्तकक्कियो टीको॥रणजीता यह रहनी पावै । थोथी करनी कथनि बहावै॥

अथ योगका अंग ।

राग करखा–साधो गुरु दया योग इहविधि कमायो । मूलको शोधि संकोच करि शंखिनी खैंचि आपान उलटो चलायो ॥ बन्ध पर बन्ध जब बन्ध तीनों लगैं पवन भइ थकित नभ गर्जि आयो। द्वादशा पलटि करि सूरती दो दल धरी दशों परकार अनहद वजायो ॥ रोक जब नवनको द्वार दशवें चढो शून्यके तखत आनँद बढायो । सहस दल कमलको रूप अद्भुत महा अमीरस उमँग आ झारि लगायो ॥ तेज अति पुञ्ज परलोक जहँ जगमगे कोटि छवि भानु परकाश लायो । उनमनी और चित हेत करि बसि रहो देखि निज रूप मनुवां मिलायो ॥ काल अरु ज्वाल जगव्याधि सब मिटि गई जीवसों ब्रह्मगति वेगि पायो । चरणदास रणजीत शुकदेवकी दयासों अभयपद परशि अविगत समायो॥१॥ साधो पिण्ड ब्रह्मांडकी सैल गुरु गम करी परशि या युक्तिसों अलख राई । सहजही सहज पग धरा जब अगमको दशों परकार झागड बजाई ॥ खोलि कपाट अरु वज्रद्वार चढो कलाके भेद कुञ्जी लगाई । पहलके महलपर जाय आसन

किया दूसरे महलकी खबरि पाई ॥ तीसरे महलपर सुरति जा बसि रही महल चौथे दुही अमी गाई । पांचवे महलको साधु कोई पाइ है महल छठवां दिया गुरु शुबाई ॥ सातवें महलपर कोटि सूरज दिपै आठवें महल अविगति गोसाईं ॥ रूप अद्भुत तहां देखि अचरज जहां देखिया दरश तब विपति जाई॥शुकदेवकी सहासों धारण गहासों आपने पीवके भवन आई । चरणदास आपा दिया प्रेम प्याला पिया शीश सदके किया पूजि पाई ॥२॥ साधो परसिया देश जहँ भेश नाहीं । बाट तिस लखि जहां बाट सूझै नहीं सुरतिके चांदने सन्त जाई ॥ चन्द्र पोडश दिपै गंग उलटी बहैं सुखमना सेत पर लम्ब दमके । तासुके ऊपरै अमीका ताल है झिल-मिलि ज्योति परकाश झमके ॥ चारि योजन परे शून्य स्थान है तेज अति शून्य परलोक राजै । द्वार पश्चिम धसे संखी दण्ड हो उलटिकर आय छाजै विराजै ॥ नूर जगमग करैं सेल अगाध है वेदहू कहे नहिं पार पावैं । गुरुमुखी जाय है अमरपद पाय है शीशको लोभ तजि पन्थ धावैं॥ तीन गुन छेदि रणजीत चौथे बसे जन्म अरु मरण फिरि नाहिं होई । चरणदास कारि वास शुकदेव बकसीससों मूल बेगमपुरी अमर सोई ॥

राग सोरठ—ऐसा देश दिवाना रे लोगो जाय सो माता होय। बिन मदिरा मतवारे झूमें जन्म मरण दुख खोय॥कोटि चन्द सूरज उजियारो रवि शशि पहुँचत नाहिं।बिना सीप मोती अनमोलक बहु दामिनि दमकाहिं॥बिन ऋतु फूल फूले रहत हैं अमृत रसफल पागो।पवन गवन बिन पवन बहत है बिन बादर झरि लागो ॥ अनहद शब्द भवँर गुंजारैं शंख पखावज बाजैं।ताल घंट मुरली घन घोरा भेरी दमामे गाजैं॥सिद्ध गर्जना

अनिहद बाजै घुंघुरू गति झनकारै। रम्भा नृत्य करै विन पगसों बिन पायल ठनकारै॥गुरु शुकदेव करैं जब किरपा ऐसो नगर दिखावें। चरणदास वा पगके परशे आवागमन नशावें॥

राग सारंग व बिलावल व सोरठ—साधो अजब नगर सुखदाई। औघट घाट बाट जहँ बांकी उस मारग हम जाई॥श्रवण बिना बहु बाणी सुनिये बिन जिह्वा स्वर गावैं। बिना नैन जहँ अचरज दीखे बिना अंग लपटावें॥बिना नासिका बास पुष्पकी बिना पाँवगिरि चढिया। बिना हाथ जहँ मिलो धायके बिन पाया जहँ पढिया॥ऐसा घर बड भागी पाया पहिरि गुरूका बाना॥निश्चय ह्वैके आशा मारी मिटि गया आवन जाना॥गुरु शुकदेव करी जब किरपा अनभय बुद्धि प्रकासी। चौथे पदसें आनँद भारी चरणदास जहँ बासी॥

राग सोरठ—सो गुरु बिन वह घर कौन दिखावै। जिहि घर अग्नि जलै जलमाहीं यह अचरज दरशावै॥ कामधेनु जहँ ठाढी सोहै नैन हाथ बिन दुहना॥बाये दूधा थोडा देवै भूखे दे पय दूना॥पीवैं जन जगदीश पियारे गुरुगम बहुत अघावैं। मूरख कायर और अयोगीसो वे नेक न पावैं॥अमृत अँचवैं वा पद पहुँचे सहातेजको धारै। होय अमर निश्चल ह्वै बैठे आवागमन निवारै॥भेद छिपावे तौ कल पावै काहूसे नाहिं कहिये।वह अद्भुत है ठौर अनूठी बड भागनसो लहिये॥या साधनके बहु रखवारे ऋषि मुनि देवत योगी।करन न देवैं सुधि हरि लेवैं होय न गोरस भोगी॥लोभी हलकेको नहिं दीजे कहं शुकदेव गोसाँई। चरणदासत्यागी वैरागी ताहि देहु गहि बाहीं॥१॥सो गुरु गम मगन भया मन मेरा॥गगनमण्डलमें निज घर कीन्हों पंच विषय नहिं घेरा॥प्यास क्षुधा निद्रा नाहिं व्यापी अमृत अँचवन कीन्हा। छूटी आश भास नहिं कोई जगमें चित नहिं

दीन्हा ॥ दरशी ज्योति परमसुख पायो सबही कर्म जलावै । पाप पुण्य दोऊ मे नाहीं जन्म मरण विसरावै ॥ अनहद आनँद अति उपजावै कहि न सकूं गति सारी । अति ललचावै फिरि नहिं आवै लगी अलखसों यारी॥सहस कमलदल सतगुरु राजै रुचि रुचि दरशन पाऊं । कहि शुकदेव चरणही दासा सब विधि तोहिं बताऊं ॥

राग मलार—चहूं दिशि झिलमिल झलक निहारी । आगे पीछे दहिने बायें तल ऊपर उजियारी ॥ दृष्टि पलक त्रिकुटी है देखे आसन पद्म लगावै।संयम साधै दृढ आराधै जब ऐसी सिधि पावै॥बिन दामिनि चमकार बहुतही सीप बिना लर मोती।दीपमालिका बहु दरशावै जगमग जगमग ज्योती ॥ ध्यान फलै तब दमकै माहीं पूरण हो गति सारी । चन्द घने सूरज अणकी ज्यों सूमर भरिया भारी॥यह तो ध्यान प्रत्यक्ष बतायो श्रद्धा होय तो कीजै । कहि शुकदेव चरणहीं दासा सो हमसों सुनि लीजै ॥

राग केदारा—अवधू सहस दल अब देख।श्वेत रँग जहँ पैख-री छवि अग्रडोर विशेख॥अमृत बरषा होत अति झरि तेज-पुंज प्रकाश।नाद अनहद बजत अद्भुत महा ब्रह्म विलास ॥ घंट किंकिणि मुरलि बाजै शंखध्वनि सनसान।जहँ ताल भेरि मृदंग बाजत सिद्धि गर्जन जान ॥ कालकी जहँ पहुँच नाहीं अमरपदवी पाव । जीती आठों सिद्धि ठाढी गगन मध्यो आव॥करै गुरु प्रताप करणी जाय पहुँचै सोय । चरणदास शुकदेव कृपा जीव ब्रह्म होय ॥

राग धनाश्री—सो गुरुगम इहिविधि योग कमायो। आसन अचल मेरु कियो सीधो कसि बंध मूल लगायो ॥संयम साधि

कलावश कीन्हीं मन पवना घर आयो । नव दरवाजे पट दे अर्ध ऊर्ध्व मिलायो ॥ नाभितले पैंडो करि पैठे शक्ति पताल गई है । कांप्यो शेष कमठ अकुलायो सायर थाह दई है ॥ उलटि चले मट फोरि इकीसों गये अभय पद-माहीं । अति उजियारो अद्भुत लीला कहन सुनन गम नाहीं ॥ जित भये लीन सबै सुधि बिसरी छूटी जगत कि बाधा ॥ चरणदास शुकदेव दयासों लागी शून्य समाधा ॥ १ ॥ सो साधो ऐसी योगयुक्ति गति भारी । मूलहि बंध लगाय युक्तिसों मूंदि दई नव नारी ॥ आसन पद्म सहाहठ कीन्हों हिरदय चिबुक लगाई ॥ चंद्र सूर दोउ सम करि राखे निरति सुरति घर आई ॥ ऊपर खैंचि अपान सहजमें सहजै प्राण मिलाई । पवन फिरी पश्चिमको दौरी मेरुहि मेरु चलाई ॥ ऐसेहि लोक अमरपद पहुँचे सूरज कोटि उज्यारी । श्वेत सिंहासन सतगुरु परशे करि दरशन बलिहारी ॥ आपा विसरि प्रेम सुख पायो उनमन लागी तारी ॥ चरणदास शुकदेवदयासों जन्म मरण छुटि बारी ॥ २ ॥

राग मलार—वा पद रामसों करि नेह । विपकी बूंद न पइये जित हां वरपत अमृत मेह ॥ चमकत बिजुली गरजत गगना बाजत अनहद घोर । यह मन गलत थकत जित पांचों मिटि है निशि अरु भोर ॥ जाग्रत मिटि है स्वप्नों मिटि है मिटिहु सुपोपत जाय । षट ऋतु पइये नाहिन अवधू एकहि रस दर्शाय ॥ विनहीं जोते विनहीं बोये उपजत खेत है धीर । लागत अचरज फलमहँ मुक्ता विनहीं सींचे नीर ॥ राजा गुरु शुकदेव न बाँटे सबहि करें बकसीस । चरणदास राम सब पावैं मिलि हैं विस्वेबीस ॥

राग सोरठ—अवधू ऐसी मदिरा पीजै । बैठि गुफामें यह जग बिसरै चंद सूर सम कीजै ॥ जहँ कलाल चढाई भाठी ब्रह्म ज्वाल

मतवारी। भरि भरि प्याला देत कलाली बाढै भक्ति खुमारी॥ माता है करि ज्ञान खड्ग लै कामक्रोधको मारै। घूमत रहै गहै मन चंचल दुविधा सकल विडारै॥जो चाखै यह प्रेम सुधारस निजपुर पहुँचै सोई॥अमर होय अमरापद पावै आवागमन न होई। गुरु शुकदेव किया मतवारा तीनि लोक तृण बूझा। चरणदास रणजीत भये जब आनँद आनँद सूझा॥

राग सारंग-पीवै कोई यह प्याला मतवारा। सुर नर मुनि जा मदको तरसैं गुरु विन लहै न वारा॥ शूदरके घर भाठी औटै ब्रह्मा अग्नि जलाई। शिव शोधै अरु विष्णु चुवावै पीवै साधु अघाई॥ सीता प्याला भरि भरि देवै हनूमान हंकारैं। व्यास शेष नारद सनकादिक किरिया नाहिं विचारैं॥ नवधा नेम औ संयम पूजा बिसरी सब क्या कहिये। घूमत रहै महारस चाखे स्वर्ग मुक्ति ना चहिये॥ श्रीशुकदेव सुधारस अमृत नितप्रति अँचवन कीन्हा। चरणदास पर किरपा करिकै निजप्रसाद करि दीन्हा॥१॥ साधो यह प्याला मतवार है। अनवँगा कोई योग जुगन्ता चित स्थिर मन मारि है॥चन्द सूर दोउ समकरि राखे ब्रह्मज्वाल अन्तर बरै। मुद्रा लगै खेचरी जबहीं बङ्कनाल अमृत झरै॥भवँर गुफामें भाठी औटै भभक भभक सुषुमन चुवै।नगुरा पीपी रहित भये हैं बिन पीये उपजै सुवै॥शिव सनकादिक नारद शारद और पिया नौ नाथ है। सिधि चौरासी हरिपद वासी मगन भया सब साथहै॥रामानन्द कबीर नामदे अमर हुए जिन जिन पिया।गुरु शुकदेव करी जब किरपा चरणदासको सो दिया॥ २ ॥

राग धनाश्री-जो जन अनहद ध्यान धरै।पांचौ निर्बल चञ्चल थाके जीवतही जु मरै॥शोधे मूलबन्ध दै राखै आसन सिद्ध करै।

त्रिकुटी सुरति लाय ठहरावे कुम्भक पवन भरे ॥ घन गरजे अरु बिजुली चमके कौतुक गगन घरे । बहुत भाँति जहँ बाजन बाजे सुनि सुनि सन्त अरे॥सहजसहजमें हो परकाशा बाधा सकल हरे । जगकी आश बात सब टूटै ममता मोह जरे ॥ शून्य शिखरपर आपा बिसरे कालसों नाहिं डरे ॥ चरणदास शुकदेव कहत हैं सब गुण ज्ञान गरे ॥ १ ॥ तबते अनहद घोर सुनी । इन्द्रिय थकित गलित मन हूओ आशा सकल भुनी ॥ घूमत नैन शिथिल भइ काया अमल जु सुरति सनी । रोम रोम आनन्द उपजि करि आलस सहज वनी ॥ मतवारे ज्यों शब्द समायो अन्तर भीज कनी । धर्म्म कर्म्मके बन्धन छूटे दुविधा विपति हनी ॥ आपाविसरी जगको विसरो कित रहिं पांच जनी। लोग भोग सुधि रही न कोई भूलो ज्ञान गुणी॥हो तहँ लीन चरणही दासा कह शुकदेव मुनी।ऐसो ध्यान भाग्यसों पइये चढि रहे शिखर अनी॥२॥

राग बिलावल—घटमें खेल ले मन खेला । सकल पदारथ घटही माहीं हरिसों होय जु मेला॥घटमें देवल घटमें जाती घटमें तीरथ सारे । वेगहि आव उलटि घटमाहीं बीतैं परवी न्हाले ॥ घटमें मानसरोवरसूं भर मोती और मराला । घटमें ऊंचा ध्यान शब्दका सोहं सोहं माला ॥ घटमें बिन सूरज उजियारा राति दिना नहिं सूझै । अमृत भोजन भोग लगत है बिरला जन कोइ बूझै ॥ घटमें पापी घटमें धर्म्मी घटमें तपसी योगी । गुण अवगुण सब घटही माहीं घटमें वैद्य रु रोगी ॥ रामभक्ति घटहीमें उपजै घटमें प्रेम प्रकासा । शुकदेव कहैं चौथा पद घटमें पहुँचै चरणहिदासा ॥

राग विभास—घटमें तीरथ क्यों न नहावोइत उत डोलो पथिक वनेही भरमि भरमि क्यों जन्म गवाँवो॥ गोमति कर्म

सुकारथ कीजे अघरूम मैल छुटावो । शील सरोवर हितकारि न्हइये काम अग्निकी तपनि बुझावो॥खिमा सोई क्षमाको जानौ तामें गोता लीजे।तनुमें क्रोध रहन नहिं पावै ऐसी पूजा चित दै कीजे ॥ सत यमुना संतोष सरस्वती गंगा धीरज धारो । झूठ पटकि निर्लोभ होय करि सबही बोझा शिरसों डारो ॥ दया तीर्थ कर्मनाशा कहिये परशे बदला जावै । चरणदास शुकदेव कहत हैं चौरासीमें फिरि नहिं आवै ॥

राग विभास-घटमें तीरथ यों तुम न्हावो । तिनके न्हान अमरपद पहुँचो आदिपुरुष निश्चय करि पावो ॥ काशी सो सत करणी कीजे कलिमल सकल नशावो । रहनि गहनि पुष्करको जानों यामें मज्जन क्यों न करावो ॥ ध्यान द्वारका दृढ करि परशौ हितकी छाप लगावो । इन्द्री जित सोइ मछींनाथा यह गति सतकरि चितमें लावो ॥ भवँर गुफामें है त्रिवेणी सुरति निरति लै धावो । योग युक्तिसों डुबकी लेकर काग पलटि हंसा ह्वै जावो ॥ तनु मथुरा अरु मन वृन्दावन तामें रास रचावो । हिरदय कमल खिले परकाशा दरशन देखि अधिक हुलसावो ॥ गुरु चरणनमें सबही तीरथ सिमिटि निमिटि तहँ आवो । चरणदास शुकदेव कहत है अपनो मस्तक भेंट चढावो ॥

राग परज-सुधारस कैसे पइये हो । कूप कहाँ केहि ठौर है कैसे करि लइये हो॥नेजू कित कित गागरि कित भरनेवारी हो। कैसे खुलै कपाटकी को ताला ताली हो ॥ कौन बसै किस गृह विषै औरवै किन नाहीं हो॥तुमसे जानै भेदको अरु बहुतक नाहीं हो॥किसि किस काज लगै अरु स्वाद बतावो हो॥फल याका कहि दीजिये सब खोलि जतावो हो॥शुकदेवसों पूछन करैं यह

चरणहि दासा हो । किरपा करिकै कीजिये मेरी पूरी आशा हो॥१॥गुरु हमारे प्रेम पियायो हो॥ता दिनते पलटो भयो कुल गोत नशायो हो ॥ अमल चढो गगन लागो अनहद मन छायो हो । तेज पुञ्जकी सेजपै प्रीतम गल लायो हो ॥ गये दिवाने देहसे आनंद दरसायो हो । सब किरिया सहजै छुटी तप नेम भुलायो हो ॥ त्रैगुणते ऊपर रहूं शुकदेव बसायो हो । चरण-दास दिन रैनि नहिं तुरिया पद पायो हो ॥ २ ॥

राग झँझैवंती ॥ ऐसी जो युक्ति जानै सोई योगी न्यारा ॥ आसन जो सिद्धि करै त्रिकुटीसें ध्यान धरै विना तेल दिया बरै ज्योति हूं उज्यारा॥संयम सँभाल साधै मूल द्वार बन्ध बाँधै शंखनी उलटि साधै कामदेव जारा॥प्रण वायु हिय माहीं खैंचिकै अपान लाहीं दोऊ नीके मिलि जाहीं ऐसा खेल धारा कुम्भक अथक राखै अनहदकी ओर ताकै सुखमन पैठि नाकै आगे जो विचारा । खोलिकै कपाट सिरा कोऊ चढै शूरविरा कामधेनु जावै तिरा अमीको उतारा ॥उनमनी जाय लागै निज गृहमाहिं जागै जन्म मरण भागै छूटै यम मारा ।गुरु शुकदेव कहै करणी यहि विधि लहै चरणदास होय रहै आपको सँभारा॥

राग सोरठ सारंग—पांचन मोहिं लियो वलिसा।नासात्वचा और श्रवणीया नैनन अरु रसना ॥ एक एकने वारी वाँधी गहि गहि लैलै जाहिं । निशि दिन उनहीं के रस पागो वरजे ठहरत नाहिं ॥ अलि पतंग गज मीन मृगा ज्यों होय रह्यो परवीन । अपनो आप सँभारत नाहीं विषय वासना लीन ॥ हौं कुलवंती टोना सीखौं अनहद सुरति धरूं।गगन मण्डलसें उलटा कूवां तासों नीर भरूं ॥ भँवर गुफामें दीपक बारो सन्तर एक पहूं।कामक्रोध

सब लोक होसकर आलस चित्त हरूं ॥ यतन यतन करि पीव हुलाऊं फिर नहिं जान न दूं । चरणदास शुकदेव बतावैं निज मनकी कहूं ॥

राग सोरठ—तू सदा सोहागिन नारी है। पियके संग मिली सब पीवे तातें लागत प्यारीहै॥भँवर गुफासें भवन बनायोबिन घृत ज्योति जारी है । सुषमन सेज महा सुखदायी भोगत भोग दुलारी है ॥वश कियो कन्था चलै न पन्था टोना डारो भारी है।आठ पहर तुम्हरे रंग राचो हमको मिलै न वारी है॥ गति मनमानी सो पटरानी सोई रूप उज्यारी है।हम चारौ जा सोंति तुम्हारी तुम गुण आगे हारी है ॥ चरणहिं दास भई चरणि सेवें लगी रहे नित लारी है । शुकदेवा शिर छत्र हमारो सो वश भयो तुम्हारी है ॥

राग बिलावल—करणीकी गति और है कथनीकी और । करणी बिन कथनी कथै बकवादी बौरे ॥ करणी बिन कथनी बिन करणी कथनी कथै बकवादी बौरे ॥ करणी बिन कथनी बिन करणी ज्यों शशि बिन रजनी । बिन शस्तर ज्यों शूरमा भूषण बिन सजनी॥ज्यों पण्डित कथि कथि भले वैराग सुनावै ।आप कुटुम्बके फंद पड़े नाहीं सुरझावै ॥ बांझ झुलावैं पालना बालक नहिं मांहीं।वस्तु बिहीना जानिये जहँ करणी नाहीं॥बहु डिंभी करनी बिना कथि कथि करि मूये । संतो कथि करणी करि हरिकी सम हूये ॥ कहै गुरु शुकदेवजी चरणदास विचारो । करणी करनी दृढ गहो थोथी कथनी डारो ॥

हेली ॥ पांच लै लार हेली काया महल पग धारिये । कुञ्ज योग युक्ति डोला करौ री अरी हेली प्रान अपान कहार॥कुञ्ज कुञ्ज सब देखियें री अरी हेली नाना बाग पहार। मानसरोवर न्हाइये सदा बसन्त निहार॥बिना सीप मोती बनैरी अरी हेली

विना गुंद फूलन हार । विन दामिनि चमका रहै विन सूरज उजियार ॥ अनहद उत बाजे वजैं री अचरज वहुतक ख्याल । तेजपुंजकी सेजपै कागा होहिं मराल ॥ श्रीशुकदेव कृपा करें जब पावै यह भेद । चरणदास पियसों मिलै छुटैं जगतके खेद ॥ १ ॥ योग युक्ति करि लेहि हेली । जो चाहै हरिसों मिलो आसन संयम साधिके री ॥ गगनमण्डल करि गेह उलटी दृष्टी चढाइये री होय सूरज परकाश । करम भरम सवही जरैं सहज छुटै जग आश ॥ प्रान अपान मिलायकै री मूलवन्दको वांधि । रसना उलटि लगाइये सुरति ऊर्ध्वको साधि ॥ वङ्क सुधारस पीजिये अनहद हो गलतान । भवँर गुफा दृढ वैठिकै शून्य शिखरको ध्यान ॥ सुषमन मारग है चलौं री जब पहुँचौ निजधाम । अचल सिंहासन श्वेत है जहाँ विराजैं राम ॥ यह साधन शुकदेवका री जो कोइ जानै साध । चरणदास अविगति लई देखै खेल अगाध ॥ २ ॥

अथ वैरागका अंग ।

राग मङ्गल ॥ चलाचली जग ठाट अचल हरि नाम है । माल मुलक चलि जाय जाय रजधाम है ॥ तेल फुलेल लगाय बहुत सुन्दर गहे । नाना करते भोग सोभी नर ना रहे ॥ तेज तमक और रूप जाय यौवन घना । सकल वराती जायँ जायँ दुलहिनि वना ॥ रोगी रोग अरु वैद्य जाय औषधि भले । ज्योतिष पुस्तक तट विन सर जल लै मिले ॥ ज्ञानी पण्डित पीर अधिक वेवश गले । गौस कुतुब अब्दाल पैगम्बर सव चले ॥ एकके पीछे एक वहीर लगीं चलीं । नरपति सुरपति जाहिं अन्त वाही गली ॥ ऋषि मुनि देवन सिद्ध योगेश्वर जाहिंगे । जिन वश कीन्हीं मौत सो भी न रहाहिंगे ॥ पांच तत्त्व गुण तीनि नहीं ठहराहिंगे । स्वर्ग मृत्यु पाता-

ल सभी गलि जाहिंगे॥धरती अम्बर जाय जाय शशि भान है। चरणदास शुकदेव दयाल यों जान है ॥ १ ॥ रहै रामका नाम जपै सोसी रहै।वेद पुराणनमाहिं सभी योंही कहै ॥ जन्म मरण नहिं होय न योनी आवई।सत सिंहासन बैठि अमरपुर पावई॥ यम जालिमके दण्ड भर्म छुटि जाहिंगे। लख चौरासी बन्ध सभी कटि जाहिंगे॥नवग्रह लगे न देह ग्रेह आनँद रहै॥डाकिनि सर्पिनि सिंह भूत नाहीं दहै॥साधुसंग गुरुसेव आय घटमें बसै। कलह कल्पना जाय द्वन्द्व संकट नसै॥तिलक दिये लिलाट जु कण्ठी सोहनी॥चौबिस लक्षण धारि सहज जीतै मनी ॥ ऊंची पदवी होय जगत सब पग लगै।दुष्ट जलैं मनमाहिं दूरिही सो तकै॥पाप भजैं मुख देखि दरश कोई करै। भक्ति परापत ताहि सुचरणन आ परै॥कहैं गुरु शुकदेव चरणहीं दासको। सब मन्तर शिरमौर सुमिर हरिनामको ॥ २ ॥

राग काफी–क्या दिखलावै शान यह कुछ थिर न रहैगा। दारा सुत अरु माल मुलकका कहा करै अभिमान ॥ रावण कुम्भकर्ण हिरणाकुश राजा कर्ण समान।अर्जुन नकुल भीमसे योधा माटी हुये निदान॥क्षणक्षण तेरो तनु छीजत है सुन मूरख अज्ञान। फिरि पछिताये कहा होयगा जब यम घेरैं आनि ॥ विनशैं जल थल रवि शशि तारे सकल सृष्टिकी हानि।अजहूं चेत हेत कर हरिसों ताहीकी पहिचानि॥नवधा भक्ति साधुकी संगति प्रेम सहित कर ध्यान।चरणदास शुकदेव सुमिरि ले जो चाहो कल्यान॥१॥रामनाम चित लाव अरु सब शोक निवा- रो॥कलह विकल सब मनके टारो निश्चय करि ह्यां आव॥तीरथ व्रत फल देवे रामनाम तुल नाहिं। पार लखावन मुक्ति करा-

वन समझि देखु मनमाहिं ॥ पढ़ौ पढावो भेद न पावो कछू न लागे हाथ।अर्थ विचारो तौ तुम जानौ कै सन्तनको साथ॥उ-मिरि गवाँवै तुच्छ स्वादमें करि पांचनसों भोग।अन्तकाल दुख होहिं घनेरे तन मन लिपटैं रोग॥लोक परलोक महासुख पावै जोसुमिरै हरिनाम।चरणदास शुकदेव कहत हैं होवैं पूरणकाम॥

राग मालश्री—थिर न रही रहना है आखिर मौत निदान॥ देखत देखत बहुतक विनशे आवत तुम्हरी वार । यतन करौ कोइ नाना विधिके बचै नहीं नर नार ॥ वे योगेश्वर वश करि मौतै जडिदये वज्र केवाँर।हि वैठ ज्यों मरना नाहीं माटी गये हाड ॥ कित गये रावण कुम्भकरणसे हिरणाकुश शिशुपाल । शङ्कर दियो अमर वर जिनको सोभी खाये काल॥ यह तन ब-र्तन काचको रे टपक लगे खुलि जाय।आज मरै कै कोटि वर्ष-लौं अन्त नहीं ठहराय ॥ वीतति अवधि चलावा आवै छोडि जगतकी आस।गुरु शुकदेव चितावै तोकों समुझचरणही दास ॥१॥क्षणभंगी छलरूप यह तनु ऐसा रे॥जाको मौत लगी बहु विधिसों नाना अंग ले वान।बिष अरु शास्त्र रोग वहुतकहैं और विघन वहु हान॥निश्चय विनशै बचै न क्योंही यत्न किये बहु दान।ग्रह नक्षत्र अरु देव मनावैं साधैं प्राण अपान॥अचरज जी-वन मरवो सांचो यह औसर फिरि नाहिं। पिछले दिन ठगियन सँग खोये रहे सु योंही जाहिं॥जो पल है सो हरिको सुमिरो साध सँगत गुरुसेव।चरणदास शुकदेव वतावै परम पुरातन भे-व॥२॥वा दिनकी सुधि राख सोई दिन आवै है॥जव यमदूत बुलावन आवे चल चल चल कहै भारी । एक घरी कोइ रखि न सकैगो प्यारेहूतप्यारी॥विछुरैं मात पिता सुत वान्धव विछुरैं कामिनि कन्त।जो विछुरैं सो वहुरि न मिलि हैं जो युग जाहिं

अनन्त ॥ रास सँघाती नेक न बिछुरैं ताहि सँभारत नाहीं । अपनी काया तोउ न अपनी समझ देखु मनमाहीं॥ चरणदास शुकदेव चितावै छाँडो जग उरझेरा॥अमर नगर पहिचान सिधारो जितकर निश्चल डेरा॥३॥जानै कोइ सन्त सुजान यह जग स्वप्ना है॥स्वप्न कुटुम्बी आपा मानै स्वप्ना बैरागी लै स्वप्ने लेना स्वप्ने देना स्वप्ने निर्भय भै॥स्वप्ने राजा राज्य करत है स्वप्ने योगी योग॥स्वप्ने दुखिया दुख बहु पावै स्वप्ने भोगी भोग॥स्वप्ने शूरा रणमें जूझै स्वप्ने दाता दान॥स्वप्ने पियसँग पावक जरिया स्वप्ने मान अपमान ॥ स्वप्ने ज्ञानी गुरुगम जागे अपनारूप निहारि । अज्ञानी सोवत स्वप्नेमें डसे अविद्या नारि॥चरणदास शुकदेव चितावै स्वप्नासों सब झूठ । अचरज समझ अगाध पुरानी मौन गहो गहि सूठ ॥ ४ ॥

राग ललित-यह सब जानौ झूंठा ठाट॥चेत सबेरे चलना बाट॥जग सरायमें कहा भुलानो ।भठियारीके मोह लुभानो ॥ तुझको तो बहु कोसन जानो ।करि हिसाब बनियेंकी हाट ॥ कुटुंब मित्र कोइ हितू न तेरा । अपने स्वारथहीको घेरा ॥ यां नहिं तेरा निश्चल डेरा । उठिये हूजै बेगि उचाट ॥ चलनेकी तदबीर न कीन्हीं । खोटी राह थाह नहिं चीन्हीं ॥ मँजिलोंकी खरची नहिं लीन्ही॥गाफिल सोवै अजहूं खाट ॥ मगमाहीं ठग बाग लगाये । बहुत मुसाफिर जित परचाये ॥ अरु उनको विष लड्डू खवाये । मारि लिये स्वादनके घाट॥ सावधान कोइ हाथ न आये॥बचकर चले सो निरभय धाये॥ उनके छलके पेच न खाये। नेक न लागी तिनको आंट॥मन चंचलका घोडा कीजै॥ध्यान लगाम ताहि मुख दीजै॥है असवार ताहि गहि लीजै॥भवसागरका चौडा फांट॥चरणदास शुकदेव

चितावे । अपना जानि तोहिं समझावे ॥ तेरे भलेकि बात बतावे । बारबार कहूं तोकूं डांट ॥

राग आसावरी—गुरुमुख यह जग झूठ लखाया । साधुसंत अरु वेद कहत है और पुराणन गाया॥ मृगतृष्णाके नीरलोभाना सीपी रूपा जाना । फटिक शिलापर पीक परी है मूरख लाल लोभाना ॥ स्वप्नेमें सब ठाट ठटो है कुल नाते परिवारा । दृष्टि खुली जब सबही नाशे रहो नहीं आकारा ॥ ताते चेत भजन कर हरिको ह्यां मत मनको पागो । वा घर गये बहुरि नहिं आवे आवागमन न लागो ॥ या स्वप्नेमें लाभ यही है चरणदास सुख भाखो । योगेश्वर जापद मिलि रहिया तुरिया हित चित राखो ॥

राग बरवा—या तनुको कह गर्व करत है ओला ज्यों गलजावे रे । जैसे बर्तन बनो काचको ठपक लगे बिगसावे रे ॥ झूठ कपट अरु छल बल करिकै खोटे कर्म कमावे रे । बाजीगरके बांदरका ज्यों नाचत नाहिं लजावै रे ॥ जबलौं तेरी देह पराक्रम तबलौं सबन सोहावे रे । माय कहै मेरा पूत सपूता नारी हुक्म चलावे रे । पल पल पलटै काया तेरी क्षण क्षण माहिं घटावे रे ॥ बालक तरुण होय फिरि बूढा वृद्ध अवस्था आवे रे ।तेल फूलेल सुगन्ध उबटनो अम्बर अतर लगावै रे॥ नाना विधिसों पिण्ड सँवारै जरिबरि धूरि समावे रे ॥ वैद हकीम करैं बहु औषध पंडित जाप सुनावे रे । कोटि यत्नसों बचै न क्योंहीं देवी देव मनावे रे ॥ जिनको तू अपने करि जानै दुखमें पास न आवे रे । कोई झिडके कोई अनखावे कोई नाक चढावे रे ॥ यह गति देखि कुटुंब अपनेकी इनमें मत उरझावे रे।जबहीं यमसों पाला परि है कोई नाहिं छुटावे रे ॥ औसर खोवे परके काजे अपनो मूल गवाँवे रे । बिन

हरिनाम नहीं छुटकारो वेद पुराण बतावै रे ॥ चेतन रूप बसै घट अन्तर मर्म मूल विसरावै रे । जो टुक ढूंढ खोज करि देखै आपनहींमें पावै रे ॥ जो चाहे चौरासी छूटै आवागमन नशावै रे । चरणदास शुकदेव कहत है सतसंगति मन लावै रे॥

राग बरवा—तनका तनक भरोसा नाहीं काहे करत गुमाना रे । ठोकर लगे नेकहूं चलतें करि हैं प्राण पयाना रे । ऐंठ अकड सब छाँड बावरे तज तसक इतराना रे । रंचक जीवन जगत अचम्भव क्षणमाहीं मरजाना रे ॥ मैं मैं मैं क्यों करता है माया माहिं भुलाना रे । बहु परिवार देखिकै फूलो मूरख मूढ अजाना रे ॥ टेढो चलै सिरोरत मुच्छैं विष-यवास लपटाना रे। आपनको ऊंचो करि जानै मातो मद अभि-माना रे ॥ पीर फकीर औलिया योगी रहै राजा राना रे । धरणि अकाश सूर शशि नाशै तेरा क्या उनमाना रे । ठाढे घात करै शिरपै यम ताने तीर कमाना रे । पलक पैंडपै तकि तकि मारै काल अचानक बाना रे ॥ श्वास निकसि फटि आँखि जाहिं जब काया जरै निदाना रे । तोको बांधि नरक लै जैहै करि हैं अगिनि तपाना रे ॥ अजहूं चेत सीखि ले गुरुकी करिले ठौर ठिकाना रे । अमर नगर पहिचान सिदौसी तब नहिं आवन जाना रे ॥ हरिकी भक्ति साधुकी संगति यह मत वेदपुराना रे । चरणदास शुकदेव कहत हैं परमपु-रातन ज्ञाना रे ॥

राग सोरठ—यह तनु बालूकासा डेरा । जैसे दामिनि दमक चमकको क्षण नहिं रहत उजेरा॥मेडीमण्डप मुलकखजानो अरु परिवार घनेरा॥सो सबकौतुकसों दीखत है रास सँभार सबेरा॥ गज घोडा अरु चाकर चेरा आखिर कोइ न तेरा॥जिनके कारण भरमि डोलै करता मेरा मेरा ॥ थोडेसे जीवनके काजै बहुतक

करत बखेरा । कालबलीकी खबरि नहीं है करहि अचानक घेरा ॥ कहैं शुकदेव समझ नर भोंदू छाँडि विषय टरझेरा । चरणदास हरि नाम भजन बिन कैसे होय निबेरा॥१॥दमका नहीं भरोसा रे करिले चलनेको सामान।तनु पिंजरेसों निकस जायगो पलसें पक्षी प्रान । चलतै फिरतै सोवत जागत करत खान अरु पान।क्षण क्षण क्षण क्षण आयु घटति है होत देहकी हान ॥ माल मुलक औ सुख सम्पतिमें क्यों हूवा गलतान । देखत देखत विनशि जायगो मति करु मान गुमान ॥ कोई रहन न पावै जगमें यह तू निश्चय जान। अजहूं समुझि छाँडि कुटिलाई मूरख नर अज्ञान॥टेरि चितावैं ज्ञान बतावैं गीता वेद पुरान । चरणदास शुकदेव कहत हैं राम नाम उर आन॥२॥

राग काफी—वह बोलता कित गया काया नगरी तजिकै। दश दरवाजे ज्योंके त्योंही कौन राह गयो भजिकै॥सूना देश गाँव भया सूना सूने घरके वासी।रूप रंग कछु औरै हूवा देही भई उदासी॥साजन थे सो दुर्जन हूये तनुको बांधि निकारा। चिता सँवारि लिटाकरि तामें ऊपर धरा अँगारा।ढहगया महल चहल थी जामें मिलिगया माटीमाहीं॥पुत्र कलत्र भाय अरु बांधव सबही ठोंक जलाहीं॥देखतहीका नाता जगमें मुये संग नहिं कोई।चरणदास शुकदेव कहत हैं हरि बिन मुक्ति न होई॥ ॥ १ ॥समझो रे भाई लोगो समझो रे । अरे ह्यां नाहिं रहना करना अन्त पयाना ॥ मोह कुटुंबके औसर खोयो हरिकी सुधि बिसराई।दिन धंधमें रैन नींदमें ऐसे आयु गवाँई॥ आठ पहरकी साठों घरियां सो तै बिरथा खोई । क्षण इक हरिको नाम न लीन्हों कुशल कहांते होई ॥ बालक था जब खेलत डोला तरुण भया मद माता। वृद्ध भये चिन्ता अति उपजी

दुखसें कछु न सुहाता ॥ भूलो कहा चेतु नर मूरख काल खडो शर सांध । विषका तीर खैंचिकै मारै आय अचानक बांध ॥ झूंठ जगसे नेह छोडकरि सांचो नाम उचारो । चरणदास शुकदेव कहत हैं अपना भलो विचारो ॥ २ ॥

राग झंझोटी–समझै नहिं मायाका सतवार । भूलि रहो धन धाम कुटुंबमें रहि गुरु दियो बिसार ॥ पाप दुकान कीपि अवगुणसों पूंजी रची विकार । कामके दास क्रोध थेलि धरि बैठा हाट पसार ॥ छल कांटे बिच कपट रुपइया निरख तौल निर्धार । कर्म ढेर कौडिनको करिकै गिनि२धरत सुधार ॥ क्या लाया क्या ले निकसैगा अपने जीव विचार । कोइ दम अचरज देखि तमाशा क्षण इक राम सँभार ॥ नरदेही है लाल अमोलक ताकी लखी न सार।अन्तसमय ज्यों हारे ज्वाँरी दोऊ कर चले झार ॥ यह जग स्वप्नो जान बावरे आखिर यमसों रार।भुगतै कष्ट महादुख पावै सो जीवन धिरकार ॥ आवत काल अचानक तोपै कहै शुकदेव पुकार । चरणदास अब राम सुमिरि ले नातर होइहै ख्वार ॥

राग नट व बिलावल–अरे नर अपनो लाभ विचार । स्वास खजानो घटत सदाही ताको वेगि सँभार ॥ जोरि जाय सो बहुरि न आवै खरचै लाख हजार । ऐसो रत्न अमोलक हीरा तू करसा मति डार ॥ सतसंगतिमें हित चित राखो दुष्टन संग निवार । मायाजाल अरु प्रीति कुटुंबकी ताको मनसों विसार ॥ काम क्रोध अरु मोह लोभसे परबल वडे विकार । ज्ञान अग्नि अन्तरपट जारो तासों इनको जार ॥ विषय वासना इन्द्रिनके लख बूडि रह्यो संसार । चरणदासको नाव चढाकै शुकदेव लियो उबार॥

राग केदार—रे नर क्यों तू गवाँवै जनम।आयु तेरी जाय बीती नाहिं जानै मरम॥जनम पाय हरिभजन करिले देहको यही धरम। लोक अरु परलोक सुधरै रहै तेरी शरम॥भक्तिसम कछु नाहिं दीखे योग यज्ञ तप करम।आन धर्म विचार त्यागो मेट धोथो भरम॥जनम चरणदास सतसंग मिलिकै आव हरिकी शरण। राम सुखदाई सुमिरि ले वही तारण तरण॥

राग सोरठ—अरे नर अफल जन्म मत खोरे।ज्यों तेलीको बैल फिरत है निशिदिन कोल्हू घोरे॥भक्ति विहीने खर है आये ढोवत बोझा रोरे। सांझ भये वाको पति वाको घूरे ऊपरछोरे॥ भर्मत भर्मत मनुप भये हौ ऊंचे आय चढो रे।लख चौरासी योनि भुगुति करि फिर तामें न परो रे॥अबके चूके बहु पछितैहौ मान वचन तू मोरे। चरणदास शुकदेव कहत हैं हरिपद सुरति धरो रे॥

राग बिलावल—अरे नर जन्म पदारथ खोया रे।बीती अवधि काल जब आया शीश पकरिकै रोया रे॥ अब क्या होय कला बनि आवै माहिं अविद्या सोया रे। साधु संग गुरुसेव न कीन्हीं तत्त्व ज्ञान नहिं जोया रे॥आगेसे हरिभक्ति न कीन्हीं रसना राम न पोया रे।चौरासी यमदंड न छूटै आवागमनका होया रे॥जो कछु किया सोई अब पावो वही लुनौ जो बोया रे। साहब सांचा न्याव चुकावो ज्योंका त्योंहीं होया रे॥कहूँ पुकारे सब सुनि लीजो चेति जाव नर लोया रे। कहै शुकदेव चरणहीं दासा यह मैदान यह गोया रे॥

राग सारंग व राग नट व राग धनाश्री।

नट ज्यों नाचि गये कितने। दाता शूर सती सिधि साधक

राव रंक जितने॥रावण कुम्भकर्णसे योधा बहुतक कौन गिनै। बहुतक इकछत राज करत थे पूजत लोग जिनै॥बहुतक भोगी नानाविधिसों करते भोग विलास।बहुतक तपसी वनके वासी तनुपर उपजी घास॥बहुतक ऋषि मुनि दुर्वासासे देते अडिग शराप। बहुतक ज्ञानी हरि ह्वै बैठे कहते आपहि आप॥हमहूं याचक नाचन आये यह नहिं अपना देश। चरणदास शुकदेव दयासों फिर नहिं काछूं भेश ॥१॥ नट ज्यों नाचहि नाचि गये।जिन जिन वेषधरो जगमाहीं सो सो नाहिं रहे॥बहुतकस्वांग धरो राजाको बहुतक रंक भये।बहुतक भूप कर्णसे हूये कंचन दान दये॥बहुतक स्वांग सतीके आये ह्वै गये अग्निमये। बहुतक मुंडत मुण्डत योगी गुफा बनाय छये॥भीषम अरु द्रोणाचार्जसे शूरा बहुत ठये।रणसों पीठि दई नहिं कबहूं सम्मुखबाण लये॥बहुत यती सिध ह्वै ह्वै बैठे लोगन चरण गहे।बहुतक कामी चतुर सयाने काम सुतास बहे॥उत्तम मध्यम काछ कछे है नाना स्वांग मचे। चरणदास शुकदेव दयासों प्रेमी होय नचे ॥२॥

राग सारंग-दुनिया मगन भये धन धाम।लालच मोह कुटुँबके पागे बिसारि गये हरिनाम॥एक घरी छुटकारो नाहीं बँधि रहे आठों याम।पांच प्रहर धंधेमें माते तीनप्रहर सँग बाम॥फूले फिरत मना गर्वाये पवन भरे ये चाम।दीप कलश ज्यों विनशि जायगो या तनुको यहि काम ॥साधु संग गुरु सेव न कीन्हीं सुमिरे ना श्रीराम।चरणदास शुकदेव कहत हैं कैसे पावों ठाम॥

राग काफी-कोई दिन जीवतौकर गुजरान।कहर गह्वरीछांड दिवाने तजो अकसकी बान॥चुगली चोरी अरु निंदालै झूठ कपट अरु कान। इनको डारि गहौ जत सतको सोई अधिक

सयान ॥ हरि हरि सुमिरौ क्षण नहिं विसरौ गुरु सेवा मन ठानि । साधुनकी संगति कर निशिदिन आवै ना कुछ हानि । मुडो कुमारग चलौ सुमारग पावै निज पुर वास।गुरु शुकदेव चेतावैं तोको समझ चरणहीं दास ॥१॥ एते पर क्यों हुआ मगरूर । क्षणभंगी यह तनु वहुरंगी जरि वारि होइ है धूर ॥ मूछ मरोरि चलै बांकी गति अकडि अकडि रहै घूर । छैल चिकनियां माया मदमें मातो चकनाचूर॥काम क्रोधके शस्तर बांधे लोभ रह्यो भरिपूर । गुरुको ज्ञान न मनमें आवै ऐसा है बेसहूर ॥ करि अभिमान जगत सच मानै हरिको जानै दूर । चरणदास शुकदेव वतावै साईं सदा हुजूर ॥ २ ॥

राग विलावल–राम नाम तैं क्यों विसराया॥ सीखे कपट झपट छल वल बहु कामरु क्रोध मोह लवलाया ॥ चारि दिनाका जगत अचम्भा झूठे सुखमें कहा लोभाया । क्षण इक सतसंगति नहिं कीन्ही जन्म अकारथ खोय बहाया ॥ वाद विवाद स्वादको चौकस विषय वास रसमें लपटाया । दया धर्म हिरदयसों भूला परनिन्दा हिंसाको धाया॥चौरासी लख योनि भुगुति करि मनुष स्वरूप भाग्यसों पाया । लाहा कछू न किया हासल उलटा मूल गवाँया ॥ श्रीशुदेव पुकारि चितावें समझत ना केतो समझाया । चरणदास कलियुगके माहीं हरिगुण गावन सार वताया ॥१॥ नाहीं रे कोइ हरि विन तेरो । यह जग जाल महा दुखदाई तामें है इक रैनि वसेरो ॥ आनि फँसो मायाके फन्दन मोह ममत कीन्हों उरझेरो । रंचकहू छुटकारो नाहीं विषय स्वाद पांचौंने घेरो॥ साधु सन्तसों नेह न राखै दारा सुत सम्पतिको चेरो । अन्तकाल वहुतै पछितैहो जव मारै यम आय थपेरो ॥

धनके कारण घर घर डोलै परकाजै पचि मरन घनेरो । औरत दास वाम वश ह्वैकै काम क्रोधसों हित बहु तेरो॥ जो चाहै तू भलो आपनो तो इनसे करु वेगि निवेरो। चरणदास शुकदेव कहत हैं छाँडि देहु सब विषय बखेरो ॥ २ ॥

राग धनाश्री—अपना हरि बिन और न कोई । मात पिता सुत बन्धु कुटुँब सब स्वारथहीके होई॥या कायाको भोग बहुत दे मर्दन करि करि धोई । सोभी छूटत नेकन कसकी संग न चाली वोई॥घरकी नारि बहुतही प्यारी तिनमें नाहीं दोई । जीवत कहती साथ चलूंगी डरपन लागी सोई॥जो कहिये यह द्रव्य आपनो जिन उज्ज्वल मति खोई ॥ आवत कष्ट रखत रखवारी चलत प्राण ले जोई॥इस जगमें कोइ हितू न दीखै मैं समझाऊं तोई।चरणदास शुकदेव कहैं यों सुनि लीजै नर लोई॥

राग कान्हरा—हरि बिन कौन तुम्हारो मीता। कुटुँब संघाती स्वारथ लागे तेरी काहूको नहिं चीता ॥ तैं प्रभु ओरीसों मुख मोडा झूठे लोगनसों हित कीता। अरु तैं अपनी आँखों देखा कई बार दुख सुख हो बीता॥ सम्पतिमें सबही घिरि आवें विपति परे अधिकी दुख दीता ॥ मूठी बाँधि जनम नर लायो हाथ पसारि चलैगो रीता ॥ धरि धरि स्वांग फिरै तिन कारण कपि ज्यों नाचत ताता थीता। मुये न संगी होहिं तिहारे बाँधि जलावैं देह पलीता॥गुरुसेवा सतसंग न कीन्ही कनक कामिनीसों करि प्रीता । चरणदास शुकदेव कहत हैं मरत मरत हरिनाम न लीता ॥

राग रामकली—धनि धनि वे नर हरिशरणाये।और पशुनसों सबही नीचे परमारथके काम न आये॥अचरज मनुषा देही दुर्लभ बड भाग्यनसों पाई।तीनो पनमें नाहिं सँभारी झूठे धन्धे योंहिं

गँवाई॥बालापन खेलनमें खोया तरुण भया सँग नारी। बूढा भये कुटुँबके संशय पावत है अतिही दुख भारी॥जिन कारण तैं पाप कमाये सो नहिं चलिहैं लारी।तेरेही शिर आनिपरैगी जहाँ अकेले नरकमँझारी॥ गर्भमाहिं तैं वचन किये थे करिहौं भक्ति तुम्हारी। ह्यां आके कछु औरै कीन्हा प्रभुसे झूठा हुआ अनारी॥हो सांचा अजहूं सुमिरण कर होहिं दयालु मुरारी॥ चरणदास शुकदेव कहत हैं आगेहु पतित किये भवपारी॥१॥ फिर फिर मूरख जन्म गँवायो। हरिकी भक्ति साधुकी संगति गुरुके चरणनमें नहिं आयो॥ धनके जोरनको हठ कीन्हों महल करन व्रत धारो।टिक पकडकर नारी सेई शिरपर बोझा लियो अति भारो॥ है है दुख नानाविधिकेरो तन मन रोग बढायो। जीवत मरत नहीं सुख पैहौ आवागमनको बीज जमायो॥ भर्मि भर्मि चौरासी आयो मनुषा देही पाई। या तनुकी कछु सार न जानी फिरि आगे चौरासी आई॥आँखि उघारि समुझ मनमाहीं हिरदय करो विचारा॥ऐसा जन्म बहुरि कब पैहो विरथा खोवै जग व्यवहारा॥ जानौगे जब छाँडि चलोगे कोइ न संग तुम्हारे।चरणदास शुकदेव कहत हैं याद करोगे वचन हमारे॥ २॥

राग विहाग—रे नर हरि प्रताप ना जाना।तुव कारण सब कुछ तिन कीन्हा सो करता न पिछाना॥जिहि प्रताप तेरी सुन्दरि काया हाथ पाँव मुख नासा।नैन दिये जासों सब सूझै होय रहा परकासा॥जिहि प्रताप नानाविधि भोजन वस्त्र अभूषण धारे॥ वाका नाहिं निहोरा मानै ताको नाहिं सँभारै॥जिहि प्रताप तू भूप भयो है भोग करे मनमानै।सुख ले वाको भूलि गयो है

करि करि बहु अभिमानै ॥ अधिकी प्यार करै मातासों पल पलमें सुधि लेवे । तो तू पीठ दियेही नितही सुमिरण सुरति न देवे ॥ कृत्य घनी औ नूण हरामी न्याव इंसाफ न तेरे । चरणदास शुकदेव कहत हैं अजहूं चेतु सबेरे ॥

राग विहागरा—अरे नर हरिका हेत न जाना । उपजाया सुमिरणके काज तैं कछु औरै ठाना ॥ गर्भमाहिं जिन रक्षा कीन्ही है खानेको दीन्हा।जठर अग्निसों राखि लियो है अंग सम्पूरण कीन्हा॥बाहर आय बहुत सुधि लीन्ही दशन बिना पय प्यायो।दांत भये भोजन बहुभाँती हितसों तोहिं खिलायो॥ और दिये सुख नानाविधिके समुझि देखु मनमाहीं । भूलो फिरत महा गर्वाया तू कछु जानत नाहीं॥ तव कारण सब कछु प्रभु कीन्हो तू कीन्हा जप काजा।जग व्यवहार पगोही बोलै तोहिं न आवै लाजा॥अजहूं चेत उलट हरिसौंही जन्म सफल करु भाई।चरणदास शुकदेव कहैं यों सुमिरण है सुखदाई ॥

रागकाफी—गुमराही छाँड दिवाने मूरख बावरे अति दुर्लभ है नरदेह भया गुरुदेव शरण तू आवरे॥जग जीवन है निशिको स्वपनो अपनो ह्यां कौन बतावरे।तोहिं पांच पचीसने घेरलियो लख चौरासी भरमावरे॥बीति गई सो बीति गई अजहूं मनको समुझावरे।मोह लोभसों भागिकै त्याग विषय काम क्रोधको धोयबहावरे॥शुकदेव कहैं सबही तजिकै मनमोहनसों लव लाव रे।चरणदास पुकारि चिताय दियो मत चूकै ऐसे दावँरे॥१॥चला आवै चलावैका बोसकछू करिले भाई ह्यांसे चलनाहोयअचानकही फिरि पीछे रहै अपसोस॥पीके विषयकी मदिरा मतवारा होय रहा बेहोस।बाटमाहिं तो शूल बबूल घने अरु जाना है कई

कोस ॥ दमहीं दमहीं दम छीजत है पल पल घटे तनु जोस। माया मोह कुटुंबका सुख ऐसे जैसे दीखै मोती ओस ॥ शुकदेव दियो कृपा करिकै रामरसका प्याला नोश।चरणदास कहै यह बात भली सुनि लीजै दोनों गोश ॥

राग सोरठ—कछु मन तुम सुधि राखो वा दिनकी । जा दिन तेरी देह छुटैगी ठौर बसौगे वनकी॥जिनके संग बहुत सुख कीन्हें मुख ढकि होइ हैं न्यारे । यमको त्रास होय बहुभाँती कौन छुटावनहारे ॥ देहरीलौं तेरि नारि चलैगी बडी पौरिलौं माई । मरघटलौं सबवीर भतीजे हंस अकेलो जाई ॥ द्रव्य गडे अरु महल खडे ही पूत रहै घरमाहीं । जिनके काज पचे दिन राती सो सँग चालत नाहीं ॥ देव पितर तेरे काम न आवैं जिनकी सेवा लावै । चरणदास शुकदेव कहत हैं हरि विन मुक्ति न पावै॥१॥मोको भय अति वाही दिनको । जब यह पक्षी माया लोभी त्यागै पिंजरा तनको ॥ सुत दाराके मोह फँसो है लोभ लगो है धनको । काम क्रोधको कंपो खायो भयो अधीन सबनको ॥ पांच पहर धन्धेमें खोया नाम न लेत भजनको । तीनि पहर नारी-सँग मातो मानत सुख इन्द्रिनको ॥ आपनको ऊंचो करि जानै करि अभिमान बरनको । सन्त संगतिके निकट न आवै जो है ठाट तिरनको ॥ यम किंकर जब आनि गहैंगे तब ना धीर धरनको । गुरु शुकदेव सहाय करैंगे आसरो दास चरणको ॥ २ ॥

राग केदारा—सो मेरो कहो मान रे भाई । ज्ञान गुरूको राखहियेमें बंध कटि जाई॥बालपनते खेलि खोयो गई तरुणाई।चेत अजहूं भली बर है जराहू आई॥जिनके कारण विमुख हरिते फिरत भटकाई।कुटुम्ब सबही सुखके लोभी तेरे दुखदाई॥

साधु पदवी धारण कर छाँडु कुटिलाई । वासना तजि भोग जगके होय मुक्ताई॥बहुरि योनी नाहिं आवै परमपद पाई । चरणदास शुकदेवके घर आनँद अधिकाई॥१॥साई रे अवधि बीती जात । अंजुली जल घटत जैसे तारे ज्यों परभात ॥ श्वास पूंजी गांठि तेरे सो घटत दिन रात । साधु संगत पैठ लागी ले लेवे सोइ हाथ ॥ वडो सौदा हरि सँभारो सुमिरि लीजै प्रात।काम क्रोध दलाल ठगिया वणिज मत इन साथ॥ लोभ मोह बजाज छलिया लगे हैं तेरि घात । शब्द गुरुको राखि हिरदय तौ दगा नाहिं खात ॥ अपनी चतुराई बुद्धि पर मति फिरै इतरात। चरणदास शुकदेव चरणन परश तजि कुल जात ॥ २ ॥

राग सोरठ–साई रे स्वप्न यह संसार।देह स्वप्ना जन्म स्वप्ना स्वप्न कुल व्यवहार॥माय स्वप्ना बाप स्वप्ना स्वप्न सुत अरु नारि।लाज स्वप्ना जाति स्वप्ना स्वप्न अस्तुति गारि॥योग स्वप्ना भोग स्वप्ना किये वेदनिखेद।स्वप्न सो जो होय मिटिहै स्वप्न सुख अरु खेद॥बन्ध स्वप्ना मुक्ति स्वप्ना स्वप्न ज्ञान विचार।स्वप्न है सो विनशिजैहै रहैगा ततसार॥चरणदास स्वप्ना ब्रह्म सांचो एक पद नित जान । सत्य स्वप्नाझूंठ स्वप्ना कह करूं निर्वान॥१॥ साई रे तजो जग जंजाल । संग तेरे नाहिं चालै महल बाहन माल॥मात पितु सुत और नारी बोल मीठे बैन । डारि फांसी मोहकी तोहि ठगत हैं दिन रैन ॥ छल धतूरो दियो सब मिलि लाज लडुवामाहिं। जान अपने कहा भुलाने चेतता क्यों नाहिं॥ बाज जैसे चिड़ी ऊपर भँवत तोपर काल । मारते गहि लै चलैंगे यम कसीसे साल ॥ सँघाती हरि विसारो जन्म दीन्हो हार । चरणदास शुकदेव कहिया समझ मूढ गवाँर॥२॥साई रे समझ जग व्यवहार । जबताई तेरे धन पराक्रम करैं सब ही प्यार॥

अपने सुखको सबही चाहैं मित्र सुत अरु नारि।इन्हौं तौ अपवश किया है मोह वेडी डारि॥सबन तोको भय दिखायो लाजलकुटी मारि।बाजीगरके बांदर ज्यों फिरत घर घर द्वार ॥ जबै तोको विपति आवे जरा कोर विकार।तब तोसूं लाज मानें करें ना तेरि सार॥इनकी संगति सदा दुख है समझ मूढ गवाँर । हरि प्रियतमको सुमिरि ले कहैं चरणदास पुकार ॥ २ ॥

राग विहाग—ये सब निज स्वारथके गरजी ॥जगमें हेत न कीजे काहूसों अपने मनको वरजी॥रोपें फन्द घात वहु डारैं इनतें तू डरिये जी । हृदय कपट बाहर सिठ बोलैं यहा छलहैगो कहाजी ॥ सौंगंध खाय झूठ वहु बोलें भवसागर कैसे तरजी॥ दुख सुख दर्द दया नहिं बूझें इनसे छुटावो हरिजी॥वैरी मित्र सबै चुनि देखे दिलके महरम कहजी । इनको दोष कहा कह दीजे यह कलियुगकी झरजी ॥ दुनियाँ भगल कुटिल बहु खोटी देखि छाती मेरी लरजी। चरणदास इनको तजि दीजे चल बस अपने घरजी ॥

राग आसावरी—साधो राम भजेते सुखिया । राजा परजा नेमी दाता सबही देखे दुखिया॥जो कोई धनवंत जगतमें राखत लाख हजारा।इनको तौ संशय हैं निशिदिन घटत वढत व्यवहारा ॥ जिनके वहु सुत नाती कहियें और कुटुंब परिवारा॥वे तौ जीवन मरणके काजे भरत रहैं दुख भारा॥नेमी नेम करत दुख पावे कर स्नान सवेरा । दाताको देवैको दुख है जब मँगतोंने घेरा॥ चार वर्णमें कोइ न देखो जाको चिन्ता नाहीं । हरिकी भक्ति विना सब दुख है समझ देख मनमाहीं ॥ सतसंगति अरु हरिसुमिरण करि शुकदेवा गुरु कहिया । चरणदास विपदा सब तजिके आनँदमें नित रहिया ॥

राग सारंग–नर राम भजे सुख पाय है । दुख भाजै अरु पातक नाशै जोरा निकट न आय है॥चेत सबेरे कहूं पुकारे नातरु तू पछिताय है । जगत ठाट सब झांकी शोभा संग न कोई जाय है॥बिन गोपाल तुम्हारो को है हमको देहु बताय है। पकरि बांधि यम मारन लागै जब को होय सहाय है॥ देख विचारि समझु मनमाहीं तो बुधि जो अधिकाय है। तौ तू आव लिमट हरि ओरी चालो जनम सिराय है॥चरणदास शुकदेव कहत हैं अब यही अधिक सयान है। गुरुकी शरण साधुकी संगति प्रभुको कीजै ध्यान है ॥

राग भैरव–चेतौ रे नर करो विचार।छलरूपी है यह संसार॥ स्वप्ना मात पिता सुत बंधू। स्वप्ना है सबही संबंधू ॥ देखै कहै सुनै सो स्वपना। या जगमें नाहीं कोइ अपना॥स्वप्ना धरती और अकाशा॥स्वप्ना चन्द्र सूर्य परकाशा॥स्वप्ना जल थल पावक पौन। स्वप्ना योग भोग अरु मौन॥स्वप्ना मायाको व्यवहार स्वप्ना कुल नाता परिवार॥स्वप्ना देश नाम अरु भेश॥स्वप्ना उत्पति परलय शेश॥स्वप्ना राजा रानाराव। स्वप्नै बानिक बन्यो बनाव॥स्वप्नै लरै मरै अरु भागै॥स्वप्नै सोवै स्वप्नै जागै॥ स्वप्ना है यह सबही ठाट।उठी पैंठ जब झुँदि गइ हाट॥जो कछु है सो सबही स्वप्ना॥सांचा हरि हरि हरि हरि जपना॥ क्यों भूला मूरख मस्तान। अजहूं समुझि लेहि गुरुज्ञान ॥ गफलत छाँडि भजो हरि नाम। जो चाहै तू निश्चल धाम ॥ ज्यों सोवत स्वप्नो दरशाय। आँखि खुलें जबहीं मिटि जाय ॥ ऐसे ही सब स्वप्ना जान। अचल अखण्ड रहै भगवान ॥ सबठां ब्रह्म रह्यो भरि पूरि। ना अतिनिकट नहीं वह दूर॥जो कोइ खोजे सोई पावै। तत दरशी यह भेद

बतावै ॥ गुरु शुकदेव पुकारि चितावै । झूठ साँचको न्याव चुकावै॥चरणदास सब स्वप्ना जाना।सदा एकरस ब्रह्म पिछाना॥

राग मलार—सतगुरु भवसागर डरभारी । काम क्रोध मद लोभ भँवर जित लरजत नाव हमारी ॥ तृष्णा लहर उठत दिन राती लागत अति झकझोरा । ममता पवन अधिक डर पावै काँपत है मन मोरा ॥ और महाडर नाना विधिके क्षण क्षणमें दुख पाऊं । अन्तर्यामी विनती सुनिये यह मैं अरज सुनाऊं ॥ गुरु शुकदेव सहाय करो अब धीरज रहा न कोई । चरणदासको पार उतारो शरण तुम्हारी सोई ॥

राग बिलावल—भक्ति गरीबी लीजिये तजिये अभिमाना । दो दिन जगमें जीवना आखिर मरिजाना ॥ पाप पुण्य लेखा लिखैं यम बैठे थाना । कहा हिसाव तुम देहुगे जब जाहि दे-वाना॥मात पिता कोइ ह्वां नहीं सबही बेगाना।द्रव्य जहां पहुँचै नहीं नहिं मीत पिछाना ॥ एकसों एकहि होयगी ह्वां सांच तु-लाना । काहूकी चाल नहीं छने दूधरु पाना॥साहिबकी करि बन्दगी दे भूखे दाना।समझावैं शुकदेवजी चरणदास अयाना॥

राग काफी—घरी दोमें मेला बिछुरै साधो देखि तमाशा चलना । जे ह्यां आकर हुए इकट्ठे तिनसों बहुदिन मिलना ॥ जैसे नाव नदीके ऊपर बाट बटेऊ आवैं । मिलि मिलि जुदे होयँ पलमाहीं आप आपको जावैं ॥ या बारी बिच फूल घनेरे रंग सुगन्ध सुहावैं । लागैं खिलैं फेरि कुम्हिलावैं झरैं टूटि बिनशावैं ॥ दारा सुत सम्पतिको सुख ज्यों मोती ओस बिलावैं । ह्यांई मिलैं और ह्याँ नाशैं ताको क्यों पछितावै॥दै कुछ लै कुछ करिले करणी रहनी गहनी सारी । हरिसों नेह लगाय आपनो सो तेरो हितकारी॥सतसंगतिको भला बडो है

साथ भक्त समुझावैं । चरणदास हो राम सुमिरि ले गुरु शुक-देव बतावैं॥ १ ॥ वह मेला सोई मेला है साधो जहँ सन्तोंका मेला । जिनके रहैं सदा हरिचर्चा सुमिरैं राम सुहेला ॥ कथा कहैं अरु करैं कीर्तन ज्ञान ध्यान समुझावैं । सोवत जागत बैठे चलते गोविंदके गुण गावैं ॥ बोलैं अमृतवाणी सबसों कुमति कुबुद्धि छुटावैं॥हरिकी भक्ति साधुकी संगति यह उपदेश बतावैं॥ माला तिलक रामको बाना सुन्दर वेश बनावैं।घर घर होय आरती मङ्गल नवधासों चित लावैं॥निशिदिन आनँद रूप दिवाली सदा वसन्त सुहायो।प्रेम महोत्सव नितही उत्सव सबै ठाट मन भायो ॥ या विधिसों मन मगन होय करि भजन करैं अतिभारी।चरणदास शुकदेवैं कहत हैं घटमें होय उज्यारी॥२॥

राग पर्ज–राम धन जो कोइ पावै हो। राज बडाई इन्द्र पदवी सुरति न लावै हो॥आठ सिद्धि नौ निद्धिके लालच नहिं लागै हो । तीनिलोक तुच्छ जानिके तामें नहिं पागै हो ॥ अर्थ धर्म काम मोक्षको करनी नहिं ठानै हो । चारि मुक्त वैकुण्ठलौं कछु वस्तु न जानै हो॥सबसे नीचा ह्वै चलै मुख झूठ न भाखै हो । हिंसा अकस वासना कोई नेक न राखै हो ॥ साधुनकी करि चाकरी जब वह धन आवै हो । चरणदाससे रंकको शुक-देव बतावै हो ॥१॥ जिन्हें हरिभक्ति पियारी हो। मात पिता सहज छूटैं छूटैं सुत अरु नारी हो॥लोक भोग फीके लगै सम अस्तुति अरु गारी हो । हानि लाभ नहिं चाहिये सब आशा हारी हो॥जगसों मुख मोरे रहैं करैं ध्यान मुरारी हो।जित मनुवाँ लागो रहै भई घट उजियारी हो॥गुरु शुकदेव बताइया प्रेमी गति भारी हो । चरणदास चारों वेदसों औरे कछु न्यारी हो ॥२॥

रेखता राग भय्यार–तजिके जगतकी रीतिको करु आपनी तदबीर । इस जग भरोसे ख्वार हो सुन यारमन यारमन

गंव शाह अमीर ॥ इकदम करारी है नहीं क्षणमें फेर रंग । कबहूँ तो हेरां सुख घना सुन यारमन यारमन यारमन चल विचल पतंग ॥ हशमत चसोकत थिर नहीं मत देखिहो मगरूराठहराव ताको है नहीं सुन यारमन यारमन मग्गल व-डाई धूर ॥ जाहिं श्वासा सब चले ज्यों आवदर गिरवाल । याद साहबकी करो सुन यारमन यारमन यारमन सुमिरि हरि हरि हाल॥ शुकदेव सतगुरुने मुझे कायम बतायो राम । चर-णहिंकामा चित धरो सुन यारमन यारमन जपो आठो याम॥

रेखता—दो दिनका जगमें जीवना करता है क्यों गुमान । ऐ बेसहूरगी दी टुक रामको पिछान ॥ दावा खुदीका दूर कर अपने तू दिलसेती । चलता है अकड अकड जवानीका जोश आन॥मुरसदका ज्ञान समझके हुशियार हो सिताब।गफलतको छांडि सोहबत साधोंकी खूब जान॥दौलतका जौक ऐसे ज्यों आब काहुवान।जाता रहेगा क्षणमें पछितायगा निदान॥दिन रात खोवता है दुनियाँके कारवार । इकपल भी याद साईंकि करता नहीं अजान॥शुकदेव गुरुज्ञान चरणदासको कहें । भज्ज राम नाम सांचा पद मुक्तिका निधान ॥

हेला—जगको आवन जानि हेला याको शोक न कीजिये। यह संसार असार है रे अरे हेला हरिसों कर पहिचान ॥ कुटुंव संग आयो नहीं रे अरे हेला ना कोई संग जाय । छांड़ि मिलें छांड़ि वीछुरे ताको झुरे वलाय ॥ सहल द्रव्य किस कामके रे, अरे हेला चलें न काहु साथ । राम तजे इनसों पगे हारो अपने हाथ ॥ जीवत काया धोवते रे अरे तेल फुलेल लगाय । मज-

१ ऐश्वर्य । २ प्रभाव । ३ संगति । ४ लालसा, तृष्णा ।

लिस करिके बैठते मूये काग न खाय॥ लाभ भये हरषै नहीं रे। अरे हेला हानि भये दुख नाहिं। ज्ञानीजन वहि जानिये सब पुरुषनके माहिं॥ गुरु शुकदेव चितावइ रे अरे हेला चरणदास हिय राखि। मनुष जन्म दुर्लभ मिलै वेद कहत हैं साखि ॥ १ ॥ झूठी जगकी प्रीति है नहीं छांडूं हरिसों मीत हेला। रंग कुसुम संसारको रे अरे हेला प्रभुको रंग मँजीठ ॥ धन यौवन थिर न रहै रे अरे हेला मत कर गर्व गुमान। क्षणक्षण औसर जात है हरिसों कर पहिचान॥ अन्त समय पछितायगो रे हेला जब यम घेरें आय। जिनके सँग तू मिल रहो कोई न छुटावै जाय ॥ बीति गई सो जान दे रे अरे हेला अजहूं समझ गवाँर। शरण गहो सत्संगकी गुरुके वचन सँभार ॥ श्रीगुरुदेव बताइया रे अरे हेला रामनाम ततसार। चरणदास यों कहत हैं लैलै उतरो पार॥२॥ बोलत टेढी बात हेला माया मदमाता रहै। सबहीसों ऐंठो फिरै अरे हेला क्षणमें वेग रिसात ॥ व्याज बढा दुगुने करै रे अरे हेला करै चौगुने दाम। नाना रसके स्वाद ले खाय फुलावै चाम ॥ करसों कबहूं न दान दे रे अरे हेला शीश न नवावै साध। जिह्वासों हरि ना जपै बहुत करै बकवाद ॥ पगसों तीरथ न रमै रे अरे हेला सुनै न श्रीभागीत। अकड अकड मनमाहिं यों जानि बडो कुल-गोत ॥ परछाहीं देखे चलै रे अरे हेला बांकी बांधै पाग। सो देही किस कामकी खैहैं श्वान न काग ॥ पुत्र कलत्र हैं घनेरे अरे हेला सुखसें करत कलोल। हरिभक्तनसों नेह ना कहै क्रोधके बोल॥ धर्म कछु ना करै रे अरे हेला नहिं सतगुरुसों प्रीति। हरिचरचासों जरि मरै यह डूबनकी रीति ॥ जगको सांचो जानिकै रे अरे हेला हरिको दियो बिसार। अन्तसमय यम त्रास दै डारै नरकमँझार॥ श्रीशुकदेव ऐसे कही अरे रे हेला

छांड विषय जंजार। चरणदास भजु रामको सोई उतारै पार॥३॥

हेली—यह अवसर फिरि नाहिं हेली राम भजन करि लीजिये यह तन क्षण क्षण जात है री अरी हेली ज्यों तरुवरकी छांह॥ पिछिले दिन सब खो दिये री अरी हेली कीयो न हरिसों सीर। रहेसो ऐसो जानि ले ज्यों अंजलिको नीर॥ बचै सो लाहा लीजिये री हेली सतसंगतिके माहिं। हिलमिल हरियश गाइये दृढता जीकी वाहिं॥ जन्म सफल जब होयगो री अरी हेली कुल पारायण होय। एक रु सौ पीढी तरैं रसना हरिगुण पोय॥ यही स्मृति यहि वेद है री अरी हेली यहि साधनको भेव। चरणदास हियमें धरौं कहिया गुरू शुकदेव॥१॥ और न मीता कोय हेली समुझि सँभारो रामजी। जीवतकी रक्षा करैं अरी हेली मुये मुक्त करैं तोहिं॥ अरु सब स्वारथके संग री अरी हेली अन्त न कोई साथ। सुखमें सबही रल मिले दुखमें सुनें न बात॥ छल करि मनकी बूझले री अरी हेली पाछे डारे घात। तिनको तू आपनो कहै सो सो दोषी ह्वै जात॥ भेद न अपनो दीजिये री अरी हेली कोऊ कैसे होय। हिरद-यकी हिरदय रहै हरिही जानै सोय॥ कै गुरु अपनो जानिये री अरी हेली कै सतसंगत वास। गुरु शुकदेव बतावई देख चरणहीं दास॥२॥ यह नहिं अपना देश हेली ह्यां नहिं मनको दीजिये। अपने घरको चालिये री अरी हेली करि योगि-नको वेष॥ कानन मुद्रा योगकी री अरी हेली ज्ञान जटा शिर धारि। चोल भक्ति सोहावनो धीरज आसन मारि॥ सेली सत बैरागकी री अरी हेली शील विभूति रमाय। यतकी सींगी कीजिये बारम्बार बजाय॥ कर्म जलाय धुनी करो री अरी हेली झूमों दशवें द्वार। अमल सुधारस पीजिये चाढै रंग अपार॥

इस बाने पियको मिलौ री अरी हेली सदा सुहागिनी होय।
गुरु शुकदेव बतावई चरणदास वन सोय॥३॥

अथ ज्ञान अंग।

राग करखा–साधो गुरु दया आपको यों विचारा।झूंठ अरु सांचको समुझि करि मूलसों माया अरु ब्रह्मको किया न्यारा॥ पांच अरु तीन गुण देहको ठाट है तासुको लगत है सब विकारा। ब्रह्म अडोल अबोल अतोल है और निर्लिप्त हरि निर्विकारा॥ जाके रूप नहिं रेख अरु नाम मूरत नहीं सोई निज तत्त्व है निराकारा।सुरति अरु निरति दोऊ जहां थकि रहें तहां विन भान अति है उज्यारा॥ बिना गुरुमुखी कोइ पहुँचि ह्वां ना सके कनक अरु कामिनी धारि मारा। चलै सोइ सन्त निर्वाण है शूरमा ज्ञान अरु ध्यानको कर अहारा॥ आवा अरु गमनकी टूटि फांसी गईपाय गुरु भेद गयो तिमिर सारा।चरणदास शुकदेव मिले मर्म सब दलिमले होय रणजीत अविगति निहारा॥१॥ साधो ब्रह्म दरियाव नहिं वारपारा। आदि अरु मध्य कहुँ अन्त सूझे नहीं नेतिही नेति वेदन पुकारा। मूलपरकीर्तिसी बहुत लहरैं उठैं सकै को पाय गुण है अपारा। विरंचि महादेवसे मीन बहुतै जहां होय परगट करमी गोत मारा॥तासुमें बुदबुदे अण्ड उपजैं मिटैं गुरु दई दृष्टि जासों निहारा। छका छवि देखि अतीतका वेपकरि जगे जब भाग निरखी बहारा॥ मरजिया पैठिया थाह पाई नहीं थका ह्वांहि रहा फिर न आया। गया था लाभको मूल खोया सबै भया आश्चर्य आपन गवाँया॥ पाल विन सिद्धि अरु निरा-आनंद है आपही आप है निराधारा। चरणदास शुकदेव दोऊ तह रल मिले तुरतही मिटि गया खोज सारा॥२॥

राग धनाश्री—सहजगति ज्ञान समाधि लगाई । रूप नाम जहँ किरिया छूटी हूँ में रहन न पाई॥विन आसन विन संयम परमातम सुधि पाई । शिव शक्ति मिलि एक भये हैं मन माया न हिराई ॥ मगन रहौं दुख सुख दोउ मेटे चाह अचाह मिटाई । जीवन मरण एकसों लागै तबते आप गँवाई ॥ मैं नाहीं नख शिख हरि राजै आदि अन्त मध्याई । शङ्का कर्म कौनको लागै काकी हो मुकताई ॥ सकल आपदा व्याधि टरी सब हुई कहां मो मांहीं । सब हमहीं रामा नहिं पइये सब रामा हम नाहीं॥नित आनंद कालभय नाहीं गुरु शुकदेव समाधी । चरणदास निज रूप समाने यह तो समझ अगाधी ॥ १॥ निरन्तर अटल समाधि लगाई । ऐसी लगी टरै नहिं कबहूं करणी आश छुटाई॥काको जप तप ध्यान कौनको कौन करै अब पूजा। कियो विचार नेक नहिं निकसै हरि बिन और न दूजा॥मुद्रा पांच सहज गति साधी आलस आसन सोई । सब रस ब्रह्म मूल जब शोधा आप विसर्जन होई॥भूलो बन्ध मुक्ति गतिसाधन ज्ञान विवेक भुलाना । आतम अरु परमातम भूला सम भयो तत गल ताना ॥ अचल समाधि अन्त नहिं ताको गुरु शुकदेव बताई । चरणदासको खोज न पइये सागर लहरि समाई ॥ २ ॥

राग सोरठ—हो अविगति जो जान सोइ जानै । सबकी दृष्टि परै अविनाशी कोइ कोइ जन पहिचानै ॥ रेख जहां नहिं खींचि सकै रे ठहरै ना ह्याँ राई । चीतचितेरा ना सकै रे पुस्तक लिखा न जाई ॥ श्वेत श्याम नहिं राता पीरा हरी भाँति नहिं होई । अति असूंच अदृष्ट अकथ है कहि सुनि सकै न कोई ॥ सर्वसमें अरु सब देशनमें सर्व अंग सबमाहीं । कटै जलै भीजै नहिं छीजै हलै चलै वह नाहीं ॥

नहिं मोटा नहिं झीना कहिये नहिं सूक्षम नहिं भारी। बाला तरुणा वृद्धा नाहीं ना वह पुरुष न नारी॥ नहीं दूर नहिं निकट हमारे नहीं प्रगट नहिं गूझे। ज्ञान आंखकी पलक उघारो जब देखो रे सूझे॥ वासों उत्पति परलय होई वह दोऊते न्यारा। चरणदास शुकदेव दयासों सोई तत्त्व निहारा॥

राग मलार—साधो समुझो अलख अरूपा। गुप्तसों प्रकटसों परगट ऐसो है निजरूपा॥ भीजै नहीं नीरसों वह तन ताहि शस्त्र नहिं काटै। छोटा मोटा होय न कबहूं नहीं घटै नहिं बाढै॥ पवन कभी नहिं सोखै ताको पावक तेज न जारै। शीत उष्ण दुख सुख नहिं पहुँचै न वह मरै न मारै॥ इकरस चेतन अचरज दरशै जा सम तुल नहिं कोई। ता पटतर कोइ दृष्टि न आवै कहीं कही मुनि वोई॥ भीतर बाहर पूरि रह्यो है अण्ड पिण्डसों न्यारा। शुकदेवा गुरु भेद बतायो चरणहिं दासा वारा॥

राग परज—गुरु हमारे अलख लखाया हो। देखतही ऐसे गये जल नोन घुलाया हो॥ नखशिख ढूंढू आपको कहिं आप न पाया हो। तासहिं रामा ह्वै रहा हम मूल गवाँया हो॥ बरत करै हम होय तो सब नेम भुलाया हो। फल चाहन वारो गयो हरि हाथ बिकाया हो। ज्ञाता मिटि ज्ञानू मिटै अरु ज्ञेय मिटाया हो। शोच समझ सबही गई चरणदास न पाया हो॥

राग धनाश्री व विलावल व सोरठ।

साधो भाई यह जग योंसत नाहीं। मीन पहार समुदबिच सिरजा खेत अकाशमाहीं॥ जलकी पोट कोट धूवाँको अखिल अक्तको तीरसू। बांझको पूत शींग शश्शाको मृगतृष्णाको नीरसू॥ स्वप्नको भूप द्रव्य स्वप्नाको अरु जंगलको द्वारसू। गणिका शील नाम मृतनको नारिसों व्याहत नारसू॥ मावसको शशि रैनिको सूरज दूध नरनकी छाती। यह सब कहनि कहावनि देखी चीटी

ले भागी हाथी ॥ ऐसेहि झूंठ जगत सच नाहीं भेद विचारे पायो । चरणदास शुकदेव दयासों सांचहि सांच मिलायो ॥

राग रामकली—सतगुरु अक्षर मोहिं पढायो। लेखन लिखा न स्याहीसेती ना वह कागज मध्य चढायो ॥ ना लग मात न माथे बिन्दी अरुण पीत नहिं काला। एँडा वेंडा टेढा नाहीं न वह आल जँजाला॥ताको देखि थकी सब करणी सबही साधन भागे । सिद्धें भई भोरके तारे मुक्ति न दीखै आगे ॥ जाके पढे पढन सब छूटे आशा पोथी फारी । मैं तो भया कर्मका हीना कहे सरस्वति ठाढी ॥ गुरु शुकदेव पढायो अक्षर अगम देश चटशाला।चरणदास जब पण्डित हूये धारि तिलक अरु माला ॥१॥वह अक्षर कोइ विरला पावै।जा अक्षरके लाग न विन्दी सतगुरुसे नहिं सेन बतावे ॥ क्षरही नाद वेद अरु पण्डित क्षर ज्ञानी अज्ञानी । बावन अक्षर क्षरही जानौ क्षरही चारौं बानी॥ ब्रह्मा शेष महेश्वर क्षरही क्षरही त्रयगुण माया।क्षरही सहित लिये अवतारा क्षर होंतक जहँ काया ॥ पांचौ मुद्रा योग युक्ति कर क्षरही लगै समाधा । आठौ सिद्धि मुक्तिफल क्षरही क्षरही तन मन साधा॥रवि शशि तारामंडल क्षरही क्षरही धरणि अकासा॥ क्षरही नीर पवन अरु पावक नरक स्वर्ग क्षर वासा ॥ क्षरही उत्पति परलय क्षरही क्षरही जाननहारा । चरणदास शुकदेव बतावैं निरअक्षर है सबसों न्यारा ॥ २ ॥

राग भैरव—सकल निरंतर पाया हरिको सकल निरंतर पाया माटी भाँडे खाँड खिलौने ज्यों तरुवरसें छाया॥ज्यों कंचनमें भूषण राजै मूरत दर्पणमाहीं । पुतली खम्भ खम्भमें पुतली दुतिया तो कछु नाहीं॥ज्यों लोहेमें जौहर परगट सूतहि तानै बानै । ऐसे राम सकल घटमाहीं बिन सतगुरु नहिं जानै ॥

मेंहँदीमें रंग गन्ध फुलनमें ऐसे ब्रह्म रु माया । जलमें पाला पालेमें जल चरणदास दरशाया ॥ ३ ॥

राग ईमन-सखी री हिलमिल रहिया पीव । पुष्प मध्य ज्यों गंध विराजै पिंड ज्यों माहीं जीव ॥ जैसे अग्नि काठके अंतर लाली है मेंहँदीव।माटीमें भाँडे हैं तैसे दूध मध्य ज्यों घीव॥शुकदेवा गुरु तिमिर नशायो ज्ञान दियो कर दीव।चरण दास कहे परगट दरशो अमर अखंडित सीव॥१॥साधो अचरज निर्गुण रामका।ना मर्याद ठिकाना नाहीं नाहीं द्वारा धामका। मात पिता कुल गोत न वाके वेष न पुरुषा बामका.। रूप न रेख नहीं कछु किरिया लेश नहीं नामका ॥ श्रवण लोचन रसन नहिं नाशा त्वचा न चोला चामका । आदि न अन्त न अरध उरध नहिं ठिगना नहिं लाँबका॥देखा सुना कहा नहिं जाई नहिं धोला नहिं श्यामका । चरणदास शुकदेव सुझावै नहिं विनशे नहिं यामका ॥ २ ॥

राग सारंग-घट घटमें रमता रमि रह्यो । चेतन तजै भजै जल पाहन मूरख भ्रममें रह्यो॥एक अखण्ड रह्यो सर्व व्यापक लख चौरासी सम रह्यो । प्रगट भानु ऐसे हरि दरशै संपुटमें नहिं खम रह्यो । आपा जानि भूल फिर आपन नख शिखसों नहिं दम रह्यो।चरणदास शुकदेवहि रलगयो वचन बिलासन गम रह्यो ॥

राग मालश्री-तेरी गति अपरम्पार पार कैसे पइये हो॥योग युक्ति करि युगता हारे उनहूं सुधि नहिं पाई॥चित बुधि मनकी गमि जहँ नाहीं सुरति थकै थकि जाई॥नेति नेति कहि निगम पुकारें कहु कोउ कैसे पावै॥ध्यान न लागै ज्ञान न सूझै अनभयहू फिरि आवै॥निर्गुणरूप निरालंभ आसन केहि विधि लखि है

कोऊ । ब्रह्मा शेष महेश्वर थाके सकल शिरोमणि सोऊ ॥ वाणी शब्द रहित तुरियापद गुरु शुकदेव सुनायो । चरणहिं दास समझ सब बिसरी खोजत खोज हिरायो ॥१॥ वा बिन और न कोय वही गुलजारी रे ॥ जग फुलवारी फूलि रही है ना रंग अनंत । आदि वृक्ष ताकी सब लीला नितही रहत वसंत॥पाँच डार पँचरंग है रे शाखा बहुत विचार । अद्भुत गति कछु कहत न आवै फूले पुष्प अपार ॥ पात फूल फल सोहने रे ह्वै ह्वै छिपि छिपि जाहिं । निश्चल द्रुम इक रस रहै रे उत्पति परलय नाहिं ॥ विन सींचे बिन मूल को रे अचरज अधिक सुवास।जित तित खिलो शुकदेव है रे नहीं चरणहीं दास ॥ २ ॥

राग विहागरा—तेरे बहुत रूप बहु बानी । तूही एक अनेक भयो है जिन जानी जिन जानी ॥ रवि शशि विष्णु महेश्वर तूही तूही चतुर विनानी । ऋषि मुनि देवत सिद्धि तुही है तूही ब्रह्मज्ञानी॥तुम विन दूजो और न पइये गावत वेद पुरानी । कोउ कहै माया है दूजी तो वह कितसों आनी॥तू आकाश पवन अरु पावक तू धरती तू पानी । तीनों गुण तूहीसों निकसे तोहीमाहिं समानी ॥ दश औतार तुही धर आयो तुही इष्ट तू ध्यानी।तुही रास तुहिरास खिलइया तू ठाकुर ठकुरानी ॥ तूही गुरु शुकदेव विराजै चरणदास सिख मानी ॥ गुप्त प्रगट सब तूही तू है अद्भुत लीला ठानी॥१॥ यह सब एक एकही होई । जाके ऐसी निश्चय आवै जीवनमुक्ता सोई ॥ जैसे मनका डोर गुहे है काहू माला पोई।एकहि श्वास सकल घट व्यापक भूलो कहै जु दोई ॥ हमहूं वही वही जग सारा शिव ब्रह्मादिक वोई । एकहि ब्रह्म अचलअविनाशी और न दुतिया कोई॥जिन समझा तिन आनँद पाया बिन समझे दिया रोई ।चरणदास नहिं

हरिहीं हरि हैं सब में मैं में खोई ॥ २ ॥ जबतैं एक एक करि भाना।कौन कथै को सुननेहारा को है किन पहिंचाना ॥ तब को ज्ञानी ज्ञान कहाँ है ज्ञेय कहाँ ठहराना । ध्यानी ध्येय जहां नहिं पइये तहां न पइये ध्याना ॥ जब कहां बंध मुक्त भुगतइया काको आवन जाना। को सेवक अरु कौन सहायक कहां लाभ कित हाना ॥जब को उपजै कौन मरत है कौन करै पछिताना। को है जगत जगतको कर्त्ता त्रयगुणको अस्थाना॥ तू तू तू अरु मैं मैं नाहीं सबही दे बिसराना । चरणदास शुकदेव कहां हैं जो है सो भगवाना ॥ ३ ॥

राग केदारा व सोरठ—सो लखि हम निर्गुण झरि पाई।जहां न वेद कितेब पहुँचे नहीं ठकुराई॥ चारवर्ण आश्रम नहीं नहीं कर्म ना कोई । नरक अरु वैकुण्ठ नाहीं नहिं तन ताई ॥ प्रेम अरु जहाँ नेम नाहीं लगन ना लाई । आठ अंग जहाँ योग नाहीं नहीं सिद्धाई॥आदि अरु जहाँ अन्त नाहीं नहीं मध्याई। एक ब्रह्म अखंड अविचल माया ना राई ॥ ज्ञान अरु अज्ञान नाहीं नहीं मुकताई।चरणदास शुकदेव सम तहाँ हुई जरिजाई॥

राग सोरठ व नट व बिलावल ।

सो नैना मोरे तुरिया तत पद अटके । सुरति निरतकी गल नहिं सजनी जहां मिलनको लटके ॥ भूलो जगत बकत कछु औरै वेद पुराण न ठटके । प्रीति रीतिकी सार न जानै डोलत भटके भटके ॥ किरिया कर्म भर्म उरझेरे ए मायाके झटके । ज्ञान ध्यान दोउ पहुँचत नाहीं राम रहीसा फटके ॥ जग कुलरीति लोकमर्यादा मानत नाहीं हटके । चरणदास शुकदेव दयासों त्रैगुण तजिके सटके ॥

राग सोरठ—है कोई जानै भेद हमारा।सब हममें हम सबके माहीं मैं व्यापक मैं न्यारा॥ हम अडोल हम डोलत निशिदिन

हम सूक्षम हम भारी। हमहीं निरगुण हमहीं सरगुण हमहीं दश अवतारा॥ हमहीं एक बहुत हो खेले हमहीं सकल पसारा। हमहीं ज्ञान ध्यान पुनि हमहीं हमहीं धारणहारा॥ हमहीं आदि अन्त पुनि हमहीं हमहीं रूप अपारा। महाराज इस वार पार हैं हमहीं जग उजियारा॥ हमहीं गुरु शुकदेव विराजें हमहीं तेरे मह तारा। चरणदास घट हमहीं बोलें समझै समझनहारा॥

राग काफी—मैं कोइ अजब हूं मेरा अजब तमाशा जोर। मेरेहि पिण्ड खण्ड ब्रह्मण्डा में पूरण सब ठौर॥ मैं ब्रह्मा मैं विष्णु महादेव मैं कमला मैं गौर। मैं रवि चन्द्र इन्द्र इन्द्राणी मैं गर्जत घनघोर॥ मैं गुण तीनि पांच तत्त्व मैं हीं मैं दश दिशि चहुँ ओर। मैं निहरूप धरें नानाविधि निशिदिन करत किलोर॥ मैं गुप्ता मैं मुक्ता परगट मैंहीं भर्म झकोर। चरणदास मो विन नहिं रंचक दूजा कोई और॥

राग विहागरा—गुप्तमतेकी वात री जाने सोइ जानै। पशू ज्ञान अजमतको देखो अनभुस एकै सानै॥ चलनीकी गति सबकी मति है मनसें अधिक सयानै। गहि असार सारको डारै निश्चय बुधि नहिं आनै॥ हूं गूंगो जगको नहिं सूझै सैन नहीं कोइ मानै। कासों कहों अरु को सुनै सजनी कहूं तोको पहिचानै॥ सत्य ब्रह्मको जानत नाहीं मूरख मुग्ध अयानै। चरणदास कहैं समुझत नाहीं मोहूं फिरि फिरि झगरो ठानै॥१॥ सुनि हो मुक्त मुक्त कहूं तेरीविन पुराण जँजिर जरी है सबही गत सारग मिलि घेरी॥ तैं तो मुक्ति बहुतकी कीन्हीं जिन पापन डर झेरी। बन्धन सकल छुराय काटूं जो आधीन होय तू मेरी॥ स्वर्ग पताल ठौर नहिं तोको डोलत फेरी फेरी। अचल पुरुषसों जाय मिलाऊं तोहि जानि साधनकी चेरी॥ शुकदेव गुरु जब किरपा कीन्ही

नृ नाहीं कहुँ है री। चरणहिं दास वासना तजिकै आपहि आप करि है निबेरी ॥ २ ॥

राग विहागरा व बिलावल-अब हम ज्ञान गुरुसे पाया। दुविधा खोय एकता दरशी निश्चय ह्वै घर आया॥ हिरदै शुद्ध हुआ बुधि निर्मल चाह रही नहिं कोई॥ना कछु सुनौं न पढ़ूं बूझूं उलट पलटि सब खोई॥समस भई जब आनँद पाये आतम आतम सूझा। सूधा भया सकल मन मेरे नेक न कहूं अरूझा॥ मैं सबहुनमें सब मोहूंमें सांच यही करि जाना। यही वही है वही यही है दूजा भाव मिटाना॥ शुकदेवाने सब सुख दीन्हें तिरपत होय अघायो। चरणदास निकमा नहिं रंचक परमातम दरशायो॥

राग विलार विहागरा-गुरु बिन कौन डुबोवनहारा। ब्रह्मसमुद्रमें जो कोइ बूडो छुटि गये सकल विकारा॥सिन्धु अथाह अगाध अचल है जाको वार न पारा॥वाकी लहरि मिटत वाहीमें कौन तरे को तारा॥त्रयगुण रहत सदाही चेतन ना काहूं उनहार। निराकार आकार न कोई निर्मल अति निर्धारा॥अकरी अलख अरूप अनादी तिमिर नहीं उजियारा॥तामें अण्डदिपत ऐसे करि ज्यों जल मध्ये तारा॥काल जालभय भूती नाहीं तहां नहीं भ्रमभारा॥चरणदास शुकदेव दयासों बूडि गये ही पारा॥

राग सोरठ व आसावरी-सतगुरु निजपुर धाम बसाये। जितके गये अमर ह्वै बैठे भवजल बहुरि न आये॥ योगी योग युक्ति करि ध्याने ध्यानी ध्यान लगावैं। हरिजन गुरुकी दया बिना यों दृष्टि नहीं दरशावें ॥ पण्डित मुण्डित मुंडित हूंठे पढि सुनि वेद पुराने। जासों वै सब पायो चाहैं सो वै नेति बखाने॥जंगम यती तपी संन्यासी सबही वह दिशि धावै।

सुरति निरतिकी गम जहँ नाहीं वे कहो कैसे पावें ॥ देश अटपटा बेगम नगरी निगुरे राह न पाया। चरणदास शुकदेव गुरूने किरपा करि पहुँचाया ॥

राग सोरठ—हमारे गुरु हरि नगर दिखाया हो। उलटी वाट वाट जहँ नाहीं निजपुर वास बसाया हो॥ चन्द्र न सूर गगन नहिं तारे राति दिवस नहिं पाया हो।नहीं तिमिरि जहँ चांदनि नाहीं नहीं धूप नहिं छाया हो॥मनसों अगम सुगम नहिं बुधिसों अनभय अन्त न लाया हो । और कहो कैसे करि पावै निगम नेति जहि गाया हो ॥ है प्रत्यक्ष उदय सूरज ज्यों संपुट नाहिं छिपाया हो । बिन गुरु गमके अंजन आँजे दृष्टि नहीं दरशाया हो॥जनक जहाँ शुकदेव विराजैं चरणदास मिलि धाया हो॥ जगकी व्याधि लगन नहिं पाई किरपा करि पहुँचाया हो॥१॥ हमारे गुरु मारग बतलाया हो । आन देवकी सेवा त्यागी अज अविनाशी ध्याया हो॥हरि पूरण परशो निश्चयसों छांडो झूठी माया हो । इकरस आतम नितही जानौ क्षणभंगी है काया हो॥ चाहीं मुक्त करै तन किरिया भर्म अधिक भर्माया हो । वोकरि पेड बबूल शूलके आँब कहो किन पाया हो॥अपना खोज किया नहिं कबहूं जल पाहन भटकाया हो । जैसे फल सेवत सेमर को कीर अधिक पछिताया हो॥ज्ञान पदारथ कठिन महानिधि बिन भेदी किन पाया हो । चरणदास घट सोहं सोहं तासें उलटि समाया हो ॥ २ ॥

राग काफी—इन नैनन निरकार लहा । कहन सुननकी कौन पतीजै जान अजान है सहज रहा ॥ जित देखो तित अलख निरंजन अमर अडोल अबोल महा । ज्योति जगत बिच झिलमिल झलकै अगम अगोचर पूरि रहा ॥ अलख लखा

जब वेगम हूवा भर्मकोट जब तुर्त ढहा । सर्वमई सब ऊपर गाजै शून्य स्वरूपी ठोस ठहा ॥ जीवनमुक्त भया मन मेरा निर्भय निर्गुण ज्ञान गहा । गुरु शुकदेव करी जब किरपा चरणदास सुखसिंधु वहा ॥

राग आसावरी–जबसों मन चंचलघर आया। निर्मल भया मल गये सगरे तीरथ ध्यान जुन्हाया॥निवासी ह्वै आनँद पाये या जगसों मुख मोडा।पांचो भई सहज वश मेरे जब इनकारस छोडा॥भयसब छूटे आवको लूटै दूजी आश न कोई। सिमिटि सिमिटि रह अपने माहीं सकल विकल नहिं होई॥निजमन हूवा मिटिगा दूवा को वैरी को मीता । बंधमुक्तका संशय नाहीं जन्म मरणकी चीता॥गुरु शुकदेव भेव सोहिं दीयो जबसों यह मति साधी । चरणदाससों ठाकुर हूये छुटि गये वादविवादी ॥१॥ हमनों आतम पूजा धारी । समझि समझि करि निश्चय कीन्हीं और सबन पर भारी॥और देवल जहुँ धुँधली पूजा देवत दृष्टि न आवै॥हमरा देवत परगट दीखै बोलै चालै खावै॥जित देखौं नित ठाकुरद्वारे करौं जहां नित सेवा।पूजाकी विधि नीके जानौं जासों परसन देवा ॥ करि सन्मान स्नान कराऊं चन्दन नेह लगाऊं॥मीठे वचन पुष्प सोइ जानों है करि दीन चढाऊं॥परसन करिकरि दर्शन पाऊं वार वार बलि जाऊं॥चरणदास शुकदेव बतावै आठ पहर सुख पाऊं॥२॥ये मन आतम पूजा कीजै। जिननी पूजा जगके माहीं सबहुनको फल लीजै ॥ जो जो देही ठाकुरद्वारे तिनमें आप विराजें ।देवलमें देवत है परगट आछी विधिसों राजें॥ त्रय गुण भवन सँभारि पूजिये अनरस होन न पावै जैसको तैसा ही परसों प्रेम अधिक उपजावै॥और देवता दृष्टि न आवै धोखेको शिर नावै । आदि सनातन रूप सदाही

मूरख ताहि न ध्यावै॥ घट घट सूझै कोइ यक बूझै गुरु शुकदेव बतावैं । चरणदास यह सेवन कीन्हें जीवन्मुक्त फल पावैं ॥३॥

राग विहागरा–सब जग पांच तत्त्वका उपासी । तुरियातीत सबनसों न्यारा अविनाशी निर्वासी ॥ कोई पूजे देवल मूरति सो पृथ्वीतत्त्व जानौ।कोई न्हावे पूजे तीरथ सो जलको तत्त्व मानौं ॥ अग्निहोत्र अरु सूरज पूजा सो पावक तत्त्व देखा । पवन खेंजि कुंभकको राखे वायुतत्त्वको लेखा ॥ कोई तत्त्वाकाशको पूजे ताको ब्रह्म बतावे । जो सबके देखनमें आवे सो क्यों अलख कहावे ॥ परमतत्त्व पाँचोंसे आगे गुरु शुकदेव बखानै । चरणदास निश्चय मन आनो विरला जन कोई जानै॥

राग जयकरी–ब्रह्म अरूप धरे बहुरूप कहो कोउ कैसो स्वरूप कहो।सबमें है अरु सबसे न्यारा कोई भेद अनूप लहो॥ कहुँ कहुँ मूरख गुंगभयो है कहुँ कहुँ वक्ता वेद पढै । कहुँ कहुँ राव रंक दुख सुख है कहुँ कहुँ भोगी भोग करै॥ कहुँ कहुँ राधे रूप बनावे कहुँ कहुँ मोहन रास रचै । मुडि मुडि जावे फेरि मनावे प्यार प्रीतिके चाव चहे॥ कहुँ कहुँ सूरति मोहनि मूरति कहुँ कहुँ लालन फंद परो।कहुँ कहुँ मधुवा कहुँ कहुँ प्याला कहुँ कहुँ पीवन प्रेम भरे ॥ कहुँ कहुँ ज्ञानी नानावानी कहूं भरममें भूलि रहो।शुकदेवा गुरु हो समझावै चरणहिदासा चरण गहे॥

राग मंगलवासु व विलावल ।

कर्म करि निष्कर्म होवै फेरि कर्म न कीजिये।भूलिकै कोई कर्म साधे उलटि कर्म न दीजिये॥ कर्म त्यागै जगे आतम यह निश्चय करि जानिये। जब निर्भय पद सुलभ पावै सांच हियमें आनिये ॥ सांच हियमें राखि अवधू नाम निर्गुण नित जपौ।अग्नि इन्द्रिय कर्म लकडी पंच अग्नी अस तपौ॥जैसे टूट

गहनो खोज मेंटे होय सोना अति सुखी।ऐसे योग भक्ति वैरा-ग्यनेती कर्म काटै गुरुमुखी॥ जासों मिटै आपा आप सहजै ब्र-ह्मविद्या ठानिये।गुरू शुकदेव युक्ति भाषै चरणदास पिछानिये॥

राग सोरठ—साधो भर्मी यह संसारा। गतमति लोक बड़ाई उरझे कैसे हो छुटकारा॥ भर्म पडे नानाविधि सेती तीरथ वर्त अचारा। देह कर्म अभिमानी भूले छूँछ पकारि तत डारा॥ योगी योग युक्ति करि हारे पण्डित वेद पुराना। पट दर्शन पग आप पुजावै पहिरि पहिरि रँग बाना॥ जानत नाहिं आप हम को हैं को हैं वह भगवाना। को यह जगत कौन गति लागै समझै ना अज्ञाना॥ जा कारण तुम इत उत डोलौ ताको पावत नाहीं। चरणदास शुकदेव बतायो हरि नारायणमाहीं॥

हेली—यह अचरजकी बात हेली कौन सुनै कासों कहूं। दूर हुतो जब चाव थीरी अरी हेली अब नहिं छोडै साथ॥ जहँ देखौं तहँ सांवरो री अरी हेली तन मन रहो समाय। अन्तर्यामी एक है द्वितीया ना ठहराय॥ मत भटक भय भर्म मेरी अरी हेली उलटि आपको देख। तोहीमें हरि बसत है गावत वेद विशेख॥ जब तू ऐसी होयगी री अरी हेली तब समझैगी बात। गूँगेको स्वप्नो भयो यह सुख कहो न जात॥जो चाहै हरिसों मिलो री अरी हेली गुरु शुकदेव मनाव।चरणदास सखीने कह्यो आप आपमें पाव॥१॥ हरि पाय फल देख हेली पावतही खोई गई।जात अटक कुल खो गये री अरी हेली खोये वरण अरु वेप॥जन्म मरण सब खोय गयेरी अरी हेली बंधमुक्त गये खोय। ज्ञान अज्ञान न पाइये नेम धर्म नहिं होय॥लाज गई अरु भय गये री अरी हेली अरु साथहि गई उपाधि।आशा अरुकरणी गईखोये वादविवाद॥

में नाहीं हरिमें रहे री अरी हेली तू दौरत हरि ओट । पावेगी जब जानि है हरि पावनके खोट ॥ गुरु शुकदेव सुनाइया री अरी हेली चरणदास मन शोच। सब बातनसों जायगी री रहै न नेक खोज ॥ २ ॥ वह घर कैसा होय हेली जितके गये न बाहुरै। अमरपुरी जासों कहै री अरी हेली मुक्तधाम है सोय॥ विकट घाट वा ठौरको री अरी हेली शठ नहिं पावै पंथ। गुरु मुख ज्ञानी जाहिं हैं हरिसों सन्मुख संत॥ त्रयगुण मत पहुँचै नाहीं री अरी हेली छहों ऋतु ह्वां नाहिं । रवि शशि दोऊ ह्वां नहीं नहीं धूप नहिं छाहिं॥ अवधि नहीं काया नहीं री अरी हेली कलह कलेश न काल। संशय शोक न पाइये नहिं मायाको जाल ॥ गुरु शुकदेव दया करैं री अरी हेली चरणदास लहै देश । विन सतगुरु नहिं पावई जो नानाकर भेष ॥

हेला—दृष्टि उठाके देख हेला ब्रह्म अनादि अरूप है। आदि नहीं अन्तौ नहीं रे अरे हेला आदि सनातन एक। नहिं धौला काला नहीं रे हेला हरा पीत नहिं लाल । तीनों गुणसे है परे नहिं पुष्प नहिं बाल॥ शस्तर छेदि सकै न रे अरे हेला पावक स-कै न जारि। नीर भिजोय सके नहिं ताही न व्यापै बारि॥ रेख जहाँ नहिं खिंचि सकै रे अरे हेला राई ना ठहराय। लेप जहाँ नहिं चढि सकै सकै नहीं कोइ पाय ॥ नहीं दूर निकटौ नहीं रे अरे हेला नहिं प्रगट नहिं गूप। गुरु किरपासों पाइये सुन्दर बहुत अनूप॥ है अडोल डोलै नहीं रे अरे हेला है अबोल नहिं बोल । देश कालसों रहित है और कहा कहुँ खोल ॥ जैसा था सोई आज है रे अरे हेला नया पुराना नाहिं । जासों न जग है भरो जग वाहीके माहिं ॥ शक्ति बनी लीला बनी रे अरे हेला बने नाम बहुरूप । त्रयदेवासे बहुत हैं इन्दरसे बहु भूप ॥ चन्द्र बने

सूरज बने रे अरे हेला बने पिण्ड ब्रह्मण्ड । सब कुछ आपहि है रह्यो निर्मल अचल अखण्ड ॥ जनक दियो शुकदेवको रे अरे हेला उन मोको कहिदीन । दरश भयो चरणदासको सदा रहौं लवलीन ॥१॥ अचरज अलख अपार हेला वाकी गति नहिं पाइये । बहु निखेद जोपै करे रे अरे हेला तौ जावैगा हार॥ वाणी थकि बुधिहू थकै रे अरे हेला अनभय थकि थकि जाय । ब्रह्मादिक सनकादिकहू नारद थकि गुण गाय ॥ वेद थके अरु व्यासहू रे अरे हेला ज्ञानी थके अरु ज्ञान।शंकरसे योगी थके करि करि निर्मल ध्यान ॥ बहुतक कथि कथिही गये रे अरे हेला नेक न निवटी बूझ।वाचक ज्ञानी कहत है हमने पायो सूझ ॥ पांचों इंद्रियसों लखे रे अरे हेला ताको सांच न मानि।जो जो इनसों देखिये तिनकी निश्चय हानि॥गुरु शुकदेव सुनावई रे अरे हेला समझ चरणहीं दास।अपनेही परकाशसे आप रह्या परकास ॥२॥

राग हिंडोलना—झूलत गुरुमुख संत अलख हिंडोलने ॥ नाभि भ्रुकुटी खंभ रोपे सोहं डोरी लाय । सुरति पटरी बैठि सजनी क्षण आवै क्षण जाय ॥ मन मनसा दोउ लगे झूलन धारणा लै संग । ध्यान झोके देत सजनी भलो लागो रंग ॥ सखि सहेली सिमिटि आई पींग पींगन नेह । बूँद आनँद सब भिगोई सघन वरसे मेह ॥ चार वाणी खडी गावैं महा रँगीली नार । भुक्ति चारों मालिनी जहँ गुहि गुहि लावैं हार ॥ त्रिगुण बकुला उडन लागे देखि वादल लै । संग पियके सदा झूलै ताते लगै न भै।चरणदासको नित झुलावैं ईश झुलैं शुकदेव। शिव सनकादिक नारद झूलैं करि करि गुरुकी सेव ॥

अथ सर्वअंग ।

राग मंगल–मन रोगी भयो पिंग कि कुबुधि विकारसों । वाढी व्यथा अपार लोभके भारसों ॥ कर्म्म भरो मतिहीन छीन छलसों भयो । पांच पचीसों घेरि मोह मदने दह्यो ॥ कैसे यह दुख जाय कि पूँछनको चल्यो । तब पूरण गुणवन्त वैद सतगुरु मिल्यो॥कर गहि कियो विचार कह्यो समझायकै। जो कछु तेरे रोग सो देहुँ वतायकै ॥ महापापकी ताप चढी तोहिं धायकै । संशयको सन्निपात मिल्यो है जायकै ॥ विपय विपम ज्वर रह्यो जु हिये समायकै । तृष्णाकी बहु प्यास रही मन भायकै ॥ सतसंगतिको पक्ष कवौं नाहीं कियो । इन्द्रिनके रस रोग विगरि सवही गयो॥कुसंगत संग संग्रहणी जियमाहीं भई । ममताको मल वढो भूख ताते गई ॥ काम क्रोधको कुष्ट सकल तनु छायकै । शोक शूलको मूल कलेजे आयकै॥ माया पवन झकोरसों सूजन बहुत है।त्रयगुणके त्रयदोप वात वह को कहै॥चिन्ताहीकी चीस उठै दिन रातही॥अति निन्द्रासे नींद गई ता साथही॥शीश गुमान पिराय दरद हिंसा घनो । कलह कल्पना भर्मसों रहतो उनमनो॥औरो वडी उपाधि वढै तेरी देहमें । भीजि रह्यो है शरीर पसेव सनेहमें॥इन रोगनकी औपध देहुँ सुनायकै । भिन्न भिन्न में कहौं तोहिं समुझायकै॥ कर्म्म करंजवा तोडिकै सत्य गिलोय लेजतहीकी अजवायन आनि गिलोयदे ॥ चित्त चिरैता न्याय पति पीपर भली । नेम नोन सेंधवकी नीकीसी डली ॥ हितके वर्तनमाहीं तिन्हैं भिजोयके । परमप्रेम जल तामें डारि समोय दे ॥ शील शिलापर पीसो छानि उमंगसों । पीवतही सब रोग नशैंगे अंगसों ॥ शुद्ध सुदर्शन चूरण हैगो स्वादही । ताके पाये जाय

जगतकी व्याधही ॥ दया क्षमा सन्तोष यही माजून है । अधिक आनंद तत्त्व पदको लहै ॥ गुरु शुकदेव बतावै औषध न्यार है । चरणदास जो खाय कष्ट कोई ना रहै ॥

राग धनाश्री–मनसें दीरघ भये विकारा । सतगुरु साहब वैद मिले बिनु कटै न रोग अपारा॥त्रयगुणके त्रय दोष पगो है काम क्रोध ज्वर जारा । तृष्णा वायु उठी उर अन्तर डोलत ज्ञानहि हारा ॥ विषयवासना पित कफ लागौ इन्द्रिनके सुख सारा॥सत्संगति रस करवा लागे करत न अंगीकारा॥सतपुरुषन-को कहा न मानै शील क्षमा नहिं धारा॥रसना स्वाद तजौ नहिं मूरख आपनपो न सँभारा॥चरणदास शुकदेव मिले जब औषध ज्ञान विचारा॥तन मनको सब रोग मिटायो आवागमन निवारा॥

राग केदारा–भाई रे विषमज्वर जग व्याधि।गुरू हमारो दई औषध खाय रहनी साधि ॥ शुद्ध चूरण है सुदरशन निबल लखि सोहिं दीन । खात तनके कष्ट नाशैं रोग सब ह्वै क्षीण॥ ज्ञान योग रु भक्ति त्रिफला धारणा नेपाल॥रहे सतसंगति मध-नहिं आश लगै न व्याल॥कनक कामिनि पंथ बतायो भूलि कर न अहार॥अति अजीरण होत इनते बढत विकट विकार॥ चरणदास शुकदेव कहिया औषधी निज सोय । विषम वेदन होय सारी जाहि क्षणसें खोय ॥

गीत सावनके गानेका–सखी सजनी हे तेरो पिया तेरे पास॥अरी बौरी इत उत भटकी क्यों फिरै जी सखी सजनी हे सुरति निरति कर देख॥अरी बौरी अपने महल रँग मानिये जी सखी सजनी हे मान अहं सब खोय। अरी बौरी यह यौवन थिर ना रहै जी सखी सजनी हे बालम सन्मुख होय ॥अरी बौरी पिछली अरु सब खोइये जी । सखी सजनी हे

पिया मिलनको री साज ॥ अरी बौरी न्हाय शिंगार बना-इये जो सखी सजनी हे चितचौकी धराय । अरी बौरी नायन सुमति बोलाइये जी । सखी सजनी सत्चरचा अग्नि जराव॥ अरी बौरी नीर गरम करि न्हाइये जी सखी सजनी हे योग उबटनो लगाव॥अरी बौरी कर्मको मैल उतारियेजी सखी सजनी हे करणी कँगही बहाव॥अरी बौरी वेणी सुक्ति गुथाइ-येजी सखी सजनी हे गुरुके चरण चित लाव।अरी बौरी सत-संगति पग लागियेजी॥सखी सजनी लाज सिंदूर निकासी। अरी बौरी खोलि शृंगार बनाइयेजी सखी सजनी हे नवधा भूषण धार॥अरी बौरी जासों पिया रिझाइयेजी सखी सजनी हे प्रीतिको काजल आँज॥अरी बौरी प्रेमकी मांग सँवारिये सखी सजनी हे बुद्धि बेसरि सजिलेहि । अरी बौरी पान विचारि चबाइये जी सखी सजनी दयाकी महदी लगाव॥अरी बौरी सानो रंग न उतरैजी सखी सजनी हे धीरज चूनरि लाल।अरी बौरी नखशिख शील शृंगारियेजी सखी सजनी हे काम क्रोध तजि लोभ॥अरी बौरी मोहपीहरसों जिन करौजी सखी सजनी हे पांच सहेली साथ । अरी बौरी इनको संग न लीजियेजी सखी सजनी हे चालो पियाकेरे पास ॥ अरी बौरी सुखमन बाट सुहावनी जी सखी सजनी हे गगनमण्डल पद धार ॥ अरी बौरी पिय मिलैं दुख सब हरैं सखी सजनी हे निर्गुण सेज बिछाव । अरी हिलि मिलिके रँग मानिये जी सखी सजनी हे पावैगी अटल सुहाग ।। अरी बौरी अजर अमर वर निर्मलेजी॥सखी सजनी हे गुरु शुकदेव अशीश अरी बौरी चरणदास मनसा फलै जी॥१॥ भागी साथन हे इह झूलै री मत भूल॥अरी हेली भर्म या देशकी जी भागी साथन हे इह झूलै री मत भूल॥अरी हेली भर्म या देशकी जी भागी साथन

है । वदला माया कोरी रूप अरी हेली कुमति वूँद जित तित परैजी भागी साथन है॥ कर्म वृक्षकी वेला अरी हेली वारी फल लगि विष भरैजी भागी साथन है। दुर्मति हरी हरी दूव अरी हेली छलरूपी फूले फूल हैं जी भागी साथन है॥ त्रयगुण वोलत मोर अरी हेली दम्भ कपट वकुला फिरैजी भागी साथन है। पाप पुण्य दोउ खम्भ अरी हेली नाक स्वर्ग झोटा लगैजी भागि साथन है॥ मैं मेरी वँधी डोर अरी हेली तृष्णा पटरी जित धरीजी भागी साथन है॥ झूलत चावहि चाव अरी हेली नर नारी सव झुलईजी भागी साथन है॥ तपसी योगी गये झूलअरी हेली फल चाहत अरु कामनाजी भगी साथन है॥ आशा झुलावन नारि अरी हेली पांच पचीस मिलिगवाइँजी भागी साथन है॥ या जगमें ऐसी ऐसी झूल अरी हेली चरणदास झूलत वचैजी भागी साथन है। इत तजि उतकोरी चाल अरी हेली अमर नगर शुकदेवजी ॥ २ ॥

राग वरवा—साधों री संगति भँवरा दुर्लभ पइये लीजैजीतन मन वेंचि भौंराजी । जी मानै साधोंरी संगत भँवरा प्यारीही लागै । आदि अनादि भवँरा कौनै लखावै अपने सद्गुरुजी संतोष भवँराजी ॥ जी मानै नरक निवारण सतगुरु प्यारेही लागै । आपसकी चरचा भवँरा कौनै सुनावै अपने गुरुभाई जी संतोष भवँराजी ॥ जी मानै गुरुका तौ छौना भई या प्यारोही लागै ॥ आछे आछे लक्षण भवँरा कौन जु लावै अपने रहनीजी सन्तोष भवँराजी ॥ जी मानै कर्म छुटावन रहनी प्यारीही लागै आछे आछे परचा भवँराजी कौन दिखावै अपनी युक्तिजी सन्तोष भवँराजी॥ जी मानै काया जितावन करणी प्यारीही लागै।आछीर वाणी भवँरा कौन उठावै अपने अनभै संतोष भवँराजी ॥ जी मानै वुधिकी तौ मंजन अन-

में प्यारी लागे चरणदासको तुरिया भवँरा कौने वसावे ॥ अपने शुकदेवजी सन्तोष भवँराजी । जी माने सिरका तौ छत्तर शुकदेव प्यारोही लागे ॥

राग बिलावल—अजब फकीरी साहबी भागनसों पइये।प्रेम लगा जगदीशका कछु और न चहिये ॥ राव रंकको सम गिने कछु आशा नाहीं।आठ पहर सिमटे रहैं अपनेही माहीं ॥ वैर प्रीति उनके नहीं नहीं वाद विवादा।रूठेसे जगमें रहैं सुनै अनहद नादा॥जो बोलें तौ हरिकथा नहिं मौनै राखैं।मिथ्या करुवा दुर्वचन कबहूं नहिं भाखैं ॥ जीव दया अरु शीलता नख शिखसों धारैं।पांचौं चेले वश करैं मनसों नहिं हारैं॥दुख सुख दोनोंके पर आनँद दरशावै।जहां जाय अस्थल करैं माया पवन न जावै॥ हरिजन हरिके लाडिले कोई लहै न भेवा।शुकदेव कही चरणदाससों करि तिनकी सेवा॥१॥ऐसा हो दरवेशही जगको बिसरावै। ईमान सबूरी सांचसों सोई बकसा जावै ॥ जन जर और जमीनको दिलमें नहीं लावै । फिक्रा फकीरीको बुरा वह जिक्र छुटावै॥फंकाकेका गुण यही राजक करै यादा। काफ कनायत सुख बना आनन्द अगाधा॥रे रयाजत बलवान है हरिको अपनावै।आखिरको दीदारही निश्चय करि पावै॥एजिदको धारे रहै रहै सबसों नीचा।शुकदेव कही चरणदाससों पावै पद ऊंचा॥ ॥२॥ वह वैरागी जानिये जाके राग न दोप । निर्बंध ह्वै जगमें फिरै चाहै सिद्ध न मोक्ष॥ पांचनको एकै करै आनहदमें रोका त्रय गुणते ऊपर बसै जहां हर्ष न शोक ॥ मन मूंडै तन साधकै बाधा सब डार । तत्त्वतिलक माथे दिये शोभा अपरम्पार ॥ माला श्वास उसाँसकी हिरदय अस्थान।अलख पुरुषसों नेहरा त्रिकुटी मध्ये ध्यान॥ काम क्रोध मोह लोभ ना यही नेम अ-

१ संतोष ।

चार । शुकदेव कही चरणदाससों करे ब्रह्म विचार ॥ २ ॥

राग सोरठ व बिलावल—जो नर इतके भये न उतके।उतको
प्रेम भक्ति नहिं उपजी इत नहिं नारी सुतके ॥ घरसों निकसि
कहा उन कीन्हों घर घर भिक्षा मांगी।वाना सिंह चाल भेंडन-
की साधु भये भक्ति स्वांगी॥तन मूडा पै मन नहिं मूडा अन-
हद चित नहिं दीन्हा॥ इन्द्रिय स्वाद मिलै विषयनसों बक बक
बक बक कीन्हा ॥ माला करसें सुरति न हरिसें यह सुमिरण
कहु कैसा । बाहर भेष धारके बैठे अन्तर पैसा पैसा॥हिंसा अ-
क्रम कुबुधि नहिं छोडी हिरदय साँच न आया।चरणदास शु-
कदेव कहत हैं वाना पहिरि लजाया ॥

राग सोरठ—समझ रस कोइक पावे हो।गुरुबिन तपन बुझै
नहिं प्यासा मर जावे हो॥बहुत मनुष ढूंढत फिरैं अँधरे गुरु सेवै
हो ॥ उनहूंको सूझ नहीं औरनकहूँ देवै हो ॥ अँधरेको अँधरा
मिला नारीको नारी हो । वां फल कैसे होयगा समझै न अनारी
हो ॥ गुरु शिष्य दोउ एकसे एकै व्यवहारा हो । गये भरोसे
डूबिके वे नरक मँझारा हो ॥ शुकदेव कहै चरणदाससों इनका
मन पूरा हो।ज्ञानमुक्ति जब पाइये मिलै सद्गुरु पूरा हो ॥

राग जैजैवन्ती—गुरु बिन ज्ञानी नहीं तिमिर नशावै । साईं
भटकत फिरैं लोई जल और पाहन सोई बात नहीं बूझै कोई
तिनको मर धावै॥देवी और देव पूजै जहां कछु नाहीं सूझै फेरि
फेरि जोवै खोज तहां नहीं पावै ॥ वैदकको भेद ठानै ज्योतिष
विचार जानै काहूकी कही न मानै करै मन भावै ॥ भूत टो-
ना जादू सेवै प्रभुको न नाम लेवै भक्तिमें न चित देवै गुण
नहिं गावै।श्रीशुकदेव कहै चरणदास होय रहै सोई मुक्तिधाम
कहै आपा जो उठावै ॥

राग गौरी—सब जग भर्म भुलाना ऐसे । ऊंटकि पूंछसों ऊंट बँध्यो ज्यों भेड़ चाल है जैसे॥खरका शीक भूंस कूकुरकी देखा देखी चाली । तैसे कलुआ जाहिर भैरों सेढ मशानी काली ॥ गाँव भूमि हितकरि धावे जाय वाही दौरो।मढी सरवर इष्ट धरत हैं लोग लोगई बौरे॥राखे भाव श्वान गर्दभको इनको ल्याय जिमावैं । ढेढ चमारनको शिर नावें ऊंची जाति कहावें ॥ दूध पूत पाथरसों मांगें जाके मुख नहिं नासा । लपसी पपडी ढेर करत हैं वह नहिं खावे मासा ॥ वाके आगे बकरा मारैं ताहि न हत्या जानें । लै लोहू माथेसों लावैं ऐसे मूढ अयानें ॥ कहें कि हमरे बालक जियावो बडी आयुर्बल दीजै॥ उनके आगे विनती करतें अँसुवन हिरदय भीजै॥ भोये भरडके पग लागैं साधु सन्तकी निन्दा। चेतनको तजि पाहन पूजै ऐसा यह जग अन्धा ॥ सत्संगतिकी ओर न झाँकै भक्ति करत सकुचावैं । चरणदास शुकदेव कहत हैं क्यों न नरकको जावें ॥ १ ॥ अरे नर क्या भूतनकी सेवा । दृष्टि न आवे मुख नहिं बोले ना लेवा ना देवा ॥ ज्यहि कारण घी ज्योति जलावैं बहु पकवान बनावैं । सो खरचैं तू अधिक चावसों वह स्वप्ने नहिं खावें ॥ राति जगावैं भोपा गावें झूठे मूड हलावैं। कुटुँब सहित तोहि पैर परावैं मिथ्या वचन सुनावें ॥ ताहि भरोसे जन्म गवाँवै जीवत मरत न साथा । वड भागन नर देही पाई खोवै अपने हाथा॥चारि वरणमें मेली बुधिका ऊंच नीच किन होई । जो कोई झूठी आशा राखै अगत जायगा सोई ॥ ताते सत विश्वास टेक गहु भक्ति करो हरिकेरी । चरणदास शुकदेव कहत हैं होय मुक्ति गति तेरी ॥ २ ॥

राग बिलावल—सब सुखदायक हैं हरि मूरख नहिं जानें ।

मनसे धरि धरि कामना औरनको मानै ॥ ये जी जो चाहै सन्तानको जप लालविहारी । सुन्दर बालक होहिंगे घरके उजियारी ॥ जो चाहे तू धन घना सेव कृष्ण मुरारी । साखि सुदामाकी सुनो दई विभव अपारी ॥ जगत बडाई जो चहै सुमिरो यदुनाथा । नीच बहुत ऊंचे भये जग नायो माथा ॥ जो सिधहु वोही चहै करि हरि हिय ध्याना । सिद्धि परापत होहिगी चढि है परमाना ॥ चरणदास हूवो चहै भजि ले भगवाना । कहै गुरु शुकदेवजी होय मुक्त निदाना ॥

राग विहागरा—साधो निन्दक मित्र हमारा । निन्दकको निकटही राखौं होन न देऊं न्यारा ॥ पाछे निन्दा करि अघ धोवै सुनि मन मिटै विकारा । जैसे सोना तापि अग्निमें निर्मल करै सोनारा ॥ घन अहरनकस हीरा निबटै कीमत लक्ष हजारा । ऐसे यांचत दुष्ट सन्तको करन जगत उजियारा ॥ योग यज्ञ जप पाप कटन हित करै सकल संसारा । बिन करणी सम कर्म कटै सब मेटैं निन्दक प्यारा ॥ सुखी रहौ निन्दक जगमाहीं रोग न हो तनु सारा । हमरी निन्दा करनेवाला भव उतरै जल पारा ॥ निन्दकके चरणोंकी अस्तुति भाषे बारम्बारा । चरणदास कहै सुनियो साधो निन्दक साधक भारा ॥

राग सारंग—अरे नर कहा कियो तुम ज्ञान । गई न हिंसा कुबुधि बडाई राग द्वेषकी आन ॥ प्रभुताईको क्षण क्षण दौरै प्रभुको ना क्षण एक।अंतर भोग जगतके प्यारे बाहर साधू वेष॥ जैसे सिंह गऊ तन धारो कपटरूप प्रगटायो । धोखा खाय पशू आ निकसो पंजा ताहि चलायो ॥ सुंदर-रूप सहा बगलेको एक टांग जल ध्यान । मनमें आशा मीन गहनकी कहां मिलै भगवान ॥

गुरु शुकदेव बतायो मोको भीतर बाहर शुद्धि । चरणदास वह हरिजन जानों ताकी है ब्रह्म बुद्धि ॥

राग केदारा—छलसब कनक कामिनि रूप । सुर असुर अरु यक्ष गंधर्व इंद्र आदिक भूप॥ सावित्री वश कियो ब्रह्मा पार्व्वती त्रिपुरारी। लीला कारण लक्ष्मी सँग हरि लियो अवतार॥ रावणसे अति बली मारे मौत जिन वश कीन । पशु नरनकी को चलावे एतो अति आधीन॥ रूप रससे दे धतूरा मोह फाँसीडार। तपकि पूँजी छीनिके कियो शृंगीऋषिको ख्वार ॥ माया ठगिनी ठगे सबही बचे गुरु शुकदेव । रणजिता कोइ उबरो करि दास चरणन सेव ॥

राग सोरठ—साधो होनहारकी बात । होत सोई जो होनहार है कापै मेटी जात ॥ कोटि सयानप बहुविधि कीन्हें बहुत तके कुशलात । होनहारने उलटी कीन्हीं जलसे आगि लगात॥ जो कछु होय होतव्यता ओंडी जैसी उपजै बुद्धि। होनहार हिरदय मुख बोलै बिसारि जाय सब शुद्धि ॥ गुरु शुकदेव दयासों होनी धारि लई मनमाहिं। चरणदास शोचे दुख उपजै समझसों दुख जाहिं ॥

राग सीटना—टुक रँग महलसे आव कि निर्गुण सेज बिछी। जहाँ पवन गवन नहिं होय जहाँ जाय सुरति बसी ॥ जहँ त्रयगुण त्रिन निर्वाण जहाँ नहिं सूर शशी॥ जहँ हिलि मिलिकै सुख मान मुक्तिकी होय हँसी॥ जहँ पिय प्यारी मिलि एक कि आशा दुई नशी । जहँ चरणदास गलतानकि शोभा अधिक लसी ॥ १ ॥ सुनु सुरत रँगीली है कि हरिसा यार करो । जब छूटै विष विकारकि भव जल तुरत तरो ॥ तुम त्रयगुण छल बिसारि गगनमें ध्यान धरो॥ रस अमृत पीवो है

कि विषया सकल हरौ॥करि शील संतोष शृंगार क्षमाकी मांग भरौ।अब पांचौ तजि लगवार अमर घर पुरुष बरौ॥कहैं चरणदास गुरु देखि पियाके पावँ परौ॥२॥जिव आतम बिसरी हे पुरुषको भूलि रही।जब पियबिसराई हे जने जन बाँह गही॥तै लाज गवांई हे कि पाँचन पकडि लई।तेरे तीन लगे लगवार पचीसों संग भई॥तैं तो जन्म जन्म रहि चूकि कियमकी मार सही। कहैं चरणदास बिन लालकि भवजल जात बही॥३॥टुक निर्गुण छैलासों कि नेह लगावरी।जाको अजर अमर है देशमहल बेगम पुरी॥जहाँसदा सोहागिनि होय पियासों मिलि रहु री। जहँ आवागमन न होय मुक्ति चेरी तेरी॥कहैं चरणदासगुरु मिले सोई ह्वां रहु बौरी।तव सुखसागरके बीच कलहरी ह्वै रहु री ॥४॥तू सुन हे लंगर बौरी । तू पांचो घेरी पचीसौ घेरी विषय वासनाकी हे चेरी वारी वारी दौरी । तैं पिय भूली चौरासी फूली अंग अंगके सुखमें फूली माया लाई डोरी ॥ तैं काम क्रोधसों नेह लगायो मन माता सब जग भर्मायो मोह यार वांको री।चरणदास शुकदेव बतावैं निर्गुण छैला तोहिं मिलावैं जो टुक चेतन होरी॥५॥ पर आशा है दुखदाई । जिन धीरजसों पति रसिया छाँडो वांको मोह यार कियो गाढो क्रोधसों प्रीति लगाई॥जिन जतसत देवरसों मुख मोडा दया बहिनसों नाता तोडा सुमितसौं विसराई । जो धर्म पिताके घरसों छूटी क्षमामायसों योंही रूठी कुमति परोसिनि पाई॥सन्तोष सचाको कहा न माना चची दीनतासों रिस ठाना माया सखि बौराई । चरणदास कहैं जब निजपतिहो पावै श्रीशुकदेव शरण तू आवे शील शृंगार बनाई ॥ ६ ॥

राग सोरठा—टुकदर्शन दे हरि प्यारे।बिन देखे मोहिं कल न परति यह देह जराति है व्याकुल प्राण हमारे॥तेरी भौंह मटक

और प्रेम लटक हिय अटकी नन्ददुलारे । तेरी सुन्दर सूरति मोहनि मूरति नैना अति मतवारे॥ तुमसों को छैला सदा नवेला अलबेला बांकारे । मैंहूं चरणदासा तुम सुखरासा आशा पुरवो आरे ॥ १ ॥ कहां बाजत करत गुमान मुरलिया रंग भरी । तैं मोहे मोहन छैलक बाँके कृष्णहरी॥ सुन बाँस सुता बड भाग तनकसी बन लकरी । कछु टोना कीन्हों है विचित्तर सुघर खरी॥ निशि वासर लगी रहै पियाके अधर धरी । ब्रज सगरो दियो नचाय हाथ भरकी बँसरी॥ तेरी तान मधुरसुर है बरसावत प्रेम भरी॥ सुनिके धुनि ऋषि मुनि देव महेश समाधि टरी॥ चरणदास भई सखि है तुही शुकदेव वरी ॥ २ ॥ तुम देखौ हरिकी लीला साधो कहन सुनन गम नाहीं । वह आप सकल विस्तारै अरु आप करै प्रतिपारै जब चाहै तब तबहींमारै याजगमें धूममचाई॥ वह अद्भुत कौतुक लावै रंकहिको राज्य दिलावै राजाको रंक करावै यह गति किनहुँ न पाई । वह अचरज खेल मचावै पाप पुण्यके न्याव चुकावै आप देखै और दिखावै इक इकसों देइ भिराई ॥ जब पाप बढनको आवै हरि आपहि धोय बहावै दुष्टनको मारि भगावै सन्तनकी करै सहाई। चरणदास कहै जो चाहो शुकदेव शरण अब आवो तुम साईंसों लव लावो वे देहैं दुःख मिटाई॥ ३॥ तेरी क्षण क्षण छीजत आयु समझ अजहूं भाई । दिन दोका जीवन जानि छाँडि दे गुमराई॥ सुन मूरख नर अज्ञान चेतता क्यों नाहीं। कहा फूला फिरै गवाँर जगत झूंठे माहीं॥ कियो काम क्रोध सो नेह गही है अकडाई॥ मतवारा माया माहिं करत हैं कुटिलाई ॥ तेरो संगी कोई नाहिं गहै जब यम बाहीं॥ शुकदेव चैतावै तोहिं त्यागि दे मचलाई॥ चरणदास कहै भज राम यही है सुखदाई ॥ ४ ॥

अथ वसन्त होरी प्रारम्भ ।

राग वसंत—ऐसे कृष्ण कुवँर खेलत वसन्त।जाको सुर नर मुनि पावत न अन्त॥ संग लिये बहु ग्वाल बाल । अरु फेंटनमें भरि भरि गुलाल॥सबवस्तर पहिरे लाल लाल।गल सोहत सुन्दर गुंजमाल॥कोउ ताल बजावत है मृदंग। कोउ ढोल तबूँरा बीण चंग॥कोउ डफ ग्वाव मौहरि मृचंग कोउ गावत स्वरदै दै उमंग॥जब आई राधिका सखिन साथ। गहि छिरके तबही गोपिनाथ॥कोउ केशरि गागरि लिये हाथ।काहू बेंदी दई हरि जूके माथ॥इक काजर नैनन आंजो आय । मुख चोवा चंदन अबीर लाय॥नीलांबर प्रभुको दियो ओढाय। हँसि करत परस्पर मनके भाय॥यह कौतुक ब्रज बाढो अपार। मिलि नाचत कूदत गोपी ग्वार॥लखि मोहिं रही बहु देव नारि।ऐसो अद्भुत अचरज रस विहारि॥यह सुख अब कापै कहो जाय। सनकादि नारद रहे लोभाय॥शुकदेव गुरूने दियो दिखाय । चरणदास ध्यानसें रह्यो समाय ॥१॥ ऐसे पारब्रह्म खेलत वसंत । कबहूं एक कबहूं अनंत॥जैसे हाट एक भूषण अनेक ।बरण बरणके धरत वेष॥टूटै गहना गल जो जाय।फिरि चाहै तौ फेरिबनाय॥ आपहि विष्णु ब्रह्मा महेश।आपहि धरतीआपहिशेश॥ आपहि सुर नर मुनिहि जान।आप धरत अवतार आन॥आपहि रावण आपहि राम।आपहि कंस आपहि श्याम॥ आपको चढि मारै आप।आप आपनको जापतजाप॥चरणदासइककी आया देख। हरिकहियतहैं तरेसेख॥शुकदेवदयातेपायो सेव।तातै आप अपनेलागोसेव॥२॥वह वसंतरे वह वसंत कोइ विरला पावै वह

वसंत । जाकी अद्भुत लीला रँग अनन्त ॥ जहँ झिल मिल झिलमिल है अपार । जहँ मोती बरपे निराधार ॥ जहँ फूलनकी लागी फोहार । जहँ अनहद बाजे बहु प्रकार ॥ जहँ ताल जु बाजे विना हाथ । जहँ शंख पखावज एक साथ ॥ जहँ विन पगघुँघुरूकी टकोर। जहँ विन मुख मुरली घनघोर॥ जहँ अचरज बाजे और ओर।जहँ चन्द सूर नहिं सांझ भोर॥ जहँ अमृत भरवैं काम धेनु। जहँ मान क्रोध नहिं मोह मैनु॥ जहँ पांचौ इन्द्रिय एक रूप । जहँ थकित भये हैं मनुप भूप॥ शुकदेव बतावें ऐसो खेल । चरणदास करौ क्यों न वासो मेल ॥ ३ ॥ खेलो राम नाम लैले वसंत । भक्ति करौ मिलि साधुसंत ॥ मात पिता सुत दारा जान । सव स्वारथके संगी पिछान ॥ तोहिं जन्मत सवहिन धरो आय । तैं आप अपनपो दियो बँधाय ॥ श्वास निकसि रहि जाय देह । सव कुटुंब सँघाती भरो गेह ॥ जव सवही मिलिके तजैं नेह । कहैं वेगि निकासो रहा खेह ॥ कहँ खाट विछौना द्यो निकास । अरु जारि देहु मुखलै हुतास ॥ ऐसे झूंठे संगकि कौन आस । ताते हरि भज ले तू उसाँस ॥ इनसों पगो तजौ हरिसों प्रीत। अपने भलेकी न करी चीत ॥ शुकदेव कहैं नर अजहूँ चेत । चरणदास तजो क्यों जगसों हेत ॥ ४ ॥ मेरे सतगुरु खेलत निज वसंत । जाकी महिमा गावत साधु सन्त ॥ ज्ञान विवेकके फूले फूल । जहँ शाखा योग अरु भक्ति मूल ॥ प्रेमलता जहँ रही झूल । सतसंगति सागरके कूल ॥ जहँ भर्म उडत है ज्यों गुलाल । अरु चोवा चरचै निश्चय बाल ॥ शील क्षमाको वरपे रंग । जहां काम क्रोधको मान भंग ॥ हरि चर्चा जित है अनंत । सुनि मुक्त होत सव जीवजंत ॥

आन धर्म सब जाहिं खोय । राम नामकी जैजै होय ॥ जहाँ अपने पियको ढूँढि लेव । अरु चरण कमलमें सुरति देव ॥ कहें चरणदास दुख द्वंद्व जाहिं । जब प्रियतम शुकदेव गहें बाहिं ॥५॥ खेलो नित वसंत खेलो नित वसंत । मिलि साधु संगसें नित वसन्त॥जहँ फूल जु फूले चारि रंग । भक्ति ज्ञान अरु योग अंग॥रंग जु चौथा है विराग । विषय वासना देहु त्याग ॥ भँवर होय सूँघै जु कोय । जीवनमुक्ता कहिये सोय॥भय अरु भ्रम सब छूटि जाय । आनँद पदमें रहे समाय ॥ चन्दन चरचा अति सुबास । महक रही ह्वां आस पास ॥ जिहि सुगन्ध शीतलता होय । ताप तपन सब जाहिं खोय॥चरणदास हरिचरण माहिं । शीश दिये बहु पाप जाहिं॥ प्रीतम शुकदेवै अनंद । अरु काट निवारे सकल फंद ॥ ६ ॥ वह देश अटपटा विकट पन्थ । कोइ गुरुमुख पहुँचै होय सन्त॥ बहुत चले सग चाव चाव । औरनसों कहि आव आव॥हमहूं पहुँच तुम्हें दे वसाय । ऐसो जान्यो सुलभ दाय ॥ बहुतक तपसी कष्ट साध । बहुतक पण्डित पोथी लाद ॥ बहुत मुण्डितक जटा धारि । चहुँ ओर पावक जारि जारि॥बहुतक मुण्डित पूजा राखि । बहुतक भक्त पिछली शाखि ॥ बहुतक योगी पवन जीति।हरि मिलवेकी करैं रीति॥कायर थाके बाट माहिं । कहु इक आगे चले जाहिं ॥ द्वै कनक कामिनी लिये घेरि।लोभी उनके पडे फेरि॥कोइ उनसे छूट करि आगे जाय। जहँ ऋद्धि सिद्धि लेवे लगाय॥शुकदेव कहैं सब डारि आस । ह्वां ऐसी पहुँचे चरणदास॥७॥साधो आतम पूजा करै कोय । जोइ करै सोइ मुक्ता होय॥नेह नगरमें बसे जाय।भवन सँवारै नित लगाय॥तासें सेवा धारै धार । आठ पहर करैं बार॥तन मन वचन सँभारि लेव। सन्मुख देखो अपना देव॥दया पुष्प-

माला बनाव । क्षमाशील चन्दन चढाव ॥ लिये दीनता हाथ जोरि । सांचे सँग मनको घोरि ॥ घट घट प्रीतम राख मान । रस भंग न होवे सावधान ॥ प्रसन्नता सोई धूप दीप । शुकदेव कहें यों रहु समीप ॥ चरणदास हो संग न छोर । कृष्णमयी लखु चहूं ओर ॥ ८ ॥

होरी राग धमारि—मोहन चतुर सुजान मेरे घर होरी खेलन आयो हो । पीत वसन पियरे आभूषण पीरो तिलक बनायो हो ॥ सखी री लालहि लाल गुलाल उडावत ग्वाल बाल सँग लायो हो।सबके करन कनक पिचकारी गावत नाचत धायो हो ॥ सखी री आनि अचानक हरिने मेरे मुख चोवा लपटायो हो । केशरि माहीं घोरि अरगजा मो तनपै ढरकायो हो ॥ अपने हाथ सवाँरि पान दै हार हिये पहिरायो हो । रीझ रिझा अरु भीज भिजाकर उर आनन्द बढायो हो॥सखी री मैंहूं वाके जाय अचानक काजर नैन लगायो हो । मुरली गहि पीताम्बर लैके नीलाम्बर जो उढायो हो ॥ सखी री जा सुखको ब्रह्मादिक तरसैं शेष पार नहिं पायो हो । गोपी कहें चरणदास श्यामकी सो सुख हमैं दिखायो हो॥१॥साध चलो तुम सँभारी । जग होरी मचि रही है भारी ॥ दंभ पखण्ड गहे करमें डफ हूवंड हूवँडकी तारी ॥ त्रयगुण तार तँबूरा साजे आशा तृष्णा गति धारी । पाप पुण्य दोउ लै पिचकारी छूटत हैं वारी वारी ॥ सन्मुख ह्वैकरि जो नर खेलौ ताकी चोट लगी कारी । लोभ मोह अभिमान भरो है लै माया गगरी डारी ॥ राजा परजा भोगी तपसी भीजि रहे हैं संसारी ॥ कुबुधि गुलाल डारि मुख मींडो कामकला पुटली मारी । युग युग खेलत यों चलि आई काहूते नाहीं हारी ॥ जड चेतन दोउ रूप सँवारे एक कनक दूजी नारी । पांच प-

चौंस लिये सँग अवला हँसि हँसि मिलि गावत गारी॥ चतुर फगुवा दै दै छूटे मूरखको लागी प्यारी। चरणदास गुरुदेव बतावें निर्गुण ज्ञान गली न्यारी॥ २॥

होरी राग काफी–ज्ञानरंग हो हो हो होरी। निहरूपी बहु रूप धरे है नाना वेष करो री॥ देखन निकसी अपने पियाको समझ भवनकी पौंरी। बुद्धि विचार शृंगार सजो है निश्चय माथे रोरी॥ जीवन्मुक्त हुलास बढो है परगट खेल मचोरी। खेलत खेलत आपन बिसरो लागी कौन ठगोरी॥ आपा खोजि रामहीं पाये मैं नाहीं निकसो री। चरणदास सब हरिही हरि है आपहि आप रहो री॥ उपजै कौन कौन अब विनशै बंध मुक्त केहि ठौरी॥

होरी राग धनाश्री–साधो घुंघुट भर्म उठाय होरी खेलिये। वेद पुराण लाज तजि वेरी इनमें ना उरझैये॥ शिरसों सकुच उतारि चदरिया पियसों रंग बढइये। रूप न रेख सूरति मूरति ताके वलि वलि जइये॥ अचल अजर अविनाशी सोई सन्मुख दर्शन पइये। सत चेतन आनन्द सदाही निर्भय ताल वजइये॥ पाप पुण्यकी शंका त्यागो जहँ मर्याद न पइये। ओला नीर विचारो जैसे यों आपन बिसरइये॥ चरणदास वासना तजिकै सागर बूँद समइये॥

राग सोरठ–हिलिमिलि होरी खेलि लई हो बालमा घर पाइया। पांच सखी पच्चीस सहेली आनंद मंगल गाइया॥ समझ बूझका चोवा चरचा भर्म गुलाल उडाइया। दुइ गई जब इच्छा कैसी खेलन सकल वहाइया॥ चरणदास वासना तजिकै सागर लहर समाइया॥

होरी राग सोरठ–कासूं खेलै को होरीया हो बालम नाहीं मैं नहीं। अविर गुलाल अरगजा नाहीं रंग नहीं गागर नहीं॥ ताल

मृदंग झाँझ डफ नाहीं राग नहीं रागिनि नहीं । फाग महीना या घर नाहीं कन्थ नहीं कामिनि नहीं ॥ चरणदास जहीं तव हरि कहु कैसे सब कुछ है और कुछ नहीं ॥

होरी राग धमारि—आदिपुरुष अविगत अविनाशी नाना कौतुक लावै रे । आपहि आप और नहिं कोई बहुतक रूप बनावै रे॥आपहि मोहनलाल ग्वाल हो मुरली आनि बजावै रे॥आपहि व्रजकी वनिता होकर वनको दौरी आवैरे॥आपहि गोपीकान्ह विराजे आपहि रास रचावै रे॥अन्तर्द्धान होय फिर आपहि आपहि ढूंढन धावै रे॥आपहि व्याकुल आप देखनकूं लीला प्रेम बनावै रे॥परगट होय सबन सुख देवै आपहि रंग बढावै रे॥भोर भयो जब खेल मचावै आप आप रहजावै रे । कबहुँ एक अनेक कभी हैं विधि निषेधगति भावै रे॥सतचित आनँद रूप सदाही शुकदेव हो समुझावैरे॥चरणदास हो समझि समझि करि आपहि आनँद पावै रे ॥

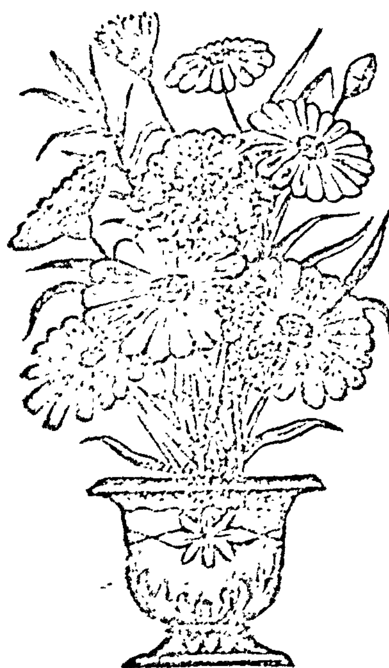
होरी राग धनाश्री—साधो बुद्धि विवेक सँभारी होरी खेलिये सांखयोगकी युक्तिसों कीजै नित्य अनित्य विचार । माया सकल निवारिकेरे आतम रूप निहार॥पांचतत्त्व तीनों गुण परगट इनको दो दिन फाग । इकरस सत पद जानिले रे ताहीसों मन पाग॥निश्चयचोवालाइयेरेभर्मगुलालउडाय । देहकर्मकेरंग की रे गागर दे ढरकाय॥जीवनमुक्त जो फगुवा पइये गुरुकेचरणन लाग॥जो कोइ ऐसी होरी खेलै जाके ऊंचेभाग॥चरणदास कहैं शुकदेव बताई हमहूं खेले जाग॥प्रियतम प्रियतम जितजित देखा द्वेष गयो अरु राग॥१॥सखी री ततमतले संग खेलिये रस होरी हो॥निर्गुण निज निरधार सरस रस होरी हो॥सखी री शील शृँगार सवाँरी ये रस होरी हो॥दुविधा मानि निवार सरस

रस होरी हो॥सखीरी रहनी केशर घोरिये रस होरी हो॥बहुरि न पलो चार सरस रस होरीहो॥सखीरी सतगुण करि पिचकारि ले रस होरी हो। तम रजके भरमार रसस रस होरी हो॥सखी री गर्द गुलाल उडाइये रस होरी हो॥मोह सटुकिया डारिसरस रस होरी हो॥सखी री झिल मिल रंग लगाइये रस होरी हो। चंदन चरन विचार सरस रस होरी हो॥सखीरी निश्चल सिद्ध समाइये रस होरी हो॥रिमिझिम झमक फुहार सरस रस होरीहो॥ सखी री शून्य नगरसें नृत्तिये रस होरी हो॥अनहदझनक झिंगा- र सरस रस होरी हो॥ सखीरी सैन सुरतिसों समझिये रस होरी हो। सोहं ब्रह्म खिलार सरस रस होरी हो॥सखी री पांच पचीसों रल मिले रस होरी हो। मंगल शब्द उचार सरस रस होरी हो। सखी री अलख पुरुष फगुवा लहो रस होरी हो। आपा आप बिसार सरस रस होरी हो॥ चरणदास रसइया मिल रह्यो रस होरी हो। दरशो फाग अपार सरस रस होरी हो॥२॥गुरु दूती बिना सखी पीव न देखो जाय। भावै तुम जपतप करि देखो भावै तीरथ न्हाय॥पांच सखी पचीससहेली अतिचातुर अधिकाय।मोहिं अयानी जानिके मेरो बालम लि- यो छुकाय॥वेद पुराण सबै जो ढूंढै सुरति स्मृति सब धाय। आन धर्म और क्रिया कर्मसं दीन्हों मोहिं भर्माय॥भटकत भट- कत जन्मे हारी चरण सखी गहे आय। शुकदेव साहब किरपा करिके दीन्हों अलख लखाय॥ देखतही सब भ्रम भय भागे मिटगई बलाय। चरणदास जब प्रीतम पायो दर्शन किये अघाय॥ ३॥ हरि पीव पाइया सखी पूरण मेरे भाग। सुखसागर आनंदसें मैं नित उठि खेलूं फाग॥ चोवा चन्दन प्रीतिके सखी केशरि ज्ञान बसाय। पुष्प वाससूं जो वह झीनो

ताके अंग लगाय ॥ बैरंगीके रंगसूं सखी गागर लई भराय । शून्य महलमें जायके सखी पियपर दई ढरकाय॥भरम गुलाब जब करलियो सखी बालम गयो दुराय।सतगुरुने अञ्जन दियो तब सम्मुख दरशे आय॥ताली लाई प्रेमकी सखी अनहद नाद बजाय।सर्वमयी पिय पायके हम आनँद मँगल गाय॥रलमिल प्रियतम ह्वै गये सखी दुई गई सब भाग । चरणदास शुकदेव दयासूं पायो अचल सुहाग ॥४॥ मैं तौ ह्वां खेलूंगी जाय जित मेरो पिया बसे । व्याधि उपाधि न संशय कोई आनन्दहि आनँद लसै ॥ नितही फागन इकरस होरी खण्डित कबहुँ न होय । मुक्ति पदारथ फगुवा पइये आपासरबस खोय॥ जिनके रसिया शिव ब्रह्मादिक खेलत चावहिचाव।ऋषि मुनि देवत खेलत निशिदिन करि करि बहुतक भाव॥ भाग्य बडे उनहींके जानो वा पद लागे धाय । ज्ञान ध्यानके रँगमें डूबे सोई पहुँच जाय॥गुरु शुकदेव बताई हमको जबसों बाढी प्रीति । चरणदासहू अति ललचाये सुनि सुनि ह्वांकी रीति ॥ ५ ॥ साधो प्रेम नगरके माहीं होरी होय रही।जबसूं खेली सहहौं चित दे आपनहूंको खोय रही ॥ बहुतन कुल अरु लाज गवांई रहौ न कोई काम । नाचि उठैं कभी गावन लागैं भूले तन धन धाम॥बहुतनकी मति रंग रँगी है जिनको लागो प्रेम।बहुतनको अपनी सुधि नाहीं कौन करे ऐसो नेम ॥ बहुतनको गद्गदही बाणी नैनन नीर ढराय।बहुतनको बौरापर लागो ह्वांकी कही न जाय॥प्रेमीकी गति प्रेमी जानै जाके लागी होय।चरणदास उस नेह नगरकी शुकदेवा कहि सोय ॥६॥ कोई जानै सन्त सुजान उलटे भेदकूं । वृक्ष चढो मालीके ऊपर धरती चढी अकाश । नारि पुरुष विपरीति भये हैं देखत आवै हास॥बैल

चढो शंकरके ऊपर हंस ब्रह्मके शीश॥सिंह चढो देवीके ऊपर गुरुजीकी चरनशीश॥नाव चढी केवटके ऊपर सुतकी गोदी माय। जो तू भेदी अमर नगरको तौ तू अर्थ बताय॥चरणदास शुकदेव सहाई अब कहा करि है काल। बाबी उलटि सर्पमें पैठी जनसूं भये निहाल ॥ ७ ॥

इति श्रीस्वामिचरणदासजीकृत शब्दवर्णन सम्पूर्ण ।



श्रीक्षीरसागरशायिने नमः ।



# अथ भक्तिसागर प्रारम्भः ।



छप्पय ।

श्रीव्यासको पुत्र तासुको दास कहाऊं सदा रहूं हरि शरण और ना शीश नवाऊं ॥ साधनसूं यह चहूं मोहिं यह बात दृढावो । माया जाल संसार तासुसों वेगि छुटावो ॥ अहो श्रीव्रजनाथ विनय सुनि लीजिये । चरणदासको भक्ति कृपा करि दीजिये ॥ १ ॥ गुरु ईश्वर गुरु ईश रीझ गुरु राम बतावैं। गुरु काटैं यमफाँस विपति सब अघै नशावैं ॥ गुरु देवनके देव भेव ब्रह्मादि लखावैं । गुरु भवसागर तार पार वह लोक बसावैं॥ चरणदास यह जानिके सत्संगति हरिको भजो ।शुकदेव चरण चित लायके सो झूठ कानि दुविधा तजो॥२॥पग तब होवैं शुद्ध साधुके मगको ध्यावै॥हस्त शुद्ध तब होयँ दोऊ कर शीश नवावै॥नैन शुद्ध जब होयँ साधुके दर्शन पावै । रसन शुद्ध तब होय रामगुण मुखसों गावै ॥ भनै चरणदास सब शुद्ध हो जब चरण परस गुरु देवके । वै आतम तत्त्व विचार देखकर दर्शन अलख अभेवके ॥ ३ ॥

दोहा–दुख मेटन सुखके करन,चरणदास वे साध ।
दाता ज्ञान विज्ञानके,देवैं मता अगाध ॥ १ ॥

साध मुक्ति नहिं चहत हैं,सिद्ध न चाहत साध ।
स्वर्गलोक नहिं चहत हैं, जिनका मता अगाध॥२॥

चौ०—इडा पिंगला सुखमन धारो । आसन वज्र नागिनी जागे॥ द्वादश अंगुल होय वेधि षट चक्कर लीजै । जब बाजै अनहद तूर जहां मन निज कर दीजै ॥ खेचरी मुद्रा त्रिकुटी आनो॥अमृत पिये परम सुख पावे॥मेरुदण्डको प्राण चलावे । शून्य शिखर जब नगरी पावे ॥ जा नगरीमें चन्द्र न भान । पहुँचे साधू चतुर सुजान ॥ जाति पाँति जहँ नाम न नाता । श्वेत श्याम पीता नहिं राता॥योग यज्ञ तप जहां न दाना । तीरथ वर्त जहां नहिं न्हाना॥किरिया कर्म जहां नहिं पूजा । मैं हूं तू नहिं एक न दूजा ॥ जहां न सांझ द्योस नहिं राता । एकै ब्रह्म अखण्ड विधाता ॥ चरणदास रामकी घाटी पहुँचै शुकमत शूरा॥ओछी बुद्धि वाद बहु ठानै करणी करै सो पूरा ॥

छप्पय—बैठि गुफाके मध्य योगकी युक्ति विचारै । आप अकेलो रहै और ना मनुष निहारै ॥ चारि वार नित करै जाप ओंकार अराधै । सूक्षम करै अहार ओगरो पतलो साधै ॥ आसन पद्म लगायकै सीधो राखे मेर । ठोढी हिये लगाइये पलक झाँपकरि हेर ॥

दोहा—कुंभक आठ प्रकारके, तिनमें उत्तम एक ।
केवल कुंभक जानिये, साधै ताहि विशेख ॥३॥
त्रिकुटीमें तीरथ अगम, तिरवेणी जेहि नाम ।
न्हाय योगकी युक्तिसूं, पूरण हो सब काम ॥४॥
रणजीत कहै जहँ न्हाइये, त्रिकुटी तीरथ धाम ।
नित पर्वी जहँ होत है,भजन करो निष्काम॥५॥

चौ०-जा तीरथको पवन न लागे । जा तीरथमें जन अनुरागे ॥
जा तीरथमें रतन अनेका । पूरे गुरुसों मिल मिल देखा ॥
वा तीरथमें जो कोइ न्हावे । भवसागरमें बहुरि न आवे ॥
जहाँ न चन्द्र सूर नहिं तारे । गुरुगम पहुँचें अति मतवारे ॥
जा तीरथका बँधा जो नीर । उज्ज्वल निर्मल गहिर गभीर ॥
ब्रह्मा विष्णु जहाँ त्रय देवा । योग युक्तिमें लावैं सेवा ॥
बारह मास दामिनी दमके । सोन पटीला जुगुनू झमकै ॥
रणजित मीत जहाँ वासा कीजे । नित अस्नान महासुख लीजै ॥

छप्पय-अमरी वजरी साध वायु सरने नहिं पावै । द्वादश अंगुल प्राण सुरत दे ताहि घटावै ॥ मौन गहै नित रहै अल्प सूक्षम सो बोलै । एक बार आहार जँभाई कबहुँ न खोलै ॥ बांध सो जाय दृढ छींकको अनहद धुनि अति गाजई । भन चरणदास शुकदेव बल सुयोग युक्ति इमि साधई ॥

दोहा-मन पवना वश कीजिये, ज्ञान युक्तिसों रोक ।
सुरति बांधि भीतर धसै, सूझै काया लोक ॥६॥
मन हिरदेमें रहत है, पवन नासिके माहिं ।
इन्द्रिय रोकै ये रुकैं, और कछू विधि नाहिं ॥७॥

छप्पय-सूक्ष्म करै आहार जीति धरणि जब लेई । नीर जीत जब लेय बिन्द जाने नहिं देई ॥ मोह लोभ जब तजै अग्निको जीति मिलावै । पवन जीति जब लेय गगनको बाँध चलावै ॥ अरु हर्ष शोक सम करि गनै पांच जीत एकै करै । भन चरणदास साधुन गहे ह्वै प्रकाश कारज सरै ॥

दोहा-गगन मध्य जो कमल है, राजत अनहद तूर ।
दल हजारको कमल है, पहुँचे गुरु मत शूर ॥ ८ ॥

गगनमंडलके कमलमें, सतगुरु ध्यान निहार ।
चरणदास शुकदेव परशे, मिटैं सकल विकार ॥ ९ ॥
सहस्रदलके कमलमें, रूप अगम अपार ।
सोहं सोहं जाप सहजै, होत एक हजार ॥ १० ॥

छप्पय–नौ नाडीकी खैंच पवन लै उरमें दीजै । बज्जर ताला लाय द्वार नौ बन्ध करीजै ॥ तीनो बन्ध लगाय अस्थिर अनहद आवै । सुरति निरतिका काम राह चल अगम अगावै ॥ शून्य शिखर चढि रहै दृढ जहां जाय आसन करै । भन चरणदास ताडी लगै सो रामदरश कलिमल हरै ॥ १ ॥ चौथा पद निर्वाण धाम बेगमपुर कहिये । गुण अतीत जहँ राम निरखि नैनन सुख लहिये ॥ अद्भुत रूप अखण्डमण्ड मण्डल बहु बंका । जहां काल नहिं ज्वाल शब्द अति उठत निशंका ॥ निज पारब्रह्म चौरी रची तहँ शिव सहित फेरी करैं । भन चरणदास चारों मुक्तिसों हाथ जोरि पायँन परैं ॥ २ ॥ मूल कमलमें खेलि पियाकूं देखन चलिये । उलटि वेद षटचक्र जाइ सतवंसे मिलिये ॥ प्राण अपान मिलि राह पच्छिमकी लीजै । वंक नाल करि शुद्ध प्राण लै तामें दीजै ॥ मेरु दण्ड चढि जाय जब लोक लोककी गम परै । भन चरणदास ब्रह्माण्डमें ब्रह्मदर्शी दर्शन करै ॥ ३ ॥

दोहा–चरणदास यहि विधि कही, चढिबेको आकाश ।
शोधि साधि साधन अगम, पूरण ब्रह्म विलास ॥ ११ ॥

छप्पय– दल असंख्यको कमलरूप जहँ सत्त बिराजै ॥ अनंत भानु परकाश जहां अनहद धुनि गाजै ॥ सुन्दर छबि अति हंस संत जन आगे ठाढे । जहँ पहुँच कोइ शूरवीर निशान जो गाडे ॥ कमल मध्य जो तख्त है शोभा अपार वरणूं कहा । कहैं चरणदास उस तख्तपर आदिपुरुष अद्भुत महा ॥ १ ॥

छत्र फिरत नित रहत चँवर ढोरत जहँ हंसा । जहँ दर्शन कर शिष्य मिटै युग युगका संसा ॥ आवागमन है रहत मरण जीवन नहिं होई । आनि मिले जब चार मुक्ति कहियत है सोई ॥ जहँ अमर लोक लीला अमर फल अनेक तहँ पावई । भन चरणदास शुकदेव बल सु चौथा पद इमि गावई ॥ २ ॥ जहाँ चन्द्र नहीं सूर जहां नहीं जगमग तारे । जहां नहीं त्रय देव त्रिगुण माया नहिं लारे ॥ जहां वेद नहिं भेद जहाँ नहिं योग यज्ञ तप । जहाँ पवन नहिं धरणि अग्नि नहिं जहाँ गगन अप ॥ अरु जहाँ रात नहिं दिवस है पाप पुण्य नहिं व्यापई । आदि अन्त अरु मध्य है कहैं चरणदास ब्रह्म आपई ॥ ३ ॥ जहाँ काल नहिं ज्वाल भर्म नहिं तिमिर उजारा । जहाँ राग नहिं द्वेष जहां नहिं कर्म अचारा ॥ जहाँ काम नहिं क्रोध लोभ नहिं मोह नरेशा । जहाँ मित्र नहिं शत्रु जहाँ नहिं देश विदेशा ॥ अरु चरणदास इक ब्रह्म है और न दूजा कोई तहाँ । भया जीव सो ब्रह्म जब योग युक्ति पहुँचे जहाँ॥ ४ ॥जहाँ आतम देव अभेव सेव कबहूं न करावै इच्छा दुई न द्रोह कर्म नहिं भर्म सतावै ॥ जहँ जाप थाप नहिं आप तहाँ नहिं रूप न रेखा । जासु जाति नहिं पाँति नारि नहिं पुरुष विशेखा ॥ अरु पारब्रह्म पूरण सदा है अखण्ड नहिं खण्डिता । भन चरणदास ताडी लगै सो शून्य शिखरमें मण्डिता ॥ ५ ॥

चौ०—ब्राह्मण सो जो ब्रह्म पिछानै । बाहर जाता भीतर आनै ॥ पांचौं वश करि झूठ न भाखै । दया जनेऊ हिरदय राखै॥ आतम विद्या पढै पढावै। परमातमका ध्यान लगावै ॥ काम क्रोध मद लोभ न होई । चरणदास कहैं ब्राह्मण सोई ॥

छप्पय—हुतो आपमें आप सृष्टि नहिं देत देखाई । ज्यों पाला जल माहिं धरणिपर लीक लिखाई । भाँडे माटी माहिं

कनकसें भूषण राजें ॥ तरुवर बीरज माहिं यथा फल फूल बिराजें॥गुण रूप नाम सब ब्रह्मसें ॐकार तासूं भई।चरणदास शुकदेव सो वही ब्रह्म माया वही ॥ १ ॥ पांच तत्त्व तेहि माहिं तीनि गुण जुदे न होई । चित बुधि इन्द्रिय तहाँ पाप अरु पुण्य समोई ॥ विष अमृत तेहि माहिं भूक अरु देव मुनीश्वर । फूल शूल तेहि माहिं यमन अवतार ऋषीश्वर ॥ चरणदास शुकदेव भज ये सब दरस दृष्टि अब । निराकार निर्गुण कहत भूले भटके लोग सब ॥ २ ॥

सवैया–जैसे जलसें जल कुंभ बस जल भीतर बाहर पूरि रह्यो है । तैसे जलमें जल पाला बँध्यो जल फूटि गयो जल आप भयो है ॥ ऐसे जगमें वह व्यापि रह्यो किनहूं कर लोचन नाहिं गह्यो है।चरणदास कहै दुई दूरि करो सगरो जग एकहि डोरि गुह्यो है ॥ १ ॥ जैसे पट मैलको संग किया जुगयो सब श्वेत भयो तनु कारो । श्याम स्वरूप अकाश भयो जब धूम धुवाँ जो भयो भौ भारो । माया पिशाचको संग कियो जब जीव भयो करता करतारो । शुकदेव कहैं दुई दूर करो चरणदास सभी इक सूत निहारो ॥ २ ॥

कवित्त–दीसत न वारपार पूरि रह्यो जक्तसार ऐसेही अटल नेक टारो ना टरत है । ताकर न नाश ठौर ठौर रह्यो भास जैसे पुष्पके समान वास पासही रहत है । लोचन रह्यो समाय वेदहू सके न गाय, पुस्तक लिखो न जाय जानो न जरत है । शुकदेवजीकी दया चरणदासको प्रकाश भयो, जैसे सें खोजि पायो पायो ना परत है ॥१॥ कई कोटि दुर्गा जहां हाथ जोरे रहैं, कई कोटि शम्भू जहां ध्यान लावैं । कई कोटि ब्रह्मा जहाँ खड अस्तुति करैं शेष नारद नहीं पार पावैं ॥ वेद यशही कहै भेद कछु ना लहैं

पंथकी बात वेभी बतावें। चरणही दासही आश जितही रहो, कोटि तंतोसहू शीश नावें ॥ २ ॥ रामही देव अरु राम देवल भयो रामही रामकी करे पूजा। रामही धर्म अरु भर्म भे रामही रामही ज्ञान अज्ञान सूझा ॥ रामही एक अनेक हैं रामही रास परगट भयो राम गूझा।चरणदास शुकदेव सब रामही राम है शोधि निश्चय किया नाहिं दूजा॥३॥रामही बीज अरु रामही पेड है रामही फूल अरु राम पाती।रामही भोगियो रामही योगियो राम जप तप करे दिवस राती ॥रामही नारि अरु रामही पुरुप है राम मा बाप अरु पूत नाती। शुकदेव चरणदास सब रामही राम है रामही दीवला राम बाती ॥ ४ ॥ रामही चोर अरु रामही ठग भयो राम बटमार अरु राम घाती । रामही साधुयुत संत भयो रामही राम रक्षा करै राम साती॥रामही देह इंद्रिय भयो रामही मन भयो रामही सुरत माती।गुरु शुकदेव चरणदास चेला भयो रामही सीप अरु राम स्वाती ॥५॥ आपही वेद अरु आप पंडित भयो आप कित्तेब अरु आप काजी। आपकाशी भयो आप जाती भयो आप मक्का भयो आप हाजी॥आपही बाँग अरु आप मुल्ला भयो आप पण्डा भयो घण्ट बाजी। चरणदास शुकदेव हरि मुरीद मुरसिद भयो मुक्ति औ बंध सब आप साजी ॥ ६ ॥ ब्रह्मही आदि अरु ब्रह्मही मध्य है ब्रह्मही अन्तकूं वेद गावै । ब्रह्मही एक अनेक है ब्रह्मही आपनी दृष्टिसें आप आवै॥होय दूजा कोई नाहिं ऐसी भई आपही आप आनँद बढावै।ब्रह्म शुकदेव चरणदास भी ब्रह्म है ब्रह्मही ब्रह्मका ध्यान लावै॥७॥

राग अरिल्ल—आतम ज्ञान बिना नहिं मुक्ता वेद भेद सब देखा जोय। ब्रह्मा शेश महेश पूजकरि बस वह लोक रहत नहिं

सोय॥जल पाहन अरु भूत भवानी पूज पूज भर्मी सब कोय। चरणदास तत विरला जाने आवागमन दुख बहुरि न होय॥ सवैया ॥ न ऊरधबाहु न अंग विभूति न धूनी लगाय जटा शिर धारूं। न मूंड मुडाय फिरूं वनही वन, तीरथ बर्त्त नहीं तन गारूं॥ उलट लखों घटमें प्रतिबिम्बसों, दीपक ज्ञान चहूं दिशि जारूं। चरणदास कहें मनहीं मनमें अब तूही तुही करि तोहिं पुकारूं॥

कवित्त-तारी जो लगाय देखो वेद अर्थ पाय देखो,भक्ति बिना अखिल ईशकोहूं नाहिं पायो है। दशौ दिशा धाय देखो तीरथहू अन्हाय देखो भटको सब प्रेम बिनास्मृतिये गायो है॥ किसारि तनु गारि देखो करवन शीर मार देखो ऐसी ऐसी बातन चौरासी भर्मायो है। भाषे चरणदास शुकदेवके प्रतापसेती आदि पुरुष भक्तहेतु नन्दगेह आयो है॥ १॥ मूडहू मुडाय देखो जटाहू रखाय देखो सेवरा कहाय देखो भेदहू न पायो है॥श्रवण चिराय देखो नादहूं बजाय देखो, धूरहू लगाय देखो भर्म सबै छायो है॥ धूम्रपान झूल देखो कोई भर्म भूल देखो, सोऊं हरि नाम नीको गुरु जो बतायो है।भाषै चरणदास शुकदेवके प्रतापसेती, आदिपुरुष भक्तिहेतु नंदगेह आयो है॥२॥

सवैया-भूलत भर्मत कूर फिरै इन, बातनमें कह काज लहैगो। बैठि रहो हरिमारगमें,करता जो करै सोई होय रहैगो॥ अपने हितसों जिन तोहिं सृज्यो है, अलेख विलोकिकै सोच करैगो। चरणदास विचारि कहा भटकै, हरि नाम बिना दुख कौन हरैगो॥१॥वही राम वहि श्याम विधाता वही विश्वंभर पतित तरै। वही विष्णु वहि कृष्ण मुरारी वही निरंजन ज्योति धरै॥ दीनानाथ हरि वह कहियत है जो चाहै सो

वही करें । चरणदास क्यों भटकै मूरख, राम विना दुख कौन हरे ॥ २ ॥

कवित्त–वही राम मेरो जिन रावण विनाश्यो जाय,वही राम मेरो जिन लंकपुर जारी है । वही राम मेरो जिन कंसको पछा-र्यो जाय,वही राम मेरो जिन नाथ्यो नाग कारी है।वहीराम मेरो जोड़ डार पात रमि रह्यो,वही राम मेरो जाकी जगमें उज्यारी है । चरणदास कूर सब संतनको चेरो कहै, वही राम मेरो प्रहलाद पेज पारी है ॥

कुण्डलिया–वेद पुराणनमें सुनो,संकट मेटन नाँव। चरण-दासके काजको,अब क्यों थाके पाँव ॥ अब क्यों थाके पाँव धाममें हो अक नाहीं।और हमारो कौन गहैया दुखमें बाहीं॥ सकल सृष्टि विसराय खेंचि मन तुमसों लायो । इनपांचनको काट करो मेरो मन भायो ॥१॥ भीर परी जब दासपर, जित तित धारो वेष।अगिले पिछले कर्मकी,अब क्यों नहिं मेटो रेख॥ अब क्यों नहिं मेटो रेख कर्म कोइ दूर न कीन्हों।हम कुछजानत नाहिं तुम्हीं काहे नहिं चीन्हों ॥ अब तुम करो सहाय इन्होंसे मोहिं छुटावो।काम क्रोध मोह लोभ चक्रसों वेर न लावो॥२॥ कवित्त–सबै दुख पावैं वेर वेर पछितावें अब,तोहि नित ध्यावै दुख वही काटि दीजिये । अन्नके दुखारी सब भये हैं भिखारी सृष्टि,काहेको विसारी प्रभु वेगी जो पसीजिये॥जक्त गुणागारकारि देखो है विचार अब,न करो अवार वंदि छोडि जो कही जिये। दिल्लीकी अर्ज चरणदास कहे लर्ज शाह,नारदको वर्ज अर्जमेरी सुनि लीजिये॥१॥यशुदाके लाल देखि सोहनब्रजलाल देखि, गोपी अरु ग्वाल देखि प्राण वारि दीजिये। माथेपै मुकुट देखि

कुण्डलकी झलक देखि,घूघरवारी अलक देखि ललकाही की-जिये॥बाँकीसी मरोर देखि मुरलीकी घोर देखि,पैंजनी टँकोर देखि देखा हीय कीजिये।चरणदास कूर देखी नैननकोमूँद देखि, नैननके चित्र देखि यही ध्यान कीजिये॥२॥ पीरा सुधार फेंटो तुर्रा छवि अधिक बनी करहूमें मुरली गही अधरनपै धारीजू। चन्द्रार नीसो पीरो अंग शुभ रहो एक,पाँव ठाढे सो प्रेमके अहारी धारीजू॥सबही शृंगार किये राधेजू बायें अंग,ठाढीं मुसकयात प्राण पिया संग प्यारीजू । नवल किशोर मोर साँवरो सुजान प्यारो,पार चरणदास कीन्हों अटल बिहारीजू ॥ ३ ॥

दोहा–मनदानिस्तम् हिज्रने, दीगर वस्ल न कोय ।
चरणदास गफ़लत उठे, वाहिद वाहिद होय ॥ १२ ॥
हिज्र वस्ल दोनों नहीं, नहिं दरिया नहिं मोज ।
चरणदास जर्रा नहीं, जो कर देखा खोज ॥ १३ ॥
दरिया वाहिद लामका, बाजत अनहद बीन ।
सकल चरण फ़रजंद ना, नहीं संग ताबीन ॥ १४ ॥
दीद शुनीद जहां नहीं, तहां न काल न हाल ।
जौहर जिसम इसम नहीं, चरणदास नहिं ख्याल॥१५॥
तुर्ग शिफारस यामिनी, और सगाई होय ।
चरणदास यों कहत है, भूल करो मति कोय ॥१६॥

कवित्त–काहेको भक्तपै समान है बगलेको ध्यान तौ लगा-यो है सनिके पचावनको।भीतर और विषय वास चरणदास हार तिलक छाप किये जक्तके दिखावनको॥हरिके गुण गावन को रसना रिसात अधिक सनतो हुलसात वाद निन्दाके बढा-वनको । बहुत बात सीखराखी लोक और बडाईको, काया

नाहिं शोर्भा एक रामजीके पावनको ॥१॥ यह है काल तामें महानिकराल जहां, चरचा गोपालजाकी निन्दा करें जानिकै। कोई करै भक्त जाकूं दुष्ट वहुनाम धरें, वचन कुवचन कहें क्रोध मन आनिकै॥ देखें अव जायगो तू परम वैकुण्ठहीकूं, वडो भयो साधु माला धारि तिलक ठानिकै। ऐसे दुष्ट नीचनकी वात नहीं मानिये जू, कहें चरणदास सवे पापी नरक खानिकै॥२॥ आप वंडे नीच करतूत करें नीचनकी, नीचनको संग जिन्हें भावे उत्पात है। रामनाम सुनि हिये लागत है आगि जान कोऊ करै भजन ताहि देख जर जात है॥ खोटे भये आप कहें औरनकूं खोटे वे तो महामोटे पापी माया माहिं इतरात है। साधनके निंदक सुनो परेंगे नरक मांझ, कहैं चरणदास दुख पावें वहुभाँति है॥३॥

दोहा—चरणदास हितसों कियो, ग्रन्थ अनेक प्रकार ।
अष्टादश अरु चारको, काढि लियो ततसार ॥१७॥

चौ०—संवत सत्रहसै इक्यासी। चैत सुदी तिथि पूरणमासी ॥
शुक्लपक्ष दिन सोमहिवारा । रच्यो ग्रन्थ यों कियो विचारा॥
तवहींसूं स्थापन धरिया । कछुइक वाणी वादि न करिया॥
ऐसेहि पांच हजार वनाई । नाम गुरूके गंग वहाई ॥
फिरि भइ वाणी पांच हजारा । हरिको नाम अग्निसें जारा ॥
तीजे गुरु आज्ञासों कीन्हीं । सो अपने साधनको दीन्हीं ॥
अद्भुत ग्रन्थ महा सुखदाई । ताकी शोभा कही न जाई ॥
तामें ज्ञान योग वैरागा । प्रेम भक्ति जामें अनुरागा ॥
निर्गुण सगुण सवही कहिया । फिर गुरुचरण कमलमें रहिया॥

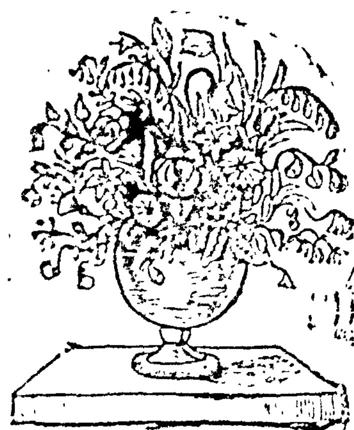
जो कोइ पढ़ि पढ़ि अर्थ विचारै । आप तरै औरनको तारै ॥
ना मैं कियो न करनेहारा । गुरु हिरदेमें आय उचारा ॥
चरणदास मुखसूं शुकदेवा । आन कहे चारोंही भेवा ॥

इति श्रीस्वामिचरणदासजीकृत ग्रंथ भक्तिसागर सम्पूर्ण ।

दोहा—जल घृतसूं रक्षा करौ, मूरख हाथ न देव ।
ढीलो कर नहिं बाँधिये, ग्रंथ कहत यह भेव ॥१८॥

इति श्रीस्वामिचरणदासजी कृत वाणी संग्रह
पण्डित शिवदयाल वकील द्वारा संशोधित
समाप्त ।

॥ ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥



श्रीराधाश्यामाय नमः ।

# अथ श्रीगुरुभक्तिप्रकाशका परिशिष्ट भाग।

पद राग खमाच ।

नमो नमो शुकमुनि चरणदास॥कलिके कुटिल जीव तिनके हित संत अवतार धर्यो हरि त्रासा ॥१॥ श्रीपुरुषोत्तम वचन मानिकै मुरलीधर घर कीन्ह निवासा॥च्यवन ऋषीश्वर दूसर कुलको परकट कीन्हों जगत् उजासा ॥२॥ श्रीशुकदेव कृपा जब कीन्हीं सकल मनोरथहू भये तासा॥श्रीराधाकृष्ण पीताम्बर वस्तर श्रीतिलक दीन्हों सुत व्यासा॥३॥परम धर्म भागवत कथन करि आन धर्म सब कियो जु नासा॥ युग युग भक्ति करो हरिजूकी यह वर दियो है उमंग हुलासा ॥ ४ ॥ करि परणाम प्रदक्षिणा कीनी इंद्रप्रस्थ निज कियो जु वासा॥सतगुरु कह्यो सोइ पुनि कीन्हों स्वामिभक्ति करि प्रेमकी रासा ॥५॥ अनुभव शब्द उठा घनघोरा स्वयं रूप निज अंतर भासा॥मन वच कर्म शरण जो आये तिनहूंकी मेटी यमफांसा ॥ ६ ॥ त्रिविध ताप मेटनको समरथ मानो पूरण चंद्र प्रकासा॥तत्पर टहल महल वृंदावन निज स्वरूप नित दंपति पासा॥७॥परम पवित्र चरित्र यह गावै ध्यान करै करिकै विश्वासा॥निश्चय होय अमरपुर वासी जन्म मरणकी छूटै गांसा॥८॥अष्ट सिद्धि जिन चरणन लागी सकल पदारथ करैं जु आसा॥ लक्षिदास उभय पाणि जोरिकै युगल भक्ति दीजे निज दासा ॥ ९ ॥ इति ॥

# श्रीगुरुचेलेका संवाद श्रीशुकदेवजीकी जन्मलीला श्रीस्वामीरामरूपजीकृत प्रारम्भ ।

दोहा—ॐ ॐ श्रीरणजीत गुरु, विनय करूं शिर नाय ।
जनम होन शुकदेवकी, लीला मोहिं सुनाय ॥ १ ॥
चौं०—श्री व्यासके सुत शुक सूंचे । भक्ती ज्ञान योगमें ऊँचे ॥
शुभ कर्मनको नीके जानै । नीके अपना रूप पिछानै ॥
विचरत पृथ्वीपर नित रहै । तृष्णा जारी आनँद लहै ॥
सर्व शास्त्रन नीके जानै । सबके अर्थनको पहिचानै ॥
जिनके वचन जगत छुट जावै । करनी करै अभय पद पावै ॥
श्रीविष्णु समान अहैं अवतारी । सकल ऋपिनसे पदवी भारी ॥
ऐसे हैं शुकदेव गुसाँई । सदा विराजो मम हिय ठाईं ॥
कैसे जन्म भयो जगमाहीं । याको भेद सुनो मैं नाहीं ॥
उनकी कथा जु लागे प्यारी । सुनि आनँद हो हिये मँझारी ॥
ज्यों संतुष्ट हो अमृत पीये । मैं तिरपतहूं सरवन कीये ॥
चरणदास गुरुवचन तुम्हारे । भरम मिटावन करन उज्यारे २
दोहा—रामरूप गुरुजी प्रभो, और कहो इक भेव ।
कैसे तप कियो व्यासने, वर दीनो महादेव ॥ ३ ॥

गुरुवचन ।

रामरूप पूछन करी, तुमने जो यह बात ।
मेरे मनकी भावती, कहतैं बहुत सुहात ॥ ४ ॥
चौं०—चरणदास कह सुन शिप सोई । तप बिन पूरण काज न होई ॥
तपसों बहुत बडाई पावै । सबमें सुखिया वही कहावै ॥
बडा भये नहिं धनके आये । बडा न होय राजके पाये ॥

तुच्छ बडाई इनकी जानै । बडी बडाई पायो ध्यानै ॥
सबका मूल तपस्या लीजै । तपसों इंद्रिय निग्रह कीजै ॥
पाप होय सो इंद्रिन काजै । इंद्रिय रोकै सब दुख भाजै ॥
परमारथका मारग सूझै । कारज सिद्ध होहि जो गूझै ॥
इन्द्रियवश मन जीता जावै ।रामरूप निश्चल घर आवै॥५॥

दोहा-अब सुन शिष तोसूं कहूं, अद्भुत कथा पुनीत ।
जो भीषमजीने कहा, युधिष्टिरसूं करि प्रीत ॥ ६ ॥

चौ०-एकहि समय व्यास मुनिराई । पुत्रकामना मनमें आई ॥
यही जु धरिकै मनमें आसा । चलिकै गये महादेव पासा ॥
मेरु शिखरपे शिवजी राजें । पारवती लिये संग विराजें ॥
अरु उनके सेवक थे सारे । बैठ थे आनँदमें भारे ॥
वही ठाँव जो व्यास गुसाँई । पुत्रहेत लगे तपके माहीं ॥
कठिन तपस्या करने लागे । ऐसा पुत्र सुमनमें मांगे॥७॥

दोहा-पृथ्वीसी धीरज धरे, जलसा निर्मल होय ।
तेज अग्निसा तासुमें, वायुसा व्यापक होय ॥ ८ ॥
अरु ऐसाही चाहिये, जैसा बडा अकाश ।
करी तपस्या सौ बरस,मनमें धरि यह आश ॥ ९ ॥

चौ०-जलफलफूलपातनहिंलीन्हा।जबलगपवनअहारहिकीन्हा
जहां तपस्या करते ही थे । हां ब्रह्मऋषि अरु राजऋषी थे॥
यम अरु इंद्र वरुणको जानौ । वायु कुवेर अग्नि असथानौ ॥
वसु पिरथी अरु सूरज चन्दा।अरु हां थे सातौं सिंधा ॥
अरु पर्वत थे नरतनु धारे । जहां अप्सरा गंधर्व सारे ॥
अरु चौरासी सिद्ध जहांई ।अरु नारदमुनि हुते तहांई॥१०॥

दोहा-पीत पुष्पमाला पहर, ललित गौरजा कंत ।

मानों फूली सांझही, हिम शशि सोभावंत ॥ ११ ॥
व्यास तपस्या जो करी, बडा कष्टही धारि ।
सावधान तामें रहे, गये न मनमें हारि ॥ १२ ॥
चौ०-अरु बल छीन हुवा नहिं वाका।तीनलोकमोंअचरजताका॥
धन धन कहा ऋषी मुनि सारे । जो ह्वां थे सो सबै पुकारे ॥
तेज तपस्या जटा जु चमकैं । मानौ अग्नि भाँतिसी दमकैं ॥
देख तपस्या एसी शंकर । परसन भये बहुत हीमनकर॥
वर देनेकी मनमें आई । व्यास ओर देखा मुसक्याई॥
कहा मनोरथ पूरा कीना । पुत्तर चाहा जैसा दीना॥१३॥
दोहा-पूरी करी जु कामना, मैं तोको सुत दीन ।
रामभजनमें रहैगा, ध्यानमाहिं लवलीन ॥ १४ ॥
चौ०-महादेवसूं यह वर पाया । व्यास बिदा हो मारग धाया ॥
आ पहुँचे अस्थलके माही । फुल्लत भये बहुत हरषाही ॥
सदा मगन आनँदमें पागे । निशिदिन रहैं ध्यान लवलागे॥
व्यासदेवके तपकी बूझी ।सोहम कही बात थी गूझी१५॥

शिष्य वचन ।

दोहा-तपकी कहीसु मैं सुनी, तिरपत भये जु कान ।
रामरूप इक और भी, पूछे कृपानिधान ॥ १६ ॥
कौन महीना कौन तिथि, कौन हुता जो बार ।
व्यासगेह कैसे भया, शुकजीका अवतार ॥ १७ ॥

गुरुवचन ।

वैशाख महीना मध्यमें, मावस तिथि दिन सोम ।
जन्म लियो शुकदेवजी,गिरि सुमेरकी भौम ॥ १८ ॥
डेढ पहर दिन चढा था, जब हूवा वीचार ।
वेदव्यासके उर विषे, उपजा हर्ष अपार ॥ १९ ॥

चौ०—तप पाछे केतिक दिन माहीं। होम ठठा श्री व्यास गुसांई॥
मावस तिथिदिन सोमहि वारा। परवी लख यह किया विचारा॥
होम करनकी मनमें आई। ताकी सौंज सबै मँगवाई॥
सावधान हो बैठे नीके। लागे मथन अग्नि अरनीके॥
ताही समय अप्सरा आई। सहज माहिं सुन्दर अधिकाई॥
नाम घृताची रूप अपारा। व्यासदेव वा और निहारा॥
मोहित भये देख वा नारी। होनहारकी गति ही न्यारी॥
लखा अप्सरा मनमें जबहीं। तोती रूप धरा उन तबहीं॥
पलक कटाक्ष काम वश भया। बीज खसा थाँभा नहिं गया॥
बिंदु पडा अरनीके मांही। ईश्वरगति जानी नहिं जाही॥२०॥

दोहा—फिर अरनी मथने लगे, प्रगटे अग्निस्वरूप।
मूरत श्रीशुकदेवकी, नख शिख व्यासहि रूप॥ २१॥

किशोर अवस्था होगये, तुरतहि ले अवतार।
अति सुंदर तनु साँवरे, मानो कृष्ण मुरार॥ २२॥

चौ०—गंगा वहीं प्रकट हो आई। रूप नारिके अति छवि छाई॥
वामें शुकजी आनि न्हवाए। फूल स्वर्गके पवन वर्षाए॥
दण्ड एक दूजी मृगछाला। नभसे उतरीही ततकाला॥
आय अप्सरा निरतन लागी। गंध्रव गावन लाग सुभागी॥
जहां दुंदुभी बाजन लागे। लगी शंखध्वनि होने आगे॥
जितने बाजत थे सो सारे। बाजन लगे सु न्यारे न्यारे॥
पित्र देव नारदसे मुनी। हाहा हूहू अस्तुति भनी॥
मगन भए थिर चर जग सबहीं। राम रूप शुक जनमें जबहीं॥२३

दोहा—रीति जन्मनेकी करी, पारवती त्रिपुरार।
करी बधाई भवन अप, बाँधी बंदनवार॥ २४॥

वासवने वस्तर दिए, शुकदेवजीको आय ।
फटे न जीरण होयना, मैल नहीं लग जाय ॥ २५ ॥
और कमंडलु काठका, दियाजु उनके हाथ ।
धन्य समय धनि दिवस था,रामरूप धनि नाथ॥२६॥
जिनका दरशन शुभ अहै,सो पक्षी नभ माहिं ।
दिए दिखाई आयके, चहूं ओर मंडराहिं ॥ २७ ॥
तोता हरियल हंसही, सारस अरु पिकरोर ।
भाँति भाँतिके और खग, नीलकंठ अरु मोर॥ २८ ॥
जन्म देख शुकदेवको, सभी भए परसन्न ।
आपसमें पक्षी कहैं, जै जै धनि धनि धन्न ॥ २९ ॥

चौ०—जन्मत तप और मन लाए।जगमें पगन नेक नहिं पाए॥
स्वतःसिद्ध भे श्रीशुकदेवा । जानत हुते चारहो भेवा ॥
सर्वशास्त्रनं अर्थ पिछानै । जैसे व्यासदेव मुनि जानै ॥
विना पढे सबही कुछ जाना । तौभि बृहस्पतिको गुरुमाना॥
जो विद्या गुरु किया सनेही ।विन गुरु विद्या फल नहिं देही॥
नहिं तो चाह कहा थी उनको। विद्याही पढनेका तिनको ॥
याते मर्यादा गुरु चीन्हा । सकल शास्त्र पाठ जू कीन्हा ॥
चार वेद उनसों पढ लीन्हा।मीमांसामें अति मन दीन्हा३०॥

दोहा—राजनीति अरु काव्य सब,पढ गए रहे जितेक ।
गुरु पूजे दइ भेंटही, अस्तुति करी अनेक ॥ ३१ ॥

फेर तपस्याको लगे, पांचो इंद्रिय रोक ।
मन दीना भगवानको, रहा न हर्ष न शोक ॥ ३२ ॥

करते थे दण्डवत ही, सकल देवता ताहि ।
ऋषि मुनि हू करते हुते,वडा जान करि चाहि॥३३॥

जो कारज होता कछू, करते इनसूं बूझ।
अधिकी थे तप ज्ञानमें,बुद्धि बडी थी सूझ॥ ३४ ॥
चौ०—और जगत कराजके माहीं।कबहूं चित्त लगायो नाहीं॥
हरिके सुमिरणमें नित रहते। मोक्ष धर्मका मारग चहते॥
एक दिना शुकदेव सुभागे। आय पिताकूं कहने लागे॥
मोक्षधर्म मोको समझावो। मेरे मनका भर्म मिटावो॥
तुम सम और न दीखे कोई। मोक्षधर्मको जानैं सोई॥
तातें कृपा वेगही कीजे। मोक्षधर्मको मारग दीजे॥
सीखनको हियरो हुलसावे। वारवार मनमें यहि आवे॥
ज्ञान अरूपी समझो चाहूं। तातें परमातमको पाऊं॥३५॥
दोहा—पुत्तरकी अभिलाप ही, सुना व्यासही देव।
जब समझावन ही लगे, मोक्षधर्मको भेव॥ ३६ ॥
चौ०—पहले शास्त्र योग सिखायो।बहुरि सांख्ययोग समझायो॥
मत वेदांत दियो समझाई। जिज्ञासी हूए अधिकाई॥
जभी व्यासमुनि ऐसी जानी। श्रीशुकदेव भए ब्रह्मज्ञानी॥
जैसे व्यास ब्रह्मको जानैं। ऐसेही शुकदेव पिछानैं॥
जब कही पुत्तर आवो आगे। ढिग बैठाय कहन यों लागे॥
मिथिला नगर जनक जहँ राजा।ह्वां तुम जाव मुक्तिके काजा॥
मोक्षधर्म वे नीके जानैं। ब्रह्मदरशी ब्रह्मरूप विधानैं॥
सोई समझ सब तोकूं देहै। कृपा करि संदेह सिटै है॥३७॥
दोहा—यह सुनि करि ठाढे भये,आज्ञा शिर धर लीन।
गिरि सुमेरुते उत्तरकै, गवन नगरकूं कीन॥ ३८ ॥
चौ०—जा पहुँचे नगरीके माहीं। राजा जनक रहे जा ठाहीं॥
राजद्वारपै ठाढो भयो। द्वारपालने ह्वां जा कह्यो॥
व्यासपुत्र चल द्वारे आयो। ठाढो है यों जाय सुनायो॥

जनक विदेह समझ यों भापो । कही कि ह्वांई ठाढो रापो ॥
सात दिवस शुकदेव गुसांई । ठाढ रहे पवँरिके ठाई ॥
राजा जनक नहीं सुध लीनी । बडी परीक्षा गाढी कीनी ॥
अठयें दिन मंदिरको ल्यावो । ठाढ रहै तौ ना बैठावो ॥
सात दिवस फिर पूछा नाहीं।शुकजीके मन कछू न आई॥३९॥

दोहा—चौदह दिन गये बीतके, हुवा पंद्रवाँ द्योस ।
बुलवाये रनिवासमें, देखनको जग होस ॥ ४० ॥

चौ०—नाननको पातुर पठवाई । कह्यो कटाक्ष करो तुम जाई॥
हेतु भाव करि वशमें ल्यावो ।नाना विधिकोभोजन ख्वावो॥
सात दिनालौं योंही कीन्हो । मन शुकदेवको नाहीं लीन्हो॥
मोहित भये न काहू नारी । हेतुभाव करि बहु पचि हारी॥
अरु भोजन दीयो सोइ खायो ।अपनी इच्छा नाहिं मँगायो ॥
चौदह दिन ठाढे जो वितई । जाको बुरो न मानै चितई ॥
अस राजा मिहमानी करई । जाको लोभ न मनमें धरई ॥
स्थिरचित दुखसुखखनहिं व्यापो।पवन लगैज्यौंगिरिनहिंकापो

दोहा—दुख सुख कुछ व्यापै नहीं,चित्त स्थिर है जौन।
राम रूप गिरि ना हलै, आये गये जु पौन ॥ ४२ ॥
जब राजा शुकदेवको, देखा बहुत हलाय ।
पीछे दिन इक्कीसवें, लीनों निकट बुलाय ॥ ४३ ॥

चौ०—नमस्कार पूजा करि हेती।समाचार पूछा हित सेती ॥
कौन कामना मन धरि आये । सो अब हमसूं कहो सुनाये॥
जन मन शील क्षमायें पूरे । ज्ञान ध्यान अरु तपके शूरे॥
अपने कारज सब तुम कीने । मगनरूप आनँद लवलीने ॥
बडो अचंभो मोकूं आयो । कौन मनोरथ मनमें लायो॥
तब बोले शुकदेव विज्ञानी । लज्जा लिये मधुरसी बानी॥

कछू कछू पूछनकूं चाऊं । मनमें जो संदेह मिटाऊं ॥
यह संसार भयो कांहींते । कब लग रहै कहौ ह्वांईंते ॥४४ ॥

दोहा–यह जग कैसे बनत है, और समापत होय ।
दुख सुख मन या जीवकूं, मोहिं बतावो सोय ॥४५॥

चौ०–जब कह जनक सुनो शुकदेवा।एक आतमा स्थिर भेवा ॥
नित सत जानो भेद जु वाको।काहू विधि करि नाश न जाको॥
अरु वा छूटि सभी भ्रम जानौ। भ्रमहीते ये जग प्रगटानौ ॥
जबलग भरम तभीलौं भासै । भर्म मिटैसे सबही नासै ॥
अरु संसारिनके मन आंधे । भ्रमहि आपने दुख सुख बाँधे॥
शुकजी कही ये आगे जानो । ग्रंथनमाहिं लिखी पहँचानो ॥
मेरे भ्रमसूं जग उपजत है । मेरे भ्रमहीसूं जु खपत है ॥
सो कहु यह जगत कबलौं है ।मोहिं बतावो यह जबलौं है४६॥

दोहा–जनक कही मैं जानिया, मत वेदांत निहार ।
ज्ञानीके सतसंगसूं, अंतर कियो विचार ॥४७॥
भांति भांतिकी सृष्टिही, दीखत है जो येह ।
भाव अवस्था एकही,एक वस्तु लख लेह ॥४८॥

चौ०–एककु देखत है जु अनेका।तेरे ही भ्रम तोहिं विशेषा॥
या जगकूं तुम यही विचारो । तेरोहि भर्म दिखावन वारो ॥
जो तोको यह देत दिखाई ।अपनो भरम जान ले याई ॥
जो यामें संदेह कराई । भरम बंधमें जानौ वाही ॥
व्यासपुत्र तुम हो बुधवानै । हुतौ जानवो सो तू जानै ॥
सब इंद्रिनके रहे न स्वादा ।दुख सुख व्यापै नाहिंन बाधा॥
जिसको ऐसा होवै प्रात । मुक्ति भयो वाकूं जानो संत॥
मेरो यहभ्रम है अकि नाहीं।यह क्रिनिया मत रख मनमाहीं४९

दोहा–निहचै करिकै जान तू, यही बात है ठीक ।
यह जग मेरोही भरम,यह विचारले सीख ॥ ५० ॥
तो मन निहचै होय जब,भरम जायगो नाश ।
जगत नेकहूं ना रहै, खुले तिमिरकी गांस ॥ ५१ ॥
थिरही केवल आतमा,सत चित आनँदरूप ।
यही जानिकै मौन गहु, होरहु ज्ञानस्वरूप ॥ ५२ ॥
कियो जु राजा जनकने, इही भांति उपदेश ।
रामरूप शुकदेवके, मनको गयो अँदेश ॥ ५३ ॥
जभी आत्मारूपमें, मगन भए शुकदेव ।
भरम तिमिर अज्ञानको, रह्यो नेक नहिं लेव॥ ५४ ॥
भई अवस्था और ही, रोम रोम आनंद ।
जीवनमुक्त हो गए,रही न दुबधा संध ॥ ५५ ॥
भूले सब व्यवहारही, आपनकूं गए भूल ।
अहंकार नश्यो सबै, ताको रहो न मूल ॥ ५६ ॥
श्रीजनकके वचन सुनि,लिये उपदेश अघाय ।
ज्ञान मोक्ष सिद्धांतकूं, नीके समझा आय ॥ ५७ ॥
थे तो पूरण पहलही,सब विध सबही भाय ।
सतगुरु इस कारण किए, निहचै कीना आय॥ ५८ ॥
बिन सतगुरु निश्चय नहीं,कैसेहु चातुर होय ।
कितीकी विद्या पढो, भूल मिटै ना कोय ॥ ५९ ॥
मुदित होय दण्डवत करि,उठ चाले भये भोर ।
पवन भांति उत्तर दिशा, चले पर्वतौ ओर ॥ ६० ॥

चौ०–तांसु उठ पवन ज्यों धाए । वेगहि पर्वत ऊपर आए ॥
ध्यान तपस्या करते पाये । दरशन करिकै अंग नवाए॥

व्यास उठाय दृष्टि जब देखा । आवत अपना पुत्र विशेषा ॥
सूरज आग्नि तेज ज्यों धरई । वेगहि धावत मानो सरई ६१॥

दोहा—वाको तेज न रुकसके, गिरिवर तरुके ओट ।
आय पिताके पासही, चरणनमें रहे लोट ॥ ६२ ॥

चौ०—पिता उठाय हियेसूं लाए। दोनों मिल बहुतै सुख पाए ॥
व्यास प्यार करि पूछन लागे । समझा सो सब कहु मोआगे ॥
तब शुकदेव सभी कुछ कहिया । देखा सुना जनकसूं लहिया ॥
भांति सिखनकी रहन विचारा । तप सेवा करने प्रण धारा ॥
ऐसेही महभारत माहीं । विना सुने जानै कोइ नाहीं॥
याजे मूरख वाद बढावें । विन जाने कुछकी कुछ गावैं
अबके द्वापरकी यह काथा । महभारतमें भो विख्याता ॥
भारतमें हैं पर्व अठारा । तामें शांति पर्व विस्तारा ॥
शांतिपर्वमें मोक्षधरम जो । तामाहीं यह कथा परमसो ॥
वेदव्यासके सुत शुकदेवा । तिनको तौ कारण इह भेवा॥
सोई मोकूं मिले जु आई । जिनकी लीला तोहिं सुनाई
ऐसेही है रास जुड़ाई । ज्योंकी त्यों तोकूं समझाई॥
रामरूप यह निश्चै कीजो । सांची वात हिये धरि लीजो
दंतकथा झूठी जग छाई । कहैं कि गर्भ बसे शुक आई॥
और कहैं वारह वर्ष ताहीं । रहे शुकदेव उदरके माहीं ॥
ऐसा चूक करी क्या भारी । सहा दुःख जो अधिक पियारी
मूरख कहते नाहिं लजावें । ईश्वरको जो दोष लगावैं ॥
उनकी वात सुनो जनि प्यारे । वे तो हैं अपराधी भारे॥६३॥

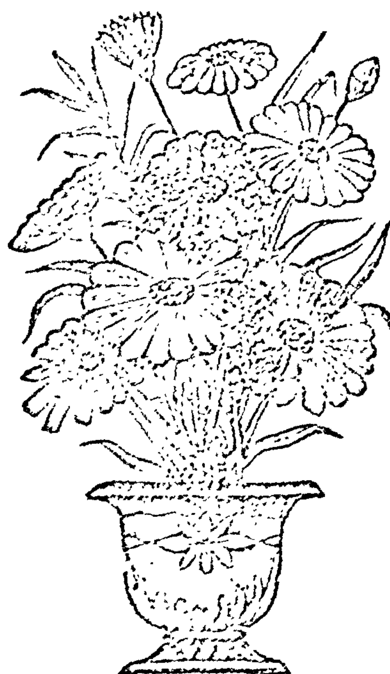
दोहा—मोहिं मिले शुकदेवजी, तिनकी तौ यह वात ।
गर्भयोनि आये नहीं, निश्चै जानो तात ॥ ६४ ॥

चरणदास यों कहत है, रामरूप उरधार ।
यह लीला गावे सदा, उतरे भव जल पार ॥६५॥

शिष्य वचन ।

धन सतगुरु परमारथी, चरणदास महाराज ।
अद्भुत कथा सुनायके, पुरवे मो मन काज ॥६६॥
सब विधि किया निहाल मुहिं, कथा सुनाई गूप ।
बारम्बार बलिहार हूं, कहे रामहीं रूप ॥ ६७ ॥
निहचे जानी सांच में, तुम्हरे वचन प्रसाद ।
सो लेकरि हिरदे धरी, नाशी मूल अगाद ॥ ६८ ॥

इति श्रीगुरुचेलके संवादविषे श्रीस्वामिरामरूपजी कृत शुकदेवजीकी संपूर्णजन्मलीला समाप्त । शुभम् ।



श्रीः ।

# श्रीभक्तिसागरग्रंथकीआरतीकापद ।



आरती ग्रंथराजकी कीजे ।जीत जनम यह लाभ जो लीजे
ग्रंथको ध्यान धरें चरनदास । ग्रंथ है संतनको सुखरास ॥
अष्टादश पद चारों वेद । ग्रंथमाहिं सबहीको भेद ॥
जो नर ग्रंथको सुने सुनावैं । सो नर भक्ति कृष्णकी पावैं॥
अमरलोक निश्चय कर जावैं । याजगमाहीं बहुरि न आवैं॥
पिय प्यारीके निकट रहावैं । सेवा कर मनमें हरषावैं ॥
श्रीठाकुरदास गुरुभेद बतावै । बलदेव दास हरष गुण गावै १

पुनः आरती पद ।

आरती ग्रंथ भक्तिसागरकी नितही हुलस सकल जन कीजे ॥
पूरण प्रेम विरत हित बाती चित चौमुखमें जोय सु दीजे ॥
होय प्रकाश वासना नाशै घटते तिमिर अविद्या छीजे ॥
दरशैं श्यामा श्याम हियेमें नैनन निरख रूपरस पीजे ॥
पराभक्तिको पाय परम रस भजन भावनामें मन भीजे ॥
युगल ध्यान धुनि सहज समाधी हरिगुरु कृपासु पाय पतीजे॥
भजन प्रताप पहुँच चौथे पद अजर अमर हो युग युग जीजै२॥

# अथ पतिव्रताको अंगवर्णन।



दोहा–पतिव्रता वाकूं कहैं, पति आज्ञाकी टेक ।
रामरूप वह संत जो, सुमिरै साहिव एक ॥ १ ॥
आन पुरुष चित ना वसै, पतिव्रता है सोय ।
रामरूप एकै भजै, जो कुछ होय सु होय ॥ २ ॥
एक देह मन एक है, दीन्हा एकै हाथ ।
रामरूप दोजिक पडैं, दूजा लें जो साथ ॥ ३ ॥
जो आशिक है एकके, दूजेसूं क्या काम ।
रामरूप सुख दो नहीं, जो दूजा लै नाम ॥ ४ ॥
दूजेकूं धावै वही, जो दूजाका होय ।
रामरूपके मन वस्या, पीव पियारा सोय ॥ ५ ॥
उपजावे पाले वही, वही खपावै जान ।
तो दूजा क्यों सेइये, रामरूप है राम ॥ ६ ॥
एक जीव एकै दिया, दूजेसूं नहिं काम ।
रामरूप आशिक वही, जपै एकको नाम ॥ ७ ॥
वंदा तो आशिक भया, मिहरवान महवूब ।
रामरूप रव एकसूं, इश्क लगाया खूब ॥ ८ ॥
एक मूल गह लीजिये, रखिये एकै टेक ।
दूजी राह न चालिये, यह पतिव्रत विशेष ॥ ९ ॥
दूजा अंग न लाइये, दूजा देख न नैन ।
रामरूप रति एकसूं, सुनै न दूजा वैन ॥ १० ॥
हँस वोलूं तो पीवसूं, जो देखूं तो पीव ।
रामरूप वारन किया, तन मन धन अरु जीव॥ ११॥

जाना नरक कबूल है, पीव पियारे साथ ।
चाह नहीं मोहिं स्वर्गकी, रामरूप बिन नाथ ॥ १२ ॥
तन मन दीना एककूं, एकहि सेती व्याह ।
एके जाना रामरूप, दूजेकी नहिं चाह ॥ १३ ॥
भाँवर लीन्हीं भांवकी, गठजोडा गुरुज्ञान ।
हथलेवा हित हरीसूं, रामरूप रंग मान ॥ १४ ॥
सांचे समरथ पीवसूं, में जो किया उछाह ।
संत जु माई वाप है, दीन्हीं तिन्हौं विवाह ॥ १५ ॥
लिया जनम सतसंगमें, जब पाया हरि पीव ।
नहीं तौ भरम्यां फिरै था, चौरासीका जीव ॥ १६ ॥
प्रेम प्रीत सतसंगसूं, पाया नेडै राम ।
नहीं तौ भरम्या फिरे था, रामरूप बेकाम ॥ १७ ॥
लख चौरासी जून मैं, बहुते कीते पीव ।
एक पीव जाने विना, भटक फिरा यह जीव ॥ १८ ॥
कहीं ठिकाना ना मिला, विन सांचे भरतार ।
रामरूप शोभा गई, जने जनेके लार ॥ १९ ॥
परपुरुपाकी चूनरी, ओढे चढै कलंक ।
अपने पीकी गूदडी, शोभा देत निशंक ॥ २० ॥
रूखा सूखा पीवका, खावैं सरस सुरंग ।
पर पीका खटरस बुरा, यह विभचारन अंग ॥ २१ ॥
परपुरषासूं प्रीतरी, जनम बिगोवा होय ।
निरफल सेवा तासुकी, भला कहे नहिं कोय ॥ २२ ॥
जने जनेसूं प्रीतरी, करत फिरैं विभचार ।
रामरूप जगमें कुजस, ले तन दे भरतार ॥ २३ ॥
पतिव्रताकूं पीव विन, पुरुप न दीखै और ।

रामरूप त्यौं हरि बिना, आस न दूजी ठौर॥ २४ ॥
हंसा तो मोती चुगे, सिंह न सूंघै घास ।
रामरूपके हरि बिना, और न दूजी आस ॥ २५ ॥
ब्रह्मा शेष महेशलौं, शूर तेतीसौं जान ।
रामरूप सेवें हरी, नर क्या धावै आन ॥ २६ ॥
आन धरमसूं काम क्या, अपना धरम संभाल ।
रामरूप रहु टेकमें, सांई करै निहाल ॥ २७ ॥
सगा सनेही रामसा, और न दीखै कोय ।
रामरूप ताकूं तजे, तो कैसे सुख होय ॥ २८ ॥
करम कटैं हरि नामसूं, दुख दरिद्र सब जाय ।
रामरूप आफत टलै, यमकी नाहिं बसाय ॥ २९ ॥
तन मनकी वेदनि सबै, राम भजनकूं जाय ।
रामरूप उस छाँडिकै, भरमत फिरै बलाय ॥ ३० ॥
सेवक हूजे रामका, तजि दूजा दरबार ।
रामरूप उस एकमें, जो चाहे सो प्यार ॥ ३१ ॥
जड सींचे सब सींचिया, डाल पात फल फूल ।
रामरूप पूजे सबै, जब पूज्या हरि मूल ॥ ३२ ॥
सब काया तिरपत भई, जब मेल्हा मुख ग्रास ।
मन बुधि इन्द्री प्रान जो, सबकूं भया हुलास ॥ ३३ ॥
तातें अविगति पूजिये, छाँड आनकी आस ।
रामरूप उस एकके, सबै देवता दास ॥ ३४ ॥
परमतत्व जाने बिना, मनका भरम न जाय ।
रामरूप उस एकमें, रहिये सदा समाय ॥ ३५ ॥
सिर नावै तो रामकूं, जपै तो सिरजनहार ।
रामरूप यह पति बरत, जब रीझैं भरतार ॥ ३६ ॥

मनसा वाचा करमना, एक पीवसूं लाय ।
रामरूप पिय रीझकैं, लेवै कंठ लगाय ॥ ३७ ॥
संतनमें साझा नहीं, मनमें प्रीत न भाव ।
रामरूप उस पीवसूं, कैसे बनै बनाव ॥ ३८ ॥
जहां भक्ति तहँ मैं नहीं, मैं जहँ भक्ती नाहिं ।
रामरूप तज मानकूं, तव प्रीतम गलबांहिं ॥ ३९ ॥
रहिये राजी रजामें, पतिव्रता है सोय ।
रामरूप आपा नहीं, पीव कहै सो होय ॥ ४० ॥
साहिब रीझै भक्तिसूं, भक्ति बिना हरि दूर ।
रामरूप कहै भक्ति विन, गए बिसूर बिसूर ॥ ४१ ॥
जो आशिक हैं रामके, तिन्हैं न जगसूं काम ।
रामरूप कहै तजि दिए,जन जमीन जर गाम॥ ४२ ॥
राजा राना क्षत्रपति, जाय न तिनके तास ।
रामरूप हरिके हुए, जब कैसी जग आस ॥ ४३ ॥
आज्ञा पालै पीवकी, सो पतिव्रता नारि ।
रामरूप करै भक्ति ही, सब परपंच बिसारि ॥ ४४ ॥
भेद आपने पीवका, बाहरि कहै न कोय ।
रामरूप पतिव्रता सो, आज्ञाकारी होय ॥ ४५ ॥
आज्ञाकारी पीवकी, तन मन सेवा माहिं ।
रामरूप ऐसा कोई, जगमें बहुत नाहिं ॥ ४६ ॥
आज्ञा ले जावै कहीं, ऊठै बैठै सोय ।
आज्ञा ले भोजन करै, कबहूं दुख नहिं होय ॥ ४७ ॥
हानि लाभ कछु ना गिनै, एक हुकमसूं काम ।
रामरूप आवत जैसो, पतिव्रताहू बाम ॥ ४८ ॥
सोइ सुहागिनि सुंदरी, पति आज्ञामें होय ।

रामरूप ऊंची चढै, भला कहै सब कोय ॥ ४९ ॥
जंतर टोना त्यागकै, हुकम पियाका पाल ।
यह विधि है वश करनकी,सदा पीव खुसियाल॥५०॥
रामरूप ज्यों पतिव्रता, साहिब सेती दास ।
शिष गुरुसों ऐसो रहै, दिन२ भक्तिप्रकास ॥ ५१ ॥
आज्ञा मेटी पीवकी, चाली मनके भाय ।
अब कैसे भरतारकूं, मुख दिखलाऊं जाय ॥ ५२ ॥
जैसी तैसी पीवकी, पीया बकसन हार ।
रामरूप समरथ धनी, मैंही औगुनगार ॥ ५३ ॥
मैं तो औगुन बहु किये, तेरी ओट भरतार ।
रामरूपकूं राख लो, अब शरनैं करतार ॥ ५४ ॥
जो छीनैं तौ रामजी, जो देवैं तौ राम ।
पात न हालै हुकम विन, राम करैं सब काम ॥ ५५ ॥
रामहिं सेती मांगिये, रामहिं सबका साह ।
राम रूप दाता वही, और सरबकूं चाह ॥ ५६ ॥
आशा रखिये रामकी और सरबसूं तोडि ।
रामरूप पतिव्रत यहै, एक रामसूं जोडि ॥ ५७ ॥
मीरा गिरधारी भज्यो, करमाने जगन्नाथ ।
तुलसीदासा रामविन,और न नायो माथ ॥ ५८ ॥
गहो टेक भगवानकी, जो सब जगका नाथ ।
रामरूप साँचा धनी, सो क्यों तजिये साथ ॥ ५९ ॥
कान आँख जिनने दई, नाक तुचा कर पांव ।
रामरूप हरि सब दिया, ताको लेयत नांव ॥ ६० ॥
रामरूप हरिने दिए, सुत नाती धन प्रान ।
गाति जगावें पीरकी, यह देखो अज्ञान ॥ ६१ ॥

रामरूप हरिनेह करि, अन्न उपाया जान ।
काढें माय जु पीरका, यह पूरा अज्ञान ॥ ६२ ॥
वेंठ दीने रामनें, पूजें सेढ मसाण ।
राम रूप वे कृतघन, क्यों न सहैं जम सांण ॥६३॥
आन धरम वाकूं कहैं, शीश नवावैं आन ।
रामरूप भटकत फिरैं, विन सांचे भगवान ॥ ६४ ॥
पाखंडी वह जानिये, निसदिन पाप कमाय ।
रामरूप कहै राम तज, सरनि आनकी जाय ॥ ६५ ॥
जवलग मनमें कामना, तवलग भक्त न होय ।
रामरूप फल दे सही, परआप मिलै नहिं कोय॥ ६६ ॥
आशा रखिये दरशकी, दूजी चाह निवार ।
रामरूप तो सव मिलै, स्वरग मुक्ति भंडार ॥ ६७ ॥
विन आशा सब कुछ मिलै, आशा आश निराश।
रामरूप आशा नहीं, सोई साचा दास ॥ ६८ ॥
रामरूप कहें नाम विन, कछू न कीजै चाह ।
स्वरग मुक्ति रिध सिद्धिलौं, सवसूं बेपरवाह ॥ ६९ ॥
आन देव अमरा करैं, तीन लोक दें राज ।
रामरूप कहै भक्ति विन, मेरे किसी न काज ॥ ७० ॥
जो हरि देवै आपसूं, सो धारूं निज सीस ।
रामरूप मुख ना कहै, तू दे कुछ जगदीस ॥ ७१ ॥
फल निमित्त हरिकूं भजे, धन पुत्तरकी आस ।
रामरूप वे भक्तके, स्वारथहीके दास ॥ ७२ ॥
स्वरग आदिके फल लिये, भजैं निरंजन नाम ।
रामरूप सांचे भगत, पावैं प्रभुको धाम ॥ ७३ ॥

सहकामी झूठा भगत, निहकामी भरपूर ।
रामरूप तजि कामना, रहें प्रेममें चूर ॥ ७४ ॥
अर्थ धर्म काम मोक्ष ए, चार पदारथ सार ।
रामरूप जो हरि भगत,तिन्हें न उनकूं प्यार ॥७५ ॥
रामरूप वैकुंठ लौं, चाह तजै सोइ दास ।
बिना राम पद और सब,जानै झूठी आस ॥ ७६ ॥
वही शिरोमनि दासहै,अनन्य भक्त निहकाम ।
रामरूप माँगे नहीं, सुत नाती धन धाम ॥ ७७ ॥
स्वारथकी सेवा बुरी, अंत टूटही जाय ।
रामरूप कबलौं रहे, कच्चे सूत बँधाय ॥ ७८ ॥
एक दोय लौं पूरिये, सह कामीकी आस ।
रामरूप कबलौं भरे, दिनमें सौ सौ प्यास ॥ ७९ ॥
आखिरकूं टूटै सही, स्वारथरूपी प्रीति ।
रामरूप कबलौं रहै, जलमें बालू भीति ॥ ८० ॥
भक्ति करै चाहै मुकति, सोऊ अधमा दास ।
रामरूप पूरा सोई, रख न कोई आस ॥ ८१ ॥
आंखोंसे दरशन चहै, मुखसूं हरिको नाम ।
रामरूप वह दास निज,करै भक्ति निहकाम ॥ ८२ ॥
कोऊ सेवै देवता, काहु राजकी आस ।
रामरूप कहै मैं किया,गुरू श्यामचरणदास ॥ ८३ ॥

इति श्रीपतिव्रताका अंग सम्पूर्ण ।

# क्रय्य पुस्तकें।

| नाम | की. रु. आ. |
|---|---|
| अनुरागरस—नारायणस्वामीकृत ... ... | ०—३ |
| अमृतकी बूंद—इसमें—परमललित उत्तमोत्तम गानेकी अनेक चीज हैं ... ... ... | ०—१ |
| अनुभवरस—हीरासखीकृत। इस ग्रंथमें वृन्दावन विहारी आनन्दकन्द कृष्णजीकी परममनोहर अनेक लीलायें यथाक्रम रागरागिनियोंमें वर्णित हैं जो कि नित्यविहारमें आप सदैव रचते रहते हैं। सपुष्ट वढिया कागज और सुंदर कपडेकी मनोहर जिल्दसहित ... ... ... | २—८ |
| अर्जुनगीता—भाषामें—श्रीकृष्णजी और अर्जुनका संवाद ग्लेज कागज ... ... ... ... | ०—४ |
| अग्रदासजीकी कुण्डलिया—( वेदान्तोपदेश ) ... | ०—३ |
| उपदेशरत्नाकर—उपदेशसम्बन्धी अमूल्य उदाहरणोपयुक्त भक्ति ज्ञान वैराग्यसंयुक्त सामयिक दोहे वर्णित हैं ... ... ... | ०—१० |
| कल्याणकल्पद्रुम—रोचकछन्दवद्ध वेदान्तमानस सूक्ष्म रामायण ... ... ... | ०—४ |
| गुरु महिमा और गुरुअष्टक—दोहा चौपाईमें गुरूपदेश के लिये उत्तम है ... ... ... | ०—१ |
| गोपीचन्द भरथरी ... ... ... | ०—३ |
| नामप्रताप—( छन्दवद्ध श्रीरामनाममाहात्म्यवर्णन )... | ०—१॥ |
| पदावली—( रामसखेकृत ) रामचन्द्रजीकी भक्तिरस प्रधान पदावली .... ... | ०—६ |